Agnishikha vol. 18 1987-88 G. K. V. Hardwar

Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

079506

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Stock Verification-2024

Stock Verification-2024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार
079506

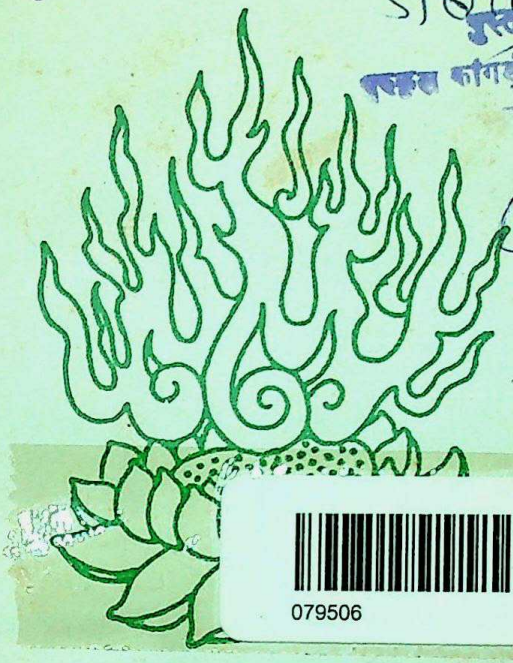

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

अगस्त १९८७ - ८८ वर्ष १८, अंक १, पूर्णांक २०५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश	१
'संपादकीय' : कौन आगे आयेगा	२
दैनन्दिनी	३
सबसे पहले व्यक्ति बनो	७
श्रीअरविंदका योग	१२
रूपांतर	१३
प्रेम	१५
भागवत परम शक्ति	१७
कृतज्ञता	१८
संपूर्ण और निष्कपट समर्पण	२०
माताजीके कुछ वचन	२९
मां जाग उठी है	३०
स्फुट वचन	३३
'नारी स्तम्भ' : 'अवेकनिंग'से	३४
सोसायटी समाचार	आ० ३

वार्षिक शुल्क १०.०० आजीवन १७५.००

कृपया चेक न भेजें, उसमें बहुत असुविधा होती है। ड्राफ्ट, धनादेश या पोस्टल आर्डर भेज सकते हैं। अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

संपर्क : संपादक अग्निशिखा एवं पुरोधा, पांडिचेरी–६०५००२

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संदेश

It is the Divine Presence that gives value to life. This Presence is the source of all Peace, all Joy, all Security. Find this Presence in yourself and all your difficulties will disappear.

The Mother

भागवत उपस्थिति ही जीवनको मूल्य देती है। यह उपस्थिति सारी शांति, सारे हर्ष, सारी सुरक्षाका स्रोत है। अपने अंदर इस उपस्थितिको प्राप्त करो और तुम्हारी सारी कठिनाइयां लुप्त हो जायेंगी।

—माताजी

भगवतः उपस्थितिरेव जीवनं मूल्यवत् करोति। उपस्थितिरेषा ननु स्रोतः सम्पूर्णशान्तेः, सम्पूर्णहर्षस्य, सम्पूर्णसुरक्षायाः च। अवाप्नुहि इमाम् उपस्थितिं स्वात्मनि, सर्वाणि ते कष्टानि विलेष्यन्ते।

—श्रीमाता

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'संपादकीय' :

कौन आगे आयेगा

एक भव्य भवन था। आज वह खंडहर-सा दीखनेपर भी इतना आकर्षक है कि जो भी उसे देखता है उसमें रहनेके लिये लालायित हो उठता है। उसमें चार भाई रहते हैं, भाई होते हुए भी उनके चरित्रमें इतनी विभिन्नता है कि वे आपसमें मिल-जुल कर रह नहीं पाते किंतु और कोई चारा भी तो नहीं। मकान एक ही तो है। इस भवनमें एक क्षण भी शांति नहीं रहती क्योंकि चारों किसी-न-किसी बातको लेकर बखेड़ा खड़ा कर देते हैं। बड़ा भाई शांति-प्रिय है तो दूसरा भाई बात-बातपर तलवार निकाल लेता है; उसे लगता है कि सब समस्याओंका हल तलवारकी नोंकपर रहता है। तीसरा भाई चुप रहना पसंद करता है। वह चाहता है कि उसे किसी झगड़ेमें घसीटा न जाय। बाकी तीनों भाई क्या करते हैं इससे उसे क्या मतलब! चौथेके बारेमें कुछ भी समझना कठिन है, कभी बड़ा समझदार होता तो कभी ऐसा जिद्दी बन जाता है कि समझाते-समझाते नाकों दम आ जाय पर वह टससे मस न हो। अब ऐसे निवासियोंके रहते भवनमें शांतिकी कल्पना आकाशकुसुमवत् है। दिन-रात हो हल्ला मचा रहता है। चारों भाई शांति चाहते हैं किंतु हर एक दोष दूसरेका ही देखता है, अपना नहीं। इस समय इस भवनको एक ऐसे शांतिदूतकी आवश्यकता है जो चारों-का विश्वास प्राप्त कर उन्हें भवनमें रहनेका कोई उपाय बता सके।

कहा जाता है कि उदासीन और निर्मोही माने जानेवाले योगी जगत्-कल्याणके लिये प्रयत्नशील रहते हैं। क्या इस समय भारतरूपी इस भवनमें ऐसा कोई योगी या कर्म योगी नहीं है जो इस राष्ट्रको दलदलसे निकाल सके?

श्रीअरविंदने भारतका भविष्य उसके अतीतसे भी अधिक उज्ज्वल देखा है। उस उज्ज्वल भविष्यको चरितार्थ करनेके लिये कौन आगे आएगा?

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

अगस्त

१. हे प्रभो, अत्यंत विनीत भावसे तुझसे प्रार्थना करती हूं कि मैं प्रयत्नकी चरम ऊंचाईपर रहूं, कि मेरे अंदर कोई भी सचेतन या अचेतन चीज तेरे पवित्र कार्यमें सेवा करनेसे वंचित रहकर तुझे धोखा न दे।

२. मेरे स्वामी, मेरी चेतनाको निर्मल और सुस्पष्ट बना, वाणीको अच्छी तरह सच्ची, समर्पणको पूर्ण, अचंचलताको पूर्ण बना और सारी सत्ताको प्रकाश और प्रेमके सागरमें रूपांतरित कर दे।

३. हे प्रभो, तुझसे प्रार्थना करती हूं, मेरे चरणोंका मार्गदर्शन कर, मेरे मनको प्रकाशित कर ताकि प्रत्येक क्षण और सब चीजोंमें मैं वही करूं जो तू मुझसे करवाना चाहे।

४. प्रभु, मुझे संपूर्ण निष्कपटता प्रदान कर, ऐसी जो मुझे सीधा तेरे पास ले आए।

५. प्रभो, हमें वह अदम्य साहस प्रदान कर जो तेरे ऊपर पूर्ण श्रद्धासे आता है।

६. हमें उज्ज्वल भविष्यमें श्रद्धा दे और उसे चरितार्थ करनेकी क्षमता प्रदान कर।

७. जब हम विचलित नहीं होते तभी उचित समयपर उचित ढंगसे उचित काम कर पाते हैं।

८. केवल परम चेतना ही तुम्हारे कर्मपर प्रभाव डाल सकती है; यह चेतना स्वाधीन है, सारी मानव चेतनासे परे है।

९. ऐसा क्षण आता है जब जीवन भागवत उपस्थितिके बिना असह्य बन जाता है इसलिये, अपने-आपको पूरी तरह भगवान्‌के अर्पित कर दो और तुम प्रकाशमें प्रवेश पा जाओगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. जीवनका उद्देश्य और लक्ष्य दुःख और संघर्ष नहीं बल्कि सर्व-शक्तिमान् और शुभ उपलब्धि है।
बाकी सब दुःखद भ्रम है।

११. सुखी और सफ़ल जीवनके लिये पहली शर्त यह है कि व्यक्ति-को अपने स्वार्थको अपना उद्देश्य नहीं बनाना चाहिये।
उसके लिये पहली आवश्यक योग्यताएं या गुण होने चाहिये : निर्भीकता, साहस और अध्यवसाय।

१२. हमें इस बातसे सचेतन रहना चाहिये कि जो जानना चाहिये उसकी तुलनामें हम कुछ नहीं जानते, हमें जो करना चाहिये उसकी तुलनामें हम कुछ नहीं करते, हमें जो बनना चाहिये उसकी तुलनामें हम कुछ नहीं हैं।
जिस चीजकी हमारी प्रकृतिमें कमी हो, उसे प्राप्त करनेके लिये, जिसका ज्ञान न हो उसका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये, हम जो कुछ अभीतक नहीं कर पाये हैं, उसे करनेके लिये, हमारे अंदर अपरिवर्तनीय इच्छा-शक्ति होनी चाहिये।

१३. व्यक्तिगत इच्छाओंकी अनुपस्थितिके कारण प्राप्त प्रकाश और शांतिमें हमें हमेशा प्रगति करनी चाहिये।

१४. हम एक ऐसा कार्यक्रम बना सकते हैं—
"हमेशा अधिक अच्छा, हमेशा आगे बढ़ते रहना!"
और एक ही लक्ष्य होना चाहिये : भगवान्‌को अभिव्यक्त करनेके लिये उनको जानना।
डटे रहो, और जो तुम आज नहीं कर पाते, उसे कल कर पाओगे।

१५. अगर चेतनाकी वृद्धिको जीवनका मुख्य लक्ष्य बनाया जाय तो बहुत-सी कठिनाइयां समाधान पाएंगी।
बुढ़ापेको रोकनेका सबसे अच्छा तरीका है प्रगतिको जीवनका लक्ष्य बनाना।

१६. पृथ्वीपर हमारा जीवन तत्वतः प्रगतिका क्षेत्र है। लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमें जितनी प्रगति करनी है उसके लिये जीवन कितना छोटा है!

अपनी तुच्छ कामनाओंकी तुष्टिके लिये समय नष्ट करना नितांत मूर्खता है। सच्चा सुख तभी संभव है जब हम भगवान्‌को प्राप्त कर लेते हैं।

१७. जो सबसे पहली बात भौतिक चेतनाको समझनी चाहिये वह यह है कि जीवनमें जितनी कठिनाइयोंका हमें सामना करना पड़ता है वे इसलिये आती हैं कि हम आवश्यक सहायताके लिये केवल भगवान्‌पर निर्भर नहीं रहते।

१८. पूर्ण विश्वास और कृतज्ञताके साथ भगवान्‌को पूरी तरह निवेदित होकर ही कठिनाइयोंको जीता जा सकता है।

१९. जब मनुष्य अपने-आपको पूर्ण निष्कपटता और सचाईके साथ भागवत इच्छाको अर्पण करता है तब उसे वह शांति और अचंचल आनंद प्राप्त होते हैं जो कामनाओंके उन्मूलनसे आते हैं।

२०. व्यक्तिगत अस्तित्वका उद्देश्य भगवान्‌को खोजनेका और उनके साथ एकता प्राप्त करनेका आनंद है। जब मनुष्य यह समझ लेता है, तब वह सारी कठिनाइयोंपर विजय प्राप्त करनेकी शक्ति विकसित करनेको तैयार होता है।

२१. सुखी होनेके लिये मत जीओ, भगवान्‌की सेवा करनेके लिये जीओ और तब जो सुख तुम्हें मिलेगा वह तुम्हारी सब आशाओं-से भी परेका होगा।

२२. प्रत्येक व्यक्तिका अपना अहम् है और सब अहम् एक दूसरेसे टकराते रहते हैं। अहम्‌से पिंड छुड़ा कर ही मनुष्य मुक्त बनता है।

मुक्त होनेके लिये मनुष्यको केवल भगवान्‌का बना रहना चाहिये।

२३. परम प्रभु अनंत प्रज्ञा,

इस संकटपूर्ण कालमें, जब अहम् आपसमें टकरा रहे हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने-आपको हठपूर्वक स्थापित करते हैं, केवल तुझमें आश्रय लेनेमें ही सुरक्षा है।

२४. तुम्हारे लिये सबसे अच्छा तरीका अपनी चैत्य सत्ताकी खोज शुरू करना है। उसपर एकाग्र हो कर अपनी सारी आंतरिक गतिविधियोंका उसे साक्षी बनाओ और तुम्हें क्या करना और नहीं करना चाहिये उसका न्यायाधीश बनाओ तथा अपनी बाह्य प्रकृतिको उसके निर्णयोंके अधीन रखनेकी कोशिश करो।

२५. परम प्रभु, हमें नीरव रहना सिखा ताकि मौनमें हम तेरी शक्तिको ग्रहण कर पायें और तेरी इच्छाको समझ सकें।

२६. हमारी सत्ताकी गहराइयोंमें, मननके मौनमें, एक ज्योतिर्मयी शक्ति विशाल और ज्योतिर्मयी शांतिसे हमारी चेतनाको परिप्लावित कर देती है जो क्षुद्र प्रतिक्रियाओंको जीत कर हमें भगवान्‌के साथ ऐक्यके लिये तैयार करती है—व्यक्तिगत अस्तित्वका वही एक मात्र उद्देश्य है।

२७. मार्गपर मनुष्य जो पहली बात सीखता है वह यह है कि देनेका आनंद लेनेके आनंदसे बहुत अधिक है।

२८. धीरे-धीरे मनुष्य सीखता है कि आत्मविस्मृति अचल शांतिका स्रोत है। आगे चल कर इस आत्मविस्मृतिमें मनुष्यको भगवान्‌की प्राप्ति होती है और यह अवस्था सदा बढ़ते हुए आनंद, उल्लासका स्रोत होती है।

२९. तुम्हें अपनी अभीप्साको और सारी विघ्न-बाधाओंको जीतनेकी इच्छाको अक्षुण्ण रखना चाहिये। तुम्हें भागवत कृपा और निश्चित विजयपर अटल श्रद्धा होनी चाहिये।

३०. प्रकृति जटिल है और उसमें सच और झूठ, अच्छा और बुरा हमेशा मिले-जुले रहते हैं। अपनी गलतियों और कमजोरियोंको स्पष्ट रूपसे देखना बड़ा उपयोगी होता है, लेकिन तुम्हें केवल उन्हींको देखना न चाहिये, क्योंकि वह भी एकांगी होगा। अपने स्वभावमें जो अच्छा और सच्चा है, उसके बारेमें तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिज्ञ होना चाहिये और उसपर पूरा ध्यान देना चाहिये ताकि वह अच्छा और सच्चा पक्ष विकसित हो सके और अंतमें बाकीके पक्षको आत्मसात् कर स्वभावको रूपांतरित कर दे।

३१. प्रकृतिके प्रति प्रेम साधारणतः आधुनिक संस्कृतिसे अदूषित, निर्मल और स्वस्थ सत्ताका चिह्न है। शांत मनकी नीरवतामें ही प्रकृतिके साथ सबसे अच्छा संपर्क साधा जा सकता है।

सबसे पहले व्यक्ति बनो

बहुत-से लोग जो यहां हैं वे एक बात भूल जाते हैं। वे अन्तसे शुरू करना चाहते हैं। वे समझते हैं कि जिसे वे अतिमानसिक शक्ति या चेतना कहते हैं उसे वे अपने जीवनमें अभिव्यक्त करनेके लिये तैयार हैं, और वे इसे अपनी क्रियाओं, अपनी गतिविधियों, अपने दैनिक जीवनमें उंडेलना चाहते हैं। लेकिन मुश्किल यह है कि वे अतिमानसिक शक्ति या चेतनाके बारेमें एकदमसे कुछ नहीं जानते। वे नहीं जानते कि जिस सत्यको प्रकट करना है उसे अपने अंदर पानेसे पहले सबसे पहली जरूरत है उल्टे पथपर चलने, यानी अंतर्मुख होनेकी, जीवनसे अपने-आपको खींच लेनेकी . . .।

. . . पहले-पहल व्यक्तिको न केवल अपनी अंतरात्मा तथा उसपर अधिकार रखनेवाले भगवान्‌को ही पाना होगा बल्कि मनुष्यको उसके साथ तादात्म्य स्थापित करना होगा। फिर बादमें तुम बाहरी क्रिया-कलापोंकी ओर लौट सकते हो, और उन्हें रूपांतरित कर सकते हो।

*

तीन अवस्थाएं हैं: पहली है, व्यक्ति बनना, दूसरी है व्यक्तित्वका उत्सर्ग करना ताकि वह पूरी तरहसे भगवान्‌को समर्पित हो सके और उनके साथ एक हो जाये; तीसरी अवस्था है: भगवान् इस व्यक्ति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर अधिकार कर लें और उसे अपनी प्रतिमाके रूपमें बदल दें यानी वह भी दिव्य बन जाये।

*

...तुम्हारी सत्ताकी पहली अवस्था हर तरहकी बाहरी चीजोंका लगभग पूरा-पूरा मिश्रण होती है, और व्यक्तीकरणका भाव नहींके बराबर होता है, यानी विशेषीकरण जो तुम्हें भिन्न सत्ता बनाता है। तुम उन सभी व्यापक वैश्व शक्तियों, प्राण-शक्तियों या मानसिक शक्तियोंसे विचलित हो जाते हो—एक तरहका आकार जो तुम्हारा भौतिक आकार है वह विचलित हो जाता है—जो तुम्हारे रूपसे होकर गुजरती हैं और उसे क्रियान्वित करती हैं...।

और तुमने इस व्यापक अर्ध-चेतनामेंसे जो कुछ खींच लिया है, और उसे न्यूनाधिक स्वतंत्र सत्ताका निश्चित रूप दे दिया है, जो अपने बारेमें सचेतन है और जिसमें अपने गुण होते हैं, यह सब तुम्हारी वैयक्तिक सत्ता है। और यह वैयक्तिक सत्ता अंधकार, निश्चेतना और सामान्य जीवनकी सीमाओंकी गतिविधियोंसे भरी रहती है, और यही...और तुम्हें इसीको क्रमशः भागवत प्रभाव-की ओर खोलना चाहिये और उनमें वस्तुओंकी चेतना और समझ लानी चाहिये।

*

और मनुष्य जातिकी बहुत बड़ी संख्या कभी व्यक्ति नहीं बनेगी, वह हमेशा आकारहीन, एकदमसे मिली-जुली राशि बनी रहेगी, इस तरह (संकेत)। व्यक्ति बननेको श्रीअरविंद सचमुच मानसिक मनुष्य बनना कहते हैं। हां, अगर तुमने 'ह्यूमन साइकल' पढ़ी है तो तुम देखोगे कि सचमुच एक ऐसा मानसिक मनुष्य बनना भी इतना आसान नहीं है जो आपने-आप सोचता हो, जो सभी बाहरी प्रभावोंसे मुक्त हो, जिसमें अपना व्यक्तित्व हो, जो अस्तित्व रखता हो, उसकी अपनी वास्तविकता हो; यह भी इतना आसान नहीं है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले तुम्हें सचेतन, सुनिर्मित व्यष्टीकृत सत्ता बनना होगा, जो अपने-आपमें, अपने द्वारा, अपने समस्त परिवेशसे स्वतंत्र होकर जिये, जो बदले बिना कोई भी चीज सुन सके, कोई भी चीज पढ़ सके, कोई भी चीज देख सके। वह बाहरसे केवल उसी चीजको लेता है जिसे वह लेना चाहे। जो कुछ उसकी योजनाके अनुकूल न हो उसे वह सहज रूपसे अस्वीकार कर देता है और कोई भी वस्तु उसपर तबतक छाप नहीं छोड़ सकती जबतक कि वह स्वयं उसे ग्रहण करना स्वीकार न करे। तब तुम व्यक्तित्व बनना शुरू करते हो! जब तुम व्यक्तित्व हो तभी अपने-आपको समर्पित कर सकते हो....

जबतक तुम अपने-आपमें अस्तित्व नहीं रखते तबतक तुम कुछ दे भी नहीं सकते...और अपने-आपको दे सकनेके लिये पहले तुम्हारा अस्तित्व होना चाहिये। और अस्तित्व होनेके लिये पहले तुम्हें व्यष्टीकृत होना चाहिये।

*

तुम्हारा आरंभ बिंदु होना चाहिये अपने अंदर उस वस्तुकी खोज जो शरीर तथा जीवनकी परिस्थितियोंसे स्वतंत्र है, जिसका जन्म उस मानसिक रचनासे नहीं हुआ है जो तुम्हें दी गयी है, जिस भाषामें तुम बोलते हो, न ही उस परिवेशकी आदतों तथा रीति-रिवाजोंसे जिसमें तुम रहते हो, न उस देशसे जहां तुम्हारा जन्म हुआ है और न ही उस युगसे जिसमें तुम हो। तुम्हें अपनी सत्ताकी गहराइयोंमें उस वस्तुको ढूंढ़ना होगा जो अपने अंदर वैश्व भाव, असीम विस्तार, अटूट निरंतरताका भाव लिये रहती है...।

अंतरात्मिक सत्ता एक महान् खोज है जिसके लिये कम-से-कम उतनी ही सहनशक्ति तथा धैर्यकी आवश्यकता है जितनी नये महाद्वीपोंकी खोजमें होती है। जिसने इस कार्यको अपने हाथमें लेनेका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय कर लिया है उसके लिये सलाहके कुछ शब्द उपयोगी हो सकते हैं।

पहली और शायद सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मन आध्यात्मिक चीजोंका मूल्य आंकनेमें असमर्थ है। जिन लोगोंने इस विषयपर लिखा है वे सब यही कहते हैं; लेकिन बहुत कम ऐसे हैं जो इसे व्यवहारमें लायें। और फिर भी, इस पथपर अग्रसर होनेके लिये यह एकदमसे अनिवार्य है कि समस्त मानसिक धारणाओं-तथा प्रतिक्रियाओंसे बचा जाये।

आराम, संतोष, सुख-भोग या हर्षकी समस्त वैयक्तिक कामनाका त्याग कर दो। केवल प्रगतिकी धधकती लौ बन जाओ, जो कुछ तुम्हारे मार्गमें आये उसे अपनी प्रगतिकी सहायताके रूपमें लो और तुरंत वह अपेक्षित प्रगति कर लो।

तुम जो करो उसीमें सुख लेनेका प्रयास करो, लेकिन कभी कोई काम सुखके लिये न करो।

कभी उत्तेजित, उद्विग्न या विक्षुब्ध मत होओ। सभी परिस्थितियोंके सामने पूरी तरहसे अचंचल रहो। और फिर भी हमेशा सजग रहो ताकि जो प्रगति तुम्हें करनी है उसे तुम जान सको और उस प्रगति-को कर सको, समय नष्ट न करो।

भौतिक घटनाओंके बाहरी मूल्यपर न जाओ। वे हमेशा किसी दूसरी वस्तुकी—उस सच्ची वस्तुको अभिव्यक्त करनेका भोंडा प्रयास होती है जो हमारी सतही समझसे बच निकलती है।

कभी किसीके आचरणके बारेमें शिकायत न करो, जबतक कि तुम्हारे अंदर उसकी प्रकृतिकी उस वस्तुको बदलनेकी शक्ति न हो जो उससे इस तरीकेसे कार्य करवाती है; और अगर तुम्हारे अंदर शक्ति है, तो शिकायत करनेकी जगह उसे बदल दो।

तुम जो भी करो, कभी उस लक्ष्यको न भूलो जिसे तुमने अपने सामने रखा है। एक बार तुम इस महान् अभियानपर निकल पड़ो तो कोई भी चीज बड़ी या छोटी नहीं होती; सभी चीजें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समान रूपसे महत्त्वपूर्ण होती हैं और या तो उसकी सफलताको तेज कर देती हैं या उसमें देर लगा सकती हैं। अतः खानेसे पहले, इस अभीप्साके साथ कुछ क्षणोंके लिये एकाग्र रहो कि जो भोजन तुम करनेवाले हो वह तुम्हारे शरीरको वह तत्त्व प्रदान करे जो तुम्हारे महान् अन्वेषणके प्रयासका मजबूत आधार बनानेके लिये आवश्यक है और इस प्रयासमें स्थायित्व तथा अध्यवसायके लिये ऊर्जा प्रदान करे।

सोनेसे पहले, तुम कुछ क्षणोंके लिये इस अभीप्सामें एकाग्रचित्त होओ कि नींद तुम्हारी थकी हुई स्नायुओंको फिरसे चंगा कर दे, तुम्हारे मस्तिष्कमें स्थिरता और अचंचलता लाये ताकि जागनेपर तुम पुनर्नवीकृत ओजके साथ महान् उपलब्धिके पथपर अपनी यात्राको फिरसे आरंभ कर सको।

क्रिया करनेसे पहले, इस संकल्पके साथ अभीप्सा करो कि तुम्हारा कार्य इस महान् उपलब्धिकी ओर अग्रसर होनेमें तुम्हें सहायता पहुंचाये या कम-से-कम किसी भी तरहसे बाधक न बने।

जब तुम बोलो, तो मुंहसे शब्द निकालनेसे पहले कम-से-कम इतनी देर तो अपने-आपको एकाग्र कर लो कि शब्दोंपर तुम्हारा नियंत्रण रहे और उन्हीं शब्दोंको मुंहसे निकलने दो जो एकदमसे अनिवार्य हों, केवल उन शब्दोंको जो इस महान् उपलब्धिके पथोंपर अग्रसर होनेमें किसी भी प्रकार बाधक न हों।

संक्षेपमें, अपने जीवनके ध्येय तथा लक्ष्यको कभी न भूलो। इस महान् उपलब्धिका संकल्प हमेशा तुम्हारे ऊपर रहे, तुम जो कुछ करो, और जो कुछ तुम हो, उसपर मानों प्रकाशके एक विशाल पक्षीकी भांति रहे जो तुम्हारी सत्ताकी समस्त गतिविधियोंको नियंत्रित करे।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंदका योग

मेरे योगका उद्देश्य है भागवत सत्य तथा उसकी गतिशील निश्चितियोंके प्रकाश, शक्ति तथा आनंदको जीवनमें नीचे उतार कर उसे रूपांतरित करना। यह योग जगत्‌को त्यागकर तपस्या या संन्यास नहीं बल्कि दिव्य जीवनका योग है।

*

...इस योगका लक्ष्य जगत् तथा जीवनसे बाहर निकलकर स्वर्ग या निर्वाणमें जाना नहीं है बल्कि जीवन तथा अस्तित्वका परिवर्तन है, यह जीवनको गौण या संयोगके रूपमें नहीं बल्कि एक सुस्पष्ट तथा मुख्य लक्ष्यके रूपमें मानता है।

*

...हमारा लक्ष्य व्यक्तिके लिये भागवत उपलब्धिकी व्यक्तिगत प्राप्ति नहीं है बल्कि यहां, पार्थिव चेतनाके लाभान्वयनके लिये कोई वस्तु है, केवल वैश्वातीत नहीं वैश्व प्राप्ति है।

—श्रीअरविंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

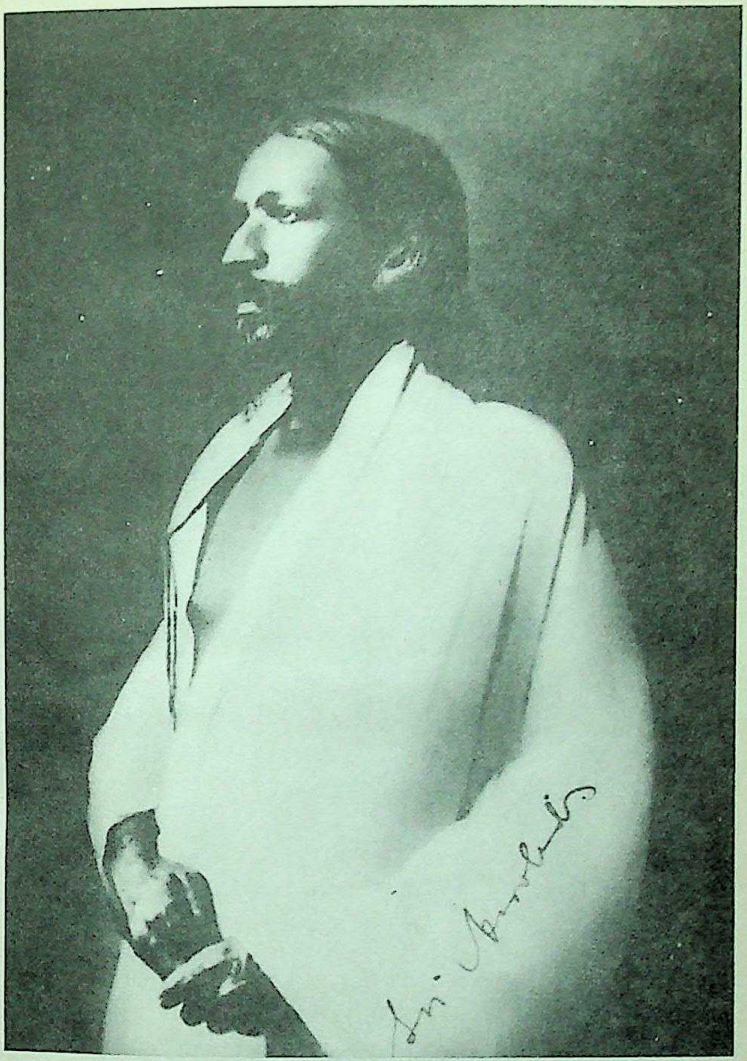

श्रीअरविंद (१९१४-२०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"This is Aditi, the mother of the Gods
... deep in the heart of things she has entered,
there she is seated.
This is That thou seekest."

From: Katha Upanishad
(Translation by Sri Aurobindo)

या प्राणेन सम्भवत्यदितिर्देवतामयी।
गुहां प्रविश्य तिष्ठन्तीं या भूतेभिर्व्यजायत।
एतद्वै तत् ॥७॥

—'कठोपनिषद्'से

"ये देवताओंकी माता अदिति हैं
...वस्तुओंके हृदयके मर्ममें उन्होंने प्रवेश कर लिया है,
वहां वे विराजमान हैं।
यही है जिसकी तू खोज कर रहा है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

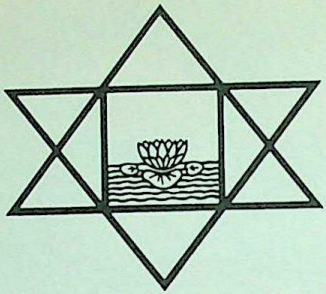

The descending triangle represents Sat-Chit-Ananda.
The ascending triangle represents the aspiring answer from matter under the form of life, light and love.
The junction of both - the central square - is the perfect manifestation having at its centre the Avatar of the Supreme - the lotus.
The water - inside the square - represents the multiplicity, the creation.

श्रीअरविंदका प्रतीक

नीचे उतरता हुआ त्रिकोण सत्, चित् आनंदका प्रतीक है।

ऊपर उठता हुआ त्रिकोण जीवन, ज्योति और प्रेमके रूपमें जड़-द्रव्यके अभीप्सात्मक उत्तरका प्रतीक है।

दोनोंका संयोजन—बीचका समचतुष्कोण—है पूर्ण अभिव्यक्ति जिसके बीच परम पुरुषका अवतार—कमल—है।

समचतुष्कोणके अंदर जल बहुलताका, सृष्टिका प्रतीक है।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपांतर

प्रभो, हम धरतीपर तेरा रूपांतरका कार्य करनेके लिये हैं। यही हमारी एक मात्र इच्छा, एक मात्र तन्मयता है। वर दे कि यह हमारा एकमात्र व्यवसाय भी हो और हमारे सारे कार्य, इस एक लक्ष्यकी ओर जानेमें हमारी सहायता करें।

*

श्रीअरविंदका योग करनेका अर्थ है, सर्वांगीण रूपसे अपना रूपांतर करनेकी इच्छा करना। अपने जीवनमें यही एकमात्र लक्ष्य रखना, ऐसा कि इसके सिवा और कोई लक्ष्य ही न रहे, बस उसीका अस्तित्व हो। तब तुम चाहो या न चाहो, तुम स्पष्ट रूपसे उसी का अनुभव करते हो, लेकिन अगर तुम नहीं चाहते तो भी, तुम सद्भावनाका जीवन, सेवाका जीवन, आपसी समझौतेका जीवन जी सकते हो। तुम दिव्य कार्यको ज्यादा आसानीसे पूरा करनेके लिये श्रम कर सकते हो—यह सब और अन्य बहुत-सी चीजें कर सकते हो लेकिन इसके और योग करनेके बीच बहुत अंतर है।

*

केवल मन और प्राण ही नहीं, शरीरको भी अपने समस्त कोषाणुओंमें दिव्य रूपांतरके लिये अभीप्सा करनी चाहिये।

*

रूपांतर वह परिवर्तन है जिसके द्वारा सत्ताके सभी तत्त्व और सभी गतियां अतिमानसिक सत्यको अभिव्यक्त करनेके लिये तैयार हो जाती हैं।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्य-चेतना उन्हींमें अभिव्यक्त हो सकती है जो अहंकारसे मुक्त हों।
——माताजी

एकमात्र सृजन जिसके लिये यहां कोई स्थान है, वह है अति मानसिक सृजन, दिव्य सत्यको धरतीपर उतारना, केवल मन और प्राणमें ही नहीं, शरीर और जड़ तत्त्वमें भी। हमारा उद्देश्य अहंके विस्तारपर सभी "सीमाओं"को हटाना और मानव मनके सभी विचारों या अहं-केंद्रित प्राण-शक्तिकी कामनाओंकी परिपूर्तिके लिये खुली छूट देना नहीं है, हममेंसे कोई भी यहां "जो मरजी करनेके लिये" या एक ऐसा जगत् बनानेके लिये नहीं है जहां हम अन्ततः जो चाहे वह कर सकेंगे, हम यहां वह करनेके लिये हैं जो भगवान् चाहें, एक ऐसा जगत् बनानेके लिये हैं जिसमें दिव्य इच्छा अपने सत्यको मानव अज्ञानसे विकृत हुए बिना, प्राणिक कामनासे भ्रष्ट और अशुद्ध रूपमें अनूदित हुए बिना व्यक्त कर सके। अतिमानसिक योगके साधकको जो कार्य करना है वह उसका अपना कार्य नहीं है जिसके लिये वह अपनी निजी शर्तें लगा सकता है। वह भगवान्का कार्य है जिसे उसे भगवान्की लगायी शर्तोंके अनुसार करना है। हमारा योग हमारे अपने लिये नहीं है, भगवान्के लिये है। हमें अपनी निजी अभिव्यक्ति नहीं खोजनी है, ऐसी अभिव्यक्ति जिसमें व्यक्तिगत अहं सभी सीमाओं और बंधनोंसे मुक्त हो, बल्कि भगवान्की अभिव्यक्तिको खोजना है। हमारी अपनी आध्यात्मिक मुक्ति, पूर्णता, समग्रता उस अभिव्यक्तिके परिणाम और भाव होंगे पर किसी अहं-भाव या अहं-केंद्रित या स्वार्थी प्रयोजनके लिये नहीं। इस मुक्ति, पूर्णता, समग्रताको भी स्वयं अपने लिये नहीं भगवान्के लिये खोजना होगा।
——श्रीअरविंद

हे प्रभो, हे अद्भुत सखा, हे सर्वशक्तिमान स्वामी, हमारी समस्त सत्तामें प्रवेश कर, यहांतक कि हमारे अंदर और हमारे द्वारा केवल तू ही जिये।

CC-0: In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम

भगवान्‌से प्रेम करो, भगवान्‌के प्रति समर्पण करो, भगवान्‌के लिये जियो और सच्चे निष्कपट बनो।

*

वह (प्रभु) हमेशा हम सबके साथ हैं और हम सब उनके साथ सतत संपर्कमें रह सकते हैं अगर हम आवश्यक कार्य करें, और वह है केवल उनसे **प्रेम** करना।

*

यहां ऐसे व्यक्ति हैं जो उन्हें (श्रीअरविंदको) देखते हैं और सतत रूपसे उनके संपर्कमें रहते हैं। वे वही हैं जो उनके आदेशके अनुसार जीनेके लिये उनसे निष्कपट तथा पर्याप्त रूपसे प्रेम करते हैं।

—माताजी

राधा भगवान्‌के लिये निरपेक्ष प्रेमका मूर्तिमान आदर्श है, उच्चतर आध्यात्मिकसे जड़-भौतिकतकमें सत्ताके सभी भागोंमें पूर्ण और सर्वांगीण, जो समस्त सत्ताका निरपेक्ष आत्म-समर्पण तथा पूर्ण उत्सर्ग लाती है...।

*

जो प्रेम भगवान्‌के प्रति मुड़ा हुआ हो उसे वह सामान्य प्राणिक भाव नहीं होना चाहिये जिसे मनुष्य इस नामसे पुकारते हैं; क्योंकि वह प्रेम नहीं है, वह तो बस एक प्राणिक कामना, विनियोगकी सहज वृत्ति, अधिकार करनेका आवेग और एकाधिकारकी भावना होती है। यह भागवत प्रेम तो नहीं है और इसे कम-से-कम मात्रामें भी योगके साथ मिलनेकी छूट नहीं देनी चाहिये। भगवान्‌के प्रति सच्चा प्रेम है आत्मोत्सर्ग जो मांगरहित हो, आत्म-समर्पण तथा उत्सर्गसे भरा हो। वह कोई दावा नहीं करता, कोई शर्त नहीं लगाता, कोई सौदा नहीं करता, ईर्ष्या, अभिमान या क्रोध-की किन्हीं भी उग्रताओंमें रस नहीं लेता क्योंकि उसकी बनावटमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये सब चीजें हैं ही नहीं। बदलेमें परम माता भी स्वयंको मुक्त रूपसे देती हैं—ये अपने-आपको इस तरह आंतरिक अर्पणके रूपमें निरूपित करती हैं—तुम्हारे मन, प्राण, भौतिक चेतनामें उनकी उपस्थिति, तुम्हें भागवत प्रकृतिमें पुनर्गठित करनेकी उनकी शक्ति, तुम्हारी सत्ताकी सभी गतिविधियोंको अपने हाथमें लेकर उन्हें पूर्णता तथा परिपूर्तिकी ओर प्रवृत्त करना और उनका प्रेम जो तुम्हारा आलिंगन कर, तुम्हें अपनी बांहोंमें भरकर देवत्वके प्रति ले जाता है। यही वह चीज है जिसे तुम्हें अपने सभी भागोंमें, निम्नतम जड़-भौतिक तकमें अनुभव करने और अधिकृत करनेकी अभीप्सा करनी चाहिये, और यहां कोई सीमा नहीं है, न समयकी न समग्रताकी . . .।

गलतफहमियोंसे बचनेके लिये शायद मुझे दो तीन बातें जोड़ देनी चाहियें। पहली, भगवान्‌के बारेमें मैं जिस प्रेमकी बात कर रहा हूं वह केवल चैत्य प्रेम नहीं है; यह समस्त सत्ताका प्रेम है, प्राण तथा प्राण-भौतिक उसमें सम्मिलित हैं—सभी उसी समान आत्म-दानके समर्थ हैं। यह मानना भूल है कि अगर प्राण प्रेम करता है तो वह ऐसा प्रेम होना चाहिये जो अपनी कामनाकी संतुष्टिकी मांग करता और उसे आरोपित करता हो, यह मानना भूल है कि उसे या तो यह होना चाहिये या फिर प्राणको—अपनी "आसक्ति"से बच निकलनेके लिये—अपने प्रेम पात्रसे एकदमसे अलग हो जाना चाहिये। प्राण अपने संदेहरहित आत्म-दानमें सत्ताके अन्य किसी भी भागकी तरह निरपेक्ष हो सकता है; जब वह अपने प्रियतमके लिये स्वयंको भूल जाता है तो उसकी इस क्रियासे अधिक उदार कुछ नहीं हो सकता। प्राण तथा भौतिक दोनोंको अपने-आपको सच्चे तरीकेसे देना चाहिये—प्रेमके सच्चे तरीकेसे, अहंकारमयी कामनाके तरीकेसे नहीं।

—श्रीअरविंद

"मैं तुझसे प्रेम करता हूं और मैं समस्त शाश्वतताके लिये तेरा हूं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

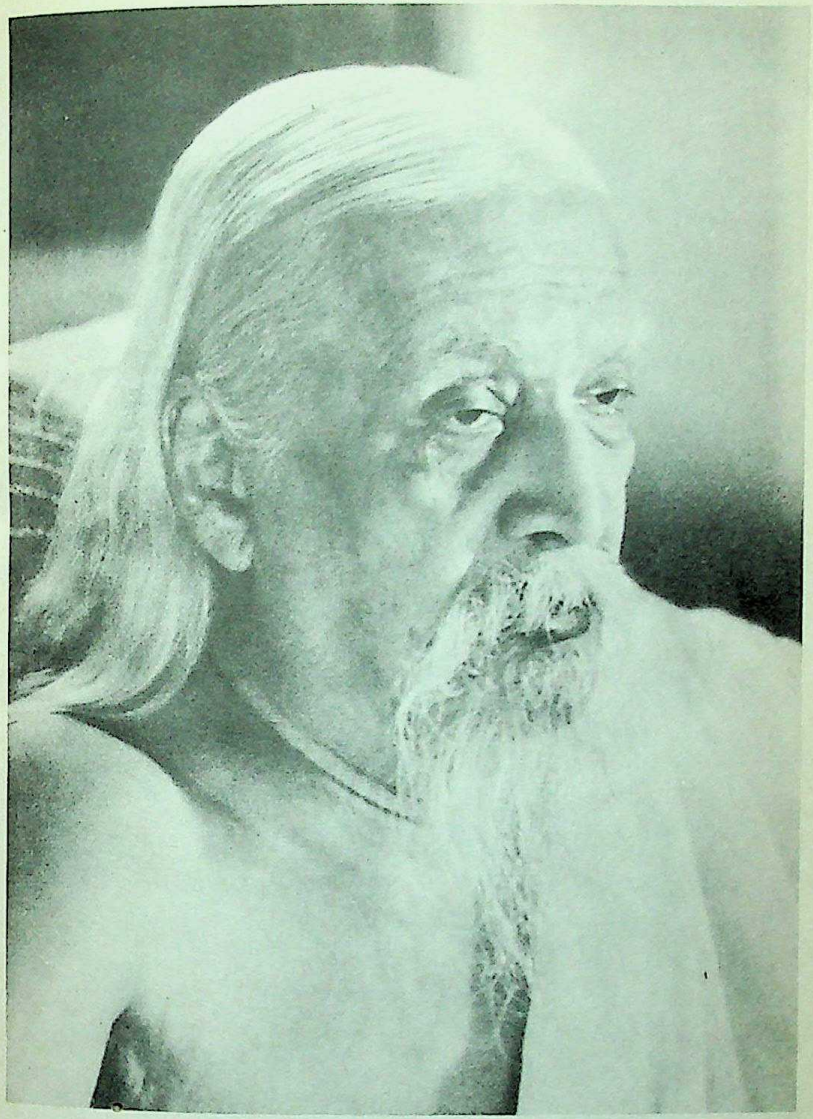

श्रीअरविंद (१९५०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भागवत परम शक्ति

एक भागवत परम शक्ति है जो विश्वमें तथा व्यक्तिमें कार्य करती है और व्यक्ति तथा विश्व दोनोंके परे भी है। माताजी इन सबका प्रतीक हैं, लेकिन वे यहां शरीरमें इसलिये कार्य कर रही हैं कि किसी ऐसी चीजको नीचे उतार लायें जो इस जड़-भौतिक जगत्में अभिव्यक्त नहीं हुई है ताकि यहांके जीवनका रूपांतरण कर सकें... वे शरीरमें यहां हैं लेकिन अपनी समस्त चेतनामें वे भगवान्के अन्य सभी भागोंके साथ तदात्म भी हैं।

*

उनका शरीर धारण करना पार्थिव चेतनाके लिये एक अवसर है जिससे वह अपने अंदर अधिमानसको ग्रहण कर ले, उसे संभव बनानेके लिये पहले आवश्यक रूपांतर साधित करे। उसके बाद अतिमानसके द्वारा और अधिक रूपांतर होगा लेकिन समस्त पार्थिव चेतना अतिमानसिक न हो जायेगी—पहले आयेगी अतिमानसका उस तरह प्रतिनिधित्व करनेवाली एक नयी जाति, जैसे मनुष्य मनका प्रतिनिधित्व करता है।

—श्रीअरविंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृतज्ञता

कृतज्ञता

भगवान्‌से मिलनेवाली कृपाकी प्रेमपूर्ण मान्यता।

भगवान्‌ने तुम्हारे लिये जो कुछ किया है और जो कर रहे हैं उसकी नम्र मान्यता।

भगवान्‌के प्रति सहज आभारका भाव जो तुमसे अपना अच्छे-से अच्छा प्रयास करवाता है ताकि भगवान् तुम्हारे लिये जो कुछ कर रहे हैं उसके लिये तुम कम अयोग्य बनो।

*

कृतज्ञ होनेका अर्थ है परमोच्चकी उस अद्‌भुत दिव्य कृपाको कभी न भूलना जो हर एकको उसके अपने बावजूद, उसके अज्ञान, गलत-फहमियों, अहंकार, उसके विरोधों तथा विद्रोहके बावजूद, छोटे-से-छोटे रास्तोंसे उसके भागवत लक्ष्यकी ओर ले जाती है।

हमारे हृदयमें कृतज्ञताकी पवित्र ऊष्मा भरी, मधुर तथा देदीप्यमान अग्नि हमेशा प्रज्ज्वलित रहनी चाहिये; भागवत कृपाके प्रति कृतज्ञताकी अग्नि जो साधकको उसके लक्ष्यकी ओर ले जाती है—जितना अधिक वह कृतज्ञ होता है, भागवत कृपाकी इस क्रियाको स्वीकार करता और उसके प्रति आभारी होता है, रास्ता उतना ही छोटा हो जाता है।

*

मैं ऐसे लोगोंको जानती थी जिन्हें किसी प्रकारका ज्ञान न था, यानी, किसी चीजका ज्ञान नहीं था, जो बहुत कम पढ़े-लिखे थे, जिसके मन एकदमसे सामान्य प्रकारके थे और जिनमें उस कृतज्ञता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की, ऊष्माकी वह क्षमता थी जो अपने-आपको देती है, समझती है और कृतज्ञ होती है।

हां, तो उनमें बहुधा अपनी चैत्य सत्ताके साथ संपर्क होता था, करीब-करीब निरंतर रहता था, यहांतक कि वे इसके बारेमें सक्षम थे, सचेतन थे—बहुत सचेतन नहीं बल्कि थोड़े-से—इस अर्थमें सचेतन कि उन्हें अनुभव होता था कि उन्हें ले जाया जा रहा है, सहायता दी जा रही है, अपने-आपके ऊपर उठाया जा रहा है...।

हम कहते हैं: उत्साहकी क्षमता ऐसी चीज है जो तुम्हें अपने दरिद्र, क्षुद्र, निम्न अहंकारसे ऊपर उठा देती है; और उदारतापूर्ण कृतज्ञता, कृतज्ञताकी उदारता जो अपने आपको धन्यवाद-ज्ञापनमें छोटे-से अहंकारमेंसे बाहर निकालती है। अपनी चैत्य-सत्तामें भगवान्‌के साथ संपर्क पानेके ये दो सबसे अधिक शक्तिशाली उत्तोलक हैं। यह चैत्य सत्ताके साथ जोड़नेवाली कड़ीका काम देता है—सबसे अधिक निश्चित कड़ीका।

*

इस प्रकारकी कृतज्ञताका भाव कि भगवान्‌का अस्तित्व है; चमत्कारपूर्ण कृतज्ञताकी यह भावना जो इस तथ्यके कारण तुम्हें सचमुच उदात्त हर्षसे भर देती है कि भगवान्‌का अस्तित्व है, कि विश्वमें कोई वस्तु है जो भगवान् है, केवल वह भयंकरता ही नहीं है जिसे हम देखते हैं, कि भगवान् हैं, भगवान्‌का अस्तित्व है। और हर बार जब कोई मामूली-सी चीज भी तुम्हें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें भागवत अस्तित्वकी इस उदात्त वास्तविकताके संपर्कमें ला देती है तो तुम्हारा हृदय इतने तीव्र, इतने अद्‌भुत हर्षसे, ऐसी कृतज्ञतासे भर जाता है जो सभी चीजोंमें सबसे अधिक आनंदप्रद रस है।

ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो तुम्हें कृतज्ञताके हर्षके समान हर्ष प्रदान करे। तुम एक चिड़ियाको गाते सुनते हो, सुन्दर फूलको देखते हो, एक नन्हें-से बच्चेको निहारते हो, उदारताकी किसी क्रिया-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर दृष्टिपात करते हो, कोई सुन्दर वाक्य पढ़ते हो, डूबते हुए सूरज-को देखते हो, इसका कोई महत्त्व नहीं कि वह क्या है पर अचानक यह चीज तुम्हें अभिभूत कर देती है, इस प्रकारका भावावेग—वास्तव-में इतना गभीर, इतना गभीर—कि संसार भगवान्‌को अभिव्यक्त कर रहा है, कि जगत्‌के पीछे कोई वस्तु है जो भगवान् है।

—माताजी

"मेरी सारी सत्ता तेरे सम्मुख कृतज्ञतामें साष्टांग प्रणत है . . .।"

संपूर्ण और निष्कपट समर्पण

अगर तुम इस रूपांतरकी इच्छा रखते हो तो अपने-आपको बिना किसी ननुनचके, बिना प्रतिरोधके माताजी और उनकी शक्तियोंके हाथमें रख दो। और उन्हें तुम्हारे अंदर बिना बाधाके कार्य करने दो। तुम्हारे अंदर तीन चीजें होनी चाहियें, चेतना, नमनीयता और बिना शर्तके समर्पण। क्योंकि तुम्हें अपने मन, अंतरात्मा, हृदय और प्राण और अपने शरीरके कोषाणुओंतकमें सचेतन होना चाहिये, माताजी और उनकी शक्तियों तथा उनके कार्यके बारेमें अभिज्ञ होना चाहिये। यद्यपि वे तुम्हारे अंदर तुम्हारे अंधकारमें, तुम्हारे अचेतन भागों और क्षणोंमें भी काम कर सकती और करती हैं लेकिन यह वही बात नहीं होती जैसी तब जब तुम जाग्रत् और उनके साथ जीवित संपर्कमें हो। तुम्हारी समस्त प्रकृतिको उनके स्पर्शके प्रति नमनीय होना चाहिये—अभिमानी, अज्ञान भूरे मनकी तरह, जो प्रदीपन और परिवर्तनका शत्रु है, प्रश्न और संदेह तथा विवाद न करना चाहिये, अपनी ही गतिविधियोंपर आग्रह न करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये जैसे मनुष्यका प्राण आग्रह करता और अपनी हठीली कामनाओं और दुर्भावनाओंसे हर दिव्य प्रभावका विरोध करता है, या तुम्हारी प्रकृतिकी अक्षमता, जड़ता और तमसकी खाईमें घिरा हुआ और बाधक नहीं होना चाहिये जैसे मनुष्यकी भौतिक चेतना बाधा देती है और अपनी तुच्छता और अपने अंधेरेमें रस लेती है। हर ऐसे स्पर्शके विरुद्ध शोर मचाती है जो उसकी आत्मा-हीन चर्या और मन्द, तन्द्रालु, आलस्यपूर्ण निद्रामें बाधा दे। तुम्हारी भीतरी और बाहरी सत्ताका अबाध्य समर्पण तुम्हारी प्रकृतिके सभी अंगोंमें यह नमनीयता ले आयेगा, परम प्रज्ञा, प्रकाश, शक्ति, सामंजस्य, सौंदर्य, पूर्णता—जो ऊपर से प्रवाह रूपमें आते हैं—उनकी ओर सतत खुलनेसे तुम्हारे अंदर हर जगह चेतना जागेगी। शरीर भी जाग उठेगा और अंततः उसकी चेतना अन्तस्तलीय न रह कर अतिमानसिक अतिचेतन शक्ति-के साथ जुड़ जायगी और ऐसा अनुभव करेगी कि उसकी सभी शक्तियां ऊपरसे, नीचेसे, चारों ओरसे उसमें प्रवेश कर रही हैं और परम प्रेम और आनंदके प्रति रोमांचित हो रही हैं।

दो शक्तियां हैं जिनके संयोगसे ही वह महान् और कठिन कार्य पूरा हो सकता है जो हमारी साधनाका लक्ष्य है। एक है दृढ़ और अटूट अभीप्सा जो नीचेसे पुकारती है और दूसरी है भगवत्कृपा जो ऊपरसे उसका उत्तर देती है।

किंतु परम भगवत्कृपा केवल प्रकाश और सत्यकी स्थितियोंमें ही कार्य करेगी, असत्य और अज्ञान द्वारा लादी हुई स्थितियोंमें नहीं। क्योंकि यदि वह असत्यकी मांगोंके सामने झुक जाय तो अपने उद्देश्य-को ही विफल कर देगी।

प्रकाश और सत्यकी स्थितियां ही एकमात्र वे स्थितियां हैं जिनमें परम शक्ति नीचे उतरेगी; और केवल वह उच्चतम अतिमानसिक शक्ति ही, ऊपरसे उतरकर और नीचेसे खुलकर भौतिक प्रकृतिपर सफलतापूर्वक काबू पा सकती और इसकी कठिनाइयोंको नष्ट कर सकती है, उसे जीतकर अपने हाथोंमें ले सकती है। ...होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये पूरा और सच्चा समर्पण, होना चाहिये भगवान्‌की शक्तिकी ओर उद्‌घाटन—अपनेको अनन्य रूपसे खोलना। जो सत्य ऊपरसे उतर रहा है उसे हर क्षण पूरी तरह अपनाना चाहिये, पार्थिव प्रकृतिपर मन, प्राण और देहकी जिन शक्तियों और रूपोंका शासन चल रहा है उनके मिथ्यापनको हर क्षण पूरी तरह अस्वीकार करना चाहिये।

यह समर्पण संपूर्ण और सत्ताके अंग-प्रत्यंगको लिये हुए होना चाहिये। इतना ही काफी नहीं है कि हृत्पुरुष स्वीकार कर ले, मनका उच्चतर भाग मान ले, अन्तः प्राण अधीन हो जाय और देहकी अंदरकी चेतना उसका प्रभाव अनुभव करे, वरन् सत्ताके किसी हिस्से-में, यहांतक कि बाहरीसे बाहरी अंगमें भी कोई ऐसी चीज नहीं होनी चाहिये जिसे किसी प्रकारका कोई संकोच हो, जो किसी संशय, अस्पष्टता और छल-कपटके पीछे छिपी हो, जो विद्रोह करती हो, या इंकार करती हो।

यदि सत्ताका एक हिस्सा तो समर्पण करे लेकिन दूसरा अपने-आपको रोक ले, अपने ही रास्ते चले या अपनी ही शर्तें रखे, तो समझ लो कि जब-जब ऐसा होता है तब-तब तुम अपने-आप ही भगवत्कृपाको अपने पाससे दूर हटा देते हो।

यदि तुम अपनी भक्ति और अपने समर्पणके पीछे अपनी इच्छाओं-को, अहंकारकी मांगोंको और प्राणके हठोंको छिपाये रहो, यदि तुम इन चीजोंको सच्ची अभीप्साके स्थानपर ला बिठाओ या इन्हें सच्ची अभीप्साके साथ मिला दो और इन्हें भगवती शक्तिपर लादना चाहो तो रूपांतर करनेके लिये तुम्हारा भगवत्कृपाको पुकारना बेकार है।

यदि एक ओरसे या एक भागमें तुम अपने-आपको सत्यके लिये खोलो और दूसरी ओरके दरवाजे लगातार विरोधी शक्तियोंके लिये खोलते जाओ तो यह आशा व्यर्थ है कि भगवत्कृपा तुम्हारा साथ देगी। तुम्हें मंदिरको साफ रखना होगा, यदि तुम उसमें सजीव रूपसे भगवान्‌की प्रतिष्ठा करना चाहते हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि जब-जब शक्ति आये और अपने साथ सत्यको लाये तब-तब तुम उसकी ओरसे पीठ फेर लो और फिरसे, निकाले हुए असत्यको बुला लो, तो तुम भागवत कृपाको सहायता न देनेका दोष नहीं दे सकते। इसमें दोष है तुम्हारे अपने संकल्पके मिथ्याचारका, तुम्हारे अपने समर्पणकी कमियोंका।

यदि तुम सत्यके लिये पुकार करो लेकिन साथ ही तुम्हारे अंदर कोई चीज असत्य, अज्ञान और अभागवतका वरण करती रहे या इन्हें पूरी तरह छोड़ना न चाहे, तो तुम्हारे ऊपर आक्रमणका मार्ग सदा खुला रहेगा और भगवत्कृपा तुमसे पीछे हट जायगी। पहले यह पता लगाओ कि तुम्हारे अंदर क्या मिथ्या है, क्या अंधकारमय है, फिर दृढ़तासे उसे निकाल बाहर करो। तभी तुम रूपांतरके लिये भगवान्‌की शक्तिको पुकारनेके अधिकारी बनोगे।

यह कल्पना न करो कि भगवान्‌को निवेदित किए गए घरमें सत्य और असत्य, प्रकाश और अंधकार, समर्पण और स्वार्थ साथ-साथ रहने दिये जायेंगे। रूपांतर सर्वांगीण होना चाहिये, अतः उसके मार्गमें आनेवाली बाधाओंका त्याग भी सर्वांगीण ही होना चाहिये।

यह मिथ्या धारणा त्याग दो कि तुम चाहे भगवान्‌की शर्तोंका पालन न भी करो, भगवती शक्ति तुम्हारे लिये, तुम्हारी मांगके अनुसार सब कुछ कर देगी या करनेके लिये बाधित है। अपने समर्पणको सच्चा और संपूर्ण बनाओ तभी तुम्हारे लिये बाकी सब कुछ किया जायगा।

यह मिथ्या और आलस्य-भरी आशा भी त्याग दो कि भगवती शक्ति ही तुम्हारे लिये समर्पण भी कर देगी। भगवान् भगवती शक्तिके प्रति तुम्हारा आत्म-समर्पण मांगते हैं, उसे तुमपर लादते नहीं। तुम हर पल स्वतंत्र हो; जबतक अटल रूपांतर न हो जाय

(शेष पृ० २६)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी और उसकी आत्मा अविच्छेद्य रूपसे संयुक्त हैं
उस एक कार्यमें जिसके लिए हम जन्मे थे,
जगत्के उन्नयनके लिए ईश्वरकी ओर अमर्त्य प्रकाशमें,
ईश्वरको जगत्में उतारनेके लिए पृथ्वीपर हम आये हैं,
पार्थिव जीवनका दिव्य जीवनमें करनेको रूपांतर।

('सावित्रीसे') —श्रीअरविंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

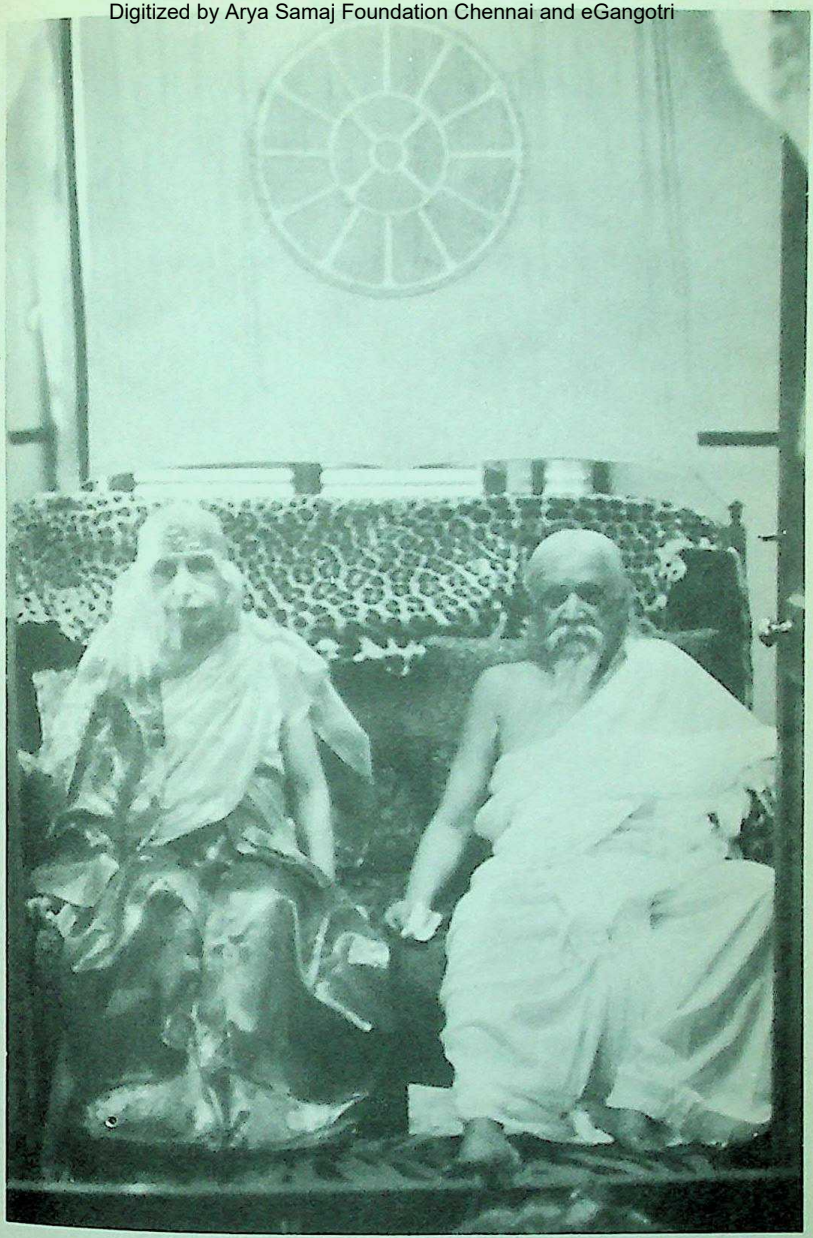

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

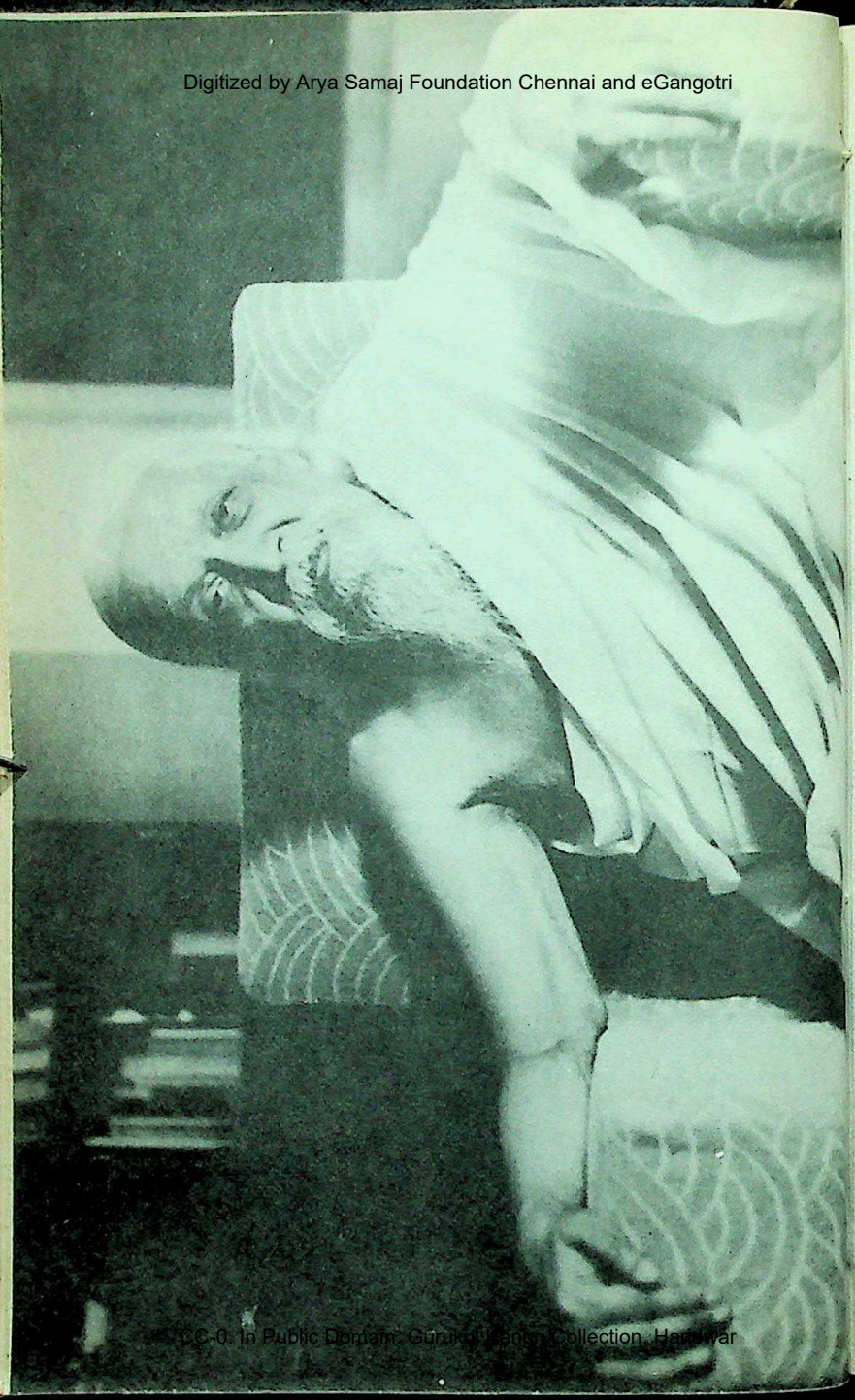

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्माके शिखर और प्रकृतिका मूल निकट आ जायेंगे
अपने पृथक् सत्यके रहस्यको जानकर
और पहचानेंगे एक दूसरेको एक देवके सदृश
आत्मा झलकने लगेगी भौतिककी निर्निमेष दृष्टिसे
और भौतिकमें प्रकाशित होने लगेगा आत्माका रूप

इस मर्त्य जीवनमें होगा शाश्वतताके आनंदका वास
देह-आत्मा लेगी अमरताका आस्वाद
तब विश्व मुक्तिदाताका कार्य पूर्ण होगा।

('सावित्री'से) —श्रीअरविंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तबतक तुम भगवान्‌को अस्वीकार करने और उनका त्याग करने, अपने आत्म-दानको वापस ले लेनेके लिये स्वतंत्र हो—शर्त यह है कि तुम उसका आध्यात्मिक फल भोगनेके लिये भी तैयार रहो। तुम्हारा समर्पण अपनी इच्छासे और मुक्त भावसे होना चाहिये। वह एक जीवित सत्ताका समर्पण होना चाहिये, निर्जीव कठपुतली या पराधीन यंत्रका नहीं।

तामसिक निष्क्रियताको ही सच्चा समर्पण मान लेनेकी भूल हमेशा हुआ करती है, किंतु तामसिक निष्क्रियतासे कोई सत्य और सशक्त वस्तु नहीं आ सकती। भौतिक प्रकृति अपनी तामसिक निष्क्रियताके कारण ही अंधकारपूर्ण या अदिव्य प्रभावका शिकार बना करती है। भगवती शक्तिकी क्रियाके प्रति प्रसन्न, सशक्त और सहायक अधीनता होनी चाहिये और सत्यके ज्ञानसे दीप्त अनुयायीकी, अंधकार और असत्यसे लड़नेवाले आंतर योद्धाकी और भगवान्‌के सच्चे सेवककी आज्ञाकारिता होनी चाहिये।

यही है सच्चा भाव। और, जो इसे ग्रहण कर सकते और बनाये रख सकते हैं, केवल उन्हींकी श्रद्धा निराशाओं और कठिनाइयोंके बीच अटल बनी रहेगी और वे ही अग्नि-परीक्षामेंसे होकर परम विजय और महान् रूपांतरकी प्राप्ति करेंगे।

जगत्‌में जो कुछ होता है उस सबमें, सब कामोंके पीछे भगवान् अपनी शक्तिके द्वारा रहते हैं, किंतु वे अपनी योगमायासे ढके रहते हैं और इस अपरा प्रकृतितमें जीवके अहंकारके द्वारा कार्य करते हैं।

योगमें भी भगवान् ही साधक हैं और साधना भी, यह उन्हींकी शक्ति है जो अपने प्रकाश, बल, ज्ञान, चेतना और आनंदसे आधारपर क्रिया करती है और जब आधार इस शक्तिकी ओर खुल जाता है तो उसमें अपनी इन दिव्य शक्तियोंको भरती है, जिनसे साधना संभव होती है, परंतु जबतक निम्न प्रकृति सक्रिय है तबतक साधकके व्यक्तिगत प्रयत्नकी आवश्यकता बनी रहती है।

जिस व्यक्तिगत प्रयत्नकी आवश्यकता है वह है अभीप्सा, त्याग और समर्पणकी तिहरी साधना :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभीप्सा : जो सतर्क, निरंतर और स्थिर हो, जो मनका संकल्प, हृदयकी चाह, प्राणकी स्वीकृति हो, देहकी चेतना और प्रकृतिको उसी शक्तिकी ओर खोलने और सुनम्य बनानेका संकल्प हो;

त्याग : निम्नतर प्रकृतिकी सभी वृत्तियोंका, मनके विचारोंका, मतों, पसन्दों, आदतों और कल्पनाओंका त्याग, ताकि सच्चे ज्ञानको मनकी निस्तब्धतामें रिक्त स्थान मिले—प्राण-प्रकृतिकी सारी इच्छाओं, मांगों, क्षुधाओं, अनुभवों, आवेगों, स्वार्थपरताओं, अभिमान, अहंमन्यता, काम, लोभ, ईर्ष्या, असूया, सत्यका विरोध, इन सबका त्याग ताकि एक शांत, विशाल, सबल तथा समर्पित प्राण सत्तामें वास्तविक शक्ति और आनंदकी वर्षा हो—देह प्रकृतिकी मूढ़ता, संशय, अविश्वास, अंधता, दुराग्रह, क्षुद्रता, आलस्यपूर्णता, परिवर्तन-की अनिच्छा, तामसिकता, इन सबका त्याग, ताकि ज्योति, शक्ति और आनंदकी सच्ची स्थिरता निरंतर अधिकाधिक दिव्य होती हुई देहमें प्रतिष्ठित हों;

समर्पण : भगवान् और उनकी शक्तिके प्रति आत्म-समर्पण, हम जो कुछ हैं, और हमारे पास जो कुछ है उस सबका समर्पण, हमारी चेतनाके प्रत्येक स्तरका और हमारी प्रत्येक क्रियाका समर्पण।

जब समर्पण और आत्म-निवेदन बढ़ते हैं तो उसी अनुपातमें साधकको यह अनुभव होता जाता है कि भगवती शक्ति ही साधना कर रही हैं, अपने-आपको उसके अंदर अधिकाधिक डाल रही हैं, और उसके अंदर भागवत प्रकृतिकी स्वतंत्रता और पूर्णता स्थापित कर रही हैं। यह सचेतन प्रक्रिया उसके निजी प्रयासका जितना अधिक स्थान लेती जायगी उतनी ही अधिक तेज और सच्ची उसकी प्रगति होगी। परंतु यह पूरी तरह व्यक्तिगत प्रयासकी आवश्यकताका स्थान तबतक नहीं ले सकती जबतक समर्पण और आत्म-निवेदन नखसे शिखतक विशुद्ध और पूर्ण न हो जायं।

ध्यान रहे कि तामसिक समर्पण, जो समर्पणकी शर्तें पूरी करनेसे इंकार करता है और भगवान्‌को इसीलिये पुकारता है कि वे उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कष्ट और प्रयाससे बचा दें, ऐसा समर्पण एक धोखा है और वह मुक्ति और पूर्णतातक नहीं ले जा सकता।

जीवनमें सब प्रकारके भय, संकट और विनाशसे बचकर चलनेके लिये दो ही चीजोंकी आवश्यकता है, दो चीजें जो सदा साथ रहती हैं—एक तो भगवती मांकी कृपा, और दूसरी, तुम्हारी ओरसे ऐसी आंतरिक स्थिति जो श्रद्धा, निष्ठा और समर्पणसे पूर्ण हो। तुम्हारी श्रद्धा विशुद्ध, निश्छल और पूर्ण हो। मन और प्राणकी अहंकारमय श्रद्धा—जो महत्त्वाकांक्षा, अभिमान, दंभ व मानसिक अहंकारसे और प्राणकी स्वेच्छाचारिता, वैयक्तिक मांग तथा निम्न प्रकृतिकी तुच्छ संतुष्टियोंकी कामनासे कलुषित होती है—एक निम्न और धुंएसे ढकी अग्नि है जिसकी लौ ऊपर स्वर्गकी ओर नहीं उठ सकती। यही मानो कि तुम्हारा जीवन तुम्हें भगवान्‌के कार्यके लिये और भगवान्‌की अभिव्यक्तिमें सहायता देनेके लिये ही मिला है। केवल भागवत चैतन्यकी विशुद्धता, शक्ति, ज्योति, विशालता, स्थिरता और आनंद और उस चेतनाका यह आग्रह कि उसके द्वारा तुम्हारे मन, प्राण और शरीरका रूपांतर हो—इसके सिवा और कुछ न चाहो। कुछ मत मांगो, मांगो केवल दिव्य, आध्यात्मिक और अतिमानसिक सत्य, उस सत्यकी सिद्धि पृथ्वीपर, तुम्हारे अपने अंदर, और उन सबके अंदर जो इसके लिये बुलाये और चुने गये हैं। उन परिस्थितियों-को मांगो जो इस सत्यकी सृष्टिके लिये और इसकी विजयके लिये आवश्यक हैं।

तुम्हारी निष्ठा और समर्पण सच्चे और संपूर्ण हों। जब अपने-आपको देते हो तो पूरी तरह दो, बिना किसी मांगके, बिना किसी शर्तके और बिना किसी संकोचके दो, ताकि तुम्हारे अंदर जो कुछ है वह सब भगवती मांका हो जाय, और कुछ भी अहंके लिये या अन्य किसी शक्तिको देनेके लिये बच न रहे।

तुम्हारी श्रद्धा, निष्ठा और समर्पण जितने अधिक पूर्ण होंगे, भगवती मांकी कृपा और रक्षा भी उतनी ही अधिक रहेगी। और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब भगवती मांकी कृपा और अभय-हस्त तुमपर है तो फिर कौन-सी चीज है जो तुम्हें स्पर्श कर सके या जिसका तुम्हें भय हो? कृपाका छोटा-सा कण भी तुम्हें सब कठिनाइयों, बाधाओं और संकटों-के पार ले जायगा; क्योंकि यह मार्ग मांका है, इसलिये किसी भी संकटकी परवाह किये बिना, किसी भी शत्रुतासे प्रभावित हुए बिना —चाहे वह कितनी ही शक्तिशाली क्यों न हो, चाहे वह इस जगत्-की हो या अन्य अदृश्य जगत्की—इसकी पूर्ण उपस्थितिसे घिरकर तुम अपने मार्गपर सुरक्षित होकर आगे बढ़ सकते हो। इसका कृपास्पर्श कठिनाईको सुयोगमें, विफलताको सफलतामें और दुर्बलता-को अविचल बलमें परिणत कर देता है। क्योंकि भगवती मांकी कृपा परमेश्वरकी अनुमति है, आज हो या कल, उसका फल निश्चित है, पूर्वनिर्दिष्ट, अवश्यंभावी और अनिवार्य है।

('माता' से) —श्रीअरविंद

माताजीके कुछ वचन

श्रीअरविंद अपनी पुस्तक 'माता' (द मदर) में माताजीके चार स्वरूपों—महेश्वरी, महाकाली, महालक्ष्मी, और महासरस्वती—के बारेमें कहते हैं। उनमें से कौन-सा स्वरूप हमारे साथ रह सकता है और हमारी सहायता कर सकता है? माताजीका उत्तर सुनिये:

"केवल महासरस्वतीका स्वरूप तुम्हारे साथ रह सकता है। वही ब्योरेकी हर चीजकी देख-भाल करती है। श्रीअरविंदने कहा है कि वह तबतक तुम्हें क्षमा नहीं करती जबतक तुम अपने-आपको बदलने-की कोशिश न करो। महाकालीको अपने साथ रखना असंभव है। वह बिजलीकी चमककी तरह आती और गरजकी तरह चली जाती है।

"साधारणतः लोग महाकाली, महालक्ष्मी या महासरस्वतीकी पूजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं करते; वे काली; लक्ष्मी और सरस्वतीसे संतुष्ट रहते हैं। उनके लिये लक्ष्मी पूजा ऐसे है जैसे किसी धनाढ्य स्त्रीको ब्याह लाना।"

*

जैसे ही तुम सोचते हो कि तुम्हें अमुक चीजमें सफलता मिल गयी, वैसे ही विरोधी शक्तियां उसपर आक्रमण करती हैं और उसे बिगाड़ देती हैं। और फिर जब तुम सफलताके बारेमें सोचते हो तो तुम्हारी अभीप्सा ढीली पड़ जाती है और जरा-सी ढिलाई भी सारा खेल बिगाड़ देनेके लिये काफी है। सबसे अच्छी बात यह है कि उसके बारेमें सोचे बिना अपना काम करते चलो। लेकिन कभी जब तुम अपनी त्रुटियों और असफलताओंके बारेमें सोचते-सोचते अवसादमें गिर जाते हो, तब तुम्हें सफलताको अपनी नाकके आगे रखकर कहना चाहिये, 'लो, यह देखो।'

*

समस्त जीवन साधना है। उसे टुकड़ोंमें काटना और यह कहना गलत है कि यह साधना है और यह नहीं है। तुम्हारा खाना और सोना भी साधनाके अंश होने चाहिये।

मां जाग उठी है

रात आधी हो चुकी है। संसार नीरवतामें सोया पड़ा है। धरती अंधकारकी गोदमें सोयी पड़ी है और सोया पड़ा है स्वर्ग। क्रुद्ध मरुत दम रोके खड़े हैं। बादलोंकी घनी कालिमामें तारे भी टिमटिमाते नहीं दीखते। पक्षी अपने पंखोंसे आंखोंको ढके, अपने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपमें खोये हुए अपने-अपने नीड़में पड़े हैं। पशुका चलना-फिरना बंद है, किसीकी ध्वनि नहीं सुनायी देती। ऐसेमें दिव्य जननी जाग उठती है, जननी एक भयंकर निनादके साथ जाग उठती है, जननी जाग उठती है और सूर्य जैसे दो भयावह नेत्र खोलती है।

मां जाग पड़ी है। एक पत्ता भी नहीं हिल रहा। कमरेके अंदर दीपककी अकंपित ज्वाला गुल होनेकी तैयारीमें है। नगरके सूने पथोंपर, खेतों, जंगलों और पहाड़ियोंमें जीवन मात्र निद्रामें डुबकी लगाये हुए है। सागरके जलोंकी लहरें तटपर खिलखिलाती हुई नहीं आतीं। एकदम नीरव, निश्चल सागर मौन और निःशब्द है। तब मां क्यों जाग उठी है? कौन कह सकता है कि उसने ऐसा क्या सुना जिसने उसे जगा दिया है। किसकी मौन पुकारने जननीको इस घोर निशामें भी जगा दिया और वह भयंकर निनाद करती हुई जाग उठी है।

मांकी शयन-वेलामें किसने सोचा था कि वह इस अंधी काली रातमें इस तरह जाग उठेगी। रात्रिके अंधकारमें डूबा हुआ, आशा-से वंचित, सदा सर्वदाके लिये भग्न-हृदय, अपनी निद्रामें भी गिरते हुए पत्तेकी आवाजसे चौंक पड़ता है। महान् असुरकी राजसी नियतिने, गौरवपूर्ण, कुटिल, सर्वविजयी नियतिने धरतीको घेर लिया है। और अचानक भयंकर निनाद सुनायी देता है, अचानक मांकी आवाजमें सैकड़ों समुद्रोंका गर्जन भर जाता है, अपने नींदके माते बालकोंको जगानेके लिये मां इन्द्र-वज्रका-सा गर्जन कर रही है।

इस अंधेरी अर्ध-रात्रिमें क्या कोई भी ऐसा नहीं है जो दुःखभरे, उछलते हृदयके साथ मांके लिये जाग रहा हो। कुछ इने-गिने काषायवस्त्रधारी, प्रचंड मांके भक्त, हाथमें नंगा खड्ग लिये, मांके चरणोंका अपने लोहित रक्तसे अभिषेक करनेके लिये अपलक बैठे रातकी घड़ियां गिन रहे हैं। महान् तृष्णाके साथ, क्रुद्ध गर्जन करती हुई मां जाग उठी है और समस्त विश्वको अपने सिंहगर्जनसे आप्लावित करते हुए जगत्को जगा रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके मुखसे एक कर्कश अट्टहास्य निकल रहा है, उसकी आंखोंमें-से बिजलियां चमक रही हैं, उसके क्रोधका रक्त जपा कुसुम बड़ा ही भयानक है। कोपमें भरी हुई जननी अपने हाथोंमें दो दानवों-के मुंड लिये झुला रही है। मां उठती है और एक विकराल आह्वान करती है।

अर्ध रात्रिमें दो दानव मुंडोंको अपने हाथोंमें झुलाती हुई तुम कौन हो? तुम सारी धरतीपर रक्तकी बौछार कर रही हो। तुम्हारी दो आंखें आगकी दो भट्ठियोंके समान हैं। भयानक मां धरतीको कंपाती हुई इधर-उधर घूम रही है। उठो, उठोकी भयंकर दहाड़के साथ मां सभी देवों, दानवों और मनुष्योंको पुकार रही है। वह समस्त आलस्य और अकर्मण्यताको खदेड़ रही है, इस ओर भयंकर निनाद और उस ओर उल्लासभरा गर्जन—यह मेरी मां है, उसके मस्तकपर मृत्युका जलता नेत्र दिखायी दे रहा है। मेरी मां आ रही है, उसके गलेमें पड़ी मुंडमाल तालके साथ नाच रही है।

भयंकर झंझा और युद्धके बीच तलवार तलवारसे टकराती है और शरीर शरीरके साथ बज उठता है। युद्धमें आग बरस रही है और इधर-उधर चक्कर लगा रही है, आकाश बधिर हो गया है, इस समस्त कोलाहलके बीच कान फटे जाते हैं और धरती डोल रही है, रक्त मुक्त रूपसे नदी-नालोंकी तरह बह रहा है। तो कब, हां कब, हम मांको जान पायेंगे।

जब उसका समुद्र-घोष अपने एक श्वासमें दानवोंके राज्यको मटियामेट कर देगा और उग्र देवी मुस्कराती हुई आयेगी, तब मांको जान पायेंगे। जब मां शोणितकी नदियोंमें स्नान करती हुई नाच उठेगी तब हम जानेंगे कि आखिर मां जाग उठी है।

—श्रीअरविंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

What Sri Aurobindo
represents in the world's
history is not a teaching,
not even a revelation;
it is a decisive action
direct from the Supreme

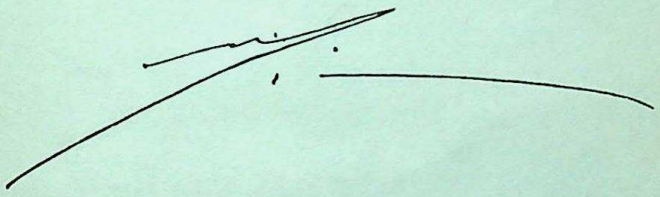

जगत्के इतिहासमें श्रीअरविंद जिस चीजका प्रतिनिधित्व करते हैं वह कोई शिक्षा नहीं है, वह कोई अन्तःप्रकाश भी नहीं है; वह परम पुरुषकी निर्णायक क्रिया है।

—माताजी

विश्वस्य इतिहासे श्रीअरविन्दो यस्य प्रतिनिधित्वं कुरुते तत् खलु न कापि शिक्षा, नापि किमपि ईश्वरीयज्ञानम्; तत्तु पुरुषोत्तमात् अञ्जसा प्रवर्तमाना निश्चयात्मिका दिव्यक्रिया।

—श्रीमाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

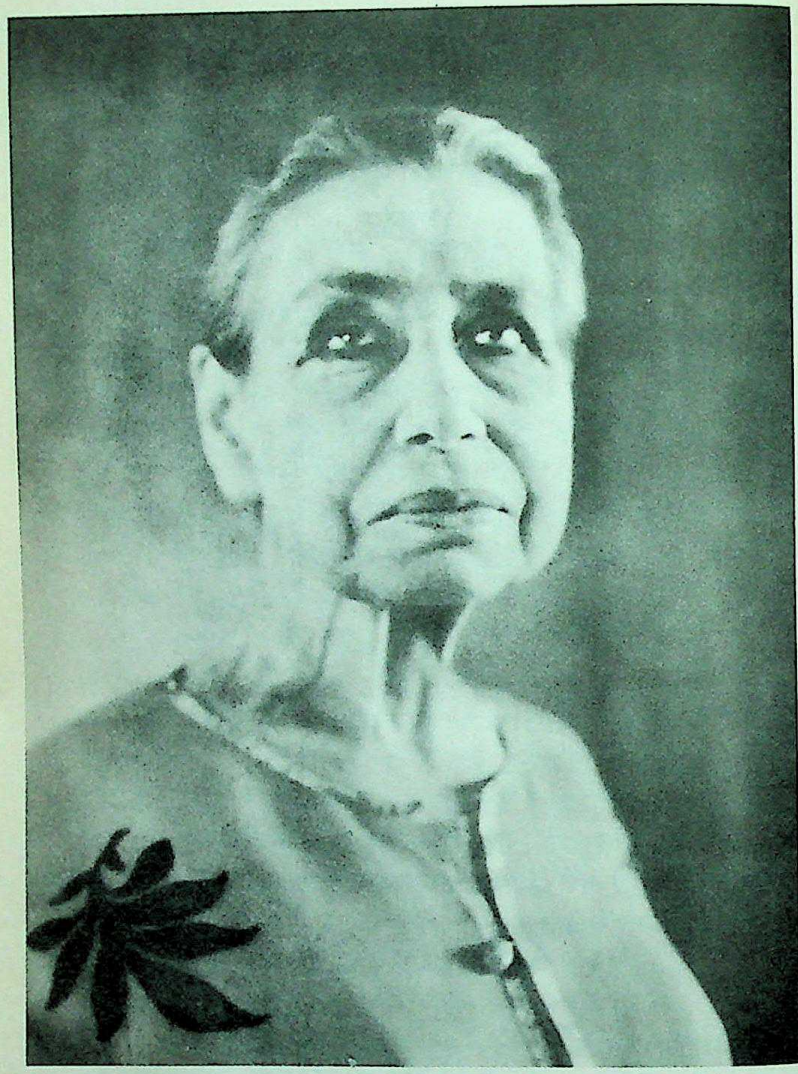

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्फुट वचन

जब तुम सुन्दरतासे कतराते हो तो यह असुरका एक बहुत बड़ा अस्त्र होता है। इसीने भारतका नाश किया है। भगवान् चैत्यमें प्रेम, मनमें ज्ञान, प्राणमें शक्ति तथा भौतिकमें सौंदर्यके रूपमें प्रकट होते हैं। अगर तुम सौंदर्यका बहिष्कार करो तो तुम भगवान्‌को भौतिक स्तरपर प्रकट होनेसे रोकते हो और उस भागको असुरके हाथमें सौंप देते हो।

*

जब तुम्हें गुस्सा आता है तो तुम्हारे अंदर असाधारण शक्ति और ऊर्जा आ जाती है जिसका उपयोग तुम शोर मचाने और नाटक खड़ा करनेमें करते हो। अगर तुम उस ऊर्जाको अपने अंदर समो लेनेकी कोशिश करो और उसका उपयोग किसी बाधापर विजय पानेके लिये या प्रगति करनेके लिये करो तो परिणाम अद्‌भुत होंगे। सामान्य ढंगसे भी तुम बल प्राप्त करोगे और कुछ प्रगति करोगे।

*

जीवनका एक उद्देश्य है,
यह उद्देश्य है भगवान्‌को पाना।

भगवान् दूर नहीं हैं, वे हमारे अंदर हैं, अंदर गहराईमें, और भावनाओं तथा विचारोंसे ऊपर। भगवान्‌के साथ शांति और निश्चिति है और सभी कठिनाइयोंका समाधान है।

अपनी समस्याएं भगवान्‌को सौंप दो। वे तुम्हें कठिनाइयोंसे बाहर निकाल लेंगे।

—श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अवेकनिंग'से

जब तुम्हारे पास थोड़ा समय हो

जब तुम्हारे पास थोड़ा समय हो, चाहे वह एक घंटा हो या कुछ मिनट, अपने-आपसे कहो : "हाश ! अपने-आपको केंद्रित करनेका, अपने-आपको इकट्ठा करनेका, अपने जीवनके मूल कारणको फिरसे जीनेका और जो 'सत्य' और 'सनातन' है उसे अपने-आपको अर्पित करनेका मेरे पास समय है।" हर बार जब तुम बाहरी परिस्थितियों-से परेशान न हो तब अगर तुम यह करनेकी सावधानी बरतो तो देखोगे कि तुम राहपर बहुत जल्दी बढ़ते जा रहे हो। अपना समय बकवासमें, अनावश्यक चीजें करनेमें और ऐसी चीजें पढ़नेमें गंवाने-की जगह, जो चेतनाको गिराती हैं... अपना मनोरंजन करनेकी जगह, ऐसा करनेकी जगह कि समय जो पहलेसे ही कम है और भी कम हो जाय और फिर देखना कि जीवनके अंतमें हमने तीन-चौथाई अवसर खो दिये हैं—तब फिर तुम दोनों हाथोंसे कौर निगलने लगते हो, लेकिन उससे कोई फायदा नहीं होता—ज्यादा अच्छा है संयत होना, संतुलित होना, धैर्यवान होना, शांत होना और कभी दिये गये अवसरको न गंवाना। इसका मतलब है तुम्हारे सामने जो मिनट व्यस्तताहीन होता है उसका सच्चे ध्येयके लिये उपयोग करना।

जब तुम्हारे पास करनेके लिये कुछ न हो तो तुम अशांत हो उठते हो, तुम भागते फ़िरते हो, मित्रोंसे मिलने चले जाते हो, घूमने निकल पड़ते हो—मात्र अच्छी चीजोंकी ही बात कर रही हूं, मैं उन चीजोंकी बात नहीं करना चाहती जो स्पष्ट रूपसे ऐसी हैं जिन्हें नहीं करना चाहिये—इन सबकी जगह शांतिपूर्वक, तुम्हारे लिये जो संभव हो, उसके अनुसार, आकाशके नीचे, समुद्रके आगे या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेड़ों तले बैठ जाओ और इनमेंसे किसी एक चीजको सिद्ध करनेकी कोशिश करो, यह समझनेकी कोशिश करो कि तुम क्यों जीवित हो और यह सीखनेकी कोशिश करो कि किस तरह जीना चाहिये। इसपर विचार करो कि तुम क्या करना चाहते हो और क्या करना चाहिये। अज्ञान, मिथ्यात्व और दुःख जिसमें तुम जीते हो उससे बच निकलनेका उत्तम उपाय क्या है।

--माताजी

दास होनेकी बजाय स्वामी बनो

व्यक्तिके लिये सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु है स्वयं को अपने भागवत केंद्रके चारों ओर एकत्रित करना, इस तरह वह सच्चा व्यष्टि बन जाता है, अपना तथा अपने लक्ष्यका स्वामी बन जाता है...। अगर तुम भागवत केंद्रके चारों ओर सचेतन रूपसे व्यवस्थित हो, उससे एकात्म हो, उससे शासित तथा निर्देशित हो तो तुम अपने लक्ष्यके स्वामी होते हो। यह प्रयास करनेके लिये कष्ट उठाने योग्य कार्य है।...बहरहाल, मैं दास बननेकी अपेक्षा स्वामी बनना अधिक पसंद करती हूं। यह एक असुखद संवेदना है कि तुम अनुभव करो कि तुम्हें धागोंसे खींचा जा रहा है और तुम चाहो या न चाहो तुम्हें कार्य करनेके लिये बाधित किया जा रहा है--यह एकदमसे असंगत है--लेकिन इस कारण क्रिया करनेके लिये विवश होना क्योंकि कोई चीज तुम्हें धागोंसे खींच रही है, ऐसी कोई चीज जिसे तुम देख तक नहीं सकते--यह विक्षुब्ध करनेवाला अनुभव है, जब मैं काफी छोटी थी, पांच सालकी, तभीसे यह चीज मुझे एकदमसे असह्य लगने लगी और मैंने ऐसे रास्तेकी खोज की जिससे चीज अन्यथा हो सके--लोगोंको मुझे डांटनेका अवसर दिये बिना। मैं ऐसे किसीको नहीं जानती थी जो मेरी सहायता कर सकता और मेरे सामने ऐसा अवसर न था जैसा तुम्हारे पास है, कोई ऐसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो तुमसे कह सके ! "यही है वह चीज जो तुम्हें करनी है," यह कहनेवाला मेरे पास कोई न था। मुझे सब कुछ स्वयं अपने प्रयाससे ढूंढ़ना था। और मैंने उसे ढूंढ़ निकाला। मैंने यह पांच वर्षकी अवस्थामें शुरू किया।

—माताजी

"आओ मेरी सहायता करो मां"

अगर कभी तुम किसी प्राणिक आवेगकी पकड़में आ जाओ, चाहे वह क्रोध हो या लैंगिक आवेश या किसी भी तरहकी क्षुद्रता या स्वार्थपरता हो, या कोई भी ऐसी क्रिया जो तुम्हें अपने चंगुलमें कर सकती हो, तब तुम्हें तुरंत उग्रताके साथ प्रतिक्रिया करनी चाहिये और एकदमसे उसके आमने-सामने होकर कहना चाहिये, "निकल जाओ ! यह गंदगी श्रीमांके बच्चेमें प्रवेश नहीं पा सकती।" अगर वह फिर भी बना रहे, तुम उसपर मुक्के जमाओ, सचमुच तबतक हवामें भौतिक मुक्के मारते जाओ (माताजी संकेत करती हैं) जबतक कि वह क्रिया विलीन न हो जाये।

या फिर तुम मुझे बुलाओ: "आकर मेरी सहायता करो मां। वर दे कि शांति मेरे अंदर उतरे।" और तुरंत तुम इन प्राणिक गतियों-से मुक्त हो जाओगे।

विश्राम करना आना चाहिये

देखो, तुम्हें विश्राम करना आना चाहिये; तब तुम थकते नहीं। सारे दिनके कामके बाद तुम्हें बिना किसी चिंतन-मननके अपने-आपको ढीला छोड़ देना और शाश्वततामें प्रवेश करना चाहिये। और तुम हर तरहकी थकानसे मुक्ति पाकर पुनः स्वस्थ हो सकते हो। लेकिन तुम्हें अपने-आपको इस तरह ढीला छोड़ना आना चाहिये...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(माताजी इस तरहकी क्रिया करती हैं मानों वे अपनी बांहें फैलाकर ऊपर देख रही हैं), और प्रभुसे कहना चाहिये: "मैं तेरा हूं।" और तुम अचंचल रहो, हिलो-डुलो मत। और तब तुम परिणाम देखोगे, तुम कभी नहीं थकोगे।

(किसी साधक द्वारा स्मृतिसे लिखे गये माताजीके शब्द)

माताजी सौंदर्य पर

सभी चीजोंके पीछे एक भागवत सौंदर्य, एक भागवत सामंजस्य है। हमें इसीके संपर्कमें आना चाहिये; हमें इसीको अभिव्यक्त करना चाहिये।

*

सौंदर्य तुम्हारा सतत आदर्श रहे।
अंतरात्माका सौंदर्य
भावोंका सौंदर्य
विचारोंका सौंदर्य
क्रियाका सौंदर्य
कर्मका सौंदर्य

ताकि तुम्हारे हाथोंसे ऐसा कोई कार्य न हो जो शुद्ध तथा सामंजस्यपूर्ण सौंदर्यकी अभिव्यक्ति न हो।

और भागवत सहायता हमेशा तुम्हारे साथ रहेगी।

*

हे सौंदर्य! तू भगवान्‌की ओर जानेका मेरा पथ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

Sri Aurobindo

ASSAM TEA
WAREHOUSING
CORPORATION

24, Ganesh Chandra Avenue, Calcutta-700 013

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good construction
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

H20/ Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

5.7907
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

सितंबर १९८७

वर्ष १८, अंक २, पूर्णांक २०६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश		१
'संपादकीय' : काश . . . ?	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
चिकित्सा		७
सोसायटी समाचार		आ० ३

वार्षिक शुल्क १०.०० आजीवन १७५.००

कृपया चेक न भेजें, उसमें बहुत असुविधा होती है। ड्राफ्ट, धनादेश या पोस्टल आर्डर भेज सकते हैं। अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

संपर्क : संपादक अग्निशिखा एवं पुरोधा, पांडिचेरी–६०५००२

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संदेश

कलियुगमें भारतका पतन हुआ है इसे कोई नकार न पाएगा। किंतु भगवान् कभी पतन लानेके लिये अवतरित नहीं होते। अवतार हमेशा धर्म, संसार और मानवके उद्धारके लिये आते हैं। विशेषकर भगवान् पूर्णरूपसे कलियुगमें अवतार लेते हैं। इसका कारण यह है कि कलिकालमें ही मनुष्यके पतनका सबसे अधिक खतरा होता है, उस समय अधर्म स्वाभाविक रूपसे बढ़ता है इसलिये मानवजातिका उद्धार करने, अधर्मका नाश करने और धर्मको स्थापित करनेके लिए और कलिके मार्गको रोकनेके लिए इस युगमें बार-बार अवतार आते हैं। जब श्रीकृष्णका अवतार हुआ था तब कलियुगका आरंभ हो चुका था। उनके अवतरणके डरसे ही कलि अपने राज्यमें पांव न रख पाया। उन्हींकी कृपाके कारण परीक्षित अपने समयमें कलिके साम्राज्यको उसे पांच गांव देकर सीमित रख पाये। इस कलियुगके आरंभसे लेकर अंततक मनुष्य और कलिके बीच उग्र युद्ध चल रहा है और चलता रहेगा। इस युद्धमें सहायक और नेताके रूपमें भगवान्की विभूतियां और अवतार प्रायः इस अवधिमें आते रहे हैं। कलि युगके प्रारंभमें भगवान्ने मानव रूप धारण किया था ताकि ब्राह्मणकी शक्ति बनी रहे, ज्ञान, भक्ति और निष्काम कर्मकी शक्ति बनी रहे और ये बातें उन्होंने सिखायीं ताकि वे युद्धमें उपयोगी हों। भारतके कुशल-मंगलपर मानव जातिके हितका आधार और आशा टिके हुए हैं। भगवान्ने भारतको कुरुक्षेत्रमें बचाया था। उस शोणित-सागरमें सर्वध्वंसक कालके रूपमें महान् पुरुषने नये संसारके कमलके साथ क्रीड़ा आरंभ की थी।

(श्रीअरविंद की 'गीताकी भूमिका'से)

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

काश ... ?

माताजी कहती हैं कि यौवन शरीरकी आयुपर नहीं, मनुष्यकी मानसिक और प्राणिक अवस्थापर निर्भर है और उसका प्रभाव शरीरपर अवश्य पड़ता है। हमें कभी कदास ऐसे व्यक्ति अवश्य दिखाई देते हैं जो माताजीकी इस उक्तिको सत्य सिद्ध करते है।

अभी एक ऐसे ही विरल व्यक्तिकी बात जानकर खुशी हुई और साथ ही अपने अंदर उनका अनुकरण करनेकी प्रेरणा जागी।

इनका नाम है राघवेन्द्र स्वामी। १९८४ में उनकी आयु तिरानवे वर्षकी थी और वे अभीतक कई स्कूल, कालेज, आयुर्वेद-अस्पताल, आसन-केंद्र, प्रेस और अनाथाश्रमोंका संचालन कर रहे हैं। वे अच्छे वैद्य हैं, दवाइयां अपने अस्पतालमें बनवाते हैं और एक दिनमें ढाई सौ बीमारोंको जांचते हैं। इसके अलावा आसन सिखाते हैं। उनका चंद्र द्रोण गार्डन नामक उपवन है जिसमें वे औषधि बनानेके लिये वनस्पति उगाते हैं।

एक दिनमें पचास किलो मीटर चलना उनके लिये मामूली बात है। उन्होंने गांव-गांव घूमकर चन्दा इकट्ठा करके बहुत-सी इमारतें खड़ी की हैं और अब भी धनके लिये इधर-उधर जाते रहते हैं।

एक दिन वे किसी शहरमें गये थे जहांसे उनका गांव सत्तर किलोमीटर दूर था। ऐसी दूरियोंके लिये ही वे बसका उपयोग करते हैं किंतु उस दिन अंतिम बस निकल चुकी थी और दूसरे दिन सवेरे उनके पास कई रोगी चिकित्साके लिये आनेवाले थे। उन्होंने दौड़ लगाई और सुबह सवेरे अपने काममें लगे हुए दिखायी दिये।

युवकोंको भी लज्जित करे ऐसा उत्साह और स्फूर्ति देख कर मन कह उठा "हां, ये हैं सच्चे अर्थमें युवक !"

है कोई जो इस तरह अपने संगी साथियोंके लिये सब निछावर कर पाये। काश...

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

सितंबर

१. जब सूर्यास्त होता है तो धरतीपर एक तरहकी शांति उतरती है और यह शांति नींदमें सहायता करती है।
जब सूर्योदय होता है तो धरतीपर ओजस्वी ऊर्जाका अवतरण होता है और यह ऊर्जा कामके लिये सहायक होती है।
जब तुम देरसे सोने जाते हो और देरसे उठते हो तो तुम प्रकृतिकी शक्तियोंके प्रतिकूल चलते हो, और यह बहुत समझदारी नहीं है।

२. ऐसा कोई भी नहीं है जिसके लिये भगवान्‌की प्राप्ति असंभव है। केवल, कइयोंको बहुत, बहुत वर्ष लग जाएंगे जब कि ऐसे भी लोग हैं जो इसी जीवनमें उन्हें पा लेंगे। यह इच्छा-शक्तिका प्रश्न है। चुनाव तुम्हें करना है।

३. भगवान्‌को प्राप्त करनेका मतलब क्या है?
इसका अर्थ है अपने अंदर या आध्यात्मिक ऊंचाइयोंपर भागवत उपस्थितिके बारेमें सचेतन होना, और एक बार सचेतन हो जाओ तो उनके प्रति समर्पित हो जाना ताकि उनकी इच्छाके सिवा तुम्हारी कोई इच्छा न हो। अंतमें अपनी चेतनाको उनकी चेतनामें एक कर देना यही है भगवान्‌को प्राप्त करना।

४. भगवान्‌के लिये जीनेका अर्थ यह है कि तुम जो कुछ करो उसे व्यक्तिगत परिणामकी आशा किये बिना भगवान्‌के अर्पण कर दो। निश्चय ही आरंभमें जब भगवान् तुम्हारे लिये केवल एक शब्द या अधिक-से-अधिक एक विचार हों; अनुभूति नहीं तबतक वह शुद्ध मानसिक बात ही रहती है। लेकिन अगर तुम सच्चा, निष्कपट और बारंबार प्रयास करते रहो तो एक दिन अनुभूति होती है और तुमको लगता है कि तुमने जो अर्पण किया है, वह किसी सच्ची, सुनिश्चित, ठोस और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपकारी चीजको किया है। तुम जितने अधिक सच्चे होगे और प्रयासको जितने अधिक मनोयोगसे करोगे, उतनी जल्दी तुम्हें अनुभूति होगी और अधिक देरतक बनी रहेगी।

५. पृथ्वीपर कठिन समय इसलिये आते हैं कि मनुष्य अपने छोटे व्यक्तिगत अहम्‌को जीतनेके लिये बाधित हो और ऐकांतिक रूपसे सहायता और प्रकाशके लिये भगवान्‌की ओर मुड़े।

६. अगर तुम अंदरसे शांत रहो, समर्पणकी स्थितिमें रहो तो बाधाएं और कठिनाइयां तुम्हें परेशान न कर पाएंगी। दुःख और परेशानी : "यह क्यों नहीं हो रहा?" "कब होगा?" अगर तुम इन भावोंको अपने अंदर आने दो, तो बाधाओं और कठिनाइयोंको जोर मिलेगा। तुम उनपर इतना ध्यान क्यों देते हो? माताजीपर एकाग्र होओ। अंदरसे शांत और समर्पित रहो।

७. मरनेसे कुछ भी हल नहीं होता। तुम्हें कैसे मालूम कि जिन कठिनाइयोंको तुम इस जीवनमें नहीं जीत पाये वे तुम्हें अगले जन्ममें छोड़ देंगी? तुम्हें इनको इस जीवनमें ही समाप्त करना होगा।

८. हमेशा माताजीका स्मरण करो, उन्हें पुकारो, तब कठिनाइयां चली जायेंगी। कठिनाइयोंसे डरो मत, परेशान मत होओ। अनवरत माताजीको पुकारो।

९. तुम दुःख महसूस क्यों करते हो? अगर तुम सब परिस्थितियों-में अविचलित रहो और माताजीपर आश्रित रहो तो दुःखका प्रश्न नहीं उठेगा। अपने साथियोंसे मनुष्य बेकार ही सुख और शांतिकी आशा करता है।

१०. तुम्हें हमेशा यह असीम श्रद्धा रखनी होगी कि तुम माताजीके हाथोंमें हो, कि सब कुछ उनकी शक्तिसे संपन्न होगा तब बाधाएं दुःख और निराशाको जन्म न दे पाएंगी।

११. माताजीकी उपस्थितिको याद रखना हमेशा आसान नहीं है। जब सारी सत्ता माताजीकी उपस्थितिसे भर जाएगी तब तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतः उन्हें याद करते रहोगे और तुम किसी तरह उन्हें भूल न पाओगे।

१२. आत्म संयम—किसीकी ओर आकृष्ट न होना, किसीकी ओर प्राणके खिंचावको प्रोत्साहन न देना और किसीके ऊपर प्राणका सम्मोहन या आकर्षण न डालना—इसे कहते हैं अपने अंदर सच्चा और निष्कपट रहना।

१३. "मैं कितनी दूर आया हूं, मुझे कितनी दूर और जाना है?" ऐसे प्रश्नोंसे खास लाभ नहीं होता। मार्गदर्शीके रूपमें माताजी-को लेकर बहावके विपरीत तैरते जाओ।

१४. भगवान्‌के बालक होनेके बावजूद ऐसा कोई साधक नहीं है जिसके स्वभावमें असंख्य छोटे-छोटे दोष न हों। जैसे ही तुम उनके बारेमें अभिज्ञ हो जाओ, तुम्हें उन्हें अस्वीकार करना होगा। तुम्हें अधिक तीव्रतासे माताजीकी शक्तिकी ओर अभीप्सा करनी होगी ताकि स्वभावके इन छोटे दोषोंका उन्मूलन हो जाय, किंतु श्रद्धा, समर्पण और माताजीपर आस्था अक्षुण्ण रहनी चाहिये।

१५. बाह्य जगत्‌के साथ संबंध बनाये रखना चाहिये लेकिन वह सब केवल बाह्य सतहपर ही रहे। तुम्हें अंदर वास करना चाहिये, माताजीके नजदीक, और वहांसे सब कुछ देखना चाहिये —इसीकी आवश्यकता है। यह कर्मयोगका पहला चरण है।

१६. इस बातकी गांठ बांध लो कि माताजीके ऊपर पूर्ण विश्वास-के साथ आगे बढ़ो, तो चाहे जैसी परिस्थिति और कठिनाई हो, चाहे जितना समय लगे, तुम निश्चित रूपसे लक्ष्यतक पहुंच पाओगे, कोई बाधा, विलंब या विपरीत स्थिति अंतिम सफलताको बिगाड़ न पाएगी।

१७. इस साधनामें जैसे तुम्हें चंचलतासे पिंड छुड़ाना है वैसे ही इसमें दुःखका भी कोई स्थान न होना चाहिये। तुम्हें माताजीपर आस्था रखनी चाहिये और स्थिर हृदय और अचंचल तथा प्रफुल्लित मनसे आगे बढ़ना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८. ध्यानका यही विधान है : निश्चल-नीरव बैठ जाओ, माताजीका स्मरण करो और अपने-आपको उनकी ओर खोलो।

१९. भयभीत या परेशान मत होओ। योगका मार्ग ऐसा ही है। अंधकारमय स्थितिको तुम्हें जीत लेना होगा। अंधकारमें भी तुम्हें अविचलित रहना होगा।

२० यही तपस्या है : शांत रहना, माताजीको पुकारना, चंचलता, निराशा, कामनाओं और लालसाओंको स्थिरतासे नकारना।

२१. शून्यतासे डरना ठीक नहीं है। शून्यमें ही दिव्य शांति उतरती है। माताजी हमेशा तुम्हारे अंदर उपस्थित हैं लेकिन तुम्हें वह अनुभूति तबतक नहीं होती जबतक सत्य, शक्ति और प्रकाश न हों।

२२. जब चेतना विशाल और वैश्व बन जाती है और सारे विश्वमें माताजीके दर्शन करती है, तब अहम् चिपका नहीं रहता।

२३. एक ही विचार, ऐसे विचारका शासन था जिसे कुछ डिगा न सका, और वह विचार यह था कि एक महान् शक्ति भारतकी सहायता करनेका काम कर रही है और हम वही करते हैं जिसके लिये वह आदेश देती है.... केवल एक ही शक्ति है और उस शक्तिको मेरी आवश्यकता नहीं है, तुम्हारी आवश्यकता नहीं है, उसकी आवश्यकता नहीं है... भगवान् सब कुछ कर रहे हैं।

२४. अगर हमें भारतकी सच्ची नियतिको चरितार्थ करना है, तो विशाल आंतरिक और बाह्य प्रगतिकी आवश्यकता है।

२५. भगवान् न केवल हमेशा, छोटी-सी आवाजमें विद्यमान हैं बल्कि अग्नि और तूफानमें भी हैं।

२६. संसार भारतके अभ्युदयकी प्रतीक्षामें है ताकि वह पूर्ण भागवत स्रोतको ग्रहण कर पाये।

२७. प्रतीक्षा करना जान कर तुम समयको अपना साथी बना लेते हो।

२८. भूतकाल दोनों है, बांधा भी और प्रगतिकी शक्ति भी।

२९. जहां अज्ञान हो वहां दुःख अवश्य आएगा।

३०. सच्ची भावनासे किया गया कार्य ध्यान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा

(श्रीअरविंदके साथ कुछ साधकोंकी विभिन्न विषयोंपर बातचीत हुआ करती थी। इन प्रश्नों और उत्तरोंको श्री अम्बालाल पुराणीने अपनी स्मृतिके आधारपर लिख लिया था। श्रीअरविंदको इन्हें देखनेका मौका नहीं मिला। यहांपर मुख्यतया चिकित्साके बारेमें बातचीत दी जा रही है, बीच-बीचमें प्रसंगवश अन्य विषय भी आ गये हैं।—सं०)

११-११-१९२३

किसी साधकका दिमाग चल गया था। उसने तार द्वारा श्रीअरविंदसे मृत्यु मांगी। कहा यह गया था कि एक तरहका विष उसके रक्तमें था जो दिमागपर असर करता है।

श्रीअरविंद—इसी तरहके लोगोंमें पापका भाव पैदा होता है और वे औरोंके सामने पश्चात्ताप करते और अपने-आपको नीचा दिखलाते हैं। साथ ही वे अपने-आपको बहुत महत्त्वपूर्ण भी समझते हैं।

अगर यह योग अच्छी तरह करना हो तो इसमें पूर्ण संतुलनकी जरूरत है इसलिए जिन लोगोंमें योगके लिए एक साधारण-सी पुकार हो उन्हें इस मार्गपर न आना चाहिए क्योंकि इससे जहां उच्चतर शक्तियोंके आने और तुम्हारे अंदर कार्य करनेकी संभावनाएं खुल जाती हैं वहां प्राणिक शक्तिके आने और सत्तापर कब्जा कर लेनेके लिए भी द्वार खुल जाता है। अगर मनुष्यके अंदर पूर्ण संतुलन न हो तो इन प्राणिक शक्तियोंके लिए उसके अंदर घुसना और उस पर अधिकार कर लेना आसान हो जाता है। कभी-कभी उस आदमीकी स्थिति ज्यादा अच्छी होती है जिसे अदृश्य शक्तियोंपर विश्वास न हो। वह साधारणतः उस आदमीकी अपेक्षा, जिसे इन शक्तियोंपर विश्वास हो या जिसका गुह्य विद्याकी ओर झुकाव हो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनके आक्रमणसे अछूता रहता है क्योंकि वह सूक्ष्म जगत्की ओरसे बन्द रहता है। जिस आदमीको विश्वास हो वह इन शक्तियोंको अवसर देता है। इस योगके लिए तुम्हें मानसिक तौरपर स्वस्थ होना चाहिये।

शिष्य—सामान्य मान्यता यह है कि जबतक किसीके दिमागके कीलकांटे ढीले न हों तब तक वह योगके लिए नहीं आता। (हंसी)

श्रीअरविंद—क्या मतलब? कीलकांटे ढीले हों तब तो मशीन काम ही न कर सकेगी।

शिष्य—लगता तो यह है कि जितने कीलकांटे ढीले हों, उतना ही योगमें चमकनेके लिए अवसर होता है। (हंसी)

श्रीअरविंद—तुम्हारा मतलब मुझसे है? (हंसी)

शिष्य—मेरा यह मतलब न था। क्या संतुलित आदमी योगके ज्यादा योग्य होता है?

श्रीअरविंद—पूर्ण योगके लिए पूर्ण संतुलन जरूरी है।

शिष्य—लेकिन मेरा ख्याल है कि संतुलित लोग प्रायः बहुत व्यावहारिक होते हैं।

श्रीअरविंद—जरूरी नहीं है लेकिन संतुलितसे तुम्हारा मतलब क्या है?

शिष्य—संतुलितका मतलब मन्द नहीं है।

श्रीअरविंद—हां, ऐसा नहीं होता। जब मैं इन लोगोंमें संतुलनके अभावकी बात करता हूं तो मेरा मतलब यह नहीं होता कि वे पागल हैं। इसका मतलब बस इतना ही होता है कि उनका विकास ठीक अनुपातमें नहीं हुआ है, वह एक तरफ लुढ़का हुआ है या उनकी प्रकृतिमें कहीं बल पड़ गया है जो सभी भागोंके सामंजस्यपूर्ण विकासमें बाधक है।

यही चीज सारे समय मेरी रक्षा करती आयी है। मेरी मतलब पूर्ण संतुलनसे है। पहले मैं यह मानता था कि कुछ भी असंभव नहीं है, साथ ही मैं हर बातपर शंका कर सकता था, प्रश्न कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता था। अगर मैं हर चीजपर विश्वास कर लेता तो मैं विजय-कृष्ण गोस्वामी जैसा होता।

शिष्य—पूर्ण संतुलनका मतलब क्या है?

श्रीअरविंद—पूर्ण योगीमें बहुत कल्पना-शक्ति हो सकती है और उतनी ही अधिक तर्क-बुद्धि भी। कल्पना हर चीजपर विश्वास कर सकती है जब कि तर्क-बुद्धि युक्तियुक्त कार्यवाही है। तुम देखोगे कि वैज्ञानिकोंमें भी प्रबल कल्पना होती है।

शिष्य—यह शायद ठीक कल्पना नहीं होती।

श्रीअरविंद—जीवनकी सामान्य अनुभूतियोंसे परेकी चीजोंके बारेमें सोचना ही कल्पना है।

शिष्य—क्या वह सत्यके साथ मेल खाती है या ऐसी कोई उच्चतर क्षमता है जिसका मनमें कल्पना प्रतिनिधित्व करती है।

श्रीअरविंद—कल्पना ऊंची उठे तो अंततः प्रेरणा बन जाती है। वह जितनी अधिक शुद्ध होती जाय उतनी ही सत्यके नजदीक पहुंचती है। उदाहरणके लिए कवियोंमें प्रेरित कल्पना काम करती है। तुम वैज्ञानिकोंके बारेमें भी जो कहना चाहते हो वह शायद अंतर्भास है।

मेरे बौद्धिक विकासका सबसे महत्त्वपूर्ण काल वह था जब मैं स्पष्ट रूपसे देख सकता था कि बुद्धि जो कहती है वह सच है लेकिन उससे उल्टा भी सच है। मैं अपने मनमें किसी ऐसे सचको तबतक नहीं स्वीकार करता था जबतक कि उसके साथ-ही-साथ उसके विरोधीके लिए भी दरवाजा न खुला हो।

देखो, मनका अर्थ है अनंत संभावना। तर्क-बुद्धि या सूझ-बूझ अन्य सभी संभावनाओंको अलग करके किसी एकको पकड़ लेती है और तर्कबुद्धि ही चुनती और मूल्यांकन करती है। वह जिस चीज-को चुन ले वह विज्ञानमें नियम बन जाता है। तुम उसे इसलिए स्वीकार करते हो क्योंकि वह बहुत सारे तथ्योंकी व्याख्या कर देता है। मन एक संभावनाको स्वीकार करता और बाकीको दबा देता है इसलिए हम अपने दृष्टिकोणके लिए कारण पा लेते हैं और बाकी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को दबा दिया जाता है। या फिर बुद्धि व्यर्थके चक्कर लगाती है और किसी और भागके चुनावको न्यायसंगत ठहरानेमें लगी रहती है।

बुद्धि केवल चयन करती है। मैंने काफी अरसेतक इसका अनुभव किया था और पहला परिणाम यह हुआ कि बुद्धिकी प्रतिष्ठा कम हो गयी। जब तुम ज्यादा ऊपर जाते हो तो एक अधिक विस्तृत गतिविधि विकसित होती है जो सभी विरोधी चीजोंमें मेल बैठाती है।

तब तुम मानसिक विचारोंके पीछेकी शक्तियोंको देखते हो। हां, साधारण आदमीसे यह सब कहना बेकार है। अगर वह सभी बातोंको केवल संभावनाओंके रूपमें देखे तो उसकी बड़ी ही निराशा-जनक अवस्था हो जायगी। अगर मैं तुम्हारे आगे सभी संभावनाएं रख दूं तो तुम बुरी तरह चकरा जाओगे।

शिष्य—जब सभी बौद्धिक व्यापार केवल संभावनाओंका खेल प्रतीत हों तो चुना किसे जाये और कार्य कैसे हो?

श्रीअरविंद—इसमें चकरानेकी कोई बात नहीं है, उन्हें बस देखते रहो, उनपर निगाह रखो, देखो कि वे हैं क्या और उनके पीछे क्या है।

उदाहरणके लिए मैं शंकरके मायावाद या महात्माके विचारोंपर हंस सकता हूं फिर भी मैं उन दोनोंके पीछे जो सत्य है, उसे देख सकता हूं। मैं जानता हूं कि जगत्की शक्तियोंके खेलमें उनका क्या स्थान है, सच बात यही है।

शिष्य—क्या संतुलनके अभावका उपाय है?

श्रीअरविंद—सब कुछ किया जा सकता है। तुम अपनी सीमाओं-में रहते हुए यह कर सकते हो। तुम्हारे अंदर जो भाग अच्छी तरह विकसित हैं, तुम उनकी अतिरंजनाको ठीक कर सकते हो और जो दबे हुए हैं उन्हें विकसित करके अपनी सत्तामें संतुलन ला सकते हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(किसी चिकित्सा-पद्धतिके बारेमें)

श्रीअरविंद—मुझे विश्वास है कि यह मान्यता भी ठीक है कि रोग बिजलीके स्पन्दनोंके कारण होते हैं और अमुक प्रकारके अधिक शक्तिशाली स्पंदन पैदा करके उन्हें ठीक किया जा सकता है।

अतीन्द्रिय कारणोंके सिवा शुद्ध रूपसे भौतिक शरीरमें यह कार्य स्पन्दनोंद्वारा होता है। योगाभ्यासमें भी प्रायः बिजलीकी क्रिया होती है। जब शक्तिका अवतरण होता है तो शरीरमें किसी प्रकारके बिजलीके स्पन्दन होते हैं और उनसे रोग दूर होता है—उनके द्वारा शरीरमें सामंजस्य स्थापित होता है।

१९-९-१९२६

दो शिष्योंमें बहस हो रही थी। उनमेंसे एक डाक्टर था। डाक्टरका कहना था कि समाधिमें भौतिक मन चुप हो जाता है और अगर हम केवल भौतिक मनको देखें तो ऐसा मालूम होता है कि शिराओंका रक्त मस्तिष्कमें जमा हो जाता है और एक तरहसे मस्तिष्कको बेहोश कर देता है। जब मस्तिष्क इस तरह एकदम चुप हो जाय तो मन या मानसिक चेतना शरीरके जालसे छूट जाती है और ज्यादा आजादीके साथ चेतनाके अन्य स्तरोंकी अनुभूतियां प्राप्त कर सकती है।

एक शिष्य—शिराओंके रक्तसे क्या मतलब है?

डाक्टर—ऐसा रक्त जिसमें धमनियोंके रक्तकी अपेक्षा अधिक कार्बन डाइआक्साइड होता है।

शिष्य—क्या इसका यह अर्थ है कि समाधिके समय दिमाग कार्बन डाइअक्साइडसे भर जाता है?

(इसी बीच बाहरके किसी साधकका पत्र पढ़कर सुनाया गया जो अपनी साधनाकी हालतकी शिकायत कर रहा है और पांडिचेरी आनेकी अनुमति मांगता है।)

श्रीअरविंद—उसे लिख दो कि सभी साधकोंकी साधनामें कठिनाइयां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आती रहती हैं, सभीमें अवसादके काल आते हैं। यह कोई कारण नहीं है कि वह यहां भाग आये। जो लोग यहां रहते हैं उनमें भी तो अवसादके काल आते हैं। तुम्हें ऐसी परीक्षाओंमेंसे गुजर सकना चाहिये। साधना कभी सीधी लकीरपर नहीं चलती, हमेशा ऊभचूभ होता ही रहता है। यह कुछ दिनों या महीनोंका नहीं, वर्षोंका काम है। साधारणतः जब साधनामें कोई नयी चीज आनेको होती है, किसी नये स्तरपर नया उद्घाटन होनेको होता है या ऐसी ही कोई और चीज होनेवाली हो तो ऐसे काल आते हैं।

उसे ज्ञान क्यों नहीं मिल रहा इसका कारण शायद यह है कि उसका मन सक्रिय है और जबतक मन सक्रिय हो तबतक उच्चतर ज्ञान नहीं आ सकता। हां, उसे मानसिक ज्ञान मिल सकता है।

उससे कहो कि अपने मनको निष्क्रिय बना कर उच्चतर ज्ञानकी ओर खोले, अपने मनमें अहंकार-भरा क्रिया-कलाप बंद कर दे। जब मैं निष्क्रिय होनेके लिए कहता हूं तो इसका अर्थ यह नहीं है कि वह मनमें आनेवाले विचारोंको दबा दे। नहीं, उसे अपने-आपको मनोमय पुरुषसे अलग करके विचारोंको अपने अंदर होनेवाली घटनाके रूपमें देखना चाहिए। वह उन्हें अपना न माने, उनपर नजर रखे और जिन्हें अस्वीकार करना चाहिए उन्हें अस्वीकार करे।

शिष्य—बहुत-से लोग निष्क्रियताको जड़ता मान लेते हैं। स्वयं मैं बहुत समयतक ऐसा ही समझता रहा। जब मैं बीमार हुआ था तो निष्क्रिय रहता था। लेकिन बादमें मुझे पता लगा कि इस तरह मैं उसे स्वीकृति दे रहा था।

श्रीअरविंद—सच्ची निष्क्रियताका अर्थ जड़ता नहीं, उच्चतर शक्तिकी ओर उद्घाटन है।

(कुछ देर ठहरकर श्रीअरविंद डाक्टर शिष्यकी ओर मुड़े)

क्या तुम जापानके प्रसिद्ध शल्य-चिकित्सक कोबायेशीको जानते हो? वह अमिताभ बुद्धकी साधना-पद्धतिका योगी है। उसने देखा कि अपनी चिकित्सामें वह जिस पद्धतिका अनुसरण कर रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था वह ठीक नहीं था। उसने एक आंतरिक पद्धति शुरू की। वह रोगीको ध्यानके लिए अपने पास बिठाता है और उससे कहता है, नाभिपर एकाग्र होकर यह अभीप्सा करो कि वहां प्रकाशका अवतरण हो और वह रुग्ण भागको स्वस्थ बना दे। इस तरह वह हजारों रोगियोंको ठीक कर चुका है। हां, प्रकाशको नीचे लानेके लिए उसका अपना व्यक्तिगत प्रभाव अनिवार्य है।

वह अर्बुद, बहुत-से योनिसंबंधी रोग, यहांतक कि कैंसर भी इस तरीकेसे ठीक कर चुका है। वह विशेष रूपसे स्त्री-रोग दूर करनेमें बहुत सफल है। उसकी मान्यता यह है कि रोग किसी अंगमें रक्तके जम जानेकी वजहसे होता है, उस अंगकी स्नायुएं सूज जाती हैं और इस कारण प्राण-शक्ति वहांतक नहीं पहुंच पाती। प्रकाश उस भागमें तेजीसे सूक्ष्म स्पंदन ले आता है और सामान्य संचारको जारी कर देता है। सिद्धांत चाहे कुछ भी क्यों न हो, यह बीमारीको शुद्ध सूक्ष्म शक्तिद्वारा दूर करनेका तरीका है। गुह्य स्तरोंसे कोई चीज नीचे उतर आती है और भौतिक स्तरकी बाधाओंको दूर कर देती है।

शिष्य—यह तो डा. कुएके 'आत्म-सुझाव'के जैसा उपाय मालूम होता है।

श्रीअरविंद—नहीं। कुएका तरीका ऐसा नहीं है। कुए एक सुझाव देता है जो स्वयं रोगीके अंदर काम करता है जब कि यह प्रत्यक्ष गुह्य पद्धति है।

शिष्य—क्या यह सिद्धांत ठीक है?

श्रीअरविंद—मैं नहीं कह सकता। मेरा ख्याल है कि कोई गुह्य शक्ति शरीरमें उतरती है और रोगको ठीक कर देती है लेकिन यह कहना मुश्किल है कि भौतिक स्तरपर क्या क्रिया होती है।

जो चीज यह जापानी डाक्टर प्राणिक-भौतिक शक्ति या स्पन्दनद्वारा कर रहा है वही शायद हठ योग भी किया करता था, उदाहरणके लिए हठ योगी व्यान (सारे शरीरमें काम करनेवाली प्राण-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की लहर) पर अधिकार करके, नाभिके नीचे सभी शारीरिक कष्टों-को दूर कर सकते थे। वे पता लगा सकते थे कि कौन-सा प्राण कम है, आवश्यक प्राणिक ऊर्जाकी लहरें भेजकर रुग्ण स्थानपर काम करते और वहांसे रोगको बाहर कर सकते थे।

(कुछ ठहरकर) मैं अभी समाधिके कार्बन डाइआक्साइडके साथ संबंधके बारेमें सोच रहा था। जहांतक किसी विशेष प्रकारकी समाधि या एकाग्रताकी बात है, यह सिद्धांत एकदम सच्चा हो सकता है। उदाहरणके लिए, एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें आदमी अपनी चेतनाको अनंतके किसी पक्ष विशेषमें खींच लेता है। यह अवस्था मनको, भौतिक मनको भी, चुप करनेसे आती है, लेकिन समाधिके और भी तो रूप हैं जहां यह नियम बिल्कुल नहीं लग सकता। इन परिस्थितियोंमें मन बिल्कुल स्वच्छ और स्पष्ट होता है। वस्तुतः मन बहुत सक्रिय होता है और दिमागमें कार्बन डाइआक्साइडका नाम भी नहीं होता।

शिष्य—उच्चतर चेतनाको नीचे लानेमें प्राणायामकी क्या भूमिका होती है?

श्रीअरविंद—यह प्राण या प्राणिक स्पन्दनोंको मुक्त कर देता है और मस्तिष्ककी मन्दताको दूर करता है ताकि उच्चतर चेतना नीचे आ सके। प्राणायाम मस्तिष्कमें मन्दता नहीं लाता। मेरा अपना अनुभव इसके विपरीत है, इससे मस्तिष्कमें प्रकाश आता है। जब मैं बड़ौदामें प्राणायामका अभ्यास करता था तो सवेरे तीन घंटे और शामको दो घंटे प्राणायाम किया करता था। मैंने देखा कि मेरे मनने बहुत प्रकाश और शक्तिके साथ काम करना शुरू कर दिया। उन दिनों मैं कविता लिखा करता था। प्राणायामसे पहले मैं प्रतिदिन पांचसे आठ पंक्तियां लिख लेता था, महीनेमें लगभग दो सौ पंक्तियां होती थीं। प्राणायामके अभ्यासके बाद मैं दो सौ पंक्तियां तो आधे घंटेमें लिख लेता था। यही एकमात्र परिणाम नहीं था। पहले मेरी स्मरण शक्ति मन्द थी। इसके बाद मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखा कि जब प्रेरणा आती थी तो मैं सभी पंक्तियां उनके ठीक क्रम-में याद रख सकता था और जब अवसर मिलता तब उन्हें ठीक-ठीक लिख सकता था। इन बढ़ी हुई क्रियाओंके अतिरिक्त मैं अपने मस्तिष्कके चारों ओर बिजलीकी क्रियाशीलता देख सकता था। मैं अनुभव कर सकता था कि वह किसी सूक्ष्म द्रव्यसे बनी है। मैं यह अनुभव कर सकता था कि सब कुछ इसी तत्त्वकी रचना है। उसका तुम्हारी कार्बन डाइआक्साइडसे कोई संबंध न था।

शिष्य—क्या श्वासोच्छ्वास एकदम बन्द हो जानेपर आप मानसिक क्रिया-कलापमें कोई फर्क पाते थे?

श्रीअरविंद—मुझे पूरी तरह सांस बंद होनेके बारेमें पता नहीं, लेकिन प्राणायामके समय श्वास नियमित और लयबद्ध हो जाता है।

शिष्य—प्राणायाम मानसिक क्षमताओंका विकास कैसे करता है? उच्चतर चेतनाको नीचे लानेमें उसकी क्या भूमिका होती है?

श्रीअरविंद—प्राणकी तरंगें मानसिक क्रिया-कलापको सहारा देती हैं। जब प्राणायाम इन तरंगोंमें परिवर्तन करता है तो उससे मस्तिष्कमें भी परिवर्तन आता है। मस्तिष्ककी मन्दताका कारण होता है उसमें कुछ रुकावट, जो उच्चतर विचारको उसतक नहीं आने देती। जब यह रुकावट हट जाय तो उच्चतर मानसिक सत्ता आसानीसे अपनी क्रिया मस्तिष्कतक पहुंचा सकती है। जब उच्चतर चेतना प्राप्त हो तो मस्तिष्क मन्द नहीं होता। मेरा अनुभव है कि वह ज्यादा प्रकाशमय हो जाता है।

प्राणायामकी तरह वे सभी व्यायाम किसी ऐसी चीजके उपकरण हैं जो उनके पीछे रहती और अपनी अभिव्यक्तिके लिए उनका उप-योग करती है।

भौतिक स्तरपर भी ये उपायोंसे बढ़कर, संकेत चिह्नोंसे बढ़कर और कुछ नहीं हैं जिनका हम उपयोग करते हैं लेकिन हम उपायके बाहरी रूपको बहुत अधिक महत्त्व देते हैं क्योंकि हम समझते हैं कि भौतिक ही सबसे अधिक वास्तविक है। अगर हमें यह पता लगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि समस्त भौतिक जगत् शक्तिसे बना हुआ है और यह किसी चेतना और शक्तिकी क्रियासे बढ़कर कुछ नहीं है जो कुछ उपकरणों और उपायोंका उपयोग करती है, तो हमें धोखा न होगा।

शिष्य—क्या यह सच है कि उच्चतर चेतनाके आनेपर मस्तिष्क सोचना छोड़ देता है?

श्रीअरविंद—क्या मतलब? मस्तिष्क तो विचारकी पीठ नहीं है। सोचता तो मन है, मस्तिष्क केवल प्रतिक्रिया करता है। मस्तिष्क केवल संचार-सूत्र है, उच्चतर क्रिया-कलापके लिए एक सहारा है। अगर मन निष्क्रिय हो तो वह उच्चतर मनसे चीजें पाता और उन्हें मस्तिष्कतक पहुंचा देता है।

अगर मस्तिष्क मन्द हो तो मन अपनी क्रियाको भली-भांति संचारित नहीं कर सकता, करता भी है तो अधकचरे रूपमें। हमेशा तो नहीं पर कभी-कभी साधनामें ह्रास मस्तिष्ककी थकानके कारण आता है।

शिष्य—क्या हमेशा यही कारण नहीं होता?

श्रीअरविंद—नहीं, उज्ज्वल कालमें प्रगति चलती रहती है लेकिन जब भौतिक मस्तिष्क पीछे रह जाता है और मन और इच्छा शक्तिके प्रयासमें सहयोग देनेसे इंकार करता है तब साधनामें मन्दता, तामसिक अवस्था आ जाती है।

शिष्य—नींद क्या है?

श्रीअरविंद—नींद।

शिष्य—शरीर शास्त्रके अनुसार स्नायुओंके सिरे चेतनासे संबंध खो बैठते हैं, और चूंकि वे कुछ करनेके लिए बाधित नहीं होते इसलिए स्वास्थ्य लाभ करनेमें लग जाते हैं। उनके सभी स्वाभाविक क्रिया-कलाप स्थगित हो जाते हैं और इससे उन्हें आराम मिलता है। नींदके बारेमें चिकित्सा शास्त्रोंमें अनेक परिकल्पनाएं हैं।

श्रीअरविंद—शरीर शास्त्रकी दृष्टिसे तो मैं नहीं जानता परंतु है यह आंतरिक चेतनामें तामसिक रूपसे घुस जाना। हो सकता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि चूंकि साधारण क्रिया-कलाप बन्द हो जाते हैं इसलिए स्नायुएं अपने-आपको स्वस्थ बना लेती हैं।

शिष्य—क्या इस तरह आंतरिक चेतनामें वापिस चला जाना शरीरके लिए आवश्यक है?

श्रीअरविंद—नहीं, यह केवल एक आदत है जैसा कि किसीने लिखा है, तुम चाहो तो कह सकते हो कि मनुष्य जब पशुओंके साथ रहा करता था, तबकी यह बुरी आदत है।

शिष्य—क्या हम इस आदतसे पिंड छुड़ा सकते हैं?

श्रीअरविंद—निश्चय ही, भोजन भी एक आदत है लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि तुम उसे आज ही छोड़ सकते हो। आदतने इन्हें अनिवार्य बना दिया है। अगर तुम अचानक सोना छोड़ दो तो तुम्हारा शरीर टूट सकता है। तुम सोते समय जो शक्ति लाभ करते हो, तुम्हारे पास उसका स्थान लेनेके लिए कोई और शक्ति न हो तो तुम मर सकते हो।

शिष्य—वह दूसरी चीज कौन-सी है जो नींदका स्थान ले सकती है?

श्रीअरविंद—योग-निद्राके दस मिनट सामान्य निद्राके कई घंटोंके बराबर होते हैं।

शिष्य—सोते समय हमें स्वप्न भी आते हैं। क्या इनका मस्तिष्कके साथ कोई संबंध होता है?

श्रीअरविंद—स्वप्नोंका मस्तिष्कसे कोई संबंध नहीं होता। यह तो पीछे होनेवाली चीजोंका एक अस्त-व्यस्त अभिलेख है। चीज अस्त-व्यस्त इसलिए हो जाती है कि उसपर नियंत्रण रखनेवाला मन वहां नहीं होता। निष्क्रिय स्मृतिमेंसे सब प्रकारकी चीजें बाहर निकल आती हैं, दिनकी घटनाएं, मनके संस्कार, सबका घालमेल हो जाता है। अगर सोते समय मन सचेतन रहे तो तुम इस सारी क्रियाको देख सकते हो। कुछ स्वप्न ऐसे भी होते हैं जो पीछे होनेवाली चीजोंका स्पष्ट और शुद्ध चित्रण करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसा कि मैंने समाधिके बारेमें कहा उसी तरह स्वप्नोंके बारेमें भी यह कहना बहुत कठिन है कि भौतिक स्तरपर ठीक क्या होता है। भौतिक स्तरपर सभी चीजें केवल उपाय या उपकरण हैं। वे एक संकेत-पद्धति हैं—जैसे तारकी संकेत लिपि होती है। यह संदेश भेजनेका एक सुगम उपाय है पर बहुधा हम संकेतोंमें ही इतने फंस जाते हैं कि असली चीजको भूल जाते हैं।

वैज्ञानिक अन्वेषणोंके बारेमें भी यही बात है। जब तुम कहते हो कि अमुक अनुपातमें आक्सीजन और हाइड्रोजनके मिलनेसे पानी बनता है तो इसका कोई अर्थ नहीं होता। यह तो एक तथ्यका वर्णन है। तुम्हें पता नहीं कि पानी क्या है। तुम इतना ही जान सकते हो कि अमुक संयोगसे अव्यक्त पानी व्यक्त हो जाता है।

इलेक्ट्रोनकी परिकल्पनाके बारेमें भी यही बात है। जहांतक भौतिक तथ्योंका संबंध है वह परिकल्पना पूरी तरह ठीक हो सकती है लेकिन सवाल यह है कि ये विद्युदणु जो एक ही प्रकृतिके एकसे पदार्थ हैं, एक ही संख्यामें किंतु भिन्न-भिन्न क्रमोंमें व्यवस्थित होनेपर भिन्न-भिन्न तत्त्व क्यों बना डालते हैं?

शिष्य—इतना ही नहीं, विद्युदणुओंकी संख्यामें जरा भी घटाने-बढ़ानेसे पदार्थके गुण एकदम बदल जाते हैं। इतना ही नहीं, एक ही संख्या रहनेपर भी यदि उनके क्रममें कुछ हेर-फेर हो जाय तो एक पदार्थ निर्दोष होगा और दूसरा विष, इतना मौलिक फर्क आ जाता है।

श्रीअरविंद—इसलिए मैं कहता हूं कि इन उपकरणोंके पीछे कोई चीज है जो किसी और स्तरपर रहती है और वह यहां प्रकट होनेके लिए इन उपकरणोंका उपयोग करती है। लेकिन उपकरण वास्तविकताका नहीं है। हां, पीछेसे काम करनेवाली शक्ति इन उपकरणोंके द्वारा भौतिक स्तरपर उतरती है और साधारणतः लोग समझते हैं कि परिणामके लिए यह उपकरण जिम्मेदार है।

उपकरणमें परिवर्तनके बारेमें एक उदाहरण सुन लो। मैंने तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगम्य गुरु परमहंसके बारेमें बतलाया था। वह अपने हृदयकी धड़कनें बन्द करके भी साधारण आदमीकी तरह बोलचाल और काम कर सकते थे। जब कि साधारण आदमी धड़कन बन्द होते ही मर जायगा या प्रतिष्टम्भमें होगा। उनके साथ ऐसा न होता था।

२०-९-१९२५

(श्रीअरविंदके ससुर भूपाल चन्द्र बोसने एक यक्ष्माके रोगीके लिए श्रीअरविंदसे सहायता मांगी थी)

श्रीअरविंद—('क' से) तुम उन्हें लिख सकते हो कि मैं उनकी सहायता करनेका भरसक प्रयत्न करूंगा यद्यपि वर्तमान परिस्थितियोंमें ऐसा करना मेरे लिये कठिन है। शायद जल-वायु परिवर्तनसे कुछ लाभ हो।

शिष्य—एक यक्ष्मा विशेषज्ञ डा. मैथ्यूजका कहना है कि इसमें केवल दवाई ही नहीं, सामाजिक परिस्थितियां, आर्थिक अवस्था, आदिको भी बदलना जरूरी है। हवा, रोशनी, भोजन और टहलना दवाईसे ज्यादा जरूरी है।

श्रीअरविंद—उसके विचार बिल्कुल ठीक हैं। साधारणतः यह रोग 'चैत्य अवसाद'से शुरू होता है।

शिष्य—चैत्य अवसाद क्या चीज है?

श्रीअरविंद—यह आंतरिक सत्ताका अवसाद है। (श्रीअरविंदने प्रश्नको उड़ा दिया, इसपर सब हंसने लगे।)

(कुछ देर बाद) हमारे अंदर कोई चीज जीवनका आनंद लेती है। मेरा मतलब प्राणिक उल्लाससे नहीं है। साधारणतः यह एक तरहका आंतरिक सुख होता है (तुम उसे सचमुच सुख नहीं कह सकते) यह चैत्य पुरुषसे मिलनेवाला आंतरिक आनंद और कल्याण भाव है। अगर उसमें कुछ गड़बड़ हो जाय तो चैत्य अवसाद आ जाता है।

शिष्य—उसमें गड़बड़ कैसे होती है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—इसके बहुत-से कारण हो सकते हैं जैसे कोई आघात, कोई बड़ा दुःख, अत्यधिक चिंता, सामर्थ्यसे अधिक काम, शरीरके किसी मर्मस्थलपर चोट—इनमेंसे कोई-सा भी चैत्य अवसाद ला सकता है।

शिष्य—क्या इसे ठीक किया जा सकता है?

श्रीअरविंद—सब तरहके अवसाद ठीक किये जा सकते हैं।

शिष्य—चैत्य अवसादको कैसे ठीक किया जाय?

श्रीअरविंद—चैत्य शक्ति लगाकर (हंसी)।

(कुछ समय बाद) यह "चैत्य अवसाद" अजीब तरहसे आता है। अगर किसी कलाकारको बड़े भद्दे परिवेशमें रखा जाय तो उसमें चैत्य अवसाद आ सकता है।

शिष्य—मेरा ख्याल है कि अगर मरीजको केवल चैत्य शक्ति देनेकी बात है तो यह काम आपके लिए अपेक्षाकृत सरल होगा।

श्रीअरविंद—लेकिन मैं हमेशा शक्ति लगानेमें ही व्यस्त नहीं रह सकता। मुश्किल यह है कि हम दोनों एक दूसरेसे अपरिचित हैं लेकिन यह मामला 'ख' से ज्यादा आसान मालूम होता है क्योंकि यहां मैं कम-से-कम शक्ति भेज तो सकता हूं। 'ख' भी मेरे लिये अपरिचित है लेकिन जब मैं उसके लिए शक्ति भेजता हूं तो मुझे लगता है कि उसके वतावरणमें कोई बहुत मोटी चीज है और उस प्रतिरोधको भेदनेके लिए बहुत ज्यादा दबावकी जरूरत पड़ती है। शायद परिवारमें कोई ऐसा व्यक्ति है जो प्रतिरोध करता है। परिणामकी असफलताका तीसरा कारण यह है कि यह आदमी चैत्य सहायता ले सकनेके लिए जिस आंतरिक अभ्यासकी जरूरत है उससे वंचित है।

दूरसे ऐसे लोगोंको ठीक करना मुश्किल होता है। जो आदमी नजदीक हो, जिसे श्रद्धा हो या जिसके साथ चैत्य संपर्क हो उसके साथ ज्यादा आसानी होती है।

शिष्य—चैत्य अवसादको और किस तरह दूर किया जा सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—कई तरीके हैं। अगर आदमी प्राणिक रूपसे बलवान् हो तो उसकी प्राण-शक्ति चैत्य अवसादको दूर करनेमें सहायता दे सकती है। आंतरिक सत्ताकी ये शक्तियां हमेशा एक दूसरेपर क्रिया-प्रतिक्रिया कर सकती हैं।

शिष्य—और प्राणिक शक्ति क्या है?

श्रीअरविंद—वह मनुष्यकी जीवनी शक्ति है। तुम्हें अपने अंदर एक प्रकारकी ऊर्जाका अनुभव होता है जो जीवनके आघातोंको सहती है। वही तुम्हें बाधाओंको पार करनेकी क्षमता प्रदान करती है। साधारण मनुष्योंके लिए यह बहुत जरूरी है। यह तुम्हें लंबी बीमारीसे मुक्त कर सकती है। उपनिषद्में कहा है 'प्राणस्येदं वशे सर्वम् त्रिदिवे यत् प्रतिष्ठितम्'—इस संसारमें जो कुछ है वह प्राणके आधीन है। यहांतक कि मानसिक क्रियाएं भी प्राणके आधीन होती हैं, प्राण शक्तिहीन जगत्को चलता रखता है।

शिष्य—प्राणिक अवसादको जीतनेके लिए क्या करना चाहिए?

श्रीअरविंद—प्राण शक्ति लगाकर (हंसी, कुछ रुककर) तुम्हें अपने चारों ओरके वैश्व प्राणशक्तिके अनंत सागरसे प्राण शक्ति खींचनी होगी।

शिष्य—तब अगला प्रश्न है, "यह कैसे खींची जाय?"

श्रीअरविंद—हाथ-पैरके अतिरिक्त तुम्हारे पास कोई और चीज भी है जिससे तुम भीतर ही भीतर प्राण शक्तिको पकड़ सकते हो।

शिष्य—लेकिन उस प्राण शक्तिको कैसे खींचा जाय? यानी मैं सचेतन रूपसे उसे खींचना नहीं जानता।

श्रीअरविंद—जो चीज तुम अचेतन रूपसे करते हो उसे हमेशा सचेतन रूपसे करना सीख सकते हो।

इसके दो मुख्य प्रकार हैं निष्क्रिय और सक्रिय। पहले तरीकेमें तुम चुपचाप रहते हो और अपने अंदर प्राणिक शक्तिके आनेकी प्रतीक्षा करते हो, तुम देखोगे वह तुम्हारे अंदर जोरसे घुस पड़ेगी। दूसरे तरीकेमें तुम उसे पकड़ते और अपने अंदर खींचते हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—मान लीजिये कोई आदमी बहुत दुर्बल है और आप उसे आध्यात्मिक सहायता देते हैं। क्या इससे उसे कुछ हानि हो सकती है?

श्रीअरविंद—नहीं, कमजोरीसे कुछ नहीं आता जाता, लेकिन अगर उसके अंदर कोई चीज उच्चतर शक्तिके काममें बाधा देती है तो वह उसे हानि पहुंचा सकती है।

शिष्य—उच्चतर शक्ति मनुष्यको कैसे हानि पहुंचा सकती है?

श्रीअरविंद—उच्चतर शक्ति हानि नहीं पहुंचाती, लड़ाई हानि पहुंचाती है। विरोधी शक्तियोंके कारण संघर्ष अधिक तीव्र हो जाता है। ऐसे संघर्षोंसे बचना हमेशा ज्यादा अच्छा है। (कुछ रुककर) उदाहरणके लिए यदि इस समय 'ख' के ऊपर शक्ति डाली जाय तो शायद पहला परिणाम यह हो कि वह अधिक पागल हो जाय क्योंकि जिन शक्तियोंने उसपर कब्जा कर रखा है वे स्वभावतः बिफर उठेंगी। 'ग'के बारेमें भी यही कठिनाई थी, वह भी पूरी तरह विरोधी शक्तियोंके हाथमें था।

२६-९-१९२५.

(सफाई, रोगसे बचनेके उपाय आदिके बारेमें बात हो रही थी। एक शिष्यने पूछा, क्या ऐसे उपायोंसे मृत्युको नहीं जीता जा सकता?)

श्रीअरविंद—नहीं, ऐसी चीजोंके लिए मृत्यु बहुत चालाक है। मृत्युपर विजय पानेका यह तरीका बिल्कुल नहीं है। प्रकृति इतनी यांत्रिक नहीं है। वह सचेतन सत्ता है। अगर तुम उसे एक ओरसे मात देना चाहो तो वह तुम्हें दूसरी ओरसे मात देती है। तुम्हारे सफाई और स्वास्थ्य विज्ञानके नियम केवल स्वास्थ्यके भौतिक पक्षके साथ संबंध रखते हैं लेकिन वे उन प्राणिक शक्तियोंतक नहीं पहुंच सकते जो भौतिक चीजोंके पीछे हैं, भौतिक परिस्थितियां उनके खिलौने भर हैं। महायुद्धके समय महामारियोंको रोकनेकी बड़ी अच्छी व्यवस्था थी जो सफल भी रही परंतु महायुद्ध समाप्त होनेपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महामारियां जोरोंसे फट पड़ीं: इसे मृत्युपर विजय पाना नहीं कह सकते।

शिष्य—चाणोदके स्वामी ब्रह्मानन्द दो सौ वर्षसे अधिक जिये थे।

श्रीअरविंद—हां, अगर तुम हठयोग जानते हो तो अपने शरीरको बीमारियोंसे सुरक्षित रख सकते हो। तुम शरीरको प्राण शक्ति देकर वार्धक्यकी प्रक्रियाको भी धीमा कर सकते हो लेकिन मुश्किल यह है कि तुम सारे समय समाधिमें नहीं रह सकते।

शिष्य—तिब्बती बाबाका कहना है कि मनुष्य अमुक दवाई खाकर मृत्युपर विजय पा सकता है।

श्रीअरविंद—आशा है हमारे डाक्टर मित्र मुझे क्षमा करेंगे यदि मैं यह कहूं कि शायद दवाई ज्यादा जल्दी मार देगी।

शिष्य—तिब्बती बाबाका कहना है कि इस दवाईको लेना बहुत कठिन है। उसके लिये शर्त है आजीवन ब्रह्मचर्यका पालन करना।

दूसरा शिष्य—हां, ऐसी कई और शर्तें भी होंगी जिन्हें पूरा करना असंभव होगा।

शिष्य—क्या भूतकालमें किसीने मृत्युपर विजय पायी है?

श्रीअरविंद—पता लगाना होगा, मुझे पता नहीं। कहा जाता है कि महात्माओंने मृत्युपर विजय पा ली थी।

शिष्य—एक थियोसोफिस्ट पुस्तकके अनुसार उन्हें वैशाख घाटीमें देखा जा सकता है।

और एक शिष्य—कहा जाता है कि अश्वत्थामा अमर हैं।

श्रीअरविंद—और कहते हैं लोगोंने उसे गुजरातमें कहींपर देखा है।

शिष्य—कहीं नर्मदा तटपर।

श्रीअरविंद—और कहते हैं कि उसके चरण-चिह्न हमारे इन मित्रसे दोगुने बड़े हैं!

११-१०-१९२५

(आज प्रश्न यह उठा कि क्या कुएकी पद्धति इस योगके साधकके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये उपयोगी है? जब बीमारी आये तो हमारी मनोवृत्ति कैसी होनी चाहिए? भारतमें कई परिवारोंमें तो बीमारी एक सामान्य घटना होती है और लोगोंको हमेशा रोगीकी परिचर्या करनी होती है।)

शिष्य—क्या रोग-निवारणके लिये कुएकी पद्धतिका उपयोग करनेमें कोई आपत्ति है?

श्रीअरविंद—नहीं, उसका उपयोग करनेमें तनिक भी आपत्ति नहीं है। तुम्हें यह जानना चाहिए कि तुम आत्म-सम्मोहन द्वारा अति-मानसतक नहीं पहुंच सकते, यह आसान नहीं है। कहनेका मतलब यह कि कुएकी पद्धति इस योगमें काम न देगी। अगर तुम हमेशा अपने-आपसे कहते रहो, "मैं शुद्ध हूं" तो इससे तुम अपने-आप शुद्ध नहीं बन जाओगे। तथ्योंका सामना तो करना ही पड़ेगा। तुम्हें देखना होगा कि तुम्हारे अंदर कौन-सी अशुद्धि है, फिर उच्चतर शक्तिका आह्वान करो और उससे प्रार्थना करो, वह तुम्हें शुद्ध कर दे।

कुएकी पद्धतिमें इच्छा और कल्पनामें स्पष्ट भेद है। तुम्हें जानना होगा कि "इच्छा" क्या चीज है। इच्छाके बारेमें हमारा और कुएका विचार एक समान नहीं है। "इच्छा" मानसिक प्रयास नहीं है। वह प्राणिक धक्का भी नहीं है जिसकी सहायतासे मनुष्य सामान्यतः अपनी कामनाएं पूरी कर लेते हैं। वह एक प्रबल चाह भी नहीं है, "इच्छा" एक संघर्षतर, उद्यमशील, चंचल वस्तु भी नहीं है। वह स्थिर अचंचल चीज है और इस रूपमें वह उच्चतर शक्तिका आह्वान होता है ताकि वह नीचे आकर अपनी क्रिया करे। एक ऐसी 'इच्छा' भी होती है जो प्रकृतिपर आधिपत्य करके कार्य करती है। एक और प्रकारकी इच्छा आधिपत्य नहीं, अभीप्सा करती है और प्रार्थना भावके साथ उच्चतर शक्तिको नीचे बुलाती है। सबसे ऊंची इच्छा है भगवान्‌की इच्छा। सब प्रकारकी सफलता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये यह अनिवार्य है। वह स्वतंत्र रूपसे अपने-आप काम करती है।

शिष्य—बीमारीके इलाजके लिए कोई भी पद्धति क्यों न अपनायी जाये, विश्वासका होना जरूरी नहीं है क्या?

श्रीअरविंद—ऐसे किसी भी इलाजके लिए, यहांतक कि कुएकी पद्धतिमें भी, विश्वासका होना जरूरी है।

शिष्य—इस योगके साधकके लिए कुएकी पद्धति किस तरह उपयोगी हो सकती है?

श्रीअरविंद—शुरूमें किसी हदतक उसका उपयोग किया जा सकता है पर आगे चलकर नहीं। उसका तरीका विश्वव्यापी नहीं है। वह सबके साथ सफल भी नहीं होती। वस्तुतः वह अचेतनाको सम्मोहित करके काम करता है परंतु कुछ लोगोंमें अचेतना उसके आदेश स्वीकार करनेसे इंकार करती है अतः वह सफल नहीं होती।

हमारे योगमें हमें अधिकाधिक सचेतन बनना है ताकि हमारा अवचेतन भी पूरी तरहसे जाग्रत् हो जाय, इसके अतिरिक्त हमारे योगका उद्देश्य रोगोंको दूर करनेका सबसे अच्छा उपाय खोजना नहीं है। हमारा उद्देश्य है समस्त चेतनाको, यहांतक कि भौतिक चेतनाको भी बदलना—सारी सत्ताका इस तरह रूपांतर करना कि रोग असंभव हो जाय।

(किसीने पूछा कि क्या क्रियाशीलता और हमारे योगका आपसमें मेल बैठ सकता है।)

श्रीअरविंद—हमारे योगका क्रियाशीलतासे कोई विरोध नहीं है लेकिन जो भी कर्म किया जाय वह शांति और ज्ञानपर आधारित हो, वह सुविचारित और अचंचल हो। तुम कोई ऐसा काम ले सकते हो जिसका बहुतोंसे संबंध न हो, जो पूरा होनेके लिए सिर्फ तुमपर ही निर्भर हो। उदाहरणके लिए इस योगमें बौद्धिक और शारीरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य किये जा सकते हैं। ऐसा समय आ सकता है जब समस्त कर्मका त्याग करना पड़े। इस अवस्थाकी अस्थायी उपयोगिता होती है। ऐसे समय तुम्हें तीव्र एकाग्रताके साथ साधना करनी होती है।

जब तुम चेतनाके किसी और स्तरपर चढ़ जाते हो तो तुम्हें पता लगता है कि चीजोंके बारेमें तुम्हारा दृष्टिकोण पूरी तरह बदल गया है। उस अवस्थामें तुम पहले जैसा बौद्धिक कार्य जारी नहीं रख सकते। तुम्हें तबतक प्रतीक्षा करनी होगी जबतक उच्चतर चेतना काम न करने लगे। हां, जब समस्त चेतनाका रूपांतर हो जाय तब तुम्हें जीवनके सभी स्तरोंको स्वीकार करना और जीवनमें उच्चतर चेतनाको अभिव्यक्त करना होगा।

(साधनाके समृद्ध विकासके बारेमें चर्चा हुई)

श्रीअरविंद—अच्छी तरहसे प्रशिक्षित बुद्धि और बलवान् प्राणिक सत्ता इस योगमें बहुत सहायक भी हो सकते हैं और बड़े बाधक भी। सहायक इस तरह कि वे सत्ताका विस्तार करते हैं और उच्चतर क्रियावलीको आसानीसे आने देते हैं। उदाहरणके लिए यदि बुद्धि अच्छी तरह प्रशिक्षित और विशुद्ध हो, चीजोंको भली-भांति व्यवस्थित कर सकती हो, नमनीय और लचीली हो तो साधक उच्चतर शक्तिके कार्योंको समझ सकता है, अपनी अनुभूतियोंको विवेकके साथ व्यवस्थित कर सकता है इत्यादि। लेकिन बुद्धि बाधक भी हो सकती है, क्योंकि वह चेतनाका एक स्वतंत्र स्तर बननेकी ओर प्रवृत्त होती है। वह चीजोंपर अपना अधिकार या अपनी पकड़ छोड़नेके लिए तैयार न हो, वह उच्चतर ज्ञानके लिए अपना ही प्रयास करती रहे और परिणामस्वरूप वह कभी विकसित ही न हो पाये। वह संदेह, निषेध और चीजोंपर अपना अधिकार बनाये रखनेके आग्रहद्वारा बाधा डाल सकती है, सबल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणमय सत्ताके साथ भी यही बात है, अगर वह पारदर्शक और शुद्ध हो तो बहुत सहायक होती है लेकिन अगर उसमें कोई अशुद्धि हो जो अपने-आपको उच्चतर शक्तिके हाथमें सौंपनेसे इंकार करे, हठ करे और तुम्हें नीचेकी ओर ले जाये तो यह बहुत बाधक होती है।

पहलेसे तैयारी किये बिना भी साधनामें समृद्धि पायी जा सकती है। साधनामें एक समय आता है जब सत्ताके विभिन्न भाग भीतरसे अपनी परिपूर्ति पा लेते हैं—हां, यह होता है कुछ सीमाओंके भीतर ही।

(एक शिष्यने अपने काम करनेके लिये प्राणिक आवेगकी बात की तो)

श्रीअरविंद—कुछ करनेका आवेग तो हमेशा रहता है, विशेषकर यदि तुम्हें कुछ काम करते रहनेकी आदत है। यह क्रियाशील मनकी गति है जो कुछ-न-कुछ करता रहना चाहता है। वह हमेशा कार्य करता, योजनाएं बनाता और जब व्यक्ति कुछ करना नहीं चाहता तब भी सोचता रहता है। गतिशील मन अपने-आपको क्रियाशील रखना चाहता है। योगकी दृष्टिसे यह ऊर्जाका अपव्यय है। तुम्हें करना यह चाहिये कि अपने-आपको अपनी प्रकृति और उसकी सारी गतिविधियोंसे अलग रखो। तुम्हे उन्हें बाहरसे, वैश्व प्रकृतिसे आनेवाली चीजोंके रूपमें देखना चाहिये।

१४-१०-१९२५

(मणि लाहिड़ीने योग-साधना शुरू की है। अब वह बहुत शक्तिका अनुभव करता है। पहले वह बहुत उग्र और क्रोधसे भरा हुआ अनुभव करता था।)

श्रीअरविंद—इस प्रकारके मनको ठीक होनेमें बड़ा समय लगता है। मुझे नहीं लगता कि वह इस जीवनमें अपनी प्रगति पूरी कर सकेगा। लगता तो यह है कि वह ऐसा आदमी है जिसे प्रगति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेसे पहले अभी कई जीवन बिताने होंगे। लेकिन हां, निश्चयके साथ कुछ भी नहीं कहा जा सकता है क्योंकि हो सकता है कि अचानक कोई चीज उठ खड़ी हो और सत्ताकी सारी गति ही बदल दे।

शिष्य—ऐसा आमूल परिवर्तन कैसे आ सकता है?

श्रीअरविंद—स्पष्ट है कि वह किसी चीजके कारण होगा। यह कोई ऐसी चीज है जो सतहपर नहीं, उसके पीछे कार्य कर रही है और उसीके कारण ऐसे परिवर्तन होते हैं। मानसिक तर्क-वितर्क, कारण आदि जो परिवर्तनके साथ ऊपर दिखायी देते हैं वे केवल ढक्कन या पृष्ठभूमिमें छिपी चीजके कार्यके लिये मात्र व्यवस्था रूप हैं।

शिष्य—क्या यह भगवान्‌की कृपाके कारण नहीं है?

श्रीअरविंद—यह बात समझानेका एक तरीका है लेकिन सचमुच जब तुम कहते हो 'यह भागवत कृपा है' तो इससे कुछ भी समझमें नहीं आता।

शिष्य—क्या भागवत कृपाका नियंत्रण करनेवाला कोई नियम नहीं है?

श्रीअरविंद—तुम बहुत ज्यादा संवैधानिक मालूम होते हो। तुम्हें भगवान्‌को कुछ अप्रतिबंध शक्ति रखने देना चाहिये!

शिष्य—मुझे उनके अप्रतिबंध शक्ति रखनेमें कोई आपत्ति नहीं है!

और एक शिष्य—भगवान्‌को कितनी बड़ी सुविधा मिल गयी!

पहला शिष्य—मुझे भगवान्‌के बारेमें आपत्ति यह है कि वह निश्चित नहीं हैं। उनकी कृपा पानेके लिए कुछ निश्चित नियम तो होने चाहिएं!

श्रीअरविंद—फिरसे, यह कहनेका एक तरीका भर है। तुम जगतसिंहके बारेमें कह सकते हो कि उसे यह मिलनी चाहिए क्योंकि उसने मानसिक तथा अन्य प्रयास करके अपने-आपको उसके योग्य बना लिया।

शिष्य—लेकिन कुछ तो कारण होना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—भगवान्‌के अपने कारण हो सकते हैं जो निश्चित रूपसे तुम्हारे मानसिक कारण नहीं हैं।

शिष्य—लेकिन भगवान् निश्चित क्यों नहीं हो सकते?

श्रीअरविंद—अगर वे निश्चित हो जाएं तो सारा मजा किरकिरा हो जायगा।

शिष्य—और तुम उसका एक नियम बना डालोगे।

दूसरा—लेकिन इस तरह भगवान् स्वयं अपने नियम तोड़ते हैं!

श्रीअरविंद—तुम्हें कैसे पता कि वे स्वयं अपने नियम तोड़ते हैं! इसीलिए कई धर्म कहते हैं कि "भागवत कृपा" के सिवाय कुछ है ही नहीं। भगवान्‌की कृपाको समझाया नहीं जा सकता। वह समस्त मानसिक विश्लेषणसे दूर रहती है।

शिष्य—तब तो भक्तोंकी पौ बारह होगी।

श्रीअरविंद—लो, तुम और एक नियम बनाना चाहते हो। तुम यह नहीं कह सकते कि भक्तोंको **अधिक** अवसर मिलता है। तुम बस यही कहते हो "ऐसी, ऐसी चीजें होती हैं", भगवान्‌की कृपा तर्कातीत है, उसपर किसी मानसिक नियमका नियंत्रण नहीं है। फिर भी तुम योगमें अपने प्रयाससे जो कुछ कर सकते हो, भागवत कृपा उससे बहुत अधिक कर सकती है।

शिष्य—साधनामें हम प्रयास करते जाते हैं, करते जाते हैं लेकिन बाधा हटनेसे इंकार करती है। फिर एक दिन अचानक प्रतिरोध हटा दिया जाता है।

श्रीअरविंद—यही तो मैं कहता हूं। ऐसे मामलोंमें प्रयासका कहीं स्थान नहीं होता।

शिष्य—तब तो हमें कहना चाहिए कि भागवत कृपासे ही सब कुछ होता है।

श्रीअरविंद—एक तरहसे तुम यह भी कह सकते हो, यह फिरसे कहनेका एक तरीका है।

शिष्य—मेरा ख्याल है, जिन लोगोंके जीवनमें अकस्मात् परिवर्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आता है, शायद वह कृपाके कारण है, उदाहरणके लिये लाला बाबूने एक ही शब्द सुना और उनमें वैराग्य पैदा हो गया।

श्रीअरविंद—वैराग्य तो बहुतोंमें पैदा होता है।

शिष्य—लेकिन उनके अंदर बना रहा।

श्रीअरविंद—हां, यह आसानीसे बना रह सकता है। प्रश्न यह नहीं है। ऐसे लोगोंमें भी, जिनके बाहरी जीवनमें परिवर्तनका कोई लक्षण नहीं दिखायी देता, यानी अत्यंत अप्रत्याशित लोगोंमें भी परिवर्तन आ सकता है। ऐसे लोगोंके बाहरी लक्षण देखकर ही तुम यह फैसला नहीं कर सकते कि उनके अंदर कोई चीज ऐसी न थी जो बदलना चाहती हो। प्रश्न यह नहीं है कि मन और अन्य भाग क्या चाहते हैं, महत्त्व इसका है कि आंतरिक सत्ता क्या चाहती है।

बहुत बार यह होता है कि चैत्य सत्ता किसी बाधाके कारण पूरी तरह ढक जाती है और फिर अचानक एक प्रहार होता है और बाधा उड़ जाती है।

शिष्य—मेरा ख्याल है कि आंतरिक सत्ताका पहला जागरण भागवत कृपाके कारण ही होता है। है न?

श्रीअरविंद—सभी पहला जागरण भागवत कृपाके कारण ही होता है। तुम्हें एक झलक दिखा दी जाती है और फिर तुम्हें अपना रास्ता बनाना होता है।

शिष्य—तो फिर निजी प्रयासके लिए कोई स्थान ही नहीं रहा।

श्रीअरविंद—यह कहनेका एक तरीका है। तुम कह सकते हो कि एक तो कृपा है और दूसरा प्रयास। दोनों सच्चे और जरूरी हैं। कृपा ऊपर है। मन अपने-आपको और प्राण तथा शरीरको कृपा पानेके लिए तैयार कर सकता है। एक तरहसे मन अशुद्धियोंको साफ भी कर सकता है और प्रतिरोधको तोड़ सकता है।

शिष्य—शायद कृपाके बारेमें कोई उस तरहका नियम नहीं है जिसे हम नियम कहते हैं, मानसिक न सही किसी और तरहका नियम तो होगा ही?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—निश्चय ही, नियम है लेकिन शुरूमें भगवान् हर स्तरके नियमोंका मान रखते हैं यद्यपि वे हर एकके परे हैं। जब मनुष्य पूरी तरह मनके ऊपर उठ जाता है तब वह नये नियमको जान पाता है, तब मनकी सभी रचनाएं टूट जाती हैं।

सिद्धांत रूपसे ऐसा कोई कारण नहीं है कि अतिमानस तुरंत नीचे न उतर आये और मनुष्य उसे क्रमबद्ध झलकोंमें छह महीनेके अंदर न पा लें, लेकिन इस तरह उसे पाया नहीं जाता। उसे जगत्की शक्तियोंको देखना होता है, उनके साथ उन्हींके स्तरपर मिलना तथा मुठभेड़ करनी होती है यानी, जगत्की शक्तियोंसे युद्ध करना होता है।

शिष्य—लेकिन मान लीजिये जगत्की शक्ति अतिमानसको नहीं चाहती?

श्रीअरविंद—जगत्की शक्ति क्या चाहती है इसका महत्त्व नहीं है, महत्त्व है **तुम** क्या चाहते हो। शक्तियां केवल संघर्षको तीव्रतर बना सकती हैं। जगत्की शक्तियां अपने नियमोंको कभी बदलना नहीं चाहतीं। लेकिन अगर तुम और भगवान् उन्हें बदलना चाहें तो उन्हें बदला जा **सकता** है। उन्हें बदलनेके लिए तुम्हारा इच्छा करना आवश्यक है लेकिन भगवान्के चाहे बिना यह इच्छा पर्याप्त नहीं है।

शिष्य—अगर जगत्की शक्तियां बदलना नहीं चाहतीं तो उन्हें कैसे बदला जाय?

श्रीअरविंद—तुम्हें उनपर क्रिया करनी होती है, उनसे लड़ना और उन्हें हराना होता है।

(एक साधकके दिमागमें कुछ गड़बड़ हो गयी थी, उसके बारेमें बातचीत)।

शिष्य—उसके पागलपनका कारण क्या है?

श्रीअरविंद—यह तो स्पष्ट है कि वह बुद्धिकी कमीके कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पागल नहीं हुआ। अपनी आजकी अवस्थामें भी जब उसके दिमागमें काफी गड़बड़ है, तुम उसमेंसे सत्यकी चिंगारियां निकलती हुई देख सकते हो। उसने कुछ बिल्कुल सच्ची बातें कहीं थीं यद्यपि कही थीं ऊटपटांग तरीकेसे। उदाहरणके लिए उसने कहा, 'जबतक मैं अतिमानसतक न पहुंच जाऊं तबतक मैं सभी अनुभूतियोंको लटकता रखता हूं।' बात एकदम सच्ची थी। पीछेसे कोई चीज सत्यको अभिव्यक्त करनेकी कोशिश कर रही थी। उसकी बाहरी सत्ता हमेशा इस तरहसे प्राप्त सत्योंका दुरुपयोग करती है। यहांपर सत्य यह है कि मनको सभी परस्पर-विरोधी चीजोंको तबतक पकड़े रखना और संतुलित रखना पड़ेगा जबतक कि उच्चतर प्रकाश यहां आकर उनमें मेल न करा दे।

शिष्य—अगर उसकी बुद्धि ठीक थी तो फिर दोष कहां था?

श्रीअरविंद—दोष था भौतिक मनमें। भौतिक स्नायुमंडलमें दुर्बलता भी थी। मैं ठीक नहीं कह सकता कि यह चीज शरीरकी भौतिक रचनामें ही थी या नहीं। उसने अपने अंदर जिस शक्ति-को खींचा था वह उसके भौतिक मन और स्नायुओंके लिए बहुत ज्यादा थी। उसकी भौतिक सत्ता भी बहुत कमजोर है। जब उच्चतर शक्तिका अवतरण हुआ तो वह टूट गयी।

शिष्य—अगर वह यहां होता तो क्या उसकी रक्षा की जा सकती थी?

श्रीअरविंद—यह कई चीजोंपर निर्भर है, यहां मैं पत्रोंके इंत-जारके बिना एकदम स्वयं उसपर ध्यान दे सकता था। यहांका वातावरण भी उसकी सहायता कर सकता था। लेकिन ठीक नहीं कहा जा सकता। यह एक संभावना है, दोष तो उसकी निम्न प्रकृतिमें था।

शिष्य—ओझा आदि पागलपनका जो इलाज करते हैं क्या उसका स्थायी परिणाम आता है?

श्रीअरविंद—अगर आदमीके अंदर कोई ऐसी चीज न हो जो उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूत-बाधाको वापिस बुलाये तो स्थायी उपचार हो सकता है लेकिन अगर उसका कोई भाग भूत-बाधाके बिना सूनापन अनुभव करता है तो वह उसे वापिस बुला सकता है।

(एक साधिकाका पत्र आया जिसमें वह कहती है कि उसे शांति तो मिल गयी है पर कोई नयी अनुभूति नहीं मिली।)

श्रीअरविंद—उससे पूछो कि उसे किस तरहकी शांति मिली है। यह मनकी अचंचलता है या ऊपरसे शांतिका अवतरण है। इस योगमें सबसे पहली चीज तो यही है। लेकिन शांतिके बहुतसे प्रकार होते हैं। एक शांति विस्तारके साथ उतरती है। उससे पूछो क्या वह यह अनुभव करती है कि वह उस शांति और विस्तारमें रह रही है। अगर ऐसा नहीं है तो उसे अपनी शांतिको अधिकाधिक गहरा बनाना चाहिए। उसे अधिकाधिक शांतिका अनुभव करना चाहिए, यहांतक कि वह स्थायी हो जाय, उस समय भी बनी रहे जब, ध्यानमें न बैठी हो। उसकी सभी क्रियाएं उस शांतिमें ही आयें। अगर वह इसमें सफल हो जाय तो वह देख पायेगी कि विचार मनमें कैसे और कहांसे आते हैं। वह अपने प्राणकी क्रियाओंको भी देख पायेगी। धीरे-धीरे उसे अपने अंदर किसी ऐसी चीजका अनुभव होना चाहिए जो इन सब चीजोंसे अलग है।

(किसी और साधिकाने लिखा कि उसका पति आग्रह कर रहा था कि वह योगाभ्यास शुरू करे। परंतु अब वह बदल गया है। वह खुशामद चाहता है और उसके मौनको गुस्सा मान बैठा है, उसकी स्वाधीन रायको उसका गर्व और प्राणिक आवेगोंकी अस्वीकृतिको अपमान मान लेता है।)

श्रीअरविंद—उसके बारेमें यह एक विलक्षण चीज है, उसकी बुद्धि तीक्ष्ण और निष्कपट है। तुम उसे बतला सकते हो कि अगर उनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई उच्चतर संबंध है तो वह अपने-आपको ऊपरसे प्रकट करेगा और तभी उसका पता चलेगा। लेकिन तबकी बात तबके लिए छोड़ी जा सकती है। अभी उसे पतिके संबंधको न तो स्वीकार करना चाहिए और न अस्वीकार। उसे योगसंबंधी अपने निश्चयपर दृढ़ रहना चाहिए फिर जो होगा, होता रहेगा।

शिष्य—मैं ऐसे कुछ लोगोंको जानता हूं जिन्हें बंगालमें पागल काली बाबाने भूतबाधासे ठीक कर दिया था। वे रोगीको लोहेका कड़ा दिया करता थे जिसे सारे समय पहने रहना जरूरी होता था। उसे उतारते ही तकलीफ फिर आ जाती थी। और भी नियम थे। क्या इन चीजोंसे स्थायी उपचार हो सकता है?

श्रीअरविंद—ये व्यक्तिके चारों तरफ एक प्रकारके कवच होते हैं लेकिन प्रकृतिके दोष कवचके नीचे भी बने रह सकते हैं। तुम्हें याद रखना चाहिए कि ये शक्तियां बहुत ज्यादा दुराग्रही और हठी होती हैं। यही उनका समान गुण है!

५-१२-१९२५

('क' का पति मर गया। इस दशामें वह श्रीअरविंदसे मार्ग दर्शन चाहती थी। उसकी इच्छा थी कि वह अपने पतिको सूक्ष्म शरीरमें देख सके।)

श्रीअरविंद—उसे मृत पतिको देखनेके बारेमें दो बातें लिखी जा जा सकती हैं। (१) यह कुछ हदतक स्वयं उसकी देखनेकी क्षमता-पर निर्भर है, यह क्षमता सबमें नहीं होती, (२) अगर दिवंगत आत्माकी प्रकट होनेकी इच्छा है तो वह प्रकट हो सकती है लेकिन अगर उसकी अपनी इच्छा नहीं है तो उसे फिरसे उन संबंधोंमें घसीटना ठीक नहीं है। यह उसके उन लोकोंमें जानेकी गतिमें बाधक हो सकता है जिनमें जाना उसके विकासके लिये जरूरी है। उसे पार्थिव लगावोंसे बांधना ठीक नहीं।

वह सत्य और उसकी प्राप्तिके बारेमें लिखती है। अगर वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे सचमुच चाहती है तो यह मांग इस अवसादसे अलग होनी चाहिए, जिसमेंसे वह गुजर रही है। अगर उसके भीतर काफी गहराईसे पुकार उठे तो उसका उत्तर अवश्य मिलेगा।

(साधना और पागलपनके संबंधमें)

श्रीअरविंद—अन्य तत्त्वोंके साथ वैष्णव साधना भी योगमें पागलपनको लायी है। वे सारी साधनाको भावुकताके स्तरपर उतार लाये परंतु वे चैत्य तथा आध्यात्मिक सत्ताकी सच्ची भावुकता और प्राणमय तथा दूसरे निचले भागोंकी उस भावुकतामें विवेक न कर सके जो उच्चतर चीजकी नकल करते हैं। यह नकली चीज ही सब प्रकारकी निचली शक्तियोंको स्थान देती है।

बेचैनी और पागलपनकी गतिविधियोंको इस हदतक स्वीकार किया गया कि लोग पागलपनको योगका पर्याय-सा मानने लगे। उनकी अभीप्सा थी 'पागल कर दो मुझे!' निश्चय ही मैं प्राचीन वैष्णव धर्मकी बात नहीं कर रहा। यह बात आधुनिक वैष्णव धर्मकी है।

शिष्य—लेकिन चैतन्य महाप्रभुमें भी हम गाना, नाचना और बेचैनी जैसे तत्त्व पाते हैं।

श्रीअरविंद—हां, यह उनके समयमें आरंभ हो चुका था।

दूसरा कारण यह है कि हमारा भौतिक मन सुविकसित नहीं है। एक दास जाति होनेके कारण हमारे पास बड़े कार्योंके लिये क्षेत्र नहीं है इसलिये हमारे भौतिक मनोंका भली-भांति विकास नहीं हुआ। भौतिक मनमें कुछ तो सकारात्मक चीज होनी चाहिए, एक ऐसा तत्त्व होना चाहिए जो सद्वस्तुको ग्रहण कर सके। स्वभावतः भौतिक मन भौतिक द्रव्यके सिवा किसी भी चीजपर विश्वास करनेसे इंकार करती है। 'क' जैसे अतिकारी भी होते हैं, जब वह अपनी आंतरिक सत्तामें प्रकाशको उतरते हुए देखता था तो वह बिजली बन्द करनेके लिए बटन दबा देता था! वैसी चीज तो नहीं लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस जैसी कोई चीज जरूरी है जिसके कारण भौतिक मन हर चीजके बारेमें प्रश्न करे और केवल सत्यको ही स्वीकार करे।

ऐसे कुछ साधक हर तरहके अंतर्दर्शन पाते हैं। कभी-कभी एक भैंस देखकर वे मान बैठते हैं कि उन्हें सिद्धि प्राप्त हो गयी, पूर्णता मिल गयी। उनके मनमें ऐसा प्रश्न कभी नहीं उठता कि आखिर इन अंतर्दर्शनोंका अर्थ क्या है, मुझे इनसे अबतक क्या मिला है। तुम ऐसी बातें पूछो भी तो वे उन्हें झटक कर फेंक देंगे।

३०-१-१९२६

(एक शिष्यको बुखार आ गया। संदेह यह था कि मलेरिया हुआ है। उसकी चिकित्साके बारेमें बातचीत चली।)

शिष्य—अनुष्ठानकी एक पद्धति होती है। कुछ लोग सिरपर एक पत्थरका टुकड़ा मारते हैं या दाढ़ी घुमाते हैं, क्या इन चीजोंमें कोई सत्य है?

श्रीअरविंद—क्यों नहीं, तुम्हारे अंदर श्रद्धा हो तो किसी भी चीज के द्वारा, हथौड़ीद्वारा भी रोग दूर किया जा सकता है।

शिष्य—क्या श्रद्धा अपने-आपमें पर्याप्त है?

श्रीअरविंद—हां, कुएकी पद्धति भी तो श्रद्धा और इच्छा शक्तिका सम्मिश्रण है।

शिष्य—क्या अनुष्ठानका अपने-आपमें कोई मूल्य नहीं?

श्रीअरविंद—अगर तुम्हारे अंदर श्रद्धा न हो तब तो निश्चय ही उसका कोई मूल्य नहीं, अगर तुम्हारे अंदर श्रद्धा है तो ये चीजें जरूरी नहीं हैं लेकिन अगर तुम्हें अनुष्ठानपर श्रद्धा है तो वह अवश्य जरूरी है।

शिष्य—लेकिन कुछ लोग मंत्रद्वारा रोगमुक्त कर देते हैं।

श्रीअरविंद—मंत्र अनुष्ठानसे अलग चीज है। साधारणतः मंत्रमें कोई प्राणिक शक्ति रखी जाती है, वह स्वभावतः चैत्य या आध्यात्मिक नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—क्या चैत्य या आध्यात्मिक मंत्र नहीं होते और क्या अहंकारपूर्ण कामोंके लिये उपयोग किये जानेपर उनमें परिवर्तन नहीं आता ?

श्रीअरविंद—चैत्य चैत्य ही है और चैत्य ही रहता है, और वह अपना काम किये जाता है। वह असफल नहीं होता, वह कभी भगवान् बननेकी कोशिश नहीं करता, जैसा प्राणिक या अन्य शक्तियां करती हैं।

शिष्य—क्या कुएकी पद्धति एक अनुष्ठान मात्र है ?

श्रीअरविंद—जैसा कि मैं तुमसे कह चुका हूं, वह श्रद्धा और इच्छा-शक्तिका मिश्रण है। लेकिन अपने-आपमें इतना ही काफी नहीं है, "दिनपर दिन, मैं अच्छा, और अच्छा होता जा रहा हूं", के शब्दों-को रोज-रोज दोहराना अनुष्ठान जैसा ही है परंतु उसमें एक तीसरी चीज भी है जो जरूरी है। मैं नहीं कह सकता कि वह क्या है लेकिन जब परिस्थितियां तैयार हों तो वह तीसरी चीज अपने-आप आ जाती है।

मुझे बुखार आया करता था और कभी-कभी कोई चीज नीचे आती और उसे सफलतापूर्वक अस्वीकार कर देती थी जब कि अन्य अवसरोंपर तुम्हें एक ही चीजको लेकर उसपर बार-बार क्रिया करनी पड़ती है। मैंने देखा है अधिक-से-अधिक श्रद्धा भी सफल नहीं होती, तुम्हारी अधिक-से-अधिक प्रबल इच्छाशक्ति भी कारगर नहीं होती।

इसका मतलब यह नहीं है कि श्रद्धा जरूरी नहीं है या इच्छा-शक्ति उपयोगी नहीं है लेकिन इन दोनोंको एक तीसरी चीजकी जरूरत होती है जिसके आनेसे, विरोधके होते हुए, काम सफल हो जाता है। साधारणतः विचार यह होता है कि अगर परिस्थितियां अनुकूल हों और प्रबल विरोध न हो तो सफलता मिल जाती है परंतु यह हमेशा सच नहीं होता।

जब तीसरा तत्त्व हो तो विरोधका कोई मूल्य नहीं रहता, सफलता अनिवार्य रूपसे आती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो जीवन लक्ष्यहीन होता है वह सुखहीन भी होता है।

तुम्हारा लक्ष्य होना चाहिये उच्च और विशाल, उदार और उन्मुक्त और फिर तुम्हारा जीवन तुम्हारे लिये और दूसरोंके लिये भी बहुमूल्य हो जायगा।

— श्रीमां

सहारनपुर सर्विस स्टेशन

पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड

सहारनपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

अक्तूबर १९८७ वर्ष १८, अंक ३, पूर्णांक २०७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश	१
'संपादकीय' : समुद्र मंथन	२
दैनन्दिनी	३
चिकित्सा	७
नारी-स्तम्भ : 'अवेकनिंग'से	३५
सोसायटी समाचार	आ० ३

वार्षिक शुल्क १०.०० आजीवन १७५.००

कृपया चेक न भेजें, उसमें बहुत असुविधा होती है। ड्राफ्ट, धनादेश या पोस्टल आर्डर भेज सकते हैं। अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

संपर्क : संपादक अग्निशिखा एवं पुरोधा, पांडिचेरी–६०५००२

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

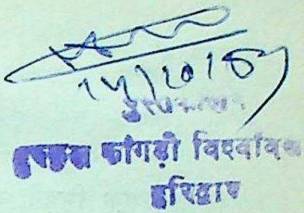

संदेश

भौतिक जगत्के दुःख और दुर्दशा जो अवचेतन निराशावादके कारण हैं, उनसे पिंड छुड़ानेका एकमात्र साधन है भगवान्के साथ पूर्ण ऐक्य और भगवान्की पूर्ण अभिव्यक्ति। भगवान्के साथ पूर्ण तादात्म्य द्वारा ही चेतना शाश्वत आनंदमें उभर सकती है। और यह सचेतन ऐक्य ही पार्थिव जीवनका सच्चा लक्ष्य है।

——माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'संपादकीय'

समुद्र-मंथन

(हमारे एक मित्रने वर्तमान स्थितिपर टिप्पणी करते हुए अग्नि-शिखाकी संपादिकाको एक पत्र लिखा था। यहां उसके उत्तरका कुछ अंश प्रस्तुत है।)

प्रिय भाई;

आपका पत्र पढ़कर आश्चर्य और दुःख हुआ। आप जैसे मानव मनको अतलमें जाकर देखनेवाले लेखकको जब "ईश्वरके अस्तित्वके संबंधमें तटस्थ होता जा रहा हूं" लिखना पड़ रहा है तो सामान्य जनताकी क्या हालत होगी! आपके इस कथनसे सहमत हूं कि धर्म, ईश्वर, आत्मा, पुनर्जन्म आदि मनुष्यके निजी, व्यक्तिगत जीवनके अंग होने चाहिये। चर्चा, विचार विनिमय शंकराचार्यके समय बड़े महत्त्वपूर्ण बन बैठे थे किंतु धर्म तर्ककी बात नहीं, अनुभूतिकी बात है। आजकल जो हो रहा है वह तो, आप मुझसे भी अच्छी तरह जानते हैं कि राजनीतिक उठा पटकका अंग है। सचमुच धर्मसे उसका कोई संबंध नहीं।

हमने 'धर्म' शब्दको तो पकड़ रखा है पर उसके मर्मको भुला दिया है। श्रीअरविंदका स्पष्टीकरण मुझे एकदम सटीक लगता है; वे कहते हैं कि धर्म वह प्राकृतिक झुकाव है जिसके द्वारा मनुष्य अपनी प्रकृतिके अनुसार, अपनी आत्माकी पुकार सुन कर आचरण करता है, अपने उदात्ततम व्यक्तित्वकी आज्ञा, इच्छाके अनुसार आचरण करता है। मुझे इसकी पुष्टि महाभारतमें मिलती है, उदाहरणके लिये द्रौपदी पांच पतियोंकी पत्नी बन कर भी सती मानी जाती है, अहिल्याके स्खलनके बावजूद प्रातः स्नानके समय उसका सतियोंके द्वारा स्मरण किया जाता है। मुझे लगता है हमें धर्मका पुनः विश्लेषण करना और उसे समझना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही बात सामाजिक जीवनकी, उसमें आजके अर्थमें धर्मका दखल हो तो गड़बड़ी ही पैदा होगी जैसे अभी मुसलमान समाजमें हुई। समाजके नियम सबपर समान रूपसे लागू होने चाहियें। वहां सामान्य मनुष्यके लिये सहज और संभव कानून बनाने चाहियें।

मुझे ऐसा लगता है कि यह सारा झमेला समुद्र मंथन है ताकि मानव जाति एक ऊंचे स्तरपर जानेके लिये तैयार हो पाय क्योंकि जबतक विष बाहर न निकले अमृतकी संभावना नहीं रहती। हमारा वर्तमान विष-वर्षाका समय है। अमृत बादकी पीढ़ी पाएगी। श्रीअरविंद कहते हैं कि विकास क्रममें बढ़ते हुए सृष्टि, मानव रचना करनेमें समर्थ हुई और मन मानवमें उभर कर प्रकट हुआ किंतु अब मनकी सीमाएं पार हो चुकी हैं, इसके बादका तत्त्व प्रकट हो उससे पहले ऐसा मंथन आवश्यक है ताकि बहुतेरा कूड़ा-कर्कट बुहारा जा सके।

...मैं चाहती हूं कि आप धीर स्थिर होकर फिरसे एक बार विचार करें क्योंकि जीवन प्रगति छोड़ कर और कुछ नहीं है।

—अनुबेन

दैनन्दिनी

अक्तूबर

१. शत्रुकी ओर मुस्कुराना उसे निरस्त्र करना है।
२. अगर हमें जीवित रहना है, तो भारतके अवरुद्ध प्रयासको फिरसे शुरू करना होगा।
३. मनुष्य अपने भाग्यको स्वीकार भी सकता है, और अस्वीकार भी कर सकता है।
४. मनुष्यको अपनी कठिनाईसे भी अधिक दुराग्रही होना चाहिये —इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. भारतकी केंद्रीय संकल्पना शाश्वत, भौतिक तत्त्वमें घिरी हुई आत्माकी है।

६. पहला कदम है पूर्ण निश्चल नीरवता और समता पाना।

७. प्रत्येक क्रिया-कलाप अपने-अपने स्थानपर महत्त्वपूर्ण है।

८. सब कार्योंको अनुभवका एक विद्यालय होना चाहिये।

९. डरो मत, तुम्हारी निश्चल सचाई तुम्हारा रक्षा कवच है।

१०. भगवान्‌से प्राप्त कृपाको स्नेहपूर्वक पहचानना, यही कृतज्ञता है।

११. कृतज्ञताके आनंदके बराबर कोई आनंद नहीं। तुम एक पक्षीको गाते हुए सुनते हो, एक सुन्दर फूल देखते हो, एक छोटे बालकको देखते हो, उदारताका एक कार्य देखते हो, सुन्दर वाक्य पढ़ते हो, अस्त होते हुए सूर्यको देखते हो, ऐसा कुछ भी देखते हो और हठात् तुम्हारे अंदर यह भाव जागता है —इतना गहरा, इतना तीव्र—कि संसार भगवान्‌को अभिव्यक्त करता है, कि जगत्‌के पीछे जो कुछ है वह भगवान् है।

१२. हमें पूर्णताकी प्यास है—
उस पूर्णताकी जिसमें शाश्वत सत्यको अभिव्यक्त करनेकी शक्ति है।

१३. आत्म-शुद्धिके लिये आत्म-त्याग एक शक्तिशाली यंत्र है; वह अपने-आप न तो उद्देश्य है, न जीवनका अंतिम विधान। अपना दमन नहीं, बल्कि संसारमें भगवान्‌को संतुष्ट करना तुम्हारा ध्येय होना चाहिये।

१४. प्रत्येक बार जब समर्पण द्वारा व्यक्ति अपने अहम्‌की काराकी संकीर्ण सीमाओंको तोड़ कर खुली हवामें बाहर आता है, चाहे किसी अन्य मनुष्यके लिये या परिवारके लिये हो, अपने राष्ट्र या धर्मके लिये हो, तब उसे आत्म विस्मृतिमें प्रेमके आनंदका अद्‌भुत पूर्व-आस्वाद मिलता है।

१५. पुरातन योगकी संतान! सब चीजोंमें अपनी आत्माको चरितार्थ कर, किसी वस्तुसे डर मत, किसीसे घृणा मत कर, किसीसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आतंकित मत हो, किसीका तिरस्कार मत कर। अपना कार्य सामर्थ्य और साहससे कर, इसी तरह जो तू सचमुच है, वह बन सकेगा; भगवान्, अपनी विजयमें भगवान्, अपनी पराजयमें, तेरी मृत्यु और यातनामें भी भगवान्—भगवान्, जो पराजित नहीं होता और जो मरता भी नहीं।

१६. भगवान्पर निष्कपट सच्ची श्रद्धा रखो और तुम्हें स्पष्ट रूपसे पता लगेगा कि तुम्हें क्या करना है।

१७. राष्ट्र अपनी आत्माको कार्य द्वारा शुद्ध करता है, बलिदानद्वारा, कर्मयोगद्वारा शुद्ध करता है।

१८. आदर्श पुरुष पहले आदर्श यंत्र होता है। वह कृष्णके आदेशसे बोलता और कार्य करता है, चलता और हिलता-डुलता है, बैठता और खड़ा रहता है।

१९. केवल शक्ति ही भारतकी सहायता कर सकती है। अगर तुम राष्ट्रमें श्रद्धा और सामंजस्य स्थापित करोगे तो वह किसी मानव निर्मित शक्तिसे अधिक समर्थ होगा।

२०. सच्ची आध्यात्मिकता जीवनका परित्याग नहीं बल्कि दिव्य पूर्णतासे जीवनको पूर्ण करना है। यही वह काम है जिसे भारतको संसारके आगे कर दिखाना है।

२१. जीवनका प्रयोजन और लक्ष्य दुःख और संघर्ष नहीं बल्कि सर्व-शक्तिमान् और सुखद उपलब्धि है।
बाकी सब कुछ दुःखद भ्रम है।

२२. निश्छल सचाई, विनम्रता, दृढ़ता और प्रगतिके लिये एक अतृप्त प्यास सुखी और सार्थक जीवनके लिये अनिवार्य हैं। सबसे बढ़कर तुम्हें विश्वास होना चाहिये कि प्रगतिकी संभावना असीम है। प्रगति यौवन है, सौ सालके होकर भी तुम युवा रह सकते हो।

२३. हमेशा, सीखते रहना, केवल बौद्धिक रूपसे नहीं, बल्कि मनो-वैज्ञानिक रूपसे, चरित्रके विषयमें प्रगति करना, अपने गुणोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोषण करना और गलतियोंको सुधारना ताकि हर वस्तु हमारे लिये अपने अज्ञान और अक्षमतासे मुक्त होनेका अवसर बन जाय—तब जीवन अत्यधिक मजेदार और जीने योग्य बन जाता है।

२४. पृथ्वीपर जीवन वस्तुतः प्रगतिका क्षेत्र है। लेकिन जितनी प्रगति करनी चाहिये उसके लिये जीवन कितना संक्षिप्त है। अपनी क्षुद्र कामनाओंकी संतुष्टिके लिये अपना समय गंवाना सरासर मूर्खता है। सच्चा सुख तभी संभव है जब हम भगवान्‌को पा लें।

२५. पूर्ण विश्वास और कृतज्ञतासे जब हम अपने-आपको भगवान्‌के अर्पित कर देते हैं तभी कठिनाइयोंपर विजय मिलती है।

२६. जब हम पूरी सचाईके साथ भागवत इच्छाको समर्पित होते हैं तभी हमें कामनाओंके विलोपनसे शांति और निश्चल-नीरव हर्ष प्राप्त होता है।

२७. व्यक्तिगत अस्तित्वका उद्देश्य है भगवान्‌की प्राप्ति और उनके साथ ऐक्यका आनंद पाना।

जब तुम यह बात समझ लेते हो तो तुम सब कठिनाइयोंको पार करनेकी शक्ति पानेके लिये तैयार होते हो।

२८. निम्न प्रकृतिपर विजय पानेसे तुम्हें बाहरी सफलताकी अपेक्षा कहीं अधिक स्थायी और गहरा आनंद मिलता है।

२९. सुखी बननेके लिये मत जीओ। भगवान्‌की सेवा करनेके लिये जीओ और तब जो सुख तुम्हें प्राप्त होगा वह तुम्हारी प्रत्याशासे कहीं अधिक होगा।

३०. हे प्रभो, मेरे अंदर तुझे जाननेकी उत्कट कामना जगा। मैं तेरी सेवामें अपना जीवन समर्पित करनेकी अभीप्सा करता हूं।

३१. अगर हम अपनी चेतनासे सारी पराजयवादी मनोवृत्तिको भगा पायें तो हम सिद्धिकी ओर एक बड़ी छलांग लगा पाएंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा

(गतांकसे आगे)

४-२-१९२६

(आजका विषय था 'सर्वांग सुन्दर शरीरका आदर्श', जिस शरीर-को कभी विकृत न किया जा सके।)

श्रीअरविंद—आदर्श तो ठीक है परंतु भौतिक सत्ता बहुत ज्यादा असंतोषजनक है। हम तथ्योंकी अवहेलना करके उसके पार नहीं जा सकते।

शिष्य—महात्मा गांधी अपनी आत्मकथामें शरीरके साथ किये गये अनेक परीक्षणोंकी बात कहते हैं। उनका कहना है कि संसार-को सत्यको ग्रहण करने योग्य बनना चाहिये।

श्रीअरविंद—यह सच है। उनकी आत्मकथा रूसो और सेंट आगस्टाइनकी आत्मकथाओंके साथ साहित्यमें स्थान पायेगी लेकिन प्रश्न यह है कि क्या सत्य ही उनका आदर्श है? कहनेका मतलब है कि जब हम किसी नैतिक समाधानको अंतिम रूपमें प्रस्तुत करें तो हमें पता होना चाहिये कि हम ठीक मार्गपर हैं या नहीं?

(अब बातचीत गुह्य तथ्योंकी ओर मुड़ गयी)

शिष्य—गुह्य प्रदर्शनोंके समय गुलदस्तों या मेजोंको अपने स्थानसे हटाया जाता है। क्या ये चीजें सम्मोहनद्वारा की जाती हैं?

श्रीअरविंद—नहीं, सम्मोहनशक्ति इसका जवाब नहीं है।

शिष्य—कहा यह जाता है कि माध्यमसे उस पदार्थतक एक धुंएका मार्ग-सा होता है।

श्रीअरविंद—यह संभव है। भौतिक पदार्थके बहुत-से रूप होते हैं। हम स्थूलतम रूपको जानते हैं, इसके अतिरिक्त भौतिक पदार्थ-के बहुत-से सूक्ष्म रूप होते हैं और हर एकके अपने गुण धर्म होते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। भारतीय पुराण कथाओंमें सात धरतियोंकी बात आती है। वेदके अनुसार तीन धरतियां हैं। कहा जाता है कि राजा कार्तवीर्यने चौदह धरतियोंको जीता था!

शिष्य—क्या भौतिक शरीरको छोड़कर और भी शरीर हैं?

श्रीअरविंद—वस्तुतः मनुष्यके कोषोंके बीच कोई रिक्तता नहीं है। सचमुच यह सबसे नीचेसे लेकर सबसे ऊंचेतक जानेवाला सप्तक है और इनमेंसे हर तत्त्व सातोंमें दोहराया गया है। इस तरह हर एकमें सब कुछ है। अन्यथा यह जगत् चल ही नहीं सकता। हमारा जो भौतिक शरीर है उसके अतिरिक्त अन्य चार शरीर भी हैं।

शिष्य—जब आदमी मरता है और उसका भौतिक शरीर नष्ट हो जाता है तो क्या होता है?

श्रीअरविंद—जब कोई चीज गायब होती है तो वह अगले लोकमें जा सकती है जो स्थूल भौतिक तो नहीं है परंतु भौतिक तो है ही; अतः अभौतिक हो जानेका सवाल ही नहीं उठता।

शिष्य—रहस्यमय तथ्योंमें भौतिकीकरण या अभौतिकीकरणके विचार देखे जाते हैं, उदाहरणके लिए जब कोई भौतिक पदार्थ प्रकट होता और फिर गायब हो जाता है तो इसे क्या कहा जाय?

श्रीअरविंद—लेकिन अभौतिकीकरण क्या है? वस्तुतः हमें पूछना यह चाहिए कि भौतिक पदार्थ है क्या? वह अमुक शक्तियों और शक्तियोंकी लीलासे बना है जो जड़ भौतिक रूपको बनाये रखती हैं। क्या ऐसा नहीं है?

शिष्य—तो क्या हम परमाणुके 'जीवन'की बात नहीं कह सकते?

श्रीअरविंद—इसकी व्याख्या यह हो सकती है कि जब किसी चीजको देशके चौथे आयाममें अदृश्य कर दिया जाता है तो हम इसे अभौतिकीकरण कह सकते हैं और जब उसे चौथे आयाममेंसे निकालकर इस देशमें रख दिया जाता है तो यही भौतिकीकरण है क्योंकि तब वह पदार्थ हमें दिखलायी देता है।

शिष्य—लेकिन आजकल वैज्ञानिक परमाणुकी ग्रहणशील शक्तिकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात करते हैं तो क्या हम परमाणुके 'जीवन'की बात नहीं कर सकते ?

श्रीअरविंद—परमाणुका जीवन। लेकिन इन चीजोंको तुम्हें आंतरिक आंखसे देखना होता है।

शिष्य—'आंतरिक आंखसे देखने' और 'चौथे आयाममें शरीर'का मतलब क्या है ?

श्रीअरविंद—यह कहनेका एक ढंग है। तुम इन चीजोंको ज्यादा आसानीसे अनुभव कर सकते हो यानी तुम उनके बारेमें सचेतन हो सकते हो।

शिष्य—क्या हम उन्हें जान सकते हैं ?

श्रीअरविंद—हम उन्हें अनुभव करते हैं। ज्ञान और चेतना एक चीज नहीं है, यह सूत्रबद्ध ज्ञान नहीं, एक तरहकी अनुभूति है।

शिष्य—लेकिन हम परमाणुके जीवनका कोई चिह्न नहीं देखते।

श्रीअरविंद—जगदीश चन्द्र बसुने दिखला दिया है कि धातुओं और वनस्पतियोंमें भी थकान होती है, धातुओंपर जहरका असर होता है।

शिष्य—किसी सूक्ष्म या गुह्य शक्तिद्वारा लौह शलाका तोड़नेकी बात भी तो सुनी है।

श्रीअरविंद—वह जीवनी शक्ति है, वह धातुकी जीवनी शक्तिपर काम करती है। लेकिन धातुमें वह यांत्रिक होती है, जिसे हम 'जीवन' नामसे जानते हैं उससे इतनी भिन्न कि हम उसे 'जीवन' नहीं कह सकते।

परमाणुके अंदर रूप जीवनका सबसे अधिक दृश्यमान लक्षण है, अतः भौतिक अणुमें प्रायः यह प्रवृत्ति होती है कि जो चीज उसके रूप या आकारको बिगाड़े उसे वह फेंक देता है, रूपको बनाये रखनेका प्रयास रहता है।

शिष्य—अगर हम जीवनका कोई चिह्न न देखें तो यह कैसे कह सकते हैं कि इस चीजमें जीवन है ?

श्रीअरविंद—जीवन या जीवन चेतना एक सापेक्ष शब्द है; निश्चय ही वह मानव जीवन अन्यथा वनस्पति जीवन जैसी कोई चीज नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य––तब फिर यह कैसे कहा जाय कि उसमें जीवन या चेतना है?

श्रीअरविंद––तुम केवल उसका अनुभव कर सकते हो। अगर तुम वैश्व चेतनामें प्रवेश करो जो सभीमें समान रूपसे व्याप्त है तब तुम धातुकी मन्द और अल्प जीवनकी अभिव्यक्तिका अनुभव कर सकते हो। तुम स्वयं भौतिक पदार्थ और उसके इर्द-गिर्द इस जीवनका अनुभव कर सकते हो और वैश्व आत्माके साथ तादात्म्यद्वारा उसमें प्रवेश कर सकते हो। जब मेजपर चोट की जाय तो तुम उस चोटका अनुभव कर सकते हो। हां, तुम रूपकके रूपमें उसे कह सकते हो, उसे दिखा नहीं सकते लेकिन उसके साथ एक हो सकते हो।

शिष्य––हम इस तादात्म्यका अनुभव कैसे कर सकते हैं?

श्रीअरविंद––घेरेको तोड़नेके बाद जो पहली चीज तुम देखते हो वह है प्राणिक भौतिक शरीर। वह भौतिक शरीरके चारों ओर भौतिकके ही आकारसे बनता है मानों 'स्नायविक आवरण' हो। शरीरतक पहुंचनेके लिए रोगकी शक्तिको इसे तोड़ना पड़ता है, अपवाद हैं वे आक्रमण जो सीधे भौतिक भागोंपर होते हैं।

तब तुम रोगको आते हुए देख सकते हो और स्नायविक आवरण-में यह अनुभव कर सकते हो कि रोग शरीरके किस भागमें आ रहा है या आक्रमणकी कोशिश कर रहा है क्योंकि स्नायविक आवरणके हर भागका एक शुद्ध भौतिक प्रतिरूप होता है। इस भांति पहले प्राणिक भौतिकपर आक्रमण होता है और उसके बाद वह शरीरमें रूप ले लेता है।

स्वयं मुझे शरीरके चारों ओर ज्वरका अनुभव हो चुका है।

शिष्य––क्या हमें इन गड़बड़ोंके प्रति संवेदनशील होना चाहिए?

श्रीअरविंद––सभी प्रकारकी गड़बड़ और उत्तेजना दुर्बलताके लक्षण हैं। तुम्हें निर्विकार रहते हुए चेतनाके विकासकी ओर ध्यान देना चाहिए। कोई उत्तेजना न हो, हो केवल अनुभव और ज्ञान।

शिष्य––क्या भौतिकमें सातत्य होता है?

और एक शिष्य––एक ही प्रकारकी परिस्थितियोंमें एक ही प्रकार-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का वरण होता है इसलिये हम कह सकते हैं कि सारी चीज केवल यांत्रिक है, उसमें कोई 'जीवन' नहीं है।

श्रीअरविंद--उसमें जीवन तो है परंतु है बिल्कुल और तरहका। उसमें भी चेतना है परंतु है अंतर्लीन और यांत्रिक नियमोंके आधीन कार्य करती है, उसका व्यष्टिगत रूप नहीं होता। जड़ वस्तुओंमें भौतिक शक्तियां होती हैं जो आकारको बनाये रखनेका प्रयास करती हैं। लेकिन आकारके इर्द-गिर्द कुछ जीवन शक्ति भी होती है जिसे उसके पीछे रहनेवाली वैश्व चेतना इकट्ठा कर देती है।

शायद उसे अनुभूति भी होती है परंतु उसका आलेखन नहीं होता, कोई व्यष्टीकरण न होनेके कारण विकास भी नहीं होता। और फिर व्यष्टीकरणका विचार भी तो सापेक्ष है। तुम कह सकते हो कि उसमें एक प्रकारका व्यक्तित्व होता है परंतु सापेक्ष रूपसे कहा जाय तो उसमें व्यक्तित्व नहीं होता। मनुष्य अधिक व्यष्टिभावापन्न है, परंतु साथ ही यह भी कहा जा सकता है कि मनुष्य सचमुच अभीतक व्यष्टि नहीं बन पाया क्योंकि व्यष्टिभाव अभीतक अभिव्यक्त नहीं हुआ है।

२०-१२-१९३८

(श्रीअरविंदका दोपहरका भोजन लगभग साढ़े चार बजे समाप्त हुआ। मैं 'अ' के बारेमें एक बड़े नेताका भाषण पढ़कर सुना रहा था। गवर्नरसे लेकर सभीने उसकी बड़ी प्रशंसा की। उसे 'सीधा, सच्चा, ईमानदार, गरीबोंका हितैषी', बताया। श्रीअरविंद सुनते रहे और फिर 'हे भगवान्' कहकर हंस पड़े। उन्होंने कहा, तब तो 'अ' को गिरजाकी ओरसे सन्तकी पदवी दी जानी चाहिए। हम सामान्य तौरपर कह सकते हैं कि सभी मनुष्य झूठे हैं। सार्वजनिक जीवन ही ऐसा है। जब 'ग' मरा तो 'च' और 'छ' जो उसके आजीवन शत्रु रहे उन्होंने उसके बारेमें ऐसी बातें कही थीं।

इसके बाद बात होम्योपैथीके बारेमें चल पड़ी।)

श्रीअरविंदने कहा कि होम्योपैथी योगके अधिक नजदीक है जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि ऐलोपैथी अधिक यांत्रिक है। होम्योपैथी भौतिक व्यक्तित्वपर ध्यान देती है, सभी लक्षणोंको मिलाकर भौतिक व्यक्तित्व बनता है जब कि ऐलोपैथी निदानमें व्यक्तित्वका ख्याल नहीं करती। होम्योपैथीकी क्रिया अधिक सूक्ष्म और गतिशील है।

१६-१०-१९३९

श्रीअरविंद—हां, योगी समाधिमें जाकर कष्ट आदि संवेदनोंको समाप्त कर सकते हैं लेकिन समाधिमें जानेके लिये रोगका होना जरूरी नहीं है। इसके अतिरिक्त जब तुम उसे सह लेनेका निश्चय करते हो तो मानों तुम रोगको स्वीकार कर लेते हो लेकिन मुझे कष्टसे छुट्टी पानेके लिए समाधिमें जानेकी बात समझमें नहीं आती।

एक बार जब रामकृष्णका शरीर बहुत रुग्ण था तो उन्होंने केशव चन्द्र सेनसे कहा था कि मेरा शरीर आध्यात्मिक विकासके तनावसे टूट रहा है, लेकिन आध्यात्मिक विकासके लिए बीमार होनेकी जरूरत नहीं है।

शिष्य—अगर रामकृष्णकी इच्छा होती तो क्या वे रोगको रोक सकते थे?

श्रीअरविंद—हां, जरूर परंतु वे इस प्रकारकी इच्छा या रोगमुक्त करनेके लिए भगवान्‌से प्रार्थना करना पसंद न करते थे।

शिष्य—कहा जाता है कि उन्हें अपने शिष्योंके पापके कारण कैंसर हुआ था।

श्रीअरविंद—हां, यह बात स्वयं उन्होंने कही थी और उनकी बात ठीक होनी ही चाहिए। तुम्हें पता है उन्होंने इस बातके पक्ष और विपक्षमें युक्तियां दी थीं कि गुरुको शिष्योंकी बहुत-सी चीजें अपने ऊपर लेनी पड़ती हैं।

माताजी अपने शिष्योंके साथ अपने-आपको एक कर लेती हैं और इस तरह उनकी बहुत-सी चीजें अपने ऊपर ले लेती हैं, साथ-ही-साथ वे अपने अंदर बहुत-सी चीजें होनेसे रोक देती हैं। एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसिद्ध योगीने अपने एक शिष्यसे, जब वह गुरु बनने लगा, कहा था "अब तुम अपनी कठिनाइयोंके अतिरिक्त औरोंकी कठिनाइयां भी अपने ऊपर ले रहे हो," हां, अगर गुरु चाहे तो शिष्योंसे अपना संबंध काट सकता है, तब ऐसी कोई कठिनाई न आयेगी लेकिन साथ ही उसका मतलब होगा कि काम आगे न बढ़ेगा और साधक अपनी किस्मतपर बिना किसी सहारेके छोड़ दिये जायेंगे।

इस प्रकारका आदान-प्रदान बहुत मामूली बात है। जब भी दो व्यक्ति मिलते हैं तब आदान-प्रदान होता रहता है। इस भांति आदमी कीटाणुओंके बिना भी औरोंके रोग ले सकता है। 'न' को पता था कि वह औरोंसे क्या लेता है परंतु वह उन्हें क्या देता है इसकी उसने कभी परवाह नहीं की। इतना ही नहीं वह यहां-तक सोचता था कि उसके अंदर किसीका भला या बुरा करनेकी शक्ति है। तुम्हारे बुरे विचार औरोंपर असर डाल सकते हैं इसी-लिए बुद्ध सम्यक् विचारपर जोर देते थे। कई लोग औरोंसे मिले बिना नहीं रह सकते। आखिर स्त्री पुरुषका एक दूसरेके लिए आवेश क्या है? प्राणिक आदान-प्रदानके सिवा कुछ नहीं, एक दूसरे-मेंसे शक्तियोंको खींचना। जब किसी नारीको किसी पुरुषकी जरूरत होती है तो इसका मतलब यही होता है कि वह उसकी प्राणिक शक्ति चाहती है। स्त्री-पुरुषके एक दूसरेके पीछे भागनेका अर्थ यही आदान-प्रदान या आकर्षण होता है। हां, यह अचेतन रूपमें होता है। सामान्य जीवनमें जब दो व्यक्ति एक दूसरेको पसंद नहीं करते तो इसका कारण नहीं मालूम होता। बस उनकी प्राणिक सत्ताएं एक दूसरेके साथ मेल नहीं खातीं। तुमने शायद ये पंक्तियां सुनी हों:

आई डू नाट लाइक दी डाक्टर फेल
द रीजन ह्वाई आई केन नाट टेल

(मैं तुम्हें पसंद नहीं करता डाक्टर फेल, क्यों नहीं करता यह स्वयं मैं भी नहीं जानता।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी ठीक तरह नहीं जान पाता कि यह प्राणिक अक्षमता है या उसकी असहमति। तुम लोगोंको, स्त्री-पुरुषोंको भयंकर रूपसे लड़ते-झगड़ते देखते हो लेकिन फिर भी वे एक-दूसरेके बिना नहीं रह सकते क्योंकि हर एकको दूसरेकी प्राण-शक्तिकी जरूरत होती है। हां, यह जरूर है कि पुरुषने यह आवश्यकता स्त्रीपर आरोपित की है। स्त्रीको प्रायः हमेशा ऐसी आवश्यकता बनी रहती है। इसे ही प्रेम कहा जाता है। सभी समाजोंमें पति-पत्नी संबंध इसीलिए स्थापित किये गये ताकि परस्पर आदान-प्रदान और विनिमयका संबंध उन दोके बीच ही सीमित रहे और उनके बीच एक समता बनी रहे।

शिष्य—लेकिन दोनोंमेंसे एक ज्यादा लेता रहे तब तो डरकी बात है।

श्रीअरविंद—अगर एक ले ज्यादा और दे कम तब तो दूसरेके लिए खतरा हो सकता है। तुम्हें शायद ज्योतिषके 'राक्षस योग'के बारेमें मालूम होगा। यह एक ऐसे पतिकी बात करते हैं जो एकके बाद कई स्त्रियोंको खाता जाय यानी उन्हें सहारा देनेकी जगह उन्हें खाता जाय।

शिष्य—वैम्पाइर या रक्तचूषक भूत क्या होता है?

श्रीअरविंद—जो हमेशा और सत्ताओंसे खींचते रहते हैं पर अपने आप कुछ नहीं देते उन्हें हम रक्तचूषक कहते हैं।

शिष्य—वे स्वभावसे ऐसे होते हैं या किसी शक्तिके अधिकारमें होनेके कारण ऐसे हो जाते हैं?

श्रीअरविंद—दोनों तरहके हो सकते हैं। पुरुष और स्त्री, दोनों तरहके रक्तचूषक हो सकते हैं। ऐसा प्राण भी होता है जो स्वभावतः विस्तार चाहता है। ऐसी स्थितिमें प्राणिक शक्तिको फैलाने, उंडेलनेकी जरूरत होती है। लेकिन एक और तरहका प्रसरणशील प्राण होता है जैसे हिटलरका प्राण। वह औरोंके प्राणको दबोचकर अपने वशमें रखता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—क्या चैत्य प्रेम भी ऐसा ही होता है?

श्रीअरविंद—हर्गिज नहीं। चैत्यका नियम है कोई भी मांग किये बिना देते जाना।

२१-१२-३८

शिष्य—एक समय था जब चिकित्सामें नाईकी बहुत प्रतिष्ठा थी।

श्रीअरविंद—नहीं, मध्यकालमें भी शल्य चिकित्सा नाइयोंका ही पेशा थी। (कुछ रुककर) मैंने सुना है कि ऐसे कविराज हैं जो रोगीकी नाड़ी देखकर ही रोगीके सारे लक्षण और उसकी बीमारी बतला सकते हैं। क्या यह सच है?

शिष्य—किसीने इस प्रकारकी बातोंको अपनी आंखोंसे नहीं देखा है। मैंने तो यहांतक सुना है कि कुछ नाड़ी विशेषज्ञ नाड़ी देखकर यह भी बता सकते हैं कि रोगीने कुछ दिन पहले क्या खाया था। (हंसी) क्या हम ऐसी बातें मान सकते हैं?

श्रीअरविंद—क्यों नहीं? तुम्हें कैसे मालूम कि वे ठीक नहीं हैं, बहुत-से विज्ञान अनुभव और अंतर्भासपर आधारित होते हैं। वे परंपरासे परिवारोंमें चले आते हैं जैसे चीनकी सूई लगाकर स्नायु-केंद्रोंसे रोग पहचाननेकी पद्धति।

शिष्य—आयुर्वेदके पिता धन्वन्तरिके बारेमें कहा जाता है कि वे अंतर्भासद्वारा औषधियोंके गुण जाना करते थे। कहते हैं कि वे वनस्पतिके सामने खड़े होकर उससे उसके गुण पूछते थे और वह सब कुछ बता देती थी।

श्रीअरविंद—(मुस्कराते हुए) धन्वन्तरि देवोंके वैद्य थे अतः उनके लिए कुछ भी अस्वाभाविक नहीं था। (हंसी) (कुछ रुककर) आयुर्वेद सबसे पहली चिकित्सा-पद्धति है, इसका आरंभ भारतसे हुआ था। चिकित्सा, गणितकी अंकन पद्धति, ज्योतिष ये सब चीजें हिन्दुस्तानसे अरब और वहांसे यूनान गयी थीं। तीन द्रव्य जिनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारेमें हिप्पोक्रेटीस और गेलनने बहुत कुछ कहा है, वे भी भारतीय विचार हैं।

शिष्य—कलकत्ता तथा अन्य कई स्थानोंपर लोग आयुर्वेद महाविद्यालय शुरू करनेकी कोशिश कर रहे हैं। मेरा ख्याल है कि यह एक अच्छा विचार है। इनमें पूर्व और पश्चिमके ज्ञानका मेल होगा, विशेष रूपसे पाश्चात्य शरीर और शल्य शास्त्रका।

श्रीअरविंद—क्यों! भारतीय शरीर और शल्य शास्त्रोंसे परिचित थे। भारतमें बहुत सारे शल्य यंत्र भी थे। आयुर्वेद जैसी प्राचीन पद्धतिको सिखानेके लिए अर्वाचीन पद्धति उपयोगी होगी या नहीं इसमें मुझे शंका है। आधुनिक पद्धति विषयको बहुत ज्यादा मानसिक और बौद्धिक बना देती है जब कि प्राचीन पद्धति अधिक अन्तर्भासात्मक थी। वे विषय गुरु-शिष्य परंपरासे चलते थे। योगके बारेमें भी यही बात है। हम योगके बारेमें विद्यालय, महाविद्यालय और उस तरहके अध्ययनकी कल्पना नहीं कर सकते। यह तो अमरीकी विचार होगा। अमरीकामें योग सिखानेका केंद्र, पाठ्यक्रम, भाषण, कक्षा आदिकी व्यवस्था है।

शिष्य—शायद हठयोग इस तरहसे सिखाया जा सके।

श्रीअरविंद—वह भी केवल बाहरी भाग होगा।

२५-१२-३८

डा. 'क'ने आग्रह किया कि श्रीअरविंदकी ऊर्वस्थि (जांघकी हड्डी) जहांसे टूटी थी, वहां लगी खपच्चियोंको खोल दिया जाये लेकिन वहां जितने भी लोग उपस्थित थे उन सबने विरोध किया। आखिर डाक्टरने इसका निर्णय करनेकी जिम्मेदारी श्रीअरविंदपर ही छोड़ दी।

जब श्रीअरविंदकी राय मांगी गयी तो उन्होंने कहा, "मैं खतरा मोल नहीं लेना चाहता, मुझे सावधान रहना चहिए। मुझे विश्वास नहीं है कि नींदमें कोई झटकेदार क्रिया न हो जायगी और फिर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरोधी शक्तियोंका भी ख्याल रखना होगा। विशेषज्ञ कहता है दस सप्ताह, डा. 'क' कहता है छह सप्ताह। तो हम बीचका मार्ग लेंगे, जो दोनोंको संतुष्ट कर देगा।"

शिष्य—डा. 'क' का कहना है कि आप एक असाधारण रोगी हैं और आपपर विश्वास किया जा सकता है कि आप निर्देशके अनुसार चलेंगे।

श्रीअरविंद—तब तो मुझे असाधारण सावधानी बरतनी चाहिए। (कुछ समय चुप रहनेके बाद) ऐसा लगता है कि डाक्टरोंका जन्म ही मतभेदके लिए हुआ है। चिकित्सा विज्ञानने ज्ञानमें बहुत प्रगति की। परंतु व्यवहारमें वह या तो एक कला है या फिर आकस्मिक सफलता।

शिष्य—शायद उसने वैयक्तिक भिन्नताके कारण व्यावहारिक यथार्थता नहीं पायी है।

श्रीअरविंद—उन्होंने ऐसी कोई दवाई नहीं पायी है जिसे किसी रोग-विशेषके लिए रामबाण कहा जा सके—मैं ऐलोपैथीके बारेमें कह रहा हूं, होम्योपैथीके बारेमें मैं कुछ नहीं जानता। उन्होंने सिद्धांत पक्षको बहुत अच्छी तरह विकसित किया है लेकिन वहां भी परिवर्तन होते रहते हैं। आज वे जिस बातको सच मानते हैं उसे दस वर्ष बाद छोड़ देते हैं। एक फरासीसी डाक्टरने आंकड़े देकर यह सिद्ध किया है कि क्षय रोग संक्रामक नहीं है। यह आनुवंशिक है। मुझे भी यह संक्रामक नहीं लगा। या फिर पोषक तत्त्वोंकी बात लो, इस विषयमें भी विचार हमेशा बदलते रहते हैं।

शिष्य—चिकित्सा और दवाइयोंकी अनिश्चितताके अतिरिक्त बहुत-से डाक्टर अयोग्य और बेईमान होते हैं। मेरा ख्याल है कि चिकित्सा-कार्य शासनके अधिकारमें होना चाहिए।

श्रीअरविंद—मुझे इसपर विश्वास नहीं है। मुझे मेडिकल काउंसिलके नियंत्रणकी अपेक्षा शासनीय नियंत्रण और भी कम पसंद है।

शिष्य—लन्दनकी काउंटी काउंसिल जैसी व्यवस्था शायद ठीक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे। वहां अनिवार्य रूपसे हर एककी डाक्टरी परीक्षा करवायी जाती है।

श्रीअरविंद—तब बेचारे योगियोंका क्या होगा जो अपनी डाक्टरी परीक्षा नहीं करवाना चाहते।

शिष्य—चिकित्सा विभागके राष्ट्रीयकरणमें अमुक इलाकेके रहनेवालेको अमुक डाक्टरके आधीन रखा जाता है और वे विना विशेष कारण डाक्टर नहीं बदल सकते।

श्रीअरविंद—और अगर रोगीको उस डाक्टरपर विश्वास न हो या वह उसे पसंद न करे तो?

शिष्य—यह कोई कारण नहीं है। काउंसिल ध्यान रखती है कि सभी डाक्टर अच्छी तरह प्रशिक्षित हों।

श्रीअरविंद—क्यों नहीं। यह तो एक अच्छा खासा कारण है। चुननेका अधिकार क्यों न हो? तुम रोगीसे हमारे डा. 'ख'के पास नहीं, डा. 'क'के पास जानेके लिए आग्रह कर सकते हो। मुझे सरकारी नियंत्रणोंपर विश्वास नहीं है क्योंकि मैं कुछ स्वाधीनताको जरूरी मानता हूं। तुम्हें अपने लिए अपने ढंगकी चीजोंका पता लगानेकी छूट होनी चाहिए, यहांतक कि भूलें करनेकी भी छूट होनी चाहिए। प्रकृति हमें बहुत-सी भूल-भ्रांतियोंमेंसे होकर आगे ले जाती है। जब प्रकृतिने समस्त भूल-भ्रांतियोंकी संभावनाके साथ मनुष्यका निर्माण किया तो वह भली-भांति जानती थी कि वह क्या कर रही है। परीक्षणकी स्वाधीनता मानव जीवनमें एक बड़ी चीज है। खतरा मोल लेने और भूलें करनेकी छूटके बिना कोई प्रगति नहीं हो सकती।

शिष्य—लेकिन चेतनाकी पर्याप्त वृत्तिके बिना मनुष्य स्वाधीनताका दुरुपयोग कर सकता है।

श्रीअरविंद—तुम्हें खतरा उठाना होगा। स्वाधीनताके बिना चेतनाकी वृद्धि नहीं हो सकती। हां, कुछ प्राथमिक विधान हो सकते हैं, तुम स्वास्थ्य-सुधार, लोगोंमें सफाई आदिका ज्ञान फैला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते हो। निश्चय ही सरकार चिकित्साकी व्यवस्था कर सकती है लेकिन जब कोई अपने क्षेत्रसे बाहर निकल जाता है तो भूलें शुरू हो जाती हैं। मुझे लगता है कि यह कहना कि तुम अपना डाक्टर नहीं बदल सकते, जरा ज्यादती है। भारतीय आध्यात्मिकतामें सब प्रकारके परीक्षणोंकी स्वीकृति दी गयी है, यहां-तक कि वाम मार्गकी भी स्वीकृति है और तुम देख सकते हो कि उसने कैसी अद्‌भुत प्रगति की है।

भौतिक विज्ञानोंके विकासोंके दबावसे यांत्रिकता शुरू हुई थी। उनमें तुम बहुत ज्यादा सुनिश्चित और यथार्थ हो सकते हो। वहां हर चीज यांत्रिक है। जहांतक भौतिक चीजोंका संबंध है यह ठीक है, क्योंकि अगर तुम भौतिक चीजोंमें भूल करो तो प्रकृति तुम्हारी नाकपर घूंसा लगाती है और तुम अपनी भूल देखनेके लिए बाधित होते हो लेकिन मन और प्राणके साथ यही नियम नहीं चल सकता। अगर तुम यही चलाते रहो तो तुम भूलें करते चले जाओगे और तुम्हें कभी पता न लगेगा। तुम उसे एक बंधे हुए विचारके कारण देखनेमें असमर्थ होते हो जो हर चीजको अपनी धारणाके अनुसार बिठाना चाहता है।

यूरोपमें हर चीज इसी दिशामें गति कर रही है। तानाशाही राज्य व्यष्टिगत भिन्नताको नहीं मानते और दूसरे गैर तानाशाही राज्य भी उनका अनुसरण करनेके लिए बाधित होते हैं। वे इसे कौशलकी दृष्टिसे करते हैं, परंतु यह संगठन और यंत्रके रूपमें राज्यका कौशल होता है, व्यक्तिका कौशल नहीं। वहां व्यक्तिको कोई स्वाधीनता नहीं है, उसका विकास नहीं होता। पूरी तरह संगठन करो, व्यवस्था लाओ, यहांतक तो ठीक है परंतु स्वाधीनता और नमनीयताके लिए भी स्थान रखो।

३०-१२-३८

आज बातचीतका विषय था होम्योपैथी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—मुझे यह सोचकर आश्चर्य होता है कि इतनी छोटी मात्रामें दवाई आदमीके शरीरपर असर कैसे कर सकती है।

श्रीअरविंद—मेरे लिए यह कोई पहेली नहीं है। कभी-कभी परमाणविक मात्रा बड़ी मात्रासे अधिक गुणकारी होती है। वह अधिकाधिक सूक्ष्म स्थितिके पास जा पहुंचती है और भौतिकसे गतिशील या प्राणिक स्थितिमें जाकर प्राणिक रूपमें क्रिया करती है।

(शामके समय एक शिष्यका पत्र पढ़कर सुनाया गया जिसने विस्तारसे अपने उत्पीड़नका वर्णन किया था।)

शिष्य—क्या यह भूतबाधाका मामला है?

श्रीअरविंद—हां, यह स्नायु तंत्र, प्राण तंत्र और प्राणिक मनपर भूत बाधा है। यह पागलपनकी तरह नहीं है। इन लोगोंको यह विश्वास दिलाना बहुत कठिन होता है कि उनका उत्पीड़न नहीं हो रहा। इसके दो प्रकार होते हैं, एक वह जो सब तरहकी कल्पनाएं करता रहता है (८० प्रतिशत लोग इस तरहके होते हैं) और दूसरा वह जो हर चीजको विकृत करके देखता है।

मेरा भाई मनमोहन उत्पीड़नकी ऐसी ही भूतबाधासे ग्रस्त था। उसे हमेशा यह डर रहता था कि उसे कुछ भयंकर चीज होनेवाली है। वह सोचता था कि अंग्रेज सरकार उसे गिरफ्तार कर लेगी!

शिष्य—लेकिन वे बहुत सफल प्राध्यापक थे। मैंने सुना है कि लोग उनके भाषण बहुत अधिक ध्यान देकर सुना करते थे।

श्रीअरविंद—वह बहुत अधिक परिश्रमी था। अधिकतर प्राध्यापक परिश्रम नहीं करते। मनमोहनकी पुस्तकोंमें बीच-बीचमें कागज लगे रहते थे जो उसकी टीका-टिप्पणियोंसे भरे रहते थे।

('क'की ओर देखकर) मैं इतना कर्तव्यनिष्ठ प्राध्यापक नहीं था।

शिष्य—लेकिन जिन लोगोंने आपको कालेजमें या उसके बाद राजनीतिक क्षेत्रमें बोलते हुए सुना है उनकी राय आपसे भिन्न है। वे आपके भाषणोंकी बहुत प्रशंसा करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—मैं कभी टीकाओंको नहीं देखा करता था और कभी-कभी मेरी व्याख्या उनकी व्याख्याके साथ बिल्कुल मेल नहीं खाती थी। मैं अंग्रेजीका और कुछ समयके लिए फ्रेंचका प्राध्यापक था। मुझे आश्चर्य इस बातपर होता था कि विद्यार्थी अक्षरशः सब कुछ लिखकर घोट लेते थे। ऐसी चीज इंग्लैंडमें कभी नहीं हो सकती थी।

शिष्य—लेकिन हम तो इंग्लैंडमें यही करते थे।

श्रीअरविंद—क्या करते थे?

शिष्य—लिखकर घोट लेते थे।

श्रीअरविंद—तुम नोट ले सकते हो और उनका अपने ढंगसे उपयोग कर सकते हो।

शिष्य—जी नहीं, ऐसी बात नहीं थी। हम अक्षरशः लिख लेते थे क्योंकि प्राध्यापक बहुत-सी नयी परिकल्पनाओं और खोजोंके बारेमें लिखकर लाते थे और फिर हर प्रोफेसरकी अपनी सनक होती है।

श्रीअरविंद—डाक्टरीमें ऐसा हो सकता है क्योंकि उसमें मौलिक चिंतनके लिए बहुत क्षेत्र नहीं होता लेकिन आर्ट (कला) में ऐसा नहीं होता। तुम भाषण सुनो, चाहो तो नोट लेते चलो और फिर उनका जो उपयोग चाहो करो। हमेशा विद्यार्थीके दृष्टिकोणको जाननेकी मांग होती थी।

बड़ौदाके विद्यार्थी मेरे भाषणके नोट्स लेनेके साथ-ही-साथ बंबई-के प्रोफेसरोंके नोट्स भी लिया करते थे, विशेष रूपसे अगर वे परीक्षक भी हों।

एक बार मैं साऊदे कृत 'लाइफ आफ नेलसन'पर बोल रहा था और मेरा भाषण छपे हुए नोट्सके साथ मेल न खाता था तो विद्यार्थियोंने कहा कि नोट्समें तो ऐसा नहीं है। मैंने कहा, मैंने ये नोट्स नहीं देखे। फिर ये हैं भी फालतू। मैं कभी बारीकीसे ब्यौरेमें न जाता था। मैं चीजको पढ़कर अपने मनको खुली छूट दे देता था कि उसे जो ठीक लगे करे। इसीलिए मैं कभी विद्वान्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं कहलाया, पन्द्रह वर्षकी उम्रतक में सेंट पौलमें बड़ा होनहार विद्यार्थी माना जाता था। पन्द्रहके बाद मेरी वह ख्याति चली गयी। मेरे अध्यापक कहने लगे कि मैं आलसी था और गिरता जा रहा था।

शिष्य—यह कैसे ?

श्रीअरविंद—क्योंकि मैं उपन्यास और कविता ही पढ़ा करता था, सिर्फ परीक्षाके समय थोड़ी बहुत तैयारी कर लेता था। मैं जब कभी-कदास यूनानी और लातीनी कविता लिखता था तो मेरे अध्यापक झींक उठते थे कि मैं आलसके कारण अपनी क्षमताओंका उपयोग नहीं करता।

जब मैं छात्रवृत्तिके लिए केम्ब्रिजके किंग्स कालेजमें गया तो आस्कर ब्राउनिंगने कहा कि उसने ऐसे विलक्षण पर्चे कभी न देखे थे। तो देखो, अपने आलस्यके बावजूद मैं नीचे नहीं गिर रहा था।

शिष्य—क्या उन दिनों भारतीयोंके विरुद्ध कोई पक्षपात था ?

श्रीअरविंद—नहीं, अंग्रेजों और भारतीयोंके बीच कोई भेद न था। सिर्फ निम्न वर्गके लोग "ब्लैकी, ब्लैकी" पुकार करते थे। यह केवल आरंभ था। इस चीजको उपनिवेशोंसे लौटे हुए निवृत्त अंग्रेज और ऐंग्लो इंडियन लाये थे। मेरा ख्याल है कि यह जन-तंत्रका परिणाम है। लेकिन सभ्य अंग्रेजोंमें रंगभेदका यह पक्षपात अजाना था, वे हमारे साथ बराबरीका व्यवहार करते थे।

लेकिन फ्रांसमें ऐसे पक्षपात कभी सुने भी नहीं गये। एक बार पैरिसमें किसी होटलके मैनेजरने दस अमरीकियोंके दबावमें आकर कुछ हब्शियोंको होटलसे चले जानेके लिए कहा, पता नहीं तुमने यह मामला अखबारोंमें पढ़ा है या नहीं, लेकिन जब राष्ट्रपतिको इस बातका पता लगा, उन्होंने होटलके मालिकके पास चेतावनी भेजी कि अगर आगेसे होटलमें ऐसा कुछ हुआ तो उसका लाइसेंस रद्द कर दिया जायगा। फ्रांसमें नीग्रो गवर्नर, अफसर, टैक्सी ड्राइवर आदि हुए हैं। एक सेनेगालका सांसद गवर्नरका काम किया करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। पता नहीं पांडिचेरीका कोई भारतीय डेप्यूटी क्यों नहीं चुना गया। अंग्रेजोंमें कुछ उदारचितता और सामान्य बुद्धिमत्ता होती है।

शिष्य—उदारचितता ?

श्रीअरविंद—उदारचिततासे मेरा मतलब उदारता नहीं है, बल्कि एक प्रकारकी चेतनाकी स्वाधीनता, कुछ निष्पक्षतासे है। इन गुणों और अपनी सार्वजनिक भावनाके कारण इंग्लैंडके सार्वजनिक जीवनमें फ्रांस और अमरीका जैसी अस्तव्यस्तता नहीं है। अंग्रेज अखबारों-में या व्यक्तिगत रूपसे एक दूसरेकी कड़ी आलोचना कर सकते हैं पर इसका उनके व्यक्तिगत संबंधपर कोई असर नहीं पड़ता। तुमने देखा है कि बैल्सफोर्ड चेंबरलेनकी कैसी कड़ी आलोचना करता है परंतु इसका उनकी मित्रता या उनके व्यक्तिगत संबंधपर कोई असर नहीं पड़ेगा।

शिष्य—शायद यह सिर्फ दिखावा हो।

श्रीअरविंद—नहीं, यह बिल्कुल सच्चा है। इंग्लैंडमें बोलनेकी खुली छूट है।

१०-१-१९३९

शिष्य—मेरे मित्र 'क'ने मेरे कुछ रोगियोंको भी दवाई देना शुरू कर दिया है।

श्रीअरविंद—तो यह होमियो-एलो मैत्री माधुरी है।

(होमियोपैथीके बारेमें बातचीत चल ही रही थी कि माताजी आ गयीं।)

माताजी—क्या तुम्हें स्विट्जरलैंडके होमियोपैथी स्कूलके बारेमें पता है जो यूरोपमें बहुत प्रसिद्ध है। वहां दवाइयां भी तैयार की जाती हैं। उनके पास ऐसी पुस्तकें हैं जिनमें बीमारियोंके लक्षण क्रमानुसार इकट्ठे करके लिखे गये और लक्षणोंके हर समूहके लिए दवाई बतलाई गयी है। यह बहुत सुविधाजनक तरीका है, हां, पुस्तक तुम्हारे पास होनी चाहिए या फिर तुम्हारी स्मरणशक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी होनी चाहिए। क्या यहां लाइसेंसके बिना होम्योपैथी की जा सकती है?

शिष्य—जी हां, हिंदुस्तानमें लाइसेंसकी जरूरत नहीं है।

एक और शिष्य—डा. स कह रहे थे कि हाई पोटेन्सीका इस्तेमाल रोगीके लिए हानिकर होता है, उसे मार भी डाल सकता है। कहा जाता है हर कोई इसे शुरू कर दे तो बहुत खतरनाक होता है।

शिष्य—बंगालमें तो सभी जगह होम्योपैथी चलती है।

श्रीअरविंद—क्या यूनानी दवाईका हिंदुस्तानमें चलन है?

शिष्य—जी हां, जहां मुस्लिम जनसंख्या अधिक है, मुस्लिम रियासतोंमें भी यूनानी चलती है। दिल्लीमें हकीम अजमलखांका चलाया हुआ एक तिब्बिया कालेज भी है। शायद सारे एशियामें यही एक यूनानी चिकित्साका कालेज है। यहां तुर्की, मिस्र और अफगानिस्तानसे भी विद्यार्थी आते हैं। अजमलखां मुगल बादशाहोंके हकीमके वंशज थे। यह पद्धति कहांसे आयी है?

श्रीअरविंद—यह यूनानकी चिकित्सा-पद्धतिसे आयी है। ये लोग पशुओंसे बनी दवाइयोंका और लवणोंका भी उपयोग करते हैं। रोग-मुक्त करनेकी बात तो सभी चिकित्सा-पद्धतियां करती हैं, यूनानी लोग मानव शरीरको फिरसे जवान करनेका भी दावा करते हैं। बहुत-से रोग जिनके लिए ऐलोपैथीवाले शल्य-क्रिया जरूरी बताते हैं आयुर्वेद और यूनानी दवाईसे ही ठीक हो जाते हैं।

हिंदुस्तानमें लोगोंको बहुत-से टोटके मालूम हैं लेकिन दुर्भाग्यवश अब वे गुम होते जा रहे हैं। मुझे ज्योतिन्द्रनाथ बनर्जीकी बात याद है। उन्हें किसी संन्यासीने बांझपनकी दवाई दी थी और वे सफलताके साथ उसका उपयोग करते थे। दस-दस पन्द्रह-पन्द्रह वर्ष पुराने बांझपनके रोगी भी उन्होंने थोड़े ही समयमें ठीक कर दिये थे। दवाके साथ मिलनेवाले निर्देशका बहुत सख्तीसे पालन करना पड़ता था। उन्हें अण्डवृद्धिका इलाज भी मालूम था।

माताजी—क्या तुम चीनी चिकित्सा-पद्धतिके बारेमें जानते हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक समय उनके यहां यह नियम था कि जबतक तुम स्वस्थ रहो तबतक चिकित्सकको शुल्क देते रहो परंतु बीमार होते ही उसका शुल्क बन्द कर दिया जाता था और रोगी मर जाय तो यह दिखाने-के लिए चिकित्सकके दरवाजेपर एक निशान लगा दिया जाता था कि इसका रोगी मर गया।

लेकिन चीनका एक्यू-पंक्चर अद्भुत है। इसके पीछे विचार यह है कि स्नायुमें एक ऐसा बिंदु होता है जहां आक्रमण करनेवाली शक्ति रोगके आक्रमणोंको केंद्रित कर देती है। अगर तुम उस केंद्र-पर सूई चुभाओ या जैसा कि वे कहते हैं, शैतानके सिरपर चोट करो तो रोग ठीक हो जाता है। वे इस स्नायविक बिन्दुका रोगी-के बतलाये हुए लक्षणोंसे पता लगा लेते हैं या कभी-कभी अपने-आप ही पता लगाते हैं।

शिष्य—मुझे नहीं लगता कि कोई भी चिकित्सा-पद्धति सभी रोगों-को ठीक कर सकती है। मुझे लगता है कि केवल योग-शक्ति ही सब रोगोंको ठीक कर सकती है।

और एक शिष्य—लेकिन वह भी बिना शर्तके नहीं है, नहीं तो काम बहुत आसान हो जाता। योग-शक्तिके सफल होनेके लिए कुछ शर्तें पूरी करनी होती हैं।

श्रीअरविंद—क्या तुम आशा करते हो कि योग-शक्ति या चेतना सिर्फ इतना कहे, "कोई बीमारी न रहे" और कोई बीमारी न रहेगी?

शिष्य—जी नहीं, उस तरह नहीं। लेकिन चमत्कारद्वारा, बिना किसी शर्तके भी तो रोग-मुक्ति होती है।

श्रीअरविंद—वह और चीज है अन्यथा योगीको हर रोज सबेरे उठकर कहना होगा, "संसारमें सभी स्वस्थ हों" और बस संसार भरमें कहीं कोई बीमारी न रहेगी। (हंसी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५-१२-१९३९

शिष्य—जैन पुस्तकोंमें त्रिकाल ज्ञानकी बात कही गयी है। अगर हमें यह ज्ञान प्राप्त हो तो हम यह जान सकते हैं कि कोई चीज कैसे हुई, हम जान सकते हैं कि आपके पैरकी दुर्घटना कैसे हुई?

श्रीअरविंद—यह अवचेतनाको बदलनेका प्रश्न है जो अपने अंदर सब कुछ समाये रखती है, सभी बीमारियां, आदतें और वे सब चीजें जिन्हें हम स्वभाव या प्रकृति कहते हैं।

शिष्य—लेकिन दुर्घटना हुई कैसे?

श्रीअरविंद—क्योंकि मैं असावधान था और कोई चीज अवचेतनामें जा घुसी। योगकी प्रगतिमें एक ऐसा स्तर आता है जहां जरा भी लापरवाही नहीं चल सकती।

शिष्य—उच्चतर शक्तिद्वारा घुटनेके जोड़को कैसे ठीक किया जा सकता है?

श्रीअरविंद—उचित प्रकारकी शक्ति घुटनेतक नहीं आती। अगर वह आ जाती तो यह ठीक हो जाता।

शिष्य—क्या आप काली शक्तियोंका अनुभव करते हैं?

श्रीअरविंद—हां।

शिष्य—और वे घुटनेके ठीक होनेमें बाधा देती हैं?

श्रीअरविंद—हां।

शिष्य—एक ऐसी मान्यता है कि कुछ कर्मोंकी प्रतिक्रियाएं अनिवार्य होती हैं यानी आदमीको अपने शरीरपर उनके परिणामोंको सहना ही पड़ता है, उनसे बचा नहीं जा सकता है। मैंने सुना है कि माताजीने 'क'से कहा था कि उसके शरीरकी असाध्य विकृति अतिमानसके अवतरणसे ठीक हो सकती है। क्या यह संभव है?

श्रीअरविंद—हां, लेकिन उसके लिए अतिमानसका अवतरण 'क'के शरीरमें होना चाहिए, किसी औरमें नहीं।

शिष्य—लेकिन तब तो अतिमानसिक अवतरण पत्थरों और धातुओंको भी बदल सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद——पत्थरों और धातुओंमें मन नहीं होता जिसे बदलनेकी जरूरत हो। उनमें परिवर्तन करना इतना कठिन नहीं है। तो अगर अतिमानस तुम्हारे अंदर उतर आये तो इतना काफी होगा, सभी समस्याएं हल करनेकी जरूरत नहीं।

शिष्य——लेकिन पहले यह आपके अंदर होना चाहिये, अगर ऐसा हो तो उसमें क्या परिवर्तन आयेंगे।

श्रीअरविंद——मेरा काम है उसे पृथ्वी-चेतनामें प्रतिष्ठित करना, उसकी मेरे अंदर प्रतिष्ठा सारी चीजका एक भाग होगी। वह औरों-के अंदर भी अवतरणको संभव बनायेगी।

शिष्य——हमने सुना है कि बड़े-बड़े सिद्ध पुरुष स्पर्शमात्रसे औरोंके रोग ठीक कर देते थे। रामकृष्ण तो स्पर्शमात्रसे यौगिक अनु-भूतियां भी देते थे।

श्रीअरविंद——भिन्न-भिन्न प्रकारकी शक्तियां होती हैं जिनके द्वारा ये चीजें की जाती हैं। ये चमत्कार होती हैं। परंतु यह जरूरी नहीं है कि चमत्कार दिखाना आध्यात्मिकताका लक्षण हो। इस योगमें हम सब कुछ भगवान्‌के हाथमें छोड़ देते हैं। अगर ये चीजें भागवत गति-विधिके भागके रूपमें आयें तो उनके लिये स्थान है।

शिष्य——क्या ऐसे कर्म नहीं होते जिनका फल अनिवार्य हो? जैन तीर्थंकरों और बुद्धोंको भी अपने पिछले कर्मोंका फल भोगना पड़ा। क्या यह कहा जा सकता है कि यह दुर्घटना भी आपके किसी उत्कट कर्मका परिणाम थी?

श्रीअरविंद——मुझे नहीं लगता। मेरे लिये तो यह अज्ञानकी शक्तियों और विरोधी शक्तिके विरुद्ध लड़ाईका एक भाग है।

शिष्य——आपका पैर शेरके चमड़ेपर फिसल गया। मान लीजिये कि आपने अपने पिछले जन्ममें किसी शेरको लाठीसे मारा था, तो हो सकता है कि इस जन्ममें उसने आपकी हड्डी तोड़ दी।

श्रीअरविंद——नहीं, तब तो वह आकर इस बार मुझे मार ही डालता। कर्मका विधान यांत्रिक या गणितपर आधारित नहीं होता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीधी-सी भाषामें कहा जाय तो कर्मका विधान यह है कि जब अमुक ऊर्जाएं आगे आयें तो अमुक परिणाम होते हैं। कर्म चेतनाका मौलिक विधान नहीं है। आधारभूत सिद्धांत आध्यात्मिक है। कर्म अनुभूतिके द्वारा चेतनाके विकासमें सहायता देनेवाला गौण यंत्र है। सत्ताके विधान आधारभूत रूपसे आध्यात्मिक होते हैं। कर्मशक्ति-को एकदमसे दूर कर देना संभव है—यह निरपेक्ष नहीं है। मन इन विधानोंको बनाता है और हमेशा यही कोशिश करता है कि उन्हें निरपेक्ष और अबाध बना दे।

शिष्य—क्या यह कहा जा सकता है कि इस दुर्घटनाने कुछ भला किया है?

श्रीअरविंद—नवंबरके बाद मैंने काफी प्रगति की है, मुझे कुछ किताबें लिखनेके लिये समय मिल गया; अब मुझे एकाग्र होनेके लिये अधिक समय मिलता है।

शिष्य—क्या इस अवधिमें आपके शिष्योंने प्रगति की है?

श्रीअरविंद—'द'तक जो पहले शक्तिके नीरव कार्यमें विश्वास न करता था, अब कहता है कि प्रणाम बन्द हो जानेसे नीरव कार्य अधिक संभव हो गया है।

शिष्य—'द' हमेशा चाहता था कि आप पुस्तकें लिखें।

श्रीअरविंद—इतना ही नहीं, वह चाहता था कि मैं अधिक कविताएं लिखूं और उसे अधिक पत्र लिखूं। (हंसी)

१९-७-१९४३

शिष्य—'क'ने अपने पत्रमें किसीको लिखा है कि मनुष्यमें प्राणिक सत्ता ही बीमारियोंके लिए जिम्मेदार होती है, शरीरका इसमें कोई भाग नहीं होता। आप क्या कहते हैं?

श्रीअरविंद—तुम कह सकते हो कि "भौतिक द्रव्य" अच्छे, बुरे, स्वस्थ और अस्वस्थके बारेमें कुछ नहीं जानता परंतु मानव शरीर यानी भौतिक चेतना "भौतिक द्रव्य" नहीं है। वह सचेतन होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है इसलिए बीमारियोंके बारेमें उसकी अपनी जिम्मेदारी होती है।

शिष्य—ऐसा मालूम होता है कि 'क' प्रायश्चित्तके बारेमें कह रहा था। वह कहना यह चाहता था कि प्राणमय सत्ताके या मनके अपराधके लिए शरीरको दण्ड देना ऐसा ही है जैसे रामके अपराधके लिए श्यामको दण्ड देना।

श्रीअरविंद—इस बातपर भी मतभेद हो सकता है। यह सोचना ठीक नहीं है कि मन, प्राण और शरीर एक दूसरेसे इतने अलग हैं, कि परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया नहीं कर सकते। यह सच नहीं है। भौतिक शरीर प्राणिक सत्तापर प्रतिक्रिया कर सकता है।

शिष्य—लेकिन हमारी भौतिक सत्ता प्राण या मनकी सत्ताके जितनी सचेतन नहीं है।

श्रीअरविंद—यह कहा जा सकता है कि भौतिक अन्योंकी अपेक्षा अधिक अचेतन है लेकिन इस कारण यह नहीं कहा जा सकता कि वह अन्य भागोंपर प्रबल प्रभाव नहीं डाल सकता।

इसके अलावा, उपवास करने या घोर तप करनेका निर्णय प्राण और मनुष्यका मनोमय पुरुष करता है, शरीर निर्णय नहीं करता।

शिष्य—लेकिन योगके मनोवैज्ञानिक पथोंपर शारीरिक तपको जरूरी नहीं माना जाता।

श्रीअरविंद—भौतिक तप या शरीरको गलानेको इसलिए महत्त्व नहीं दिया जाता, उसे प्रभावकारी नहीं माना जाता या उसे प्रोत्साहन नहीं दिया जाता क्योंकि यह अपने-आपमें प्राण या मनमें परिवर्तन लानेके लिए काफी नहीं है। तुम तपस्या भले कर लो परंतु तुम्हारा प्राण पूरी तरह अपरिवर्तित बना रह सकता है।

इस प्रकारका परिवर्तन ज्यादा आसानीसे तब आ सकता है जब चेतना शारीरिक साधनोंके बिना, सीधी क्रिया करे। चेतनाके अंदर वांछित परिवर्तन लानेके लिए ज्यादा सीधे साधन हैं।

शारीरिक तपस्याको प्रोत्साहित न करनेका एक और कारण भी है। अगर यह तपस्या ठीक तरहसे की जाय तो इससे शारीरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊर्जा बहुत बढ़ जाती है और फिर परिणाम इसपर निर्भर रहता है कि इस ऊर्जाको कौन अपने वशमें लेता है। साधारणतः देखा यही जाता है कि गलत शक्तियां इस ऊर्जाको हथिया लेती हैं। विरले लोग ही संकटमें पड़े बिना इस स्थितिमेंसे गुजर सकते हैं। सारी तकलीफकी जड़ अवचेतनामें है और कठिनाई वहींसे आती है।

लेकिन अगर चेतनाका कोई भाग तपस्या करे, उदाहरणके लिए अगर प्राण तपस्या करे तो वह आवश्यक परिवर्तन ला सकता है।

२०-३-१९४३

कैंसर[1]से पीड़ित एक साधककी मृत्यु हो गयी।

शिष्य——क्या आपका ख्याल है कि 'र'को ठीक किया जा सकता था? लोगोंकी धारणा है कि कैंसर असाध्य है।

श्रीअरविंद——कम-से-कम 'र'के लिए तो यह संभव था लेकिन फरवरी दर्शनके बाद उसके अंदर किसी चीजने प्रत्युत्तर देना बन्द कर दिया। पिछले तीन दिनोंमें शरीरपर न तो उच्चतर शक्तिका और न दवाईका कोई असर हुआ।

---

[1]आश्रममें कैंसरका यह पहला आक्रमण था। उन दिनोंके एक बड़े फ्रेंच विशेषज्ञ रोगीको देखने आये थे। उन्होंने माताजीके साथ इस रोगीके बारेमें बड़े विस्तारसे बातचीत की और विज्ञान उस समयतक जितना जानता था वह सब बतलाया। यह सब सुननेके बाद माताजीने किसीसे कहा, डाक्टरकी बातें सुनकर मैं इस निष्कर्ष-पर पहुंची हूं कि कैंसर सचमुच रोग नहीं है। जब शरीरके कोषाणु केंद्रीय चेतनाके विरुद्ध विद्रोह कर बैठते हैं तो उसे कैंसर कहा जाता है। इसका सच्चा इलाज यही होगा कि उन विद्रोही कोषाणुओंको सचेतन बनाकर केंद्रीय चेतनाके आधीन किया जाय। ——सं० (स्मृतिके आधारपर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य––क्या आध्यात्मिक सहायता, उसके प्रत्युत्तरकी परवाह किये बिना अपना प्रभाव न डाल सकती थी?

श्रीअरविंद––इस प्रकारके मामलोंमें संबद्ध व्यक्तिका पूरा-पूरा सहयोग अत्यंत आवश्यक है।

शिष्य––लेकिन अगर आप आक्रमण करनेवाली शक्तिको जानते हैं तो...

श्रीअरविंद––आक्रामक शक्तिको पहचान लेना एक चीज है और उसे भगा सकना दूसरी चीज है। इन मामलोंमें मनकी बड़ी महत्त्व-पूर्ण भूमिका होती है। इस आदमीने निश्चय कर लिया था कि वह फरवरी दर्शनकी प्रतीक्षा करेगा और उसके बाद मर जायगा। इसके अतिरिक्त, जब वह यहां आया था, रोग काफी बढ़ चुका था।

शिष्य––ऐसे मामलोंमें सफलताके लिए क्या शर्तें हैं?

श्रीअरविंद––या तो पूर्ण सहयोग या पूर्ण वश्यता।

(अब हम चलते-चलते 'माताजीकी बातचीत'से भी रोगसंबंधी कुछ बातें देखते चलें। ये भी स्मृतिके आधारपर लिखी गयी हैं जिन्हें माताजीने नहीं देखा।––सं०)

सांस लेना––अधिकतर लोग ठीक तरह सांस लेना नहीं जानते। बहुधा तुम्हारे फेफड़ेके ऊपरी भागकी हवा नहीं बदलती। तुम प्रायः बीचके भागसे ही सांस लेते हो और ऊपरी भागकी गंदी हवा जैसी-की-तैसी बनी रहती है। स्वास्थ्यकी बहुत-सी गड़बड़ें इसी कारण पैदा होती हैं।

मैंने प्राणायामका शास्त्रीय ढंग नहीं सीखा, लेकिन जिन तरीकोंका मैंने अभ्यास किया है उनमेंसे एक यह है: अपने फेफड़ोंको ताजी हवासे भर लो और एक, दो, तीन, चार गिनो। फिर एक दो तीन, चार गिनते हुए दम रोके रहो, और फिरसे एक, दो, तीन, चार गिन कर जितनी हो सके उतनी हवा बाहर निकाल दो। इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरीकेमें तुम एक नासापुटसे सांस ले सकते हो और दूसरेसे निकाल सकते हो ताकि दोनों सक्रिय हो सकें।

अगर तुम शरीरके किसी रुग्ण भागकी ओर प्राण फेंक सको तो तुम देखोगे कि रोग दूर हो गया है। इस तरहसे तुम सारे शरीरकी सब बीमारियोंसे पिंड छुड़ा सकते हो। जब मैं कहती हूं कि रुग्ण भागकी ओर प्राणको फेंको तो इसका मतलब यह नहीं होता कि भौतिक हवाको फेंको। वह तो फेफड़ोंके परे कहीं नहीं जा सकती। मेरा मतलब है प्राणिक ऊर्जासे। जब तुम सांस लो तो तुम्हें ऊर्जा, चेतना और शक्ति अंदर लेनी चाहिए। ये तीनों चीजें शरीरपर क्रिया करती और उसे रोगमुक्त करती हैं। प्राणायामके बाद तुम एक नये जीवनका, एक नयी ऊर्जाका अनुभव करते हो, वह इन्हींसे आती है। जब तुम शरीरके किसी भागपर केंद्रित होते हो तुम्हें ऐसा लगता है मानों प्राण वहांपर दबाव डाल रहा है।

लेकिन तुम्हें यह सावधानी बरतनी चाहिए कि सिर्फ ठीक तरहकी चेतना, ऊर्जा और शक्तिको अंदर लो नहीं तो गलत परिणाम आ सकते हैं।

*

आंखकी तकलीफ—आग्रहपूर्ण इच्छा-शक्ति और थोड़ी-सी सावधानी हो तो तुम अपनी आंखकी तकलीफसे छुट्टी पा सकते हो, लेकिन एक बार चश्मा पहन लो तो तुम यही समझोगे कि जो कुछ करना था किया जा चुका और फिर तुम अपनी आंखें सुधारनेके लिये कोई प्रयास नहीं करते।

कॉड लिवर आयल उपयोगी नहीं है। उसके बारेमें जो बड़े-बड़े दावे किये जाते हैं उनके बावजूद उससे तुम्हें कोई मदद नहीं मिलती। खाली गाजरें तुम्हारी दृष्टि सुधारनेमें सहायता कर सकती हैं। जब तुम गाजरोंको जमीनसे बाहर निकालो तो तुरंत उन्हें धोकर काले कपड़ेसे ढक दो ताकि उनपर रोशनी न पड़ने पाये और घर लाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कच्चा ही खा जाओ। इससे तुम्हारी दृष्टिको जरूर लाभ पहुंचेगा।

*

जानवरोंकी बीमारी––बात बीमारीके बारेमें चल रही थी। माताजीने कहा कि बहुत-सी बीमारियां मनके कारण आती या जड़ पकड़ती हैं। किसीने कहा, 'लेकिन जानवर भी तो बीमार पड़ते हैं।' माताजीने उत्तर दिया, 'जानवरोंमें मन सचेतन नहीं होता लेकिन उभरना तो शुरू हो ही जाता है। उनमें भी मन ही बीमारी लाता है। जानवर अवसादके भी शिकार होते हैं।'

*

आयुर्वेद––तुम्हें शरीरको एक-एक अंग करके नहीं, एक इकाईके रूपमें लेना चाहिये। आयुर्वेदका यही तरीका था पर खेद है आज आयुर्वेद इसे छोड़कर एलोपैथीके तरीके अपना रहा है।

*

दुर्घटना––माताजीने किसीसे कहा, 'तुम्हें विश्राम करना चाहिए लेकिन केंद्रित शक्तिमें विश्राम, विरोधी शक्तियोंके प्रति अप्रतिरोधका हल्का रूप नहीं। विश्राम शक्ति हो, दुर्बलताका आराम न हो।'

हम जब कोई दुर्घटना देखते हैं और उसमेंसे कोई बच निकलता है तो कहते हैं, 'यह भगवान्‌की कृपा है', दुर्घटनाके न होनेको हम कृपा माननेका विचार तक मनमें नहीं लाते। माताजी कहती हैं:

"शक्तिको समर्थ बनानेके लिये संकटका होना जरूरी है, यह पुराना विचार है। इसकी सीमाओंको लांघना चाहिए।"

*

(शारीरिक गड़बड़ोंकी तरह भीतरी गड़बड़ भी कम कष्टदायक नहीं होती। उनके बारेमें माताजी कहती हैं:)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणिक गड़बड़––ये प्राणिक गड़बड़ें हैं जो साधनाके बीच सिर उठाती हैं। इन्हें दूर करना जरूरी है। उन्हें दूसरोंकी गलत क्रियाओंके कारण आनेवाली स्वाभाविक प्रतिक्रिया समझ कर उचित न मान लो, यह न सोचो कि जबतक बाहरी कारण बने हैं तबतक मनका बना रहना अवश्यंभावी है। असली कारण भीतरी है और उसे केवल योग-साधना द्वारा ही दूर किया जा सकता है। जाग्रत् रहो, अपने-आपको उन प्राणिक गतियोंसे अलग रखो और शांति किंतु कठोरताके साथ इन्हें अस्वीकार करो।

*

रोगमुक्ति––सभी रोगोंसे मुक्ति पानेके लिये दो चीजें जरूरी हैं, एक है जबरदस्त श्रद्धा और दूसरी है ग्रहणशीलता, मनमें श्रद्धा और शरीरमें ग्रहणशीलता। बचपनसे ही तुम्हारे दिमागमें यह ठूंसा गया है कि रोगसे छुटकारा पानेके लिये तुम्हें दवाइयोंकी जरूरत है। जब तुम डाक्टरके पास न जानेका निश्चय भी करते हो तो तुम अपने-आपसे कहते हो, 'मेरी हालत चाहे खराब भी हो जाय तो भी मैं डाक्टरके पास न जाऊंगा।' इसके पीछे यह विचार होता है कि रोगमुक्तिके लिये डाक्टरके पास जाना जरूरी तो है फिर भी तुम उसके पास न जाओगे। रोगको निमंत्रण देनेके लिए इतना काफी है। मनमें श्रद्धा नहीं है और यह शरीर इतना मूढ़ है कि वह समझता है कि वह अपने-आप शक्तिसे सीधी सहायता नहीं पा सकता, उसे शक्तिकी क्रियाके लिये किसी माध्यमकी जरूरत है। जब तुम अपने अंदर श्रद्धा लाना भी चाहते हो तो तुम रोग और दवाईके बारेमें विचारको धकिया देते हो, तुम उसे अवचेतनामें धकेल देते हो और वह वहां छिपा रहता है और सिर उठानेका मौका पानेतक वहीं रहता है। उदाहरणके लिये जरा-सा अवसाद, चाहे वह एक या आधे मिनटके लिये ही क्यों न हो, जुकामका आक्रमण ला सकता है, और एक बार वह आ जाय तो तुम्हारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह विश्वास काम करता है कि एक बार वह आ गया तो उसे तीन दिन तो रहना ही चाहिए। लेकिन अगर तुम प्रयास करो तो वह जैसे आया था उसी तरह मिनटोंमें हटाया भी जा सकता है।

मैंने श्रीअरविंदको गंभीर रोग चुटकियोंमें ठीक करते देखा है लेकिन जैसा कि मैंने कहा, श्रद्धा और ग्रहणशीलताका होना जरूरी है।

हर मिनट यह युद्ध चलता रहता है।

—*—

'नारी-स्तम्भ' :

'अवेकनिंग'से

तुम्हारा स्थान

जहांतक वैश्व अभिव्यक्तिमें तुम्हारे स्थानकी बात है, केवल परम पुरुष ही तुम्हें वह दिखला सकते हैं।

परम प्रभुने अनिवार्य रूपसे वह स्थान निश्चित कर रखा है जिसे तुम्हें वैश्व सामंजस्यमें लेना है, वह स्थान चाहे जो भी हो। तुम्हें प्रत्येक व्यक्तिकी भांति समान रूपसे यह अधिकार प्राप्त है कि तुम चरम शिखरोंतक, अतिमानसिक सिद्धितक आरोहण कर सको।

तुम अपनी सत्ताके सत्यमें जो हो वह अपरिहार्य रूपसे निर्णीत हो गया है और कोई भी वस्तु, कोई भी व्यक्ति तुम्हें वह बननेसे नहीं रोक सकता; लेकिन उसे प्राप्त करनेके लिये तुम जो रास्ता लोगे उसे तुम्हारे अपने स्वतंत्र चुनाव पर छोड़ दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युगोंमें, यहांतक कि अपने वर्तमान जीवनमें भी तुम अटल रूपसे हमेशाके लिये अपना चुनाव कर सकते हो और फिर हर नये अवसर-पर तुम्हें बस उसकी पुष्टि करनी होगी अन्यथा, अगर तुमने आरंभमें अंतिम निर्णय नहीं किया तो हर क्षण तुम्हें मिथ्यात्व तथा सत्यके बीच एक नया चुनाव करना होगा।

दिनमें एक घंटा

मैं सुझाव देती हूं कि तुममेंसे हर एक यह कोशिश करे—ओह! बहुत देरतक नहीं बस दिनमें घंटा भर—कि एकदमसे अनिवार्य शब्दोंके अलावा और कुछ न बोले। न एक ज्यादा न एक कम।

अपने जीवनका एक घंटा ले लो, जो तुम्हारे लिये सबसे अधिक सुविधाजनक हो और उस समय अपना बारीकीसे निरीक्षण करो और एकदमसे अनिवार्य शब्द बोलो।

आरंभमें पहली कठिनाई होगी यह जाननेमें कि क्या एकदमसे अनिवार्य है और क्या नहीं। यह अपने-आपमें एक अध्ययन है और हर रोज दिनपर दिन तुम ज्यादा अच्छी तरह करोगे।

अगली चीज तुम यह देखोगे कि जबतक तुम कुछ नहीं बोलते तबतक एकदमसे नीरव-निश्चल रहना कठिन नहीं है लेकिन जैसे ही तुम बोलना शुरू करते हो हमेशा या प्रायः हमेशा तुम दो या तीन या दस या बीस ऐसे निरर्थक शब्द बोल जाते हो जिनकी एकदमसे कोई आवश्यकता न थी।

मैं तुम्हें अगले शुक्रवारतकके लिये इसे व्यायामके रूपमें करनेके लिये कहती हूं। हम देखेंगे कि इसमें तुम कितनी सफलता पाते हो, सप्ताहके अंतमें, शुक्रवारको तुम मुझे इस बातका छोटा-सा ब्यौरा देना कि तुमने इसमें कहांतक सफलता पायी—जिन्होंने इसे करनेका प्रयास किया। तो बस।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O Lord, awaken in me an ardent desire to know Thee. I aspire that my life may be consecrated to Thy service.

The Mother

Space donated by

Kooverji Devshi & Co., Pvt. Ltd.

FIREX LEADS TO SAFETY

SAFETY LEADS TO PROSPERITY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 8731

किये हैं। (१) श्रीअरविंदके जीवनकी झांकी (२) श्रीअरविंदाश्रम (३) शिक्षामें नया परीक्षण (४) फूलोंकी मूक भाषा। एक-एकका दाम पांच सौ रुपये और विक्रय कर २०, पैकिंग और डाक व्यय अतिरिक्त। जो लेना चाहें वे श्री अश्विन महादेविया, श्रीअरविंद सोसायटी, या शब्द, श्रीअरविंदाश्रम, पांडिचेरी–६०५००२ को लिखें।

नये प्रकाशन

माताजी और श्रीअरविंदकी दी हुई कुछ प्रार्थनाओं और मंत्रोंका अंग्रेजी संकलन (प्रेअर्स एंड मंत्रज, दाम २५ रु., डाक व्यय अतिरिक्त)

श्रीअरविंद—शाश्वतके प्रतिनिधि—अग्निशिखामें छपे हुए माताजी और श्रीअरविंदके कुछ लेखोंका संकलन। दाम ६ रु., डाक व्यय अतिरिक्त।

आदर्श बालक और आदर्श माता-पिता—ये दोनों छोटी किताबें काफी ख्याति पा चुकी हैं। विषय नामसे ही स्पष्ट है। प्रत्येकका मूल्य एक एक रुपया। १०० के लिये रु. ६० और हजारके लिये ५००।

संपर्क सूत्र—केशवजी, श्रीअरविंदाश्रम, पांडिचेरी-६०५००२।

अगर आपको माताजी और श्रीअरविंदका साहित्य पसंद है तो इसे औरोंमें भी फैलायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

नवंबर १९८७

वर्ष १८, अंक ४, पूर्णांक २०८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश		१
संपादकीय : सत्य	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
भय—कारण और उपचार		६
सोसायटी समाचार		आ० ३

वार्षिक शुल्क १०.०० आजीवन १७५.००

कृपया चेक न भेजें, उसमें बहुत असुविधा होती है। ड्राफ्ट, धनादेश या पोस्टल आर्डर भेज सकते हैं। अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

संपर्क : संपादक अग्निशिखा एवं पुरोधा, पांडिचेरी–६०५००२

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

संदेश

हम भगवान्‌के सच्चे सेवक बनना चाहते हैं। "परम प्रभो, पूर्ण चेतना, केवल तुम्हें मालूम है कि हम क्या हैं, क्या कर सकते हैं और हम जिस तरह तुम्हारी सेवा करना चाहते हैं वैसी सेवा करनेके लिये, हमें सक्षम और योग्य बननेके लिये कैसी प्रगति करनी होगी। हमें अपनी संभावनाओंके प्रति सजग करो और साथ ही कठिनाइयोंके प्रति भी सजग करो ताकि वफादारीसे तुम्हारी सेवा करनेके लिये हम उनपर विजय प्राप्त कर सकें।"

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

सत्य

कोई भी सत्यकी ऐसी परिभाषा नहीं कर पाता जो सबको संतुष्ट कर सके। घूम-फिरकर हम इसी निष्कर्षपर पहुंचते हैं कि प्रत्येक व्यक्तिके लिये अपना सत्य होता है। उसकी अपनी परिभाषा होती है और वह उसके लिये सच्ची होती है। हिमालयपर आरोहण करते-करते यात्री हर ऊंचाईपर दृष्टि डालकर दृश्योंके वैविध्यको देख-कर प्रसन्न होता है उसी तरह जीवन-यात्री हर पड़ावपर रुक कर उसके सत्यकी वास्तविकतासे परिचित होता है और पाता है कि हर पड़ावका अपना सत्य है और उसकी विजय निश्चित है।

आज भारतकी भी ऐसी अवस्था है। उसके वर्तमान पड़ावको देखकर ऐसा लगता है कि इस अवस्थामें सत्य, निष्ठा खोखले शब्द मात्र हैं; उनसे चिपके रहनेसे केवल हताशा और उपहास मिलेंगे। जो जितने झूठे फरेबसे पेश आयेगा, उसे उतनी ही सफलता और उतने लाभ प्राप्त होंगे। हमारे इस पड़ावका भी अपना सत्य है और उसकी विजय भी निश्चित है। देखना यह है कि अग्नि-परीक्षाके ऐसे समय किस व्यक्तिमें अपने सत्यपर डटे रहनेका साहस है।

ऐसे समय ही राष्ट्र और जनता तथा उसके नायककी कसौटी होती है। इस तुमुल कोलाहल और हलचलमें जो स्थिर, शांत, दृढ़ और अविचलित रहेगा उसकी विजय निश्चित है।

निन्दन्तु नीतिनिपुणाः यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदे न धीराः ॥

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

नवंबर

१. वर दे कि हमारी नीरवता तेरी उपस्थितिसे भर जाय और हम उसके बारेमें पूरी तरह सचेतन हों।

२. वर दे कि हम जानें कि तू ही हमारा जीवन है, हमारी चेतना और सत्ता है; कि तेरे बिना सब कुछ केवल भ्रम है।

३. प्रत्येकका अपना अहम् है और अहम् आपसमें टकराते हैं। जब मनुष्य अहम्से पिंड छुड़ाता है तभी वह मुक्त सत्ता बन पाता है।

४. जीवनकी कठिन घड़ियोंमें प्रत्येकका अनिवार्य कर्त्तव्य बन जाता है कि वह भगवान्‌के प्रति संपूर्ण और बिना शर्तके आत्मदानमें अपने अहम्पर विजय पाय। तब भगवान् तुमसे वही करवायेंगे जो तुम्हें करना चाहिये।

५. इस संकट कालमें जब अहम् आपसमें टकरा रहे हैं और अपने-आपको दृढ़तासे बनाये रखनेमें लगे हैं, सुरक्षा केवल तेरी शरणमें ही पायी जाती है।

६. इस समय सबसे महत्त्वपूर्ण काम है अपनी चैत्य सत्ताको पाना, उसके साथ एक हो जाना और उसे अहम्के स्थानपर आने देना। अहम् तब रूपांतरित या अदृश्य होनेके लिये बाधित होगा।

७. परम प्रभो, हमें नीरव रहना सिखा ताकि हम नीरवतामें तेरी शक्तिको ग्रहण कर सकें और तेरी इच्छाको समझ सकें।

८. हमारी सत्ताकी गहराईमें, चिंतनकी नीरवतामें एक ज्योतिर्मय शक्ति हमारी चेतनाको विशाल और प्रकाशित शांतिसे परिप्लावित कर देती है जो सब क्षुद्र प्रतिक्रियाओंके ऊपर विजय पाती है और हमें भगवान्‌के साथ एक होनेके लिये तैयार करती है—यही हमारे अस्तित्वका एकमात्र उद्देश्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. प्रत्येकसे बार-बार कहना चाहिये––अपने अहम्‌का उन्मूलन कर दो और तुम्हारे अंदर शांतिका राज्य होगा।

१०. जीवन-पथपर चलते-चलते मनुष्य पहली बात यह सीखता है कि देनेका आनंद लेनेके आनंदसे बढ़कर है।

११. धीरे-धीरे मनुष्य सीखता है कि अपने-आपको भूलना अचल शांतिका स्रोत है। बादमें इस आत्म-विस्मृतिमें मनुष्य भगवान्‌को पाता है और यही सर्वदा बढ़ते हुए आनंदका मूल है।

१२. तुम्हें अपनी अभीप्सा और सब विघ्न-बाधाओंको जीतनेकी इच्छाको बनाये रखना चाहिये।
तुम्हें भागवत करुणा और निश्चित विजयपर अटल श्रद्धा रखनी चाहिये।

१३. ज्ञान और बुद्धि मनुष्यमें ही उच्चतर मानसिक गुण हैं; वे उसे पशुसे अलग बना देते हैं।

१४. अगर मृत व्यक्ति ऐसा हो जिससे तुम्हें प्रेम है तो शांति और अचंचलतामें तुम्हें अपना प्रेम उस व्यक्तिपर एकाग्र करना चाहिये क्योंकि वही क्रिया मृतककी सहायता करेगी।

१५. भगवान्‌के लिये जीनेका अर्थ है तुम जो कुछ भी करते हो उससे व्यक्तिगत परिणामकी इच्छाके बिना, उसे भगवान्‌के अर्पित करो।

१६. पृथ्वीपर कठिन घड़ियां इसलिये आती हैं कि वे मनुष्यको अपने छोटे अहम्‌को जीतनेके लिये बाधित करें और मनुष्य मदद, प्रकाशके लिये ऐकांतिक रूपसे भगवान्‌की ओर मुड़े।

१७. हम जैसे प्रार्थना करते हैं उसी तरह कार्य करें क्योंकि वास्तवमें कार्य शरीरकी भगवान्‌के प्रति सबसे अच्छी प्रार्थना है।

१८. जिसे तुम आज नहीं कर पाये उसे कल चरितार्थ कर पाओगे, डटे रहो, विजय होगी।

१९. दूसरोंकी मूर्खताओंपर ध्यान मत दो, अपनी मूर्खताओंके बारेमें सोचो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०. अगर विश्वमें कोई भी वस्तु मानवके जितनी दुर्बल नहीं है, तो उसी तरह कोई भी वस्तु उसके समान भागवत भी नहीं है।

२१. श्रद्धा अंतरात्माकी किसी ऐसी वस्तुकी साक्षी है जो अभीतक व्यक्त, प्राप्त और चरितार्थ नहीं हुई है।

२२. अतीत तुम्हें जो पाठ पढ़ाना चाहता था उसे तुम जबतक नहीं सीख लेते तबतक वह तुम्हारे पास आता रहेगा।

२३. मंदिरकी गहराईमें जाओ, वहां तुम मुझे पाओगे।

२४. सच्ची हिम्मतमें अधीरता नहीं होती, अविवेक नहीं होता।

२५. साहस और प्रेम अनिवार्य गुण हैं। अगर दूसरे गुण निस्तेज हो जायं या सो जायं फिर भी ये दो आत्माको जीवित बचा लेंगे।

२६. आत्माका विकास अंधकारसे प्रकाशमें विकास है, मिथ्यात्वसे सत्यमें, दुःखमेंसे अपने परम और वैश्व आनंदमें विकास है।

२७. निःस्वार्थ कार्यकर्ता अपने कार्यमें अपनी उत्तम क्षमता, उत्साह और परिश्रम लगाता है किंतु अपनी महत्त्वाकांक्षाओं, घमंड या आवेशोंके लिये नहीं।

२८. किसी सत्ताका आभिजात्य उसकी कृतज्ञताकी क्षमतासे नापा जाता है।

२९. योगमें आंतरिक विजयसे ही बाह्य जीत होती है।

३०. यह कभी न भूलो कि तुम अकेले नहीं हो। भगवान् तुम्हारी सहायता करते हुए, पथ-प्रदर्शन देते हुए तुम्हारे साथ हैं। श्रद्धा रखो, वे तुम्हारे लिये सब कुछ कर देंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय

कारण और उपचार

[भय मानव जाति ही नहीं प्राणी मात्रकी सबसे भयंकर और व्यापक बीमारियोंमेंसे एक है। यहां इसके बारेमें माताजी और श्रीअरविंदके कुछ वचन संकलित किये गये हैं। माताजीके वचनोंपर उनका प्रतीक और श्रीअरविंदके वचनोंपर उनका प्रतीक अंकित है। —सं०]

संक्षेपमें

भय और चिंता इच्छा शक्तिके विकृत रूप हैं। तू जिस चीजसे डरता है, जिसके बारेमें सोचता रहता है, मनमें बार-बार जिसका राग अलापता है, उसे लानेमें तू सहायता देता है। अगर जाग्रत् अवस्थासे ऊपर तेरी इच्छा-शक्ति उसे मार भगाये फिर भी तेरा अवमानस हमेशा उसकी इच्छा करता रहता है और तेरा अवचेतन मानस ज्यादा प्रबल, विस्तृत और कार्य संपादित करनेमें तेरी जाग्रत् शक्ति और बुद्धिकी अपेक्षा ज्यादा बलवान् है। लेकिन आत्मा इन दोनोंसे अधिक बलवान् है। आशा और भयसे अपनी आत्माकी भव्य स्थिरता और चिंतामुक्त प्रभुत्वमें शरण ले।

Sri Aurobindo

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय--प्राणमय लोकका सृजन

उच्चतर प्रकृतिमें कोई भय नहीं होता। भय प्राणमय लोककी रचना है, अज्ञानकी सहज वृत्ति है, संकटका भाव है जिसमें प्राणिक उग्र प्रतिक्रिया होती है जो वस्तुओंकी ठीक समझका स्थान ले लेती और सामान्यतः उसे रोकती या विकृत करती है। उसे विरोधी शक्तियोंका आविष्कार भी माना जा सकता है।

*

हां, भय काल्पनिक आतंक पैदा कर देता है। और सचमुच संकट हो भी तो डर कोई मदद नहीं करता। वह बुद्धि-भ्रम पैदा कर देता है, सुधबुध खो देता है और तुम्हें करने लायक ठीक चीज देखनेसे रोकता है।

*

हां, मेरे बालक, इन प्राणिक सत्ताओंने संसारको जो उपहार दिये हैं उनमें डर सबसे सुन्दर उपहार है, यह उनका सबसे पहला और सबसे सशक्त उपहार है। डरके द्वारा ही वे मनुष्योंको पकड़में रखते हैं। सबसे पहले वे डरकी गति पैदा करते हैं, डरकी गति तुम्हें कमजोर बना देती है और फिर जरा-जरा करके तुम्हें उनके बसमें सौंप देती है। और यह कोई युक्तियुक्त डर भी नहीं होता; यह एक ऐसा डर होता है जो तुम्हें पकड़ लेता है, तुम्हारी समझमें नहीं आता कि क्यों, कोई चीज तुम्हें कंपा देती है, तुम्हें चिंता देती है, तुम नहीं जानते कि क्यों, उसका कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता, यह उनकी क्रिया होती है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय दासता है, काम आजादी है, साहस विजय है।

भय--निश्चेतनाका व्यापार

भय निश्चेतनाका व्यापार है। यह एक प्रकारकी मनो-व्यथा है जो अज्ञानसे आती है। तुम किसी चीजका स्वभाव नहीं जानते, उसका प्रभाव नहीं जानते, यह नहीं जानते कि क्या होगा, अपनी क्रियाओंका परिणाम नहीं जानते, तुम बहुत सारी चीजें नहीं जानते और यह अज्ञान भय ले आता है। तुम जिसे नहीं जानते उससे डरते हो। एक बच्चेको ले लो, अगर उसे किसी ऐसेके आगे लाया जाय जिसे वह नहीं जानता (मैं ऐसे बच्चेकी बात नहीं कर रही जिसकी आंतरिक चेतना जागी हुई हो। मैं सामान्य बच्चेकी बात कह रही हूं)—तुम उसे किसी ऐसे आदमी-के सामने लाते हो जिसे वह नहीं जानता। उसमें पहली गति हमेशा भयकी होगी। बहुत ही विरले बच्चे—और उनमें और ही चेतना होती है—साहसी होते हैं, यह एक तरहका आशंकाका मिश्रण, एक प्रकारकी सहज वृत्ति हो सकती है। जब तुम सहज वृत्तिसे अनुभव करते हो कि कोई खतरनाक चीज है और तुम्हारे पास उसके इलाजके साधन नहीं हैं, जब तुम्हारी समझमें नहीं आता कि उससे अपनी रक्षा कैसे की जाय तो तुम्हें डर लगता है। मेरा ख्याल है कि भयके अनगिनत कारण होते हैं लेकिन हर हालतमें यह निश्चेतनाकी एक गति होती है।

जो जानता है उसे डर नहीं लगता। जो पूरी तरह जाग्रत् है, जो पूरी तरह सचेतन है और जानता है उसे डर नहीं लगता। हमेशा कोई अंधेरी चीजको ही डर लगता है...।

जब डर आता है उस समय अगर तुम उसपर चेतना, ज्ञान, शक्ति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाश डाल सको तो तुम पूरी तरह उसका उपचार कर सकते हो। ईसाई धर्म मानता है कि भय इसलिये आता है कि हमने अदनके बागमें सेव खाया था, कि ज्ञानके साथ भय आता है और धरतीपर भय ही समस्त जीवनपर, सब मनुष्योंपर शासन करता है। यहां मैं अपनी युक्ति दोहराती हूं कि जानवर भी तो डरते हैं, उन्होंने कोई पाप नहीं किया है, उन्होंने वह सेव नहीं खाया था, इसलिये उनमें तो डर न होना चाहिये! यह एक प्रकारकी अर्द्ध-चेतना है जो अज्ञानभरी सहज वृत्तिसे मिली हुई है जो खतरे पर जोर देती है और साथ ही उसका उपचार भी नहीं जानती। लेकिन निश्चय ही तथ्य यह है कि विरोधी सत्ताएं, प्राणमय जगत्की सत्ताएं जो भगवान्के कामके विरुद्ध लड़ाई करती हैं, वे भयका बहुत अधिक उपयोग करती हैं। उसीके द्वारा वे मनुष्योंपर जबर्दस्त पकड़ रख सकती हैं। और अकेली वे ही नहीं हैं, राजनीतिक और धार्मिक साधन भी इस प्रकारके हैं। ऐसे धर्म हैं जो अपने श्रद्धालुओंपर भयके द्वारा ही अपनी शक्तिका उपयोग करते हैं, मृत्युका डर, मृत्युके बाद क्या होगा उसका डर और वे सब महान् विपदाएं जो मृत्युके बाद तुम्हारी प्रतीक्षा करेंगी यदि तुम उनके बताये गये विधानोंका आंख मूंद कर अनुसरण न करो।

यह भय वैर भावसे भी आ सकता है, यानी किसी चीजके साथ सादृश्यके अभावसे। कुछ लोग विशेष रूपसे आगसे डरते हैं, कुछ खास तौरपर पानीसे डरते हैं, औरोंमें किसी एक या दूसरे जानवरका भय होता है। यह प्राणिक स्पन्दनोंमें असामंजस्यसे आता है और फिर वह शरीरकी निश्चेतनामें भयमें अनूदित हो जाता है। शरीर बहुत ही अधिक निश्चेतन चीज है। उसे जरा-सी चेतना देनेके लिये कितना अधिक काम करना पड़ता है! वह यंत्रवत्, आदतोंके अनुसार चलता है। वह अत्यंत निश्चेतन है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न : हमें सांप बिच्छू आदि प्राणियोंसे जो प्रतिक्षेप होता है उसका कारण क्या है ?

यह कोई अनिवार्य आवश्यकता नहीं है कि तुम इस या उस प्रतिक्षेपसे डरो। योगकी आधारभूत उपलब्धियोंमेंसे एक है प्रतिक्षेप या घृणाका बिल्कुल न होना।

तुम जिस प्रतिक्षेपकी बात कर रहे हो वह भयसे आता है, अगर डर न हो तो उसका अस्तित्व न रहेगा। यह भय किसी कारणपर आधारित नहीं होता, यह सहज वृत्तिमूलक है। यह व्यक्तिगत नहीं, जातिगत है। यह एक व्यापक सुझाव है और सारी मानव चेतनाकी चीज है। जब तुम मानव शरीर धारण करते हो तो उसके साथ-ही-साथ इन व्यापक सुझावों, जातिगत विचारों, मनुष्य जातिके जातीय अनुभवोंको, आकर्षण, विकर्षण, भयको भी स्वीकार करते हो।

लेकिन एक और दृष्टिकोणसे आकर्षण और विकर्षणके स्वभावमें कोई बहुत ही व्यक्तिगत चीज होती है क्योंकि ये गतियां हर एकके लिये एक-सी नहीं होतीं और अधिकतर अलग-अलग लोगोंमें प्राणके स्पंदनोंके गुणपर निर्भर होती हैं। ऐसे लोग हैं जिन्हें न केवल सांप आदि जीवोंसे घृणा नहीं होती बल्कि उनके लिये एक तरहका प्राणिक आकर्षण और अभिरुचि होती है।

संसार ऐसी चीजोंसे भरा है जो सुखकर या सुन्दर नहीं हैं, लेकिन यह कोई कारण नहीं है कि आदमी सारे समय इन चीजोंके प्रति घृणा अनुभव करता रहे। मानव मनको क्षुब्ध और कमजोर करनेवाले सभी भाव—कतराना, घृणा, भय, ये सभी ऐसे हैं जिनपर विजय पायी जा सकती है। योगीको ऐसी प्रतिक्रियाओंपर विजय पानी चाहिये क्योंकि योगमें लगभग पहला कदम ही यह मांग करता है कि तुम सभी सत्ताओं, वस्तुओं और घटनाओंके आगे पूर्ण समता बनाये रखो। तुम्हें हमेशा स्थिर-अचंचल, अप्रभावित और अविचलित रहना चाहिये। योगीकी शक्ति इसीमें है। पूर्ण स्थिरता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अचंचलता भयंकर, क्रूर पशुओंके साथ सामना होनेपर उन्हें भी निःशस्त्र कर सकती है।

विकर्षण अज्ञानकी एक गति है। वह आत्मरक्षाकी सहज वृत्ति-मूलक क्रिया है। लेकिन जो चीज तुम्हें किसी संकटसे बचाती है वह बिना समझे-बूझे पीछे हटना नहीं बल्कि ज्ञान है, संकटकी प्रकृति-का ज्ञान और उसे हटा देने या रद्द कर देनेवाले साधनोंका सचेतन उपयोग। जिस अज्ञानसे ये गतियां उठती हैं वह सामान्य मानव अवस्था है लेकिन उसे जीता जा सकता है क्योंकि हम अनगढ़ मानव प्रकृतिके दास नहीं हैं जिसमेंसे बाहरी प्रकृति शुरू होती है और जो हमारे चारों ओर है।

अज्ञान बढ़ती हुई चेतनाद्वारा तितर-बितर किया जा सकता है। तुम्हें जिस चीजकी जरूरत है वह है चेतना और हमेशा अधिक चेतना, शुद्ध, सरल और प्रकाशमय चेतना। इस पूर्णकृत चेतनाके प्रकाशमें चीजें वैसी दिखलायी देती हैं जैसी वे हैं, वैसी नहीं जैसी वे दीखना चाहती हैं। यह एक पर्देकी भांति है जो ईमानदारीके साथ जैसे-जैसे चीजें होती जाती हैं, उन्हें अंकित करता जाता है। तुम वहां देखते हो कि क्या प्रकाशमय है और क्या अंधेरा, क्या सीधा है और क्या वक्र। तुम्हारी चेतना एक पर्दा या आईना बन जाती है, लेकिन यह तभी जब तुम चिंतन-मननकी अवस्थामें होते हो, केवल एक अवलोकन करनेवाले; जब तुम सक्रिय होते हो तो यह सर्चलाइट-की तरह होती है। अगर तुम किसी जगह पर किसी चीजको प्रकाश-मय रूपमें देखना और उसके भीतर प्रवेश करके उसकी परीक्षा करना चाहो तो बस तुम्हें इस सर्चलाइटको उसपर डालना होगा।

इस पूर्ण चेतनाको प्राप्त करनेका तरीका है अपनी वास्तविक चेतनाको उसके वर्तमान खांचों और सीमाओंसे आगे बढ़ाना, उसे शिक्षित करना, उसे दिव्य प्रकाशकी ओर खोलना और दिव्य प्रकाश-को उसके अंदर खुलकर आजादीसे काम करने देना। लेकिन प्रकाश अपना पूरा और अबाध काम तब ही कर सकता है जब तुम सभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लालसा और भयसे पिंड छुड़ा सको, जब तुम्हारे अंदर कोई मानसिक पसंद न हो, प्राणिक अभिरुचि न हो, भौतिक-शंकाएं और संकोच या आकर्षण तुम्हें अंधकारमय न कर दें या बांधें नहीं।

*

जो जानता है उसे डर नहीं लगता।

मनुष्योंको डर क्यों लगता है

आदमीको डर क्यों लगता है?

मेरा ख्याल है, इसलिये कि तुम अहंकारपूर्ण हो। तीन कारण हैं। पहला है, अपनी सुरक्षाके बारेमें बहुत अधिक चिंता। दूसरा, जिस चीजको तुम नही जानते वह हमेशा एक बेचैनीका-सा भाव देती है जो चेतनामें भयमें अनूदित हो जाती है और सबसे बढ़कर यह कि तुम्हारे अंदर भगवान्‌पर सहज विश्वास-की आदत नहीं है। अगर तुम चीजोंको काफी गहराईके साथ देखो तो यही सच्चा कारण होता है। ऐसे लोग होते हैं जो यह नहीं जानते कि भगवान्‌का अस्तित्व है भी। तुम उनसे दूसरे शब्दोंमें कह सकते हो, "तुम्हें अपनी नियतिपर विश्वास नहीं है" या "तुम कृपाके बारेमें कुछ नहीं जानते"—या कुछ भी, तुम जैसे चाहो कह सकते हो, लेकिन समस्याकी जड़ विश्वासके अभावमें ही है। अगर तुम्हें हमेशा यह लगता कि सभी परिस्थितियोंमें वही होता है जो सबसे अच्छा है, तो तुम्हें डर न लगेगा।

भयकी पहली गति यंत्रवत् चली आती है। एक बहुत बड़ा वैज्ञानिक था जो साथ ही मानस शास्त्री भी था। (इस समय मुझे उसका नाम याद नहीं आ रहा), उसने अपनी आंतरिक चेतना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकसित की थी लेकिन वह उसे परखना चाहता था। उसने एक परीक्षण शुरू किया। वह जानना चाहता था कि क्या चेतनाके आंतरिक साधनोंसे शरीरकी प्रतिवर्ती क्रियाओंपर नियंत्रण किया जा सकता है। (संभवतः वह ऐसा करनेके लिये काफी दूरतक नहीं गया क्योंकि यह किया जा सकता है, बहरहाल, उसके लिये यह असंभव था) हां, तो वह एक चिड़ियाघरमें गया जहां सांप कांचके पिंजरेमें बंद रखे जाते थे। वहां एक विशेष रूपसे आक्रामक नाग था। जब वह निद्रामें न हो तो प्रायः हमेशा ही क्रोधसे भरा रहता था क्योंकि वह कांचमेंसे उन लोगोंको देख सकता था और यह चीज उसे बहुत अधिक विक्षुब्ध करती थी। हमारा वैज्ञानिक जाकर पिंजरेके आगे खड़ा हो गया। वह भली-भांति जानता था कि पिंजरा इस तरहसे बना है कि सांप उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता, वह कभी कांचको न तोड़ सकेगा और इस कारण सांपके आक्रमणका कोई भय न था। बाहरसे खड़ा-खड़ा वह आवाजें और संकेत कर करके सांपको उत्तेजित करने लगा। नाग क्रुद्ध हो कर कांचके साथ जोरसे टक्कर लेता था और जब-जब वह टक्कर लेता था तब-तब वैज्ञानिक, अपनी आंखें बंद कर लेता था! हमारे मानस शास्त्रीने अपने-आपसे कहा, "देखो, मैं जानता हूं सांप कांचके बाहर नहीं आ सकता, फिर मैं अपनी आंखें क्यों मूंद लेता हूं?" हमें यह जानना चाहिये कि प्रतिक्रियाओंको जीत सकना कठिन है। एक सुरक्षाका भाव है और अगर तुम्हें यह लगे कि तुम अपनी रक्षा नहीं कर सकते तो तुम्हें डर लगता है। लेकिन भयकी वह गति जो पलक झपकानेसे प्रकट होती है वह मानसिक या प्राणिक भय नहीं है। यह शरीरके कोषाणुओंके अंदरका भय है क्योंकि उनपर यह छाप नहीं डाली गयी है कि उन्हें कोई खतरा नहीं है, वे उसका सामना करना नहीं जानते। यह इसलिये कि आदमीने योग नहीं किया है। योग करो तो तुम खुली आंखों देख सकोगे, तुम उन्हें बंद न करोगे। तुम उन्हें इसलिये बंद न करोगे क्योंकि तुम किसी औरको बुला सकते हो, और वह "कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और" व्यक्तिमें उस भागवत उपस्थितिका भाव है जो अन्य सब चीजोंसे ज्यादा सशक्त है।

यही एकमात्र तरीका है जिससे तुम अपने-आपको भयसे मुक्त कर सकते हो।

*

तूफानमें शांति, प्रयासमें अचंचलता, समर्पणमें आनंद, आलोकमय श्रद्धा और तुम प्रभुकी सतत उपस्थितिके बारेमें अभिज्ञ हो जाओगे।

मानसिक, प्राणिक और भौतिक भय

मानसिक, प्राणिक और भौतिक भयके बीच क्या फर्क है?

अगर तुम अपने मनकी गतिविधिके बारेमें, अपने प्राणकी गतिविधिके बारेमें, अपने शरीरकी गतिविधिके बारेमें सचेतन हो तो तुम यह जानते हो।

मानसिक बहुत सरल है: ये विचार हैं। उदाहरणके लिये तुम सोचना शुरू करते हो कि यह बीमारी है और यह बीमारी बहुत संक्रामक है। और शायद तुम्हें यह हो जाय और अगर तुम्हें यह हो जाय तो बड़ी मुसीबत होगी। यह न होने पाये इसके लिये क्या किया जाय?... मन कांपने लगता है: कल क्या होगा? आदि।

प्राण, तुम अनुभव करते हो। तुम इसे अपने संवेदनोंमें अनुभव करते हो। अचानक तुम्हें गरमी लगने लगती है, तुम्हें ठंड लगने लगती है। पसीना छूटने लगता है। और तरह-तरहकी अप्रिय चीजें होती हैं। तब तुम्हें हृदयकी धड़कन तेज होती हुई मालूम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है और अचानक तुम्हें बुखार आ जाता है। रक्त-संचार बंद हो जाता है और तुम ठंडे पड़ जाते हो।

हां, भौतिक रूपसे, जब तुम्हारे अंदर बाकी दो भय नहीं रह जाते तो तुम भौतिक भयके बारेमें अभिज्ञ हो सकते हो, साधारणतः बाकी दो बहुत अधिक सचेतन होते हैं। वे भौतिक भयको तुमसे छिपाते हैं, लेकिन जब तुम्हारे अंदर कोई मानसिक या प्राणिक भय नहीं रहता तब तुम उसके बारेमें अभिज्ञ हो जाते हो। यह एक अजीब, छोटा-सा स्पंदन है जो तुम्हारे कोषाणुओंमें घुस जाता है और वे उस तरह कांपने लगते हैं। लेकिन कोषाणु तेज धड़कनेवाले हृदयकी तरह नहीं होते। यह चीज स्वयं कोषाणुओंमें होती है: वे जरासे कंपनसे कांपते हैं और इसपर नियंत्रण करना बहुत कठिन होता है। फिर भी इसे नियंत्रित किया जा सकता है।

अपने-आपको भयमुक्त करना—बहुत-से तरीके

जब हमें डर लगे तो क्या करना चाहिये ?

यह इसपर निर्भर है कि तुम हो कौन, अपने-आपको भयमुक्त करनेके कई तरीके हैं।

अगर तुम्हारा अपनी चैत्य सत्ताके साथ कुछ संबंध है तो तुम्हें उसे तुरंत बुलाना चाहिये और चैत्य प्रकाशमें चीजोंको फिरसे व्यवस्था में रख देना चाहिये। यह सबसे अधिक समर्थ उपाय है।

जब तुम्हारे अंदर यह चैत्य संपर्क न हो फिर भी वह बुद्धिप्रधान सत्ता हो, यानी जब तुम्हारे अंदर तर्क-संगत मनकी स्वतंत्र गति होती हो तो तुम अपने-आपसे बोलने और तर्क करनेके लिये उसका उपयोग कर सकते हो, जैसे कोई बच्चेके साथ बोलता है। उसे समझा सकते हो कि भय अपने-आपमें बुरी चीज है और अगर संकट है भी तो संकटका भयके साथ सामना करना बहुत बड़ी मूर्खता है। अगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सचमुच कोई संकट है तो साहसकी शक्तिसे ही उससे पार पानेकी आशा की जा सकती है। अगर तुम्हारे अंदर जरा-सा भय भी है तो बस बंटाढार। तो इस तरहकी तर्कणासे, तुम्हारा जो भाग डरता है उसे विश्वास दिलाओ कि उसे डरना बंद कर देना चाहिये।

अगर तुम्हारे अंदर श्रद्धा है और तुम भगवान्‌को समर्पित हो तो बहुत ही सरल तरीका है, यह कहना: "वर दे कि तेरी इच्छा पूर्ण हो। मुझे कोई चीज भयभीत नहीं कर सकती क्योंकि 'तू' ही मेरे जीवनका मार्गदर्शन कर रहा है। मैं 'तेरा' हूं और 'तू' ही मेरे जीवनका मार्गदर्शन कर रहा है।" इसकी क्रिया तुरंत होती है। सभी तरीकोंसे यह सबसे अधिक प्रभावकारी है: वस्तुतः यही है। यानी तुम्हें वास्तवमें भगवान्‌के प्रति अर्पित होना चाहिये। अगर तुम्हारे अंदर यह है तो इसकी क्रिया तुरंत होती है; समस्त भय किसी सपनेकी तरह तुरंत गायब हो जाता है। और खराब प्रभाव-वाली सत्ता भी भयके साथ स्वप्नकी तरह विलीन हो जाती है। तुम्हें उसे पूरे वेगसे दुम दबा कर भागते देखना चाहिये।

ऐसे लोग होते हैं जो स्वभावतः बलवान् प्राण होनेके कारण योद्धा होते हैं जो तुरंत अपना सिर ऊंचा उठा कर कहते हैं, "ओ, यह लो, यह रहा शत्रु, हम इसे नीचा दिखाएंगे।" लेकिन इसके लिये आदमीके अंदर ज्ञान और बहुत अधिक प्राणिक बल होना चाहिये। तुम्हें प्राणिक दृष्टिसे भीमकाय होना चाहिये। लेकिन यह हर एकके लिये संभव नहीं है।

तो, बहुत-से अलग-अलग रास्ते हैं। वे सभी अच्छे हैं, यदि तुम उस मार्गका उपयोग करना जानो जो तुम्हारे अनुकूल हैं।

जब मैं जिम्नास्टिक्समें छलांग मारना चाहता हूं तो मुझे डर लगता है, ऐसा क्यों होता है?

आह! मेरे बच्चो, यह निर्भर है...। तुम्हें दो अलग-अलग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीजोंमें फर्क करना चाहिये और उनके साथ बहुत भिन्न रूपसे व्यवहार करना चाहिये।

अगर यह प्राणिक भय है तो तुम्हें उसके साथ तर्क-वितर्क करना चाहिये, फिर भी आगे बढ़ते रहना चाहिये। लेकिन अगर यह भौतिक सहज-वृत्ति है (यह संभव है, यह बहुधा होता है कि कोई भौतिक सहज वृत्ति होती है) उस हालतमें तुम्हें उसकी बात सुननी चाहिये क्योंकि शरीरकी सहज वृत्ति बहुत निश्चयात्मक होती है, यदि उसे विचार या प्राणिक इच्छा विक्षुब्ध न कर दे। अगर शरीर-पर बात छोड़ दी जाय तो वह भली-भांति जानता है कि वह क्या कर सकता और क्या नहीं कर सकता और केवल इतना ही नहीं बल्कि ऐसी चीज भी जिसे तुम कर सकते और बहुधा करते हो, उसके लिये अगर एक दिन तुम्हें एक तरहका प्रतिक्षेप लगे मानों तुम उससे पीछे हट रहे हो तो निश्चित रूपसे तुम्हें वह न करनी चाहिये। यह एक संकेत है कि किसी-न-किसी कारणसे, किसी शुद्ध भौतिक, शरीरकी गड़बड़की वजहसे तुम उस समय वह करने योग्य नहीं हो। तब तुम्हें उसे न करना चाहिये। उस हालतमें यह भय भी नहीं होता, यह कोई ऐसी चीज होती है जो कतराती, पीछे हटती है, दिमागमें कुछ नहीं है। वह इस तरहके विचारके साथ मेल नहीं खाती कि अब क्या होनेवाला है। जब दिमाग काम करने लगता है और तुम कहते हो, "क्या होनेवाला है?" तो तुम्हें उसे बुहार फेंकना चाहिये क्योंकि यह बिल्कुल बेकार होता है। तुम्हें उसे मार भगानेके लिये तर्क और समझदारीके सभी उपायोंका उपयोग करना चाहिये। लेकिन यह शुद्ध रूपसे भौतिक संवेदन है मानों कोई चीज सिकुड़ रही हो, एक तरहकी भौतिक जुगुप्सा। अगर स्वयं शरीर इंकार कर रहा हो तो तुम्हें उसपर जबर्दस्ती कभी न करनी चाहिये, कभी नहीं, क्योंकि जब तुम जबर्दस्ती करते हो तो दुर्घटना होती है, यह एक तरहकी चेतावनी हो सकती है कि कोई दुर्घटना होनेवाली है, कि अगर तुम उस चीजको करोगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो बहुत आगे न बढ़ पाओगे और इस हालतमें तुम्हें यह न करना चाहिये, तुम्हें इसमें आत्म-सम्मान न लाना चाहिये। तुम्हें अनुभव करना चाहिये, "आज मैं अच्छी अवस्थामें नहीं हूं।"

लेकिन अगर यह प्राणिक भय है, उदाहरणके लिये, तुम्हारी कोई प्रतियोगिता या साम्मुख्य है और तुम्हें इस तरहका डर लगे कि "अब क्या होनेवाला है?" तो तुम्हें उसे तुरंत बुहार फेंकना चाहिये, उसका मतलब कुछ नहीं।

*

भयको जीतनेके महान् उपचारोंमेंसे एक है, जिस चीजका डर लगता है उसका बहादुरीसे सामना करना, तुम जिस संकटसे डरते हो उसके साथ तुम्हारा आमना-सामना होता है और तुम डरसे छुटकारा पा जाते हो। डर गायब हो जाता है। योगकी दृष्टि-से, तपस्याकी दृष्टिसे इसी उपचारकी सलाह दी जाती है। जैसा कि मैं पिछली बार तुमसे कह रही थी पुरानी साधनाओंमें, विशेष कर मिस्रमें, गुह्य विद्याका अभ्यास करनेके लिये, मृत्युके भयको पूरी तरह गायब कर देना जरूरी था। हां, तो उन दिनों प्रचलित एक अभ्यास यह था कि नवदीक्षितको शव-पेटीमें लिटा कर कुछ दिनोंके लिये छोड़ दिया जाता था मानों वह मर गया है। स्वभावतः उसे वहां मरनेके लिये नहीं, भूख या श्वासरोधसे मरनेके लिये नहीं छोड़ा जाता था, फिर भी वह उसमें मुरदेकी तरह पड़ा रहता था। कहते हैं कि इससे सारा भय भाग जाता है।

अपने-आपको भयमुक्त करना--कुछ उत्तर

(भय हटानेके तरीके) निम्न प्राण (नाभिसे नीचेके क्षेत्रमें) बल और अचंचलता लाना, इच्छा शक्तिद्वारा और जब भय उठे तो समस्त तंत्रपर निश्चलता आरोपित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना। यह दोनोंमेंसे किसी एक या दोनों तरीकोंसे किया जा सकता है।

*

तुम्हें भय और क्रोध दोनोंको उठा फेंकना चाहिये और माताजी-पर विश्वास रखते हुए अपने मार्गपर शांतिसे चलते चले जाना चाहिये।

*

यह सच है कि तुम जिससे डरते हो उसीके आनेकी प्रवृत्ति तब-तक रहती है जबतक कि तुम सीधा उसकी आंखोंमें न देख सको और अपने संकोचको न जीत सको। तुम्हें भगवान्‌को अपना आधार बनाना सीखना होगा और भयको जीतना होगा। और भागवत सहायतापर निर्भर रहना होगा कि वह तुम्हें सभी चीजों, यहांतक कि अप्रिय और विरोधी वस्तुओंके भी पार लगा देगी। उनमें भी एक शक्ति होती है जो जिज्ञासुके लिये काम करती है और उसे लक्ष्यकी ओर ले जाती है।

*

कार्य करनेवाली शक्तिको बढ़ने दो। यहांतक कि वह मिश्रित चेतनाको पूरी तरह शुद्ध कर दे।

*

तुम भयसे पूरी तरह तभी मुक्त हो सकते हो जब तुम अपने अंदरसे समस्त हिंसाको निकाल बाहर करो।

एक आसान उपाय

एक छोटी-सी तरकीब है जो बहुत-बहुत आसान है। क्योंकि यह साधारणसे, तुम्हारी सामान्य बुद्धिके प्रश्नपर आधारित है...। तुम्हें अपना कुछ अवलोकन करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये और कहना चाहिये कि जब तुम डरते हो तो मानों भय उस चीजको आकर्षित कर रहा है जिससे तुम डरते हो। अगर तुम बीमारीसे डरते हो तो मानों बीमारीको आकर्षित कर रहे हो। अगर तुम दुर्घटनासे डरते हो, मानों तुम दुर्घटनाको आकर्षित करते हो। और अगर तुम जरा अपने अंदर और अपने चारों ओर देखो तो पहचान जाओगे कि यह स्थायी तथ्य है। तो अगर तुम्हारे अंदर कुछ सामान्य बुद्धि है तो तुम कहोगे, "किसी भी चीजसे डरना मूर्खता है, क्योंकि यह ठीक ऐसा है जैसे मैं उस चीजको अपने पास आनेका इशारा कर रहा हूं। अगर मेरा कोई दुश्मन है जो मुझे मार डालना चाहता है तो मैं जा कर उससे यह न कहूंगा, 'देखो तुम जिसे मारना चाहते हो वह मैं हूं।" यह कुछ ऐसी ही बात है। तो चूंकि भय बुरा है, हम उसे नहीं रखेंगे और अगर तुम कहो कि तुम अपनी बुद्धिद्वारा उसे रोकनेमें असमर्थ हो तो इससे यह पता लगता है कि तुम्हारा अपने ऊपर कोई नियंत्रण नहीं है और अपने-आपको नियंत्रित करनेके लिये तुम्हें कुछ प्रयास करना चाहिये। बस यही।

*

गुह्यवादियोंके लिये सबसे अच्छा उपाय यह है कि जैसे ही तुम्हें किसी चीजका डर लगने लगे, भगवान्‌के बारेमें सोचो और उनकी भुजाओं-में या उनके चरणोंसे लिपट जाओ और भीतर, बाहर, चारों ओर जो कुछ भी हो, उसकी जिम्मेदारी पूरी तरह उनपर छोड़ दो और तुरंत भय गायब हो जायगा। गुह्यवादीके लिये यही उपाय है और है भी सबसे सरल। लेकिन हर एकको गुह्यवादी होनेका सौभाग्य प्राप्त नहीं होता।

उचित वृत्तिकी शक्ति

क्या हमेशा अच्छे-से-अच्छा ही होता है? ... यह तो स्पष्ट है कि जो कुछ हुआ है वह होना ही था, अन्यथा नहीं हो सकता था—वैश्व नियतिवादके अनुसार उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना ही था। लेकिन हम यह बात उसके हो चुकनेके बाद ही कह सकते हैं, उससे पहले नहीं। जो हो सकता है उसमें सर्वोत्तम-की समस्या तो वैयक्तिक समस्या है, वह व्यष्टि चाहे कोई राष्ट्र हो या एक मनुष्य; और सब कुछ निर्भर होता है व्यष्टिगत वृत्तिपर। अगर जो परिस्थितियां आने ही वाली हैं उनके आगे तुम यथासंभव उच्चतम वृत्ति धारण कर सको—यानी, तुम अपनी चेतनाको, अपनी पहुंचके अंदर उच्चतम चेतनाके संपर्कमें रख सको तो तुम पूरी तरहसे निश्चित हो सकते हो कि उस स्थितिमें तुम्हारे लिये अच्छे-से-अच्छा ही हो सकता है। लेकिन जैसे ही तुम उस चेतनामें से निचली स्थितिमें गिरोगे, फिर निश्चय ही सर्वोत्तम चीज नहीं होगी जिसका सरल-सा कारण यह है कि तुम अपनी सर्वोत्तम चेतनामें नहीं हो। मैं तो यहां तक कह सकती हूं कि हर एकके तात्कालिक व्यष्टिगत प्रभाव-क्षेत्रमें उचित वृत्तिकी केवल इतनी ही शक्ति नहीं होती कि हर परिस्थितिको लाभप्रद बना दे बल्कि वह स्वयं परिस्थितिको ही बदल सकती है। उदाहरणके लिये जब कोई तुम्हारी हत्या करने आता है, अगर तुम साधारण चेतनामें रहो और डर जाओ, अपना होश खो दो तो अधिक संभव यह है कि वह जो करनेके लिये आया था उसे करनेमें सफल हो जाय, लेकिन अगर तुम जरा ऊंचे उठ सको और भले डरसे भरे रहो फिर भी भागवत सहायताको पुकारो तो हो सकता है कि वह तुम्हें चूक जाय या तुम्हें जरा-सी चोट पहुंचा पाये। लेकिन अगर तुम उचित वृत्ति रखो और अपने चारों ओर दिव्य उपस्थितिकी पूरी चेतना रखो तो वह तुम्हारे विरुद्ध एक उंगली भी न उठा सकेगा।

यह सत्य रूपांतरकी समस्त समस्याकी ठीक-ठीक चाबी है, हमेशा भागवत उपस्थितिके स्पर्शमें रहो, उसे नीचे लानेकी कोशिश करो—और हमेशा अच्छे-से-अच्छा होगा। निश्चय ही सारा संसार तुरंत नहीं बदल जायगा लेकिन वह जितनी तेजीसे संभव है, आगे बढ़ेगा। यह न भूलो कि यह केवल तभी होगा जब तुम योगके सीधे मार्गपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलो, तब नहीं जब तुम रास्तेसे हिल जाओ, रास्ता भूलकर मन-मौजी ढंगसे या असहाय हो कर अनजाने जंगलमें भटकते रहो।

अगर तुममेंसे हर एक अपना अधिक-से-अधिक करे तो उचित सहयोग होगा और परिणाम उतनी ही जल्दी आयेगा। मैंने उचित वृत्तिके अनगिनत उदाहरण देखे हैं। मैंने देखा है एक आदमीके उचित वृत्ति रखनेके कारण जनसमूह विध्वंसोंसे बच गये। लेकिन यह ऐसी वृत्ति होनी चाहिये जो शरीरको अपनी सामान्य प्रतिक्रियाओं-में छोड़कर कहीं बहुत ऊपर रहती हो। अगर तुम इस तरह ऊपर रहो और कहो, "भगवान्‌की इच्छा पूरी हो" तो हो सकता है कि तुम मारे जाओ क्योंकि हो सकता है कि तुम्हारा शरीर बिल्कुल अदिव्य हो, भयसे कांपता रहे! असली चीज है स्वयं शरीरमें सच्ची चेतनाको धारण करना, जरा भी न डरना और दिव्य शांतिसे भरा होना। तब कोई खतरा नहीं रहता। केवल मनुष्योंके आक्रमणको ही दूर नहीं रखा जा सकता बल्कि पशुओं और तत्त्वोंपर भी असर डाला जा सकता है। मैं तुम्हें एक छोटा-सा उदाहरण दे सकती हूं। तुम्हें उस बड़े तूफानकी रात याद है जब भयंकर गर्जनके साथ जोरकी वर्षा भी हो रही थी चारों ओर। मैंने सोचा मैं श्रीअरविंदके कमरेमें जाकर खिड़कियां बंद करनेमें उनकी मदद करूंगी। मैंने उनका दरवाजा खोला और देखा कि वे चुपचाप अपनी मेजपर लिख रहे थे। कमरेमें इतनी ठोस शांति थी कि कोई सपनेमें भी न सोच सकता था कि बाहर तूफान चल रहा था। सभी खिड़कियां पूरी तरह खुली थीं लेकिन वर्षाकी एक बूंद भी अंदर न आ रही थी।

उसके बाद वह किसी चीजसे जुगुप्सा नहीं करता

...जो मनुष्य अपने-आपको सभी प्राणियोंमें देखता है, कभी घृणा नहीं कर सकता, वह किसीसे जुगुप्सा नहीं करता, उसमें न तो प्रतिक्षेप होता है न भय 'ततो न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विजुगुप्सते' (ईशोपनिषद् मंत्र ६)। वह रहा कोढ़ी जिसे सब लोगोंने त्याग रखा है, क्या मैं भी उससे कन्नी कटाऊंगा? मैं, जिसे मालूम है कि इस विचित्र छद्मवेशमें ब्रह्म मुस्कराती आंखोंसे झांक रहा है? यह शत्रु जो मेरे हृदयमें तलवार घुसेड़ देनेके लिये आ रहा है, मैं उसकी तेज डरावनी तलवार, घृणाकी आंखों और चढ़ी हुई त्यौरियोंके पीछे नजर डालता हूं तो अपनी ही आत्माका मुखौटा देखता हूं। इसके बाद मैं न तो तलवारसे डरूंगा और न उसके धारण करनेवालेसे घृणा करूंगा। हे मेरी अपनी आत्मा, जिसे तू मूर्खतावश अपना शत्रु कहती है, तू मेरी शत्रु कैसे हो सकती है जब-तक कि मैं स्वयं ऐसा न चाहूं। मित्र और शत्रु उस मनकी रचनाएं हैं जो असंख्य तमाशे करनेवाला जादूगर, महान् स्वप्न-द्रष्टा और कलाकार है। और अगर मैं तुझे अपने शत्रुके रूपमें न देखना चाहूं तो तू स्वप्न और छायासे बढ़कर शत्रु नहीं हो सकता, जैसे वास्तवमें तेरी चमकती तलवार एक स्वप्न मात्र है और तेरी चढ़ी हुई भृकुटि छाया मात्र है। लेकिन तू मुझे अपनी तलवारसे चीर कर रख देगा, मुझे मार डालेगा, गोलियोंसे छेद देगा, अग्निसे यंत्रणा देगा, तोपके मुंहसे उड़ा देगा? तू मुझे नहीं छेद सकता। मुझे मारा नहीं जा सकता, छेदा नहीं जा सकता, भेदा नहीं जा सकता, जलाया नहीं जा सकता, हिलाया नहीं जा सकता। तू बस मेरे इस वेशको फाड़ सकता है। मैं जिस अन्नमयकोष या बहुविध जीव-द्रव्यको धारण किये हूं उसे फाड़ सकता है—मैं वही हूं जो पहले था। मैं तेरे ऊपर नाराज भी न होऊंगा क्योंकि कौन ऐसा है जो किसी छोटे बच्चेपर गुस्सा करके अपने-आपको इसलिये तकलीफ देगा कि बच्चेने खेलमें या बचकाने गुस्सेमें उसका कपड़ा फाड़ दिया है? शायद मैं कपड़ेको महत्त्व देता था और उससे इतनी जल्दी जुदा न होता, तो मैं उसे बचानेकी कोशिश करूंगा। अगर हो सका तो मैं गुस्सेके बिना तुझे दंड भी दूंगा ताकि तू और कपड़े न फाड़े, लेकिन अगर मैं न कर सकूं तो आखिर यह एक कपड़ा ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो था; जल्दी ही दुकानसे दूसरा लाया जा सकता है; क्या मैंने पहले ही खरीदनेके लिये दाम नहीं दे दिये ? ऐ मेरे न्यायाधीश ! जो यह निर्णय करनेके लिये बैठा है कि मुझे सूलीपर चढ़ा दिया जाय जबतक कि मैं मर न जाऊं क्योंकि मैंने अचानक हजारों भूखोंको रोटी देनेके लिये तेरा कानून तोड़ा है, अचानक अपने देशवासियोंकी सहायता की है जिन्हें तू अपने मजेके लिये गुलाम बनाकर रखना चाहता है। तू मुझे सूलीपर चढ़ा देगा ? जब तू स्वर्गमें सूर्यको नहीं हिला सकता या आकाशको कपड़ेकी तरह लपेट नहीं सकता तो क्या तुझे मुझे फांसीपर लटकानेकी शक्ति दी जायगी ? वह कौन या क्या है जो तेरे ख्यालमें फांसी लगनेसे मर जायगा ? सूक्ष्म जंतुओंका एक गट्ठर, उससे अधिक कुछ नहीं। बाहरी तू और मैं केवल रंगमंचके मुखौटे हैं, उनके पीछे 'एक' है जो न मारता है, न मरता है। हे न्यायाधीश कहानेवाले मुखौटे, तू अपनी भूमिका अदा कर, मैं अपनी कर चुका। हे प्राचीन योगके पुत्र, अपनी आत्माको सभी चीजोंमें अनुभव कर। किसी चीजसे न डर, किसी चीजसे घृणा न कर, किसी चीजसे भयभीत न हो, किसीसे द्वेष न कर। अपनी भूमिका बल और साहसके साथ पूरी कर। इस तरह तू वह होगा जो तू सचमुच है। तेरी विजयमें भगवान्, मेरी पराजयमें भगवान्। तेरी मृत्यु और तेरे उत्पीड़नमें भगवान्,—भगवान् जो पराजित नहीं हो सकते, जो मर नहीं सकते। क्या भगवान् किसीसे डरेंगे ? क्या वे निराश होंगे ? क्या वे कांपे और लड़खड़ाएंगे ?? नहीं, तेरे शरीर और मस्तिष्कके जंतु कांपते और लड़खड़ाते हैं। तू उनके भीतर बैठा बस शांत आंखोंसे उनकी पीड़ा और आतंकको देखता रहता है। वे तो केवल छाया हैं जो अपने वास्तविक होनेके स्वप्न सेते हैं। सभी प्राणियोंमें आत्माका अनुभव कर, सभी प्राणियोंको आत्मामें अनुभव कर तो अंतमें आतंक तेरे आतंकसे भाग जायगा, पीड़ा तुझे छुएगी भी नहीं ताकि कहीं उसे ही तेरे स्पर्शसे यातना न होने लगे। मृत्यु तेरे नजदीक आनेका साहस न करेगी ताकि कहीं अपने-आप मारी न जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग और भय

अगर तुम योग करना चाहते हो तो तुम्हें भयसे पिंड छुड़ा लेना चाहिये। योग और भय साथ नहीं रह सकते।

*

यह मानना भूल है कि डरने या दुखी रहनेसे तुम प्रगति कर सकते हो। भय एक ऐसा भाव है जिसे हमेशा अस्वीकार करना चाहिये क्योंकि जिससे तुम डरते हो उस चीजके आनेकी बहुत संभावना रहती है। भय भयके विषयको आकर्षित करता है। दुःख बलको कम कर देता है और दुःखका एक और कारण बढ़ा देता है।

तुम अचंचल, सुखी और प्रसन्न हो सकते हो हल्के फुल्के और छिछले रूपमें यह सब हुए बिना भी—यह जरूरी नहीं है कि सुख प्राणिक प्रतिक्रिया लाये। तुम्हें जो कुछ करना है वह बस इतना ही कि सावधान और जाग्रत् रहो ताकि तुम गलत गतिविधियोंको या पुराने भावों, अंधकार, अस्त-व्यस्तता आदिको स्वीकृति न दे दो। अगर तुम जाग्रत् रहो तो तुम्हें अवलंब देनेवाली शक्तिके बढ़नेसे आत्म-संयम देनेवाली शक्ति आयेगी, वह शक्ति आयेगी जो जब गलत मोड़ और गलत प्रतिक्रियाको आते हुए देखे तो अस्वीकार कर कर दे, भय और दुःख तुम्हें यह न दे सकेंगे। वह आयेगी केवल इस जाग्रति और उस शक्तिकी ओर खुलनेसे जो सहारा देती और पथ-प्रदर्शन करती है।

*

ऐसी भौतिक गतिविधियां हैं जो योगके दबावका प्रभाव होती हैं, जो कभी-कभी ऐसे अकारण भय उत्पन्न कर देती हैं जिन्हें यदि अस्वीकार न किया जाय तो हानिकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सकती हैं। उदाहरणके लिये सिरपर एक दबाव-सा मालूम होता है जिसके बारेमें पूछा गया है, जिसका अनुभव बहुत-से लोग करते हैं, विशेष रूपसे पहली अवस्थाओंमें, जब अभीतक बंद किसी चीज-को खुलना होता है। यह एक ऐसी असुविधा होती है जिसका परिणाम कुछ नहीं होता और जिसे आसानीसे दूर किया जा सकता है, बशर्ते कि तुम जानो कि यह शक्तियोंके ऐसे दबावका परिणाम है जिनकी ओर तुम खुल रहे हो, जब वे परिणाम लाने, रूपांतरको जल्दी लानेके लिये जोरसे काम करती हैं। इसे शांतिसे लिया जाय तो यह एक प्रिय संवेदनमें बदल सकता है। लेकिन अगर तुम डर जाओ तो निश्चय ही तुम्हारे सिरमें जोरका दर्द हो जायगा, यहां तक कि तुम्हें बुखार भी आ सकता है। बेचैनी प्रकृतिमें किसी प्रतिरोधके कारण हो सकती है। अगर तुम प्रतिरोधको छोड़ना जानो तो तुरंत बेचैनीसे मुक्त हो सकते हो लेकिन तुम डर जाओ तो बेचैनी बहुत अधिक अप्रिय चीजोंमें बदल सकती है। अनुभव चाहे जैसा क्यों न हो तुम्हें भयको स्थान न देना चाहिये। तुम्हें निष्कंप विश्वास रखना चाहिये कि जो कुछ होगा होने योग्य वही है। एक बार तुमने मार्ग चुन लिया तो तुम्हें बहादुरीके साथ अपने चुनावके सभी परिणामोंको स्वीकार करना होगा। लेकिन चुनो और पीछे हट जाओ, फिरसे चुनो और फिर पीछे हट जाओ, हमेशा डगमगाते, हमेशा संदेह करते, हमेशा डरते रहे तो तुम अपनी सत्तामें असा-मंजस्य पैदा कर लेते हो जो न केवल तुम्हारी प्रगतिमें बाधा देता है बल्कि मन और प्राणिक सत्तामें सब तरहकी गड़बड़ और शरीरमें बेचैनी और बीमारीका मूल हो सकता है।

*

तुम्हें डर लगता है क्योंकि जब तुम ध्यान करनेकी कोशिश करते हो तो तुम्हें श्वास रुकता-सा मालूम होता है। अगर तुम भयोंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतने भरे हुए हो तो इस मार्गपर पांव मत रखो। मान लो बुरी-से-बुरी अवस्था आ जाय तो क्या होगा? तुम मर सकते हो—और फिर? अगर तुम मर जाओ तो कौन-सा बड़ा नुकसान हो जायगा? हमारा योग भीरुओंके लिये नहीं है, अगर तुम्हारे अंदर हिम्मत नहीं है तो इसे छोड़ दो—तुम्हारे भय विपदा ले आयेंगे।

*

जीवनमें अवचेतनाका बहुत अधिक भाग होता है और वह सचेतन भागोंकी अपेक्षा सैंकड़ोंगुना जोरसे काम करता है। साधारण मानव अवस्था शंका कुशंकाके भयसे भरी होती है। अगर तुम दस मिनट-के लिये अपने मनका अवलोकन करो तो तुम देखोगे कि दसमेंसे नौ मिनट वह भयसे भरा होता है। वह अपने अंदर बहुत-सी चीजों-का, छोटी, बड़ी, नजदीक और दूरकी, देखी, अनदेखी चीजोंका भय लिये रहता है और यद्यपि तुम सचेतन रूपसे इसे नहीं देखते पर वह हमेशा होता है। समस्त भयसे मुक्ति केवल स्थिर प्रयास और अनुशासनसे ही आ सकती है।

और अगर तुम अनुशासन और प्रयासद्वारा अपने मनको भय मुक्त और प्राणको संदेह और भयसे छुड़ा भी लो तो भी शरीरको विश्वास दिलाना ज्यादा कठिन है, लेकिन यह भी करना चाहिये। एक बार तुम योग-मार्गमें प्रवेश करो तो तुम्हें सब तरहके भयसे पिंड छुड़ाना होगा—अपने मनके भय, प्राणके भय, शरीरके भय जो कोषाणुओंमें बसे हैं। योग-मार्गपर तुम्हें जो चोटें लगती हैं, जो प्रहार होते हैं उनका एक उपयोग है तुम्हें समस्त भयसे मुक्त करना। तुम्हारे भयके कारण बार-बार तुमपर लपक पड़ते हैं जबतक कि तुम उनके आगे मुक्त और तटस्थ, अस्पृष्ट और शुद्ध होकर न खड़े हो सको। किसीको समुद्रका डर लगता है, किसीको आगका। दूसरा आदमी देखेगा कि उसे एकके-बाद-एक अग्निकांडोंका सामना करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ता है यहांतक कि वह इतना प्रशिक्षित हो जाय कि उसके शरीर-का एक कोषाणु तक न कांपे। तुम्हें जिस चीजकी दहशत होती है वह बार-बार तबतक आती रहेगी जबतक कि दहशत चली न जाय। जो रूपांतर चाहता है और इस मार्गका अनुयायी है उसे पूरा-पूरा भयहीन होना चाहिये, वह अपनी प्रकृतिके किसी भी भागमें किसी चीजसे प्रभावित न हो, कांपे नहीं।

*

अपने भयोंपर विजय पानेका अर्थ है कि सत्ताका एक भाग है जो औरोंसे ज्यादा मजबूत है, जिसे डर नहीं लगता और जो अपनी निर्भीकता उस भागपर आरोपित करता है जो डरता है।

मार्गपर चलना

...भय एक अशुद्धि है, सबसे बड़ी अशुद्धियोंमेंसे एक, उनमेंसे एक है जो सीधी भागवत विरोधी शक्तियोंसे आती हैं, जो धरतीपर दिव्य कार्यको नष्ट कर देना चाहती हैं; और जो सचमुच योग करना चाहते हैं उनका पहला कर्तव्य यह है कि अपनी चेतनामेंसे भयको निकाल बाहर करें, अपनी पूरी शक्तिके साथ, अपनी पूरी सचाईके साथ, वे जितनी सहनशक्ति रखते हैं उसके साथ, भयकी छायाको भी न रहने दें। मार्गपर चलनेके लिये तुम्हें निर्भीक होना चाहिये और उस छोटी, तुच्छ, कमजोर, अपनी ओर ही सिकुड़ने वाली चीज, भयमें कभी रस न लो।

अदम्य साहस, पूर्ण सचाई, निष्कपट आत्मदान ताकि तुम सौदे-बाजी न करो, पानेके विचारसे न दो, रक्षा पानेके विचारसे विश्वास न करो, ऐसी श्रद्धा न हो जो प्रमाण मांगती है—यह मार्गपर चलनेके लिये अनिवार्य है और केवल यही चीज है जो सचमुच सभी संकटोंसे तुम्हारी रक्षा कर सकती है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर चीजका सतत भागवत उपस्थितिकी चेतनाके साथ सामना करो, भगवान्‌के प्रति पूर्ण आत्म-दान, और सारी सत्ता इस इच्छामें संयुक्त हो, तब तुम जीवनमें आगे बढ़ सकते हो, किसी भी चीजका सामना कर सकते हो।

*

...चाहे कोई क्षेत्र हो, चाहे जो संकट हो, मनोवृत्ति एक ही रहे--अचंचल और विश्वस्त।

बीमारी और डर

क्या आदमी भयके कारण बीमार हो सकता है?

हां, मैं एक आदमीको जानती थी जो भयसे इतना भरा था कि उसे हैजा हो गया। उसके पड़ोसके मकानमें हैजा था। उसे बहुत डर लगता कि कहीं उसे हैजा न हो जाय और बिना किसी कारणके, केवल डरके कारण उसे हैजा हो गया। और यह बहुत आम बात है। महामारीके अधिकतर रोगियोंके बारेमें यही बात होती है। डरके कारण ही दरवाजा खुल जाता है और तुम बीमार हो जाते हो। जिन्हें डर नहीं होता वे खुलकर घूम-फिर सकते हैं और उन्हें कुछ नहीं होता। लेकिन फिर भी... हो सकता है कि तुम्हारे मनमें भय न हो, तुम्हारे प्राणमें भी भय न हो लेकिन किसका शरीर है जिसमें भय नहीं होता? ... बहुत कम।

शरीरको डरसे मुक्त करनेके लिये कड़े अनुशासनकी जरूरत होती है। स्वयं कोषाणु कांपते हैं, केवल अनुशासनद्वारा, योगद्वारा इस डरको जीता जा सकता है। लेकिन यह तथ्य है कि डरके मारे तुम कोई भी बीमारी पकड़ सकते हो, यहांतक कि दुर्घटनाको भी बुला सकते हो।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक और प्राणिक रूपसे अपने-आपको मुक्त कर लेनेके बाद भी शरीरको विश्वास दिलाना क्यों इतना कठिन होता है?

क्योंकि अधिकतर मनुष्योंमें शरीर अपनी प्रेरणाएं अवचेतनसे पाता है, वह अवचेतनके प्रभावमें होता है। सक्रिय चेतनासे भगाये गये सभी भय वहां जाकर शरण लेते हैं और स्वभावतः उन्हें अवचेतनसे खदेड़ना और जड़से उखाड़ फेंकना पड़ेगा।

*

सामान्य दृष्टिकोणसे, अधिकतर लोगोंमें साधारणतः भय होता है —यह मानसिक भय हो सकता है, प्राणिक भय हो सकता है लेकिन जो प्रायः हमेशा भौतिक भय होता है, कोषाणुओंमें भय होता है। भय ही सब प्रकारके संक्रमणोंके लिये दरवाजा खोल देता है। मानसिक भय—ऐसे सब जिन्हें अपने ऊपर कुछ संयम है या जिनमें आत्म-गौरव है वे इसे निकाल सकते हैं। प्राणिक भय अधिक सूक्ष्म होता है और अधिक नियंत्रणकी मांग करता है लेकिन शरीर-का भय—इसे जीतनेके लिये तो पूरे पक्के योगकी जरूरत है, शरीर-के कोषाणु हर उस चीजसे डरते हैं जो अप्रिय, कष्टकर हो। जैसे ही कोई असुविधा हो, चाहे वह नगण्य-सी क्यों न हो, शरीरके कोषाणु चिंतित हो उठते हैं, वे असुविधामें पड़ना पसंद नहीं करते। तब उसे जीतनेके लिये सचेतन इच्छा-शक्तिका नियंत्रण जरूरी है। सामान्यतः इस तरहका डर बीमारीके लिये दरवाजा खोल देता है। मैं पहले दो प्रकारके भयोंकी बात नहीं कर रही जिनके बारेमें मैं कह चुकी हूं कि जो शब्दके उच्चतम, उदात्त अर्थोंमें मनुष्य होना चाहता है उसे उन भयोंको जीतना ही चाहिये क्योंकि वह भीरुता है। लेकिन भौतिक भयको जीतना ज्यादा कठिन है। उसके बिना अधिक-से-अधिक उग्र आक्रमणोंको भी रोका जा सकता है। अगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें शरीरपर जरा भी नियंत्रण प्राप्त है तो उसके प्रभावको कम किया जा सकता है। लेकिन यह तो रोग-मुक्ति न हुई। शरीरके कोषाणुओंका इस तरह जड़-भौतिक भयसे कांपना सभी बीमारियोंको बढ़ा देता है।

कुछ लोग सहज रूपसे भयमुक्त होते हैं—अपने शरीरमें भी। उनमें इतना काफी प्राणिक संतुलन होता है कि उन्हें डर न लगे, वे भयभीत न हों और उनके अपने भौतिक जीवनकी लयमें स्वाभाविक सामंजस्य होता है जो सहज रूपसे रोगको कम-से-कम कर देता है। दूसरी ओर ऐसे लोग होते हैं जिनमें चीजें हमेशा जितनी अधिक बुरी हो सकती हैं उतनी हो जाती हैं, कभी-कभी तो महाविपदाकी स्थितितक पहुंच जाती हैं। यह पूरा एक परिसर होता है जिसे आसानीसे देखा जा सकता है। यह उनके अंदर प्राणकी सुखद लय-पर निर्भर होता है जो या तो इतनी सामंजस्यपूर्ण होती है कि बीमारीके सभी बाहरी आक्रमणोंका सामना कर सके या होती ही नहीं या काफी सामर्थ्यवाली नहीं होती और उसका स्थान ले लेता है भयसे कांपना, वह सहज चिंता जो जरासे भी अप्रिय संपर्कको दुखद और हानिकर चीजमें बदल देती है। यह पूरी एक श्रेणी होती है जिसमें कुछ ऐसे होते हैं जो बुरे-से-बुरे संक्रमण और महा-मारीमेंसे भी बिना प्रभावित हुए गुजर सकते हैं और दूसरे ऐसे जो जरा-सा बहाना मिलते ही बीमार पड़ जाते हैं। अतः स्वाभाविक रूपसे यह बात हर व्यक्तिके गठनपर निर्भर होती है और जैसे ही कोई प्रगति करनेके लिये प्रयास करता है, स्वभावतः यह इसपर निर्भर है कि व्यक्तिने अपने ऊपर कितना संयम सिद्ध कर लिया, और यह चीज उस क्षण तक चलती है जब मनुष्य उच्चतम इच्छा-शक्तिका विनीत यंत्र बन जाय और उससे सभी आक्रमणोंके प्रति सामान्य प्रतिरोध पा ले।

लेकिन जब तुम भयको दूर कर सको तो तुम प्रायः सुरक्षित होते हो। उदाहरणके लिये महामारी या तथाकथित महामारीको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लो जिनका आजकल प्रकोप रहता है—सौमेंसे निन्यानवे बार वे भयसे आती हैं। एक भयसे जो मानसिक भय भी बन जाता है, बहुत ही घिनौने प्रकारका भय जिसे अखबारोंके लेख और व्यर्थकी बातें बढ़ाती हैं।

*

मधुर मां, जब हम किसी रोगको आते देखें तो उसे कैसे रोक सकते हैं?

ओह! सबसे पहले तो यह कि तुम्हें उसकी चाह न होनी चाहिये, तुम्हारे शरीरमें किसी चीजको उसकी चाह न हो, तुम्हारे अंदर बीमार न होनेके लिये प्रबल इच्छा-शक्ति होनी चाहिये। यह पहली शर्त है!

दूसरी शर्त है ज्योतिका आह्वान करना, संतुलनकी ज्योति, शांति, स्थिरता और सामंजस्यकी ज्योति और उसे शरीरके सभी कोषाणुओंमें भेजो और उन्हें आदेश दो कि वे डरें नहीं, क्योंकि यह एक और शर्त है।

पहले तो बीमार होना न चाहो, फिर रोगसे डरो नहीं। तुम्हें न तो उसे आकर्षित करना चाहिये न उससे कांपना चाहिये। तुम्हें बीमारीकी चाह बिल्कुल न होनी चाहिये लेकिन यह न चाहना भयके कारण न होना चाहिये। तुम्हें डरना न चाहिये। तुम्हारे अंदर निश्चल निश्चिति होनी चाहिये और भागवत कृपाकी शक्तिपर पूर्ण विश्वास होना चाहिये कि वह हर चीजसे तुम्हारी रक्षा करेगी और तब किसी और चीजके बारेमें सोचो, इसके बारेमें जरा भी चिंतित न रहो। ये दो बातें कर लेनेपर, अपनी पूरी सामर्थ्यके साथ बीमारीको अस्वीकार करके और अपने अंदर ऐसे विश्वासको भर कर जो शरीरके कोषाणुओंके भयको पूरी तरह निकाल दें और फिर अपने-आपको किसी और चीजमें व्यस्त करके, बीमारीके बारेमें बिल्कुल न सोचो, यह भूल कर कि उसका अस्तित्व भी है... अगर तुम इतना करना जानो, तुम ऐसे लोगोंके संपर्कमें भी रह सकते हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन्हें संक्रामक रोग हो, फिर भी रोग तुम्हें न छुएगा। लेकिन तुम्हें जानना चाहिये कि यह कैसे किया जाय।

बहुत-से लोग कहते हैं, "हां लो, मेरे अंदर डर नहीं है।" उनके मनमें कोई डर नहीं होता, उनका मन नहीं डरता, वह मजबूत होता है पर शरीर कांपता है और उसे इसका पता नहीं होता क्योंकि कंपन शरीरके कोषाणुओंमें चलता रहता है। शरीर भयंकर चिंतासे कांपता रहता है और यही बीमारीको आकर्षित करती है। तुम्हें वहींपर शक्ति और पूर्ण शांतिकी स्थिरता और भागवत कृपामें संपूर्ण विश्वास रखना चाहिये। और फिर कभी-कभी ऐसी ही शक्ति-द्वारा तुम अपने विचारसे ऐसे सब सुझावोंको खदेड़नेके लिये बाधित होते हो कि आखिर भौतिक जगत् बीमारियोंसे भरा है और ये संक्रामक है और चूंकि मेरा संपर्क किसी ऐसे व्यक्तिसे हुआ था जो बीमार था इसलिये निश्चय ही यह बीमारी मुझे लग जायगी और तब भीतरी उपाय इतने मजबूत नहीं होते कि शरीरपर क्रिया कर सकें, और सब प्रकारकी मूर्खताएं, जिनसे हवा भरी है, ये सामूहिक सुझाव होते हैं जिन्हें हर आदमी एकसे दूसरेतक पहुंचाता रहता है और अगर दो-तीन डाक्टर भी हों तो चीज भयंकर हो जाती है। (हंसी)

*

अगर तुम बीमार हो तो तुम्हारी बीमारीकी इतनी चिंता और भयके साथ देख-रेख की जाती है, तुम पर इतना ज्यादा ध्यान दिया जाता है कि तुम उस 'एक'से सहायता लेना भूल ही जाते हो जो सहायता दे सकता है और तुम कुचक्रमें जा गिरते और अपने रोगमें अस्वस्थ रस लेने लगते हो।

*

जब शारीरिक गड़बड़ होती है तो तुम्हें उससे डरना न चाहिये, तुम्हें उससे भागना न चाहिये, साहस, निश्चलता, शांति, विश्वास और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस निश्चितिके साथ उसका सामना करना चाहिये कि रोग मिथ्यात्व है और यह कि अगर हम उससे पूरी तरह विमुख हो जाएं, पूरे विश्वासके साथ, पूरी शांतिके साथ भागवत कृपाकी ओर मुड़ें तो वह इन कोषाणुओंमें बस जायगी, जैसे वह अपने-आपको सत्ताकी गहराइयों-में स्थापित कर लेती है और स्वयं कोषाणु शाश्वत सत्य और आनंद-में भाग लेंगे।

*

कुछ समयसे मैं सचमुच अपने पैरोंके त्वचा-रोगसे चिंतित हो उठा हूं। माताजी, कृपया इस रोगको मेरे शरीरसे और भयको मनसे निकाल फेंकिये।

सच्चा रोग भय है। भयको निकाल फेंको और रोग चला जायगा। मेरी सहायता तुम्हारे साथ है।

*

मेरी धारणा है कि अधिक प्रोटीन और स्टार्चवाले भोजन खाजके लिये हानिकर होते हैं।

भोजनके शरीरपर प्रभावमें ९० प्रतिशत तो विचारकी शक्ति होती है। अगर तुम विश्वासके साथ डाक्टर 'क' का इलाज करते जाओ तो तुम ठीक हो जाओगे।

*

रही बात कैंसरकी, पहली चीज जो तुम्हें करनी चाहिये वह है डरको खदेड़ दो।

*

डर छिपी हुई रजामन्दी है। जब तुम किसी चीजसे डरते हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो इसका अर्थ यह है कि तुम उसकी संभावनाको स्वीकार करते हो और इस तरह उसके हाथ मजबूत करते हो। यह कहा जा सकता है कि यह अवचेतन स्वीकृति है।

*

तुम्हें डरना न चाहिये। तुम्हारी अधिकतर तकलीफें डरसे आती हैं। वस्तुतः नब्बे प्रतिशत बीमारियां शरीरके अवचेतन भयका परिणाम होती हैं। शरीरकी सामान्य चेतनामें जरा-सी भी शारीरिक गड़बड़के परिणामके बारेमें न्यूनाधिक रूपसे छिपी चिंता रहती है। उसका अनुवाद भविष्यके बारेमें संदेहके इन शब्दोंमें किया जा सकता है: 'अब क्या होगा?' इस चिंताको रोकना चाहिये। वास्तवमें यह चिंता भगवान्‌की कृपापर अविश्वास है, इस बातका सुस्पष्ट प्रमाण है कि उत्सर्ग अभी पूरा पक्का और संपूर्ण नहीं हुआ है।

हर बार अवचेतन भयको जीतनेका एक व्यावहारिक उपाय यह है कि जब उसकी कोई चीज सतहपर आये तो सत्ताका ज्यादा प्रबुद्ध भाग शरीरपर भागवत कृपाकी निश्चितिपर पूर्ण विश्वासकी आवश्यकताकी छाप डाले, यह विश्वास दिलाये कि भागवत कृपा हमारे अंदर और दूसरोंमें भी हमेशा अच्छे-से-अच्छेके लिये कार्य करती है, और तुम्हारे अंदर भागवत इच्छाके प्रति पूर्ण और अबाध समर्पणके लिये निश्चय हो।

शरीरको यह जानना और विश्वास करना चाहिये कि उसका सारतत्त्व दिव्य है और अगर भगवान्‌के कार्यमें कोई बाधा न डाली जाय तो कोई चीज हमें हानि नहीं पहुंचा सकती। इस प्रक्रियाको तबतक निरंतर दोहराना चाहिये जबतक कि भयकी पुनरावृत्ति बंद न हो जाय। और तब अगर रोग प्रकट होनेमें सफल भी हो जाय तो उसका बल और उसकी अवधि काफी कम हो जाएंगी जबतक कि वह निश्चित रूपसे जीत न लिया जाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षामें भय

तुम अपने और अपने बच्चेके बीच भयको कभी न आने दो। भय शिक्षाका जहरीला तरीका है। वह बिना अपवादके धोखे और झूठको जन्म देता है। केवल एक विवेकपूर्ण प्रेम जो दृढ़ होनेके साथ मृदु हो और पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान विश्वासके ऐसे बंधन बना देगा जो अपने बच्चेको प्रभावशाली रूपसे प्रशिक्षित करनेके लिये अनिवार्य है।

*

एक और चीज है जो बच्चेको उसकी छोटी उम्रसे ही सिखानी चाहिये वह है सफाईमें मजा लेना और स्वास्थ्यकर आदतें डालना। लेकिन बच्चेसे इस सफाईको प्राप्त करने तथा स्वास्थ्यके नियमोंका आदर करनेके लिये तुम्हें इस बातका खास ख्याल रखना चाहिये कि उसमें बीमारीका भय न पैदा कर दो। भय शिक्षाका सबसे बुरा साधन है और निश्चित रूपसे उस चीजको आकर्षित करता है जिससे तुम डरते हो।

*

बच्चेको इसलिये शरारत करना बन्द कर देना चाहिये क्योंकि उसे शरारत करते लज्जा आती है इसलिये नहीं कि वह दंडसे डरता है।[1]

पहली स्थितिमें वह सच्ची प्रगति करता है।

दूसरी स्थितिमें वह मानव चेतनामें एक कदम नीचे जा गिरता है क्योंकि भय चेतनाका नीचे गिरना है।

---

[1] बादमें माताजीने कहा था: "यह पहला कदम है। जब वह यहांतक पहुंच पाय तो वह आगे प्रगति कर सकता है और अच्छा बननेका आनंद सीख सकता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सागर में बूंदों की भांति हम सब एक दूसरे के साथ घुल मिलकर रहें। अगर बूंदों को सागर से अलग कर दें तो वे सूख जाएगीं, उनका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। लेकिन जब वे सागर में समा जाती हैं तो बड़े से बड़े जहाजों को भी तैरा कर किनारे तक ले जाती हैं। हम पर भी तो यही बात लागू होती है। आखिरकार हम भी तो मानव-समुद्र हैं।'

सागर में बूंदों की भांति
हम सब घुल मिल कर रहें।

davp 87/339

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

SRI AUROBINDO

Assam Tea Warehousing Corporation

Registered and approved Ware House

at Gauhati (Assam)

H. O. 8, Camac Street, Room No. 7,

Shantiniketan Building,

CALCUTTA - 700 017

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

दिसंबर १९८७ वर्ष १८, अंक ५, पूर्णांक २०९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश		१
'संपादकीय' : एक पाठशाला	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
भय—कारण और उपचार		६
'नारी स्तम्भ' : 'अवेकनिंग'से		३३
'ऋषिवर बोले' : अहंकार		३४
रामकृष्ण वचनामृत		३८
सोसायटी समाचार		आ० ३

वार्षिक शुल्क १०.०० आजीवन १७५.००

कृपया चेक न भेजें, उसमें बहुत असुविधा होती है। ड्राफ्ट, धनादेश या पोस्टल आर्डर भेज सकते हैं। अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें।

संपर्क : संपादक अग्निशिखा एवं पुरोधा, पांडिचेरी–६०५००२

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्या
हरिद्वार

संदेश

भारतकी सच्ची नियतिके लिये वर्तमान संकट

स्वयं भारतके लिये अधिक गहरी समस्याएं हैं, क्योंकि हो सकता है कि अमुक प्रलोभनकारी दिशाओंका अनुसरण करके वह दूसरे कई विकसनशील देशोंकी तरह समृद्ध उद्योग-धंधे और व्यापार, सामाजिक और राजनीतिक जीवनके प्रबल संगठन, एक बहुत बड़ी सामरिक शक्ति, बड़ी हदतक सफल शक्ति-राजनीतिको विकसित करे जो उत्साहके साथ अपने लाभों और हितोंकी रक्षा करे, जगत्के एक बड़े भागपर प्रभुत्व भी पा ले परंतु इस आभासी वैभवशाली प्रगतिमें वह अपने स्वधर्मको खो बैठे, अपनी आत्मासे वंचित हो जाय। तब हो सकता है कि प्राचीन भारत और उसकी आत्मा एकदम लुप्त हो जायं और हम अन्य देशोंकी तरह एक और देश बन कर रह जायें। यह न तो जगत्के लिये वास्तविक लाभ होगा न हमारे लिये। यहां प्रश्न है कि क्या वह अपने बाह्य जीवनमें ज्यादा निर्दोष रूपसे फल-फूल सकेगा चाहे अपने विपुल रूपसे संचित और दृढ़तासे रखे हुए आध्यात्मिक अनुभव और ज्ञानको खो बैठे। यह भाग्यकी एक दुखद विडंबना होगी यदि भारत ऐसे समय जब शेष जगत् आध्यात्मिक सहायता और रक्षक प्रकाशके लिये उसकी ओर अधिकाधिक मुड़ रहा हो, ऐसे समय भारत अपने आध्यात्मिक दायको उठा फेंके। निश्चय ही यह नहीं होना चाहिए और नहीं होगा। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसा संकट नहीं है। वस्तुतः अन्य अनेकानेक समस्याएं और कठिनाइयां इस देशके सामने हैं या शीघ्र ही इसके सामने आयेंगी। निश्चय ही हम इनपर विजयी होंगे लेकिन हमें अपने आगेसे इस तथ्यको छिपाना न चाहिये कि अगर हमें भारतकी सच्ची नियतिको चरितार्थ करना है तो दासताके इस

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंबे काल और उसके संकीर्ण तथा दुर्बल करनेवाले प्रभावोंके बाद एक आंतरिक और साथ-ही-साथ बाहरी मुक्ति और परिवर्तन, विशाल आंतरिक तथा बाह्य प्रगतिकी हमें आवश्यकता है।

—श्रीअरविंद

संपादकीय :

एक पाठशाला

१९८७ समाप्तिपर है। हममेंसे हर एकने इस वर्ष कई खट्टे मीठे अनुभव प्राप्त किये होंगे और समझदार मनुष्योंने उन अनुभवों-से जीवनकी पाठशालामें कई नये पाठ सीखे होंगे।

अगर हम तटस्थ होकर अपने-आपको, अपने अनुभवोंको पढ़ें तो हम पाएंगे कि हर अनुभव हमें कुछ सिखाने, किसी कमी या त्रुटि-की ओर हमारी आंखें खोलनेके लिये आता है। हम प्रायः पाते हैं कि एक पाठ पढ़ लेनेके बाद उस अनुभवकी पुनरावृत्ति नहीं होती लेकिन अगर हम सीखनेसे इंकार करें या उसकी अवज्ञा करें तो वही अनुभव बार-बार दुहराया जाता है। प्रत्येक जागरूक मनुष्य ऐसे अनुभवोंमेंसे गुजर चुका है।

अगर हम जीवनको इस दृष्टिसे देखें तो हमारे लिये वह एक अच्छा नाटक बन जाता है जिसका हम द्रष्टाकी तरह रस ले सकेंगे और साथ-साथ उसके अनेक रसोंमें सराबोर होकर एक तरहका गंगा स्नान कर अपने-आपको अधिक शुद्ध और हल्का महसूस करेंगे।

एक बार इस वर्षका विहंगावलोकन कर देखें कि क्या सीखा और क्या अनसीखा रह गया। हमें याद रहे, "भागवत कृपा मौजूद है— अपने द्वार खोलो और उसका स्वागत करो।"

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

दिसंबर

१. शाश्वत यौवनका रहस्य है प्रति क्षण नये जीवनमें फिरसे जन्म लेना जानना।

२. भागवत उपस्थिति जीवनको मूल्य देती है। यह उपस्थिति समस्त शांति, समस्त हर्ष, समस्त सुरक्षाका स्रोत है। इस उपस्थितिको अपने अंदर ढूंढ़ निकालो, तुम्हारी सब कठिनाइयां गायब हो जाएंगी।

३. चेतना एक जीनेकी भांति है। प्रत्येक युगमें एक महान् सत्ता उस जीनेमें एक और सीढ़ी जोड़नेमें सक्षम रही है और ऐसे स्थानपर पहुंच पायी है जहां सामान्य चेतना कभी नहीं जा पायी थी।

४. किसी कठिनाईको जीतनेकी शक्ति एक आहकी अपेक्षा एक मुस्कानमें अधिक है।

५. सच्ची भावनासे किया गया काम ध्यान बनता है।

६. हमारा स्थान अतीतकी उषाओंमें नहीं, भविष्यके मध्याह्नोंमें है।

७. भागवत करुणाका स्पर्श कठिनाइयोंको अवसरोंमें, असफलताको सफलतामें और दुर्बलताको अविचल सामर्थ्यमें बदल सकता है।

८. कोई भी चीज, कालेसे काला मिथ्यात्व भी, सत्यकी चरम विजयको नहीं रोक पाता।

९. जब चैत्य सत्ता जाग उठती है तो वह गुरु और भगवान्के लिये सच्ची भक्ति पा सकती है। वह भक्ति मानसिक या प्राणिक भक्तिसे भिन्न होती है।

१०. भगवान्की सहायतासे कुछ भी असंभव नहीं रहता।

११. दिव्य जीवनकी ओर आरोहण करना ही मनुष्यका सफर है, वही सब कार्योंमें मुख्य कार्य, स्वीकारने योग्य आहुति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल यही मनुष्यका संसारमें सच्चा वास्तविक कार्य और उसके अस्तित्वका औचित्य है।

१२. सब सच्ची अभीप्साओंका प्रभाव होता है।

१३. सबसे अंधकारपूर्ण दिनोंमें श्रद्धा ही सबसे निरापद पथ-प्रदर्शक होती है।

१४. धीर, स्थिर आशा मार्गमें बड़ी सहायक होती है।

१५. अपनी श्रद्धाके प्रति निष्ठावान् रहो और तुम्हें दुःखका अनुभव न होगा।

१६. एक बार मिथ्यात्वको जीत लिया जाय, तो सारी कठिनाइयां चली जाएंगी।

१७. चिंता भागवत करुणामें विश्वासकी कमी है।

१८. मेरे पिता, वर दो कि मेरा राष्ट्र स्वाधीनताके स्वर्गमें जागे।

१९. तुम्हें किसीकी आलोचना करनेका अधिकार नहीं है जबतक वह जो कर रहा है, उसे तुम उससे अधिक अच्छी तरह करके न दिखा सको।

२०. बच्चेको कभी न डांटनेके लिये तुम्हें अपने ऊपर काफी नियंत्रण होना चाहिये। अगर उसने किसी कीमती और प्रिय वस्तुको तोड़ भी डाला हो तो तुम्हें केवल पूछना चाहिये "तुमने यह कैसे किया? क्या हुआ?" बच्चेको यह जानना चाहिये कि वह क्यों हुआ ताकि अगली बार वह अधिक सावधान रहे।

२१. भगवान्‌की ओर मुड़कर किसी शारीरिक अपूर्णताको दूर करनेके लिये प्रार्थना करना किसी नैतिक दोषके निवारणकी प्रार्थनाके समान ही है।

२२. तुम जिस किसी चीजकी मांग करो या तुम्हारा कैसा भी प्रयास रहा हो, अपना पूरा प्रयत्न करते हुए, ज्ञानका प्रयोग करते हुए, शक्ति लगाते हुए तुम्हें यह अनुभव करना चाहिये कि परिणाम भागवत करुणापर निर्भर है।

२३. तुम्हारा यह मनोभाव रहना चाहिये "मैं अभीप्सा करता हूं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी अपूर्णताओंसे मुक्त होनेकी कोशिश करता हूं, मैं अपना अच्छे-से-अच्छा प्रयास करता हूं लेकिन परिणामके लिये मैं अपने-आपको पूरी तरह भगवान्‌के हाथोंमें सौंप देता हूं।

२४. समर्पणका अर्थ यह है कि तुमने अपने जीवनकी सारी जिम्मेदारीको भगवान्‌को सौंपनेका निर्णय किया है।

२५. बादमें आता है आत्मदान "यह रहा मैं विविध गुणोंवाला अच्छा, बुरा, अंधकारपूर्ण और ज्योतिर्मय प्राणी मैं अपने-आपको अर्पण करता हूं, मुझे अपने उतार-चढ़ाव, परस्पर विरोधी आवेगों और वृत्तियोंके साथ स्वीकार करो—मेरे साथ जैसा चाहो, करो।

२६. तपस्वीके जैसे उपायोंको अपनाये बिना, शांतिसे प्रकृतिस्थ होकर अपने आवेगोंपर नियंत्रण पाना, और उन्हें प्रकट होनेसे रोकना अति कठिन है।

२७. जब तुम अपने अंदर विद्यमान अध्यात्म पुरुषकी ओर खुलते हो तो उससे तुम्हें उस उच्चतर जीवनका पूर्व-आस्वाद मिलता है जो जीने योग्य होता है। तब उसतक उठनेकी इच्छा जागती है, पहुंचनेकी आशा होती है, यह विश्वास होता है कि इसकी संभावना है और अंतमें आवश्यक प्रयास करनेकी शक्ति और अंततक जानेका दृढ़ संकल्प होता है।

२८. अगर तुम पूरी तरह सचेतन रहना चाहते हो, तो हमेशा सत्यके सामने आओ—अपने-आपको पूरी तरह खोल दो और कोशिश करो कि वह तुम्हारी गहराई तकको देख पाय, तुम्हारी सत्ताके हर कोनेको देख पाय।

२९. अगर तुम पूरी तरह निष्कपट—सच्चे नहीं हो, केवल दूसरोंके साथ नहीं बल्कि अपने साथ भी, अपनी अपूर्णताओं और कमजोरियोंको किसी भी समय ढकनेका प्रयास करो तो तुम कभी प्रगति न कर पाओगे, सारे जीवन हमेशा वहीके वही बने रहोगे।

३०. जब आवेग, विचार, भाव उठें तो अगर तुम उन्हें अभिव्यक्त करनेसे इंकार कर दो, उन्हें एक तरफ धकेल दो और आंतरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभीप्सा और नीरवताकी स्थितिमें रहो तो उनकी शक्ति घटती जाती है और उनका आना बंद हो जाता है।

३१. सहिष्णुताका एक रूप है "एकनिष्ठा"। अपने संकल्पके प्रति वफादार, विश्वासपात्र बनना। तुमने एक संकल्प किया है, तुम अपने संकल्पके प्रति वफादार बने रहते हो यही है सहिष्णुता। यदि तुम डटे रहो तो फिर एक क्षण ऐसा आता है जब तुम विजय प्राप्त कर लेते हो।
विजय उसीकी होती है जो प्रयत्नशील है।

भय—कारण और उपचार

दुःस्वप्न और प्राणमय लोक

प्राणिक सत्ताएं एक अति भौतिक जगत्में विचरती हैं जहां यदि मानव सत्ताएं पहुंच जाएं तो अपने-आपको बिल्कुल भौंचक्की, असहाय और निस्सहाय अनुभव करती हैं। मनुष्य अपने जड़ शरीरमें ही चैनसे रहता है। शरीर उसकी सुरक्षा है। कुछ लोग अपने शरीरके लिये घृणासे भरे होते हैं और सोचते हैं कि मृत्युके बाद शरीरके बिना स्थिति ज्यादा अच्छी तथा ज्यादा आसान होगी। लेकिन वस्तुतः शरीर तुम्हारा किला और तुम्हारा सहारा है। जब तुम शरीरमें रहते हो तो विरोधी शक्तियोंको वहां पहुंचना और तुमपर सीधी पकड़ पाना कठिन होता है। दुःस्वप्न क्या है? ये प्राणमय लोकमें तुम्हारा विचरण हैं। और जब तुम दुःस्वप्नकी पकड़में हो तो तुम पहली चीज क्या करते हो? तुम झपटकर अपने शरीरमें लौट आते हो और अपने-आपको अपनी सामान्य भौतिक चेतनामें हिलाते हो। लेकिन प्राणिक शक्तियोंके जगत्में तुम अजनबी होते हो। वह एक अज्ञात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्र है जहां तुम्हारे पास न तो दिक्सूचक होता है न पतवार।

*

स्वप्नोंमें तुम्हें याद रखना चाहिये कि तुम प्राणमय लोकके देश और कालमें हो। वहां उसी तरह व्यवहार करनेकी कोशिश न करो मानों तुम अब भी भौतिक शरीरमें हो। अगर तुम्हें वहांकी चीजोंकी स्थितिका जरूरी ज्ञान है तो तुम उन प्राणिक सत्ताओंके साथ बहुत अधिक प्रभावी ढंगसे व्यवहार कर सकते हो जो तुम्हें आतंकित करती और ऐसे अप्रिय दुःस्वप्न देती हैं। प्राणिक देश और काल-की क्रियाओंका एक विशेष लक्षण यह है कि ये सत्ताएं अपनी इच्छाके अनुसार विकराल रूप धारण कर सकती हैं और तुम्हारे अंदर भयके स्पंदन पैदा कर सकती हैं। तुमपर आक्रमण और अधिकार करनेके लिये यही उनका सबसे प्रबल साधन है। तुम्हें अपने मनमें उनकी आतंककारी भ्रामक शक्तिके बारेमें याद रखना चाहिये और समस्त भयको निकाल फेंकना चाहिये। अगर तुम बहादुरीके साथ निर्भीक होकर उनका सामना करो और सीधा उनकी आंखोंमें देख सको तो वे अपनी शक्तिका तीन चौथाई भाग खो बैठती हैं और अगर तुम हमें सहायताके लिये बुलाओ तो बाकी चौथाई भी चला जाता है और वे या तो भाग जाती हैं या लुप्त हो जाती हैं। मेरा एक मित्र जो प्रायः अपने प्राणिक शरीरमें घूमने जाया करता था, यह शिकायत करता था कि उसे हमेशा एक दानवाकार शेरका सामना करना पड़ता है और इस कारण उसकी रातें बहुत ही दुःखमय हो जाती हैं। मैंने उससे कहा, 'समस्त भयको त्याग दो और सीधे जाकर शेरकी आंखोंसे आंखें मिलाओ और जरूरत हो तो सहायता-के लिये पुकारो।' उसने ऐसा ही किया और देखो तमाशा, शेर तुरंत एक छोटी-सी नगण्य बिल्ली बन गया!

तुम प्राणिक सत्ताकी आंखोंमें आखें डालनेके जादुई असरके बारेमें कल्पना नहीं कर सकते। यहां धरतीपर भी अगर तुम उन सत्ताओंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ इसी तरह व्यवहार करो जिन्हें हम प्राणिक शक्तियोंका अवतार कहते हैं, जिन्हें हम सामान्यतः पशु कहते हैं तो तुम्हें सरलतासे प्रभुत्व मिल जाता है। अगर तुम जरा भी कांपे बिना भौतिक शेरकी आंखोंमें आंखें डालकर देखो तो वह भी तुम्हारे पाससे भाग जायगा। अगर तुम जरा भी डरे बिना अपनी आंखें सीधी सांपकी आंखोंमें गड़ा सको तो वह तुम्हें कभी न काट सकेगा। कांपते हुए घुटनोंके साथ घूरनेसे कोई सहायता न मिलेगी। तुम्हारे अंदर कोई क्षोभ न होना चाहिये। तुम्हें शांत और प्रकृतिस्थ होना चाहिये जब तुम उसके साथ आंखें मिलाओ, जब वह तुम्हें घृणित भयमें सम्मोहित करनेके लिये सिर डुलाता है। पशु मनुष्यकी आंखोंमें एक प्रकाशके बारेमें अभिज्ञ होते हैं जिसे वे नहीं सह पाते, बशर्ते कि वह उनपर उचित रूपसे डाला जाय। मनुष्यकी नजरमें एक ऐसी शक्ति होती है जो उन्हें बेकार कर देती है बशर्ते कि वह स्थिर और निर्भीक हो।

हां, तो मतलब यह कि दो चीजें याद रखो। कभी, कभी न डरो और सभी परिस्थितियोंमें सच्ची सहायताको पुकारो जो तुम्हारी शक्तिको सौगुना मजबूत कर सके।

मृत्युके भयपर विजय प्राप्त करनेके चार साधन

सामान्यतः मानव प्रगतिको रोकनेवाली सबसे बड़ी बाधा शायद भय है; भयके रूप विविध तथा असंख्य होते हैं, वह अपने-आपमें विरोधयुक्त, तर्कहीन, अनुचित और प्रायः अविवेकी होता है। मृत्युका भय सब प्रकारके भयोंमें सबसे अधिक सूक्ष्म और हठी होता है। उसकी जड़ें अचेतनातकमें गहरी पैठी होती हैं और वहांसे उन्हें उखाड़ फेंकना आसान नहीं होता। प्रत्यक्ष ही यह भय कई मिश्रित तत्त्वोंसे बना होता है; ये चीजें हैं, सुरक्षाकी भावना, आत्म-रक्षाकी चिंता जिसका भाव होता है कि चेतनाका सूत्र लगातार सुनिश्चित रूपसे चलता रहे, अज्ञातसे पीछे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हट जाना, अप्रत्याशित और अचिंत्यसे उत्पन्न उद्वेग और शायद इस सबके पीछे कोषाणुओंकी गहराईमें छिपी हुई यह सहज-भावना काम करती है कि मृत्यु कोई ऐसी वस्तु नहीं जिससे बचा न जा सके और यह भी कि यदि कुछ शर्तें पूरी की जा सकें तो उसपर विजय प्राप्त की जा सकती है, यद्यपि यह सत्य है कि स्वयं भय ही इस विजयके मार्गमें एक बहुत बड़ी बाधा है। क्योंकि हम उसपर विजय प्राप्त नहीं कर सकते जिससे हम डरते हैं, और जो मृत्युसे डरता है वह पहलेसे ही मृत्युके द्वारा विजित हो चुका है।

इस भयसे कैसे छुटकारा पाया जाय? इसके लिये कई तरीके काममें लाये जा सकते हैं। किंतु अपने इस प्रयासके प्रारंभमें ही कुछ सहायक मूलभूत विचारोंको जान लेना आवश्यक है। पहली और अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात यह जान लेना है कि जीवन अविभाज्य और अमर है, बस, उसके रूप अनगिनत होते हैं और वे रूप ही क्षणिक तथा नाशवान् होते हैं। यह ज्ञान व्यक्तिको अपने मनमें निश्चित और स्थायी रूपमें प्रतिष्ठित कर लेना चाहिये और यथा-संभव अपनी चेतनाको उस शाश्वत जीवनके साथ एकात्म कर लेना चाहिये जो सब रूपोंमें स्वतंत्र है, पर फिर भी अपने-आपको सब रूपोंमें अभिव्यक्त करता है। इससे हमें वह आवश्यक मनो-वैज्ञानिक आधार मिल जाता है जहांसे समस्याका सामना किया जा सकता है, क्योंकि समस्या तो है ही न। आंतरिक सत्ता यदि इतनी पर्याप्त मात्रामें आलोकित हो भी जाय कि वह सब भयोंसे ऊपर उठ जाय, तो भी शरीरके कोषाणुओंमें भय छिपा ही रहेगा, अस्पष्ट और स्वतःचालित रूपमें, बुद्धिकी पकड़से परे सामान्यतः प्रायः निश्चेतन-सा। इन्हीं अंधेरी गहराइयोंमेंसे उसे ढूंढ़ निकालना होगा, पकड़ना होगा और उसपर ज्ञान तथा विश्वासका प्रकाश डालना होगा।

इस तरहसे जीवनका नाश तो नहीं होता, रूप अवश्य विघटित हो जाता है और शारीरिक चेतना इसी विघटनसे भय खाती है। फिर भी, रूप लगातार परिवर्तित होते रहते हैं और सचमुच कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी वस्तु इस परिवर्तनको प्रगतिशील होनेसे नहीं रोक सकती। यह प्रगतिशील परिवर्तन ही इस बातको संभव कर सकता है कि मृत्यु अनिवार्य न हो। पर इस कार्यको संपन्न करना है कठिन, और यह शर्तोंकी मांग करती है जिन्हें बहुत कम लोग पूरा कर सकते हैं। इस प्रकार मृत्युके भयपर विजय प्राप्त करनेकी विधि व्यक्तिके स्वरूप या उसकी चेतनाकी अवस्थाओंके अनुसार, भिन्न-भिन्न होगी। इन विधियोंको चार प्रमुख श्रेणियोंमें बांट सकते हैं यद्यपि प्रत्येक श्रेणीमें अनेक भेद-विभेद भी होंगे, सच तो यह है कि प्रत्येक व्यक्तिको अपनी प्रणाली अपने-आप विकसित करनी होगी।

पहली विधि बुद्धिको आकर्षित करती है। यह कहा जा सकता है कि संसारकी वर्तमान अवस्थामें मृत्यु अनिवार्य है; प्रत्येक शरीर जो जन्म लेता है, एक-न-एक दिन अवश्य ही मृत्युको प्राप्त होगा, और करीब-करीब सभीकी मृत्यु तभी आती है जब उसे आना होता है; उसकी घड़ीको न कोई टाल सकता है और न कोई जल्दी ही ला सकता है। जो उसकी तीव्र इच्छा करता है उसे कभी-कभी बहुत लंबे समयतक प्रतीक्षा करनी पड़ती है और जो उससे डरता है वह, सब सावधानियां बरतते हुए भी, अचानक उसका ग्रास बन जा सकता है। मृत्युकी घड़ी अटल रूपमें नियत की हुई प्रतीत होती है, इसके अपवाद बहुत थोड़े-से ही लोग होते हैं जिनमें वे शक्तियां होती हैं जो कि साधारण मानवजातिमें नहीं पायी जातीं। तर्क-बुद्धि हमें यह सिखाती है कि जिस चीजसे बचा नहीं जा सकता उससे डरना मूर्खता है। उपाय एक ही है, वह यह कि मृत्युके विचारको स्वीकार कर लिया जाय और दिन-प्रतिदिन, क्षण-प्रतिक्षण मनुष्य वही करे जो अच्छे-से-अच्छा कर सकता है और इसकी चिंता न करे कि आगे क्या होगा। यह प्रक्रिया उन बुद्धिवादियोंके लिये अत्यंत फलदायक होती है जो तर्क-बुद्धिके नियमोंके अनुसार काम करनेके आदी होते हैं, किंतु जो भावुक लोग अपनी भावनाओंमें निवास करते हैं और उन्हींके द्वारा संचालित होते हैं, उनमें यह कम फलप्रद सिद्ध होगी। निस्संदेह इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगोंको दूसरी विधि अपनानी चाहिये, वह है आंतरिक खोजकी। सब भावोंसे परे, हमारी सत्ताकी नीरव और शांत गहराइयोंमें एक प्रकाश सदा प्रज्ज्वलित रहता है, यह अंतरात्माकी चेतनाका प्रकाश है। इस प्रकाशको खोजो, इसपर एकाग्र होओ; यह तुम्हारे अंदर ही है। दृढ़ संकल्पके द्वारा तुम निश्चय ही यह प्रकाश पाओगे और ज्यों ही तुम उसमें प्रवेश पाओगे, त्यों-ही तुम अमरताके भावके प्रति जाग्रत् हो जाओगे। तुम अनुभव करोगे कि तुम सदा ही जीवित रहे हो और सदा ही जीवित रहोगे; उस अवस्थामें तुम अपने शरीर-से पूर्णतया स्वतंत्र हो जाते हो; तुम्हारा सचेतन अस्तित्व उसपर आश्रित नहीं रहता; और यह शरीर तो बहुत-से नाशवान् रूपोंमेंसे एक है जिनके द्वारा तुम अभिव्यक्त हुए हो। तब मृत्यु एक समापन नहीं हो जाती, वह केवल एक संक्रमणकी अवस्था हो जाती है। तत्काल ही समस्त भय भाग जाता है और तुम मुक्त पुरुषकी शांत निश्चयताके साथ जीवनमें आगे बढ़ते हो।

तीसरी विधि उन लोगोंके लिये है जो एक दिव्य अस्तित्वमें—जिसे वे अपना भगवान् कहते हैं—श्रद्धा रखते हैं और जिसे वे अपने-आपको उसे समर्पित कर चुके होते हैं। ये लोग पूर्णतया उसीके होते हैं, उनके जीवनकी सभी घटनाएं भागवत इच्छाकी अभिव्यक्ति होती हैं, इन घटनाओंको वे केवल एक शांत समर्पण-भावसे ही नहीं, बल्कि कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करते हैं, कारण, उन्हें यह विश्वास रहता है कि जो कुछ भी उनके साथ घटता है वह सदा ही उनके भलेके लिये होता है। उन्हें अपने भगवान्में तथा उनके साथ अपने वैयक्तिक संबंधमें एक प्रकारका गुह्य विश्वास होता है। उन्होंने अपनी इच्छा पूर्ण रूपसे भगवान्की इच्छाको अर्पित कर दी होती है और वे उनके अटल प्रेम और संरक्षणको अनुभव करते हैं, जीवन और मृत्युकी आकस्मिक घटनाओंका उस प्रेम और संरक्षणपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उनके अंदर सदा यह अनुभूति रहती है कि वे पूर्ण आत्म-समर्पणके साथ अपने प्रियतमके चरणोंमें प्रणत हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा उसकी बांहोंमें आश्रय लिये हुए हैं और वहां पूर्ण सुरक्षा अनुभव कर रहे हैं। उनकी चेतनामें भय, चिंता या दुःखके लिये जरा भी स्थान नहीं होता; इस सबका स्थान एक शांत और हर्षपूर्ण आनंद ले लेता है।

किंतु प्रत्येकको गुह्यवेत्ता बननेका सौभाग्य प्राप्त नहीं होता।

अंतमें, कुछ लोग जन्मजात योद्धा होते हैं; जीवन जैसा है उसे वे वैसा ही स्वीकार नहीं कर सकते, अपने अंदर वे एक अमरताके अधिकारका, सर्वांगीण तथा पार्थिव अमरताके अधिकारका स्पंदन अनुभव करते हैं। उनके अंदर एक प्रकारका सहज-ज्ञान होता है कि मृत्यु बस, एक बुरी आदत है और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने उसपर विजय प्राप्त करनेका निश्चय लेकर जन्म लिया है। पर इस विजयका अर्थ होता है भयंकर और सूक्ष्म आक्रमणकारियोंकी सेनाके विरुद्ध घोर युद्ध, ऐसा युद्ध जो सदा ही, यह भी कहा जा सकता है कि प्रत्येक क्षण ही, लड़ना पड़े। इस मोर्चेपर आनेका खतरा उसीको उठाना चाहिये जिसमें इसके लिये अदम्य उत्साह हो। इस युद्धके कई मोर्चे हैं; यह कई स्तरोंपर होता है जो आपसमें एक-दूसरेसे मिले-जुले-से तथा एक-दूसरेके पूरक होते हैं।

पहला मोर्चा ही काफी भीषण होता है। वह एक सामूहिक मनका युद्ध होता है, एक विशाल तथा अभिभूत और विनाश कर देनेवाले सुझावके विरुद्ध, ऐसे सुझावके विरुद्ध जो सहस्रों वर्षोंके अनुभवपर आधारित है, प्रकृतिके एक ऐसे नियमपर आधारित है जिसका अभीतक कोई अपवाद देखनेमें नहीं आता। वह एक ऐसी हठीली मान्यताका रूप धारण कर लेता है: "सदा ही ऐसा होता रहा है, इससे भिन्न कुछ हो ही नहीं सकता। मृत्यु अनिवार्य है, और यह आशा करना पागलपन है कि वह इससे भिन्न कुछ हो सकती है।" यह राय सर्वसम्मत है और अभीतक तो किसी बड़े-से-बड़े विद्वान्‌ने भी इसके विरुद्ध अपनी आवाज उठानेका, भविष्यमें आशा देनेका जरा भी साहस नहीं किया है। और जहांतक धर्मोंकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात है, अधिकतर धर्मोंने तो मृत्युके तथ्यको ही अपनी कार्य-शक्तिका आधार बनाया है और वे कहते हैं कि यह भगवान्‌की इच्छा है कि मनुष्य मृत्युको प्राप्त हो, क्योंकि उसीने उसे नश्वर बनाया है। इनमेंसे बहुत-से तो मृत्युको उद्धार, मुक्ति और कभी-कभी तो पुरस्कारका रूप भी दे देते हैं। वे यह उपदेश देते हैं: 'सर्वोच्च' की इच्छाके आगे नत होकर मृत्युके विचारको बिना किसी विद्रोहके स्वीकार करो, और तुम्हें शांति और सुख मिलेगा। यह सब होते हुए भी, मनको अपने विश्वासमें अटल रहना होगा, अपना संकल्प अटूट बनाये रखना होगा। किंतु जिसने मृत्युपर विजय पानेका संकल्प कर लिया है उसपर ये सब सुझाव कोई प्रभाव नहीं डालते, उसकी निश्चयता एक गहरे प्रत्यक्ष ज्ञानपर आधारित होती है और उस निश्चयताको ये सुझाव छू नहीं सकते।

दूसरा युद्ध होता है भावोंका, यह उस आसक्तिके विरुद्ध युद्ध है जो उसकी अपनी बनायी हुई वस्तुओंके प्रति, अपनी प्रिय वस्तुओंके प्रति होती है। कठिन परिश्रमके परिणामस्वरूप, कभी-कभी तो कठोर प्रयत्नोंके फलस्वरूप, तुमने अपना घर बनाया होता है, अपना जीवन निर्माण किया होता है, अपना सामाजिक, साहित्यिक, कलात्मक, वैज्ञानिक या राजनीतिक कार्य निश्चित किया होता है, तुमने एक ऐसे वातावरणकी सृष्टि कर ली होती है जिसके तुम मध्यबिंदु होते हो और जिसपर तुम कम-से-कम उतना ही आश्रित होते हो जितना कि वह तुमपर होता है। तुम व्यक्तियोंके एक बड़े समूहद्वारा, कुटुम्बियों, मित्रों और सहकर्मियोंद्वारा घिरे रहते हो और जब तुम अपने जीवनके विषयमें सोचते हो, ये सब तुम्हारी विचारधारामें उतना ही स्थान ग्रहण किये होते हैं जितना कि प्रायः तुम स्वयं ग्रहण किये होते हो; यहांतक कि यदि ये अचानक तुमसे दूर हटा दिये जायें तो तुम अपने-आपको खोया-खोया-सा अनुभव करने लगोगे मानों तुम्हारी अपनी सत्ताका एक बहुत महत्त्वपूर्ण भाग गायब हो गया हो।

इन सब वस्तुओंको त्याग देनेका प्रश्न ही नहीं है, क्योंकि ये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी हदतक तुम्हारे अस्तित्वके लक्ष्य और प्रयोजनका निर्माण करते हैं। किंतु त्याग करना है इनके प्रति अपनी समस्त आसक्तिका ताकि तुम इनके बिना रहनेमें समर्थ अनुभव कर सको, बल्कि, यदि ये तुम्हें छोड़ दें तो तुम नयी परिस्थितियोंमें और अपने लिये नया जीवन फिरसे बनानेके लिये तैयार रह सको, और इसे अनिश्चित कालतक कर सको, क्योंकि यही अमरताका परिणाम है। इस अवस्थाकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है: सब कुछ अधिकतम ध्यान तथा सावधानीसे व्यवस्थित और संपन्न कर सकना, किंतु साथ ही कामना और आसक्तिमात्रसे मुक्त रहना; कारण, यदि तुम मृत्युसे बचना चाहते हो तो तुम्हें किसी भी नश्वर वस्तुसे बंधना नहीं चाहिये।

भावनाओंके बाद संवेदन आते हैं। यहां लड़ाई निर्मम होती है और शत्रु भयंकर हो जाते हैं। वे तुम्हारी छोटी-से-छोटी दुर्बलताको भी भांप लेते हैं और वहीं आघात करते हैं जहां तुम अरक्षित होते हो। यहां विजय अस्थायी होती है और वे ही लड़ाइयां अनिश्चित रूपसे और बार-बार लड़नी पड़ती हैं। जिस शत्रुको तुम हारा हुआ समझते हो वह बार-बार तुमपर चोट करनेके लिये उठ खड़ा होता है। यहां दृढ़ रूपमें सधे हुए चरित्रकी, अथक सहनशीलताकी आवश्यकता होती है ताकि प्रत्येक पराजय, प्रत्येक निराशा, प्रत्येक अस्वीकृति, प्रत्येक निरुत्साहका तथा नित्यप्रतिके अनुभवों और पार्थिव घटनाओंके परस्पर-विरोधसे उत्पन्न अपरिमित क्लांतिका सामना किया जा सके।

अब हम सबसे अधिक भयंकर युद्धपर आते हैं, यह है भौतिक युद्ध जो शरीरमें लड़ा जाता है; क्योंकि यह बिना दम लिये, बिना विरामके चलता रहता है। यह जन्मके साथ शुरू होता है और दोनों योद्धाओं—रूपांतरकी शक्ति और विलयनकी शक्ति—मेंसे किसी एककी पराजयके साथ ही समाप्त हो सकता है। मैंने जन्मसे कहा, क्योंकि ये दोनों गतियां उसी क्षण संघर्षरत होती हैं जिस क्षण मनुष्य संसारमें आता है, यद्यपि संघर्ष सचेतन और सुविवेचित रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत बादमें लेता है। क्योंकि हर अस्वस्थता, हर रोग, हर विकृति, यहांतक कि दुर्घटनाएं भी विलयनकी शक्तिका परिणाम हैं, और उसी तरह वृद्धि, सामंजस्यपूर्ण विकास, आक्रमणका प्रतिरोध, रोग-मुक्ति, हर स्वाभाविक क्रियाकी ओर लौटना, हर प्रगतिशील सुधार आदि रूपांतरकी शक्तिकी क्रियाका परिणाम हैं। बादमें चलकर, चेतनाके विकासके साथ, जब युद्ध सुविवेचित हो जाता है, तब यह दो परस्पर विरोधी गतिविधियोंके बीच एक प्रचंड प्रतियोगिता होती है, यह देखनेके लिये प्रतियोगिता होती है कि देखें, लक्ष्यतक कौन पहले पहुंचता है, मृत्यु या रूपांतर। इसका अर्थ है एक अंतहीन प्रयास, एक पुनरुद्धारक शक्तिका आवाहन करनेके लिये सतत एकाग्रता और इस शक्तिके प्रति कोषाणुओंमें ग्रहणशीलताकी वृद्धि। विनाश और ह्रासकी शक्तियोंकी विनाशक क्रियाके विरुद्ध पग-पगपर, एक-एक बिंदुपर युद्ध करना और हर उस चीजको जो प्रकाश देनेवाली, शुद्ध करनेवाली और स्थिर करनेवाली तथा ऊपर उठते हुए आवेगको प्रत्युत्तर देनेकी क्षमता रखती है, ऐसी हर चीजको उसकी पकड़से छीन लेना। यह एक अंधकारपूर्ण और हठी संघर्ष है जिसका अधिकतर कोई प्रत्यक्ष परिणाम नहीं दिखायी देता, किन्हीं आंशिक और सदा अनिश्चित विजयोंका कोई बाहरी चिह्न नहीं दिखायी देता—क्योंकि हमेशा यही लगता है कि जो काम किया गया है उसे दोबारा करना होगा। बहुधा, जब एक पग आगे बढ़ता है तो उसके लिये कहीं और पीछे हटना होता है। एक दिन जो काम पूरा हो जाता है दूसरे दिन उसीको उधेड़ा जा सकता है। वस्तुतः, निश्चित और स्थायी विजय तभी हो सकती है जब वह संपूर्ण हो। और इस सबमें समय लगता है, बहुत समय। वर्ष-पर-वर्ष बड़ी कठोरता-के साथ बीतते चले जाते हैं और विरोधी शक्तियोंका बल बढ़ाते जाते हैं।

इस सारे समय चेतना खाईमें संतरीकी तरह खड़ी रहती है: तुम्हें डटे रहना चाहिये, हर कीमतपर डटे रहना चाहिये, भयके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कंपनके बिना, जागरूकतामें कमी लाये बिना, जो लक्ष्य सिद्ध करना है उसपर, और ऊपरसे आनेवाली सहायतापर—जो प्रेरणा और सहारा देती है—अटल श्रद्धा बनाये रखनी चाहिये। क्योंकि विजय सबसे अधिक सहनशीलको ही मिलेगी।

मृत्युके भयपर विजय पानेका एक और भी तरीका है, लेकिन वहांतक इतने कम लोगोंकी पहुंच है कि यहां उसका उल्लेख केवल एक सूचनाके रूपमें किया जाता है। वह है जानबूझकर और सचेतन रूपसे मृत्युके क्षेत्रमें जीते जी प्रवेश करना, और फिर उस लोकसे लौटकर भौतिक शरीरमें वापिस आना, और पूर्णज्ञानके साथ भौतिक सत्ताके जीवन-क्रमको फिरसे अपना लेना। लेकिन इसके लिये तुम्हें दीक्षित होना चाहिये।

'मृत्युके भयपर विजय प्राप्त करनेके चार साधन'—विषयक लेखके अंतिम अनुच्छेदपर किये गये प्रश्नोंका उत्तर

जो भी प्रश्न किये गये हैं वे सब इस एक ही प्रश्नमें ढाले जा सकते हैं: वह कौन-सा ज्ञान है या अनुशासन है जो निर्भयतापूर्वक मृत्युका सामना करनेकी सामर्थ्य प्रदान करता है?

अभीतक यहां ज्ञानकी इस प्रणालीके विषयमें, जो साथ-ही-साथ कार्यकी प्रणाली भी है, कुछ नहीं कहा गया है, क्योंकि इस ज्ञानका अध्ययन तथा अभ्यास सबके हाथोंमें नहीं सौंपा जा सकता। गुह्य शक्तियोंके बारेमें बात करनेका अधिक मूल्य नहीं है; मनुष्यको इन्हें अनुभव करना चाहिये। और यह अनुभव केवल उन विशेष क्षमताओंकी ही मांग नहीं करता जो केवल बहुत कम लोगोंको प्राप्त हैं, वरन् उस मनोवैज्ञानिक विकासकी भी मांग करता है जिसे बहुत कम लोग प्राप्त कर सकते हैं। आधुनिक जगत्में यह ज्ञान कदाचित् ही वैज्ञानिक माना जाता है, फिर भी यह वैज्ञानिक है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि यह उन सब शर्तोंको पूरा करता है जो सामान्यतः विज्ञानमें आवश्यक मानी जाती हैं। यह ज्ञानकी एक ऐसी पद्धति है जो कुछ सिद्धांतोंके अनुसार व्यवस्थित की गयी है; यह कुछ यथार्थ प्रक्रियाओंका अनुसरण करती है और व्यक्ति समान अवस्थाओंमें समान ही परिणाम प्राप्त करता है। साथ ही, यह एक विकसनशील ज्ञान है। मनुष्य इसके अध्ययनमें जुट सकता है और आजकलके किसी भी मान्य विज्ञानकी तरह इसे नियमित और युक्तिपूर्ण ढंगसे विकसित भी कर सकता है। केवल एक भेद है कि यह अध्ययन उन वास्तविकताओंके साथ संबंध रखता है जो अत्यधिक भौतिक संसारकी वस्तुएं नहीं हैं। यदि तुम यह ज्ञान सीखना चाहते हो तो तुम्हारे पास विशेष इंद्रियां होनी चाहियें। क्योंकि इसके क्षेत्र साधारण इंद्रियोंसे परे हैं। ये विशेष इंद्रियां मनुष्यके अंदर सुप्तावस्थामें विद्यमान हैं। जिस प्रकार हमारा एक भौतिक शरीर है, उसी प्रकार अन्य सूक्ष्मतर शरीर भी हैं और इनकी भी अपनी इंद्रियां हैं; ये इंद्रियां हमारी भौतिक इंद्रियोंसे कहीं अधिक सूक्ष्म, यथार्थ तथा शक्तिशाली हैं। क्योंकि सामान्यतः हमारी शिक्षा इस क्षेत्रके साथ संबंध नहीं रखती अतः सामान्यतया ये इंद्रियां विकसित नहीं होतीं और जिन जगतोंमें ये कार्य करती हैं वे हमारे सामान्य ज्ञानकी पहुंचसे परे हैं। पर बच्चे, सहज-स्वाभाविक रूपमें ही, अधिकतर इसी जगत्में निवास करते हैं, वे वहां उन सब प्रकार-की वस्तुओंको देखते हैं जो उनके लिये भौतिक वस्तुओंके समान ही वास्तविक हैं; जब वे उनके विषयमें बातें भी करते हैं तो प्रायः उनसे यही कहा जाता है कि वे मूर्ख अथवा झूठे हैं, कारण, वे उन विषयोंके बारेमें बातें करते हैं जिनका दूसरोंको कुछ अनुभव नहीं, पर जो उनके अपने लिये उतने ही सच्चे, गोचर और वास्तविक हैं जितनी कोई और चीज जिसे सब देख सकते हैं। बच्चे, सोते या जागते हुए जो स्वप्न देखते हैं वे भी बड़े सजीव होते हैं और उनके जीवनके लिये अत्यंत महत्त्व रखते हैं। अत्यधिक मानसिक विकासके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही ये शक्तियां बच्चोंमें मंद पड़ जाती हैं तथा कभी-कभी तो विलीन होकर समाप्त भी हो जाती हैं। फिर भी कुछ ऐसे सौभाग्य-शाली लोग भी हैं जो सहज रूपमें विकसित आंतरिक इंद्रियोंके साथ ही जन्मे हैं, और कोई भी चीज इन इन्द्रियोंको जाग्रत् बने रहने, यहांतक कि इन्हें विकसित होनेसे भी नहीं रोक सकती। यदि उन लोगोंकी, ठीक समयपर, किसी ऐसे मनुष्यके साथ भेंट हो जाय जिसे यह ज्ञान प्राप्त है और जो सूक्ष्म इंद्रियोंकी विधिवत् शिक्षामें उन्हें सहायता पहुंचा सके, तो वे गुह्य जगतोंके अध्ययन और खोजोंके लिये बहुत रोचक यंत्र बन जायेंगे।

सभी युगोंमें पृथ्वीपर कुछ ऐसे इक्के-दुक्के व्यक्ति या छोटे समुदाय हुए हैं जो अति प्राचीन परंपराके रक्षक थे तथा जिन्होंने अपने निजी अनुभवोंद्वारा उस परंपराकी पुष्टि की थी; और जो इस प्रकारके विज्ञानका अभ्यास भी किया करते थे। वे ऐसी आत्माओंको खोजते थे जिन्हें विशेष रूपसे यह शक्ति प्राप्त हो, और उन्हें आवश्यक शिक्षा देते थे। साधारणतया ये समुदाय थोड़ा-बहुत गुप्त या रहस्यमय जीवन व्यतीत करते थे, क्योंकि साधारण लोग इस प्रकारकी क्षमताओं या क्रियाओंके प्रति बहुत असहिष्णु होते हैं जो उनकी बुद्धिसे परेकी चीजें होती हैं तथा उन्हें भयभीत कर देती हैं। लेकिन मानव इतिहासमें ऐसे महान् युग हुए हैं जब इस विद्याकी दीक्षा देनेवाली संस्थाएं स्थापित हुईं और उन्हें मान्यता भी मिली; लोग उन्हें उपयोगी समझते तथा उनका मान करते थे। इस प्रकारकी संस्थाएं प्राचीन मिश्र देश, प्राचीन कैल्डिया और भारत वर्षमें तथा आंशिक रूपमें यूनान और रोममें भी थीं, मध्यकालीन यूरोपमें भी ऐसे विद्यालय थे जो गुह्यविद्याकी शिक्षा देते थे; किंतु इन्हें बड़ी सावधानीसे अपने-आपको गुप्त रखना पड़ना था, क्योंकि ईसाई धर्म, जो कि राजधर्म था, इनका पीछा करता तथा इन्हें दंडित करता था। और यदि दुर्भाग्यवश यह पता लग जाता कि कोई स्त्री या पुरुष इस गुह्यविद्याका अभ्यास करता है तो वह चितापर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चढ़ा दिया जाता था और उसे जादूगर समझकर जीवित जला दिया जाता था। अब यह ज्ञान प्रायः लुप्त हो गया है; बहुत ही कम लोग अब इस विद्याको जानते हैं। किंतु ज्ञानके साथ-साथ, असहिष्णुता भी चली गयी है। यह सत्य है कि हमारे समयमें अधिकतर शिक्षित लोग इस विद्याके अस्तित्वको नकारना पसंद करते हैं या इसे कोरी कल्पना कहकर दबा देते हैं, यहांतक कि, इसे ढोंग समझते हैं, ताकि वे अपने अज्ञान और अपनी उस व्याकुलताको अपने-से छुपा सकें जो वे अनुभव करते यदि उन्हें एक ऐसी शक्तिकी वास्तविकताको स्वीकार करना पड़ता जिसके ऊपर उनका कोई वश नहीं है। साथ ही उन लोगोंमें भी जो इसे अस्वीकार नहीं करते, अधिकतरको ऐसी चीजोंसे कोई विशेष प्रेम नहीं होता; ये उनसे विक्षुब्ध और परेशान हो उठते हैं। किंतु अंतमें उन्हें यह मानना पड़ा है कि यह कोई अपराध नहीं है। जो लोग गुह्यविद्या-का अभ्यास करते हैं वे अब चितापर नहीं चढ़ाये जाते और न ही बंदीगृहमें डाले जाते हैं। केवल एक बात है कि अब, चूंकि छुपानेकी आवश्यकता नहीं रही, बहुत-से लोग दावा करने लगे हैं कि यह ज्ञान उन्हें प्राप्त है किंतु ऐसे बहुत कम लोग हैं जो इसे सचमुच जानते हैं। उस रहस्यसे लाभ उठाकर, जो पहले गुह्यविद्याको आच्छादित किये हुए था, कुछ महत्त्वाकांक्षी लोग, जिन्हें सत्य असत्यकी कोई चिंता नहीं होती, रहस्यीकरण और ठगीके साधनके रूपमें इसका प्रयोग करने लगे हैं। किंतु इन लोगोंके ही द्वारा हमें उस ज्ञानका मूल्यांकन नहीं करना चाहिये जिसे जाननेका वे झूठा दावा करते हैं। मानव कार्य-व्यवहारके सभी क्षेत्रोंमें नीम-हकीम तथा ठग विद्यमान हैं; किंतु हमें उनके पाखंडको एक ऐसी सच्ची विद्यापर लांछन नहीं लगाने देना चाहिये जिसके प्राप्त होनेका वे झूठा दावा करते हैं। इसी कारण, इस विद्याकी उन्नतिके महान् युगोंमें, जब ऐसे मान्य विद्यालय थे जहां इसका अभ्यास होता था, जो कोई इस विद्याको सीखना चाहता था उसे प्रविष्ट होनेसे पहले बहुत लंबे समयतक,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी-कभी तो वर्षोंतक आत्म-विकास तथा आत्म-संयमके अत्यंत कठोर दोहरे अनुशासनका अनुसरण करना पड़ता था। एक ओर तो अभीप्सुके आशयोंकी सच्चाई तथा निःस्वार्थता, उसके उद्देश्योंकी पवित्रता, आत्म-विस्मृति और अहंनिषेधकी उसकी योग्यता, त्यागकी भावना तथा निरहंकारताके संबंधमें यथासंभव निश्चय प्राप्त किया जाता था, —इस प्रकार उसकी अभीप्साकी उच्चता तथा श्रेष्ठता प्रमाणित हो जाती थी,—और दूसरी ओर उसे कई परीक्षाओंमेंसे गुजरना पड़ता था जिसका उद्देश्य यह निश्चित करना होता था कि क्या उसकी क्षमताएं पर्याप्त हैं और वह उस विद्याका अभ्यास, जिसके लिये वह अपने-आपको समर्पित करना चाहता है, बिना किसी खतरेके कर सकता है? ये परीक्षाएं विशेषतया व्यक्तिकी लालसाओं और कामनाओंपर संयम, एक अचल शांतिकी स्थापना और सबसे बढ़कर पूर्ण निर्भयता पर आग्रह करती थीं, क्योंकि इस कार्यमें पूर्ण निर्भयता सुरक्षाकी आवश्यक शर्त है।

गुह्यविद्या, अपने एक पक्षमें, एक प्रकारकी रसायनविद्या है जो आंतरिक आयामोंकी शक्तियोंकी क्रीड़ा तथा जगतों एवं वैयक्तिक आकारोंकी रचनामें प्रयुक्त की जाती है। और जिस प्रकार भौतिक रसायनविद्यामें विशेष पदार्थोंका व्यवहार खतरेसे खाली नहीं है, उसी प्रकार गुह्य जगतोंमें भी कुछ विशेष शक्तियोंका प्रयोग करने तथा उनसे संपर्क रखनेमें खतरा है, महान् आत्म-संयम तथा एक अविचलित अचंचलता ही इसे अहानिकर बना सकती है।

एक अन्य पक्षसे देखें तो गुह्य विद्या एक अन्वेषकके लिये अज्ञात प्रदेशोंकी खोज तथा अनुसंधानके समान है जिनके नियम तथा विधि-विधान वह प्रायः कष्ट उठाकर ही सीखता है। कुछ प्रदेश तो नये जिज्ञासुके लिये काफी भयावह भी होते हैं, वह अपने-आपको नये और अप्रत्याशित संकटोंमें घिरा पाता है। फिर भी, उनमेंसे अधिकतर संकट उतने सत्य नहीं हैं जितने काल्पनिक, और अगर तुम उनका सामना निडरतासे करो तो वे अपनी वास्तविकताका अधिकांश खो बैठते हैं!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहरहाल, प्रत्येक अवस्थामें सभी युगोंमें, यह परामर्श दिया जाता रहा है कि किसी ऐसे विश्वस्त गुरुसे ही शिक्षा लेनी चाहिये जो अनुसरणीय पथ दिखा सके, संकटोंसे सावधान कर सके, चाहे वे काल्पनिक हों या नहीं, और समय पड़नेपर रक्षा कर सके।

इसलिये यहां इस विद्याकी कुछ और बारीकियोंके विषयमें कहना कठिन है, सिवाय इसके कि गुह्यविद्याके अध्ययनका अनिवार्य आधार सत्ताकी अनेक अवस्थाओं तथा आंतरिक जगतोंके मूर्त एवं गोचर सत्यकी स्वीकृति है, जो चार या अनेक आयामोंवाले व्योमोंके सिद्धांतका मनोवैज्ञानिक प्रयोग है।

इस प्रकार गुह्य विद्याकी परिभाषा यों की जा सकती है: यह विद्या, आकारोंके जगत्में, उस चीजका मूर्त विषयीकरण है जिसकी शिक्षा आध्यात्मिक अनुशासन शुद्ध मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणसे देते हैं। इन दोनोंको आत्म-विकास और समग्र कर्मकी पूर्णताके लिये, एक-दूसरेका पूरक होना चाहिये। आध्यात्मिक अनुशासनके बिना गुह्य ज्ञान एक ऐसा उपकरण है जो यदि अपवित्र हाथोंमें पड़ जाय तो उस व्यक्तिके लिये जो उसे प्रयोगमें लाता है तथा अन्योंके लिये भी संकटपूर्ण हो जाता है। उधर गुह्यविद्याके बिना आध्यात्मिक ज्ञानके बाह्य परिणामोंमें यथार्थता और निश्चितताका अभाव रहता है; यह केवल आत्म-निष्ठ जगत्में ही सर्वशक्तिमान् है। ये दोनों जब कर्ममें, चाहे वह आंतरिक हो या बाह्य, संयुक्त हो जाते हैं, तो ये अदम्य हो जाते हैं और अतिमानसिक शक्तिकी अभिव्यक्तिके योग्य यंत्र बन जाते हैं।

मृत्युका भय

शरीर और उसकी क्रियाओंके लिये आसक्तिके साथ-ही-साथ शरीरस्थ जीवनके लिये आसक्तिपर भी विजय पा ली जाती है। क्योंकि जब हम यह अनुभव करते हैं कि भौतिक सत्ता हमारा स्व नहीं है, केवल हमारा वेश या उपकरण है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो शरीरकी मृत्युके लिये प्रतिक्षेप जो प्राणिक मनुष्यमें इतनी प्रबल और उग्र वृत्ति है, उसे भी अनिवार्य रूपसे कम हो जाना चाहिये और उसे फेंका जा सकता है। उसे फेंक देना और पूरी तरह फेंक देना जरूरी है। मृत्युका भय और शारीरिक समाप्तिके प्रति अरुचि मनुष्यपर उसके पाशविक मूल द्वारा छोड़े गये दाग हैं। ये निशानियां पूरी तरह मिटनी चाहियें।

भगवान्‌का भय

भगवान्‌के भयका प्रयोजन मुख्य रूपसे नैतिक क्षेत्रमें तब महत्त्वपूर्ण होता है जब जीव इतने पर्याप्त रूपसे विकसित न हो कि शुभका अनुसरण स्वयं शुभके लिये कर सके, जब उसे अपने ऊपर किसी अधिकारीकी जरूरत हो जिसके क्रोध या कठोर भावुकताहीन न्यायसे डरकर शुभकी ओर अपनी निष्ठाकी नींव जमा सके। जब हम आध्यात्मिकतामें बढ़ते हैं तो यह प्रयोजन मनमें बची हुई अस्तव्यस्तता या किसी पुरानी दुराग्रही मानसिकताके रूपके सिवा और किसी तरह नहीं रह सकता...। और ज्यादा विशाल रूपसे कहें तो दिव्य प्रकृतिमें विकसित होना ही तो नैतिक सत्ताकी परिपूर्ति है। इसका सबसे अच्छा तरीका यह है कि भगवानको अपनी उच्चतर आत्मा, मार्ग दिखाने और ऊपर उठाने-वाली इच्छा-शक्ति या स्वामीके रूपमें अनुभव किया जाय जिसके लिये हमें प्रेम है और जिसकी हम सेवा करते हैं। हमारा उद्देश्य होना चाहिये भगवान्‌का डर नहीं, उनसे प्रेम, उनकी सत्ताकी मुक्ति और शाश्वत शुद्धिके लिये अभीप्सा।

निश्चय ही, स्वामी और सेवकके संबंधमें भय आता है, पिता और बालकके संबंधमें भी, लेकिन तभी जब यह मानव स्तरपर हो, जहां उनमें मुख्य रूपसे नियंत्रण, अधीनता और दंडकी बात आती है और प्रेमको अपने-आपको अधिकारीके मुखौटेके पीछे न्यूनाधिक रूपसे मिटा देना पड़ता है। स्वामीके रूपमें भी भगवान् किसीको दंड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं देते, धमकाते नहीं, आज्ञाकारिता आरोपित नहीं करते। मानव अंतरात्माको मुक्त रूपसे भगवान्‌की ओर जाना और अपने-आपको उनकी अभिभूत करनेवाली शक्तिके प्रति अर्पित करना चाहिये ताकि वह इसे पकड़कर अपने दिव्य स्तरोंकी ओर उठा सके और उसे अनंत द्वारा सांत प्रकृतिपर आधिपत्यका वह आनंद दे सके, और उच्चतमकी सेवाका भी जिसके द्वारा अहंकार और निम्नतर प्रकृतिसे मुक्ति मिलती है। इस संबंधकी चाबी है प्रेम और भारतीय योगमें दास्यम् है दिव्य सखाकी सुखद सेवा या दिव्य प्रेयसीकी आवेशभरी सेवा। जगतोंका स्वामी जो गीतामें अपने सेवक या भक्तसे केवल यही मांगता है कि वह जीवनमें उसके उपकरणसे बढ़कर कुछ और न हो, वह यह दावा सखा, मार्गदर्शक, उच्चतर आत्माके रूपमें करता है और वह अपने-आपको, सब जगतोंका स्वामी बतलाता है जो सभी जीवोंका सखा है। "सर्वलोकमहेश्वरम् सुहृदं सर्वभूतानाम्।" वास्तव में ये दोनों संबंध एक साथ होने चाहियें और उनमें से कोई भी दूसरेके बिना पूरा नहीं हो सकता। इसी भांति स्रष्टाके रूपमें भगवान् पितृत्व नहीं जो हमारी सत्ताके बनानेवालेके नाते आज्ञापालन-की मांग करता है बल्कि प्रेमका पितृत्व हमें योगके आत्म-ऐक्यके अधिक निकट ले जाता है। प्रेम ही दोनोंमें असली चाबी है और पूर्ण प्रेम भयके प्रयोजनके प्रवेशके साथ असंगत है। मानव अंत-रात्माकी भगवान्‌के साथ निकटता उद्देश्य है और भय हमेशा रास्तेका रोड़ा और दूरी होता है। यहांतक कि भगवान्‌की शक्तिके बारेमें भययुक्त विस्मय और समादर भी दूरी और विभाजनके चिह्न हैं और वे प्रेमके ऐक्यकी घनिष्ठतामें गायब हो जाते हैं।

पापका भय

दिव्य गुरु अर्जुनसे कहते हैं... तुम अपने कर्मफलसे डर रहे हो, तुम अन्य परिणाम चाहते हो और जीवनमें अपने उचित पथसे डिग रहे हो क्योंकि वह तुम्हें उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर नहीं ले जाता। लेकिन कर्मों और उनके फलका यह विचार, फलकी कामनाका परिणाम, कामनाकी पूर्तिके उपायस्वरूप कर्म, अज्ञानीकी दासता है जो नहीं जानता कि कर्म क्या है, न ही वह उनके सच्चे मूल, वास्तविक क्रिया या उच्च उपयोगिताको जानता है...। तुम बहुत-सी चीजोंसे डरते हो, पापसे डरते हो, दुःखसे डरते हो, नरक और दंडसे डरते हो, भगवान्‌से डरते हो, इहलोक और परलोकसे डरते हो, अपने-आपसे डरते हो। इस क्षण कौन-सी चीज है जिससे तुम नहीं डरते, तुम जो आर्य योद्धा, सारे संसारके मुख्य योद्धा हो? यह महान् भय है जो मानव जातिको घेरे हुए है, पापका भय, इहलोक और परलोकमें दुःख-कष्टका भय, एक ऐसे जगत्‌का भय जिसकी सच्ची प्रकृतिसे वह अनभिज्ञ है, ऐसे भगवान्‌का भय जिसकी सच्ची सत्ता उसने नहीं देखी और जिसके वैश्व प्रयोजनको वह नहीं समझता। मेरा योग तुम्हें महान् भयसे मुक्त कर देगा, इसका जरा-सा अंश भी महान् परित्राण लायेगा। एक बार इस पथपर पग रखनेके बाद तुम देखोगे कि कोई भी कदम हानि नहीं है, जरा-सी गति भी लाभकर होगी। तुम उसमें कोई बाधा न पाओगे जो तुम्हें अपनी प्रगतिसे विपथ कर दे—एक साहसपूर्ण और पूर्ण प्रतिज्ञा जिसे भयभीत और संकोचशील मन, जो अपने सभी मार्गोंपर लड़खड़ाता हो, आसानीसे निश्चित विश्वास नहीं दे सकता। उसका महान् और पूर्ण सत्य तबतक प्रकट नहीं होता जबतक कि इस संदेश-के पहले शब्दोंके साथ हम गीताके अंतिम शब्द भी मिला कर न पढ़ें, "सभी धर्मोंको त्याग कर मेरी शरणमें आ, मैं तुझे सब पापोंसे मुक्त कर दूंगा चिंता न कर।"

लेकिन यह व्याख्या मनुष्यके प्रति भगवान्‌के इस गहरे हृदयस्पर्शी वचनसे नहीं बल्कि पथपर पहली आवश्यक किरणोंसे शुरू होती है जो अंतरात्माकी ओर नहीं, बुद्धिकी ओर निर्दिष्ट है। पहले मनुष्यके प्रेमी और सखा नहीं, मार्गदर्शक और गुरु बोल रहे हैं जिन्हें उसके अंदरसे उसकी सच्ची आत्माके बारेमें, जगत्‌की प्रकृति और स्वयं उसकी क्रियाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्सके बारेमें अज्ञानको दूर करना है। चूंकि वह अज्ञानके साथ, गलत बुद्धि और इस कारण इन विषयोंमें गलत इच्छासे कर्म करता है अतः मनुष्य अपने कर्मोंसे बंधा है या बंधा हुआ मालूम होता है, अन्यथा कर्म मुक्त आत्माके लिये दासता नहीं है। इस गलत बुद्धिके कारण उसमें आशा और भय, क्रोध और दुःख, अस्थायी आनंद होता है अन्यथा पूर्ण शांति और स्वाधीनताके साथ कर्म संभव है।

तीन भयंकर शत्रु

(भय, संदेह, अविश्वास)

...यह बहुत कम ही होता है कि जो लोग तैयार हैं, जो निस्संदेह सिद्धिके लिये अभिप्रेत हैं उन्हें अपने जीवन-के किसी क्षण, भले निमिष मात्रके लिये ही सही, यह अनुभव न हो कि यह सिद्धि है क्या।

लेकिन जिनकी नियति निश्चित है उन्हें भी जोरसे, पूर्ण निश्चयके साथ इस 'किसी चीज'के साथ संघर्ष करना पड़ता है जिसे वे अपनी सांसके साथ हवामें लेते हुए मालूम होते हैं: यह है यह भय, यह दुश्चिता कि क्या होगा। और यह मूर्खतापूर्ण है क्योंकि अंतिम विश्लेषणमें हर एक व्यक्तिकी नियति वही है: तुम पैदा होते हो, जीते हो, न्यूनाधिक संतोषजनक रूपसे जीते हो और मर जाते हो। तब तुम कुछ अवधिके लिये प्रतीक्षा करते हो और फिरसे जन्म लेते हो, न्यूनाधिक संतोषजनक रूपसे जीते हो और फिरसे मर जाते हो और यह अनिश्चित कालतक चलता रहता है जबतक कि तुम्हें यह न लगे कि अब काफी हो गया।

भय किस चीजका? लीकसे बाहर हो जानेका भय? मुक्त होनेका भय, बन्दी न बने रहनेका भय?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जब तुम्हारे अंदर इसे जीत लेनेका काफी साहस आ जाय, जब तुम कहो, 'होना हो सो होता रहे! आखिर खोनेके लिये बहुत कुछ है नहीं,' तब तुम सावधान हो जाते हो, तुम सोचते हो कि क्या यह युक्तिसंगत है, क्या यह सच है, यह सब भ्रम तो नहीं है। तुम कहीं चीजोंकी कल्पना तो नहीं कर रहे, क्या सचमुच इन बातोंमें कोई तथ्य है... और ख्याल रखो यह अविश्वास मूर्खतापूर्ण मालूम होता है लेकिन यह अधिक-से-अधिक बुद्धिमान लोगोंमें भी पाया जाता है, यहांतक कि उनमें भी जिन्हें बार-बार निश्चायक अनुभव हो चुके हैं।

जब तुम इन दो बाधाओंको जीत लो, जब अनुभूतियां इतनी प्रबल हों कि तुम आगे संदेह कर ही न सको, जब संदेह असंभव हो जाय—जैसे स्वयं अपने जीवनके बारेमें संदेह करना—तब भी कुछ भयंकर, तुच्छ, शुष्क, क्षयकारी अविश्वास बना रहता है और यह मानव घमंडपर आधारित रहता है और इसी कारण इतने लंबे अरसे तक चलता है। तुम यह सोचना चाहते हो कि तुम इन सब चीजोंसे ऊपर हो, "ओह, मैं ऐसा नहीं हूं कि इन पिंजरोंमें फंस जाऊं! मैं तर्कबुद्धिवाला मनुष्य हूं और मैं चीजोंको व्यावहारिक दृष्टिकोणसे देखता हूं। मैं इतनी आसानीसे धोखा नहीं खाता।" यह भयंकर है... यह घृणित है, लेकिन यह है संकटपूर्ण...।

जब सचमुच तुम्हें इन चीजोंका काफी अनुभव हो जाता है और तुम चाहते हो कि चीजें और तरहसे हों तब तुम्हारे अंदर साहस, बल और क्षमता होती है कि तुम इन तीन भयंकर शत्रुओंको जीत सको—भय, संदेह और अविश्वास। लेकिन मैं दोहराती हूं, यह काफी नहीं है कि तुम एक दिन बड़े तड़के बैठकर अपना अवलोकन करो और अपने अंदर इन चीजोंके साथ संघर्ष करो और बस खत्म। तुम्हें यह बार-बार, बार-बार करते रहना पड़ेगा, इससे पूरी तरह पिंड छुड़ानेके लिये इस तरह करना पड़ेगा मानों इसका कहीं अंत ही नहीं है। वास्तवमें तुम इनसे कभी पीछा नहीं छुड़ा सकते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन, तुम्हारे भीतर एक ऐसा समय आता है जब तुम इतने भिन्न हो जाते हो कि ये चीजें तुम्हें छू तक नहीं सकतीं। तुम उन्हें देख सकते हो लेकिन तुम उन्हें एक मुस्कानके साथ देख सकते हो और जरासे सीधे-सादे इशारेपर वे चली जाती हैं, वहां चली जाती हैं जहांसे आयी थीं, शायद थोड़ी बदलकर, शायद जरा दुर्बल और कम हठी और कम आक्रामक होकर। यहांतक कि समय आता है जब प्रकाश इतना प्रबल हो जाता है कि समस्त अंधकार गायब हो जाता है।

*

सिद्धिका मार्ग संकरा है, दरवाजे खोलना मुश्किल है, भय, अविश्वास और संदेह प्रकृतिके संतरी हैं जो हमारे पैरों-को कम साधारण चरागाहोंमें मुड़नेसे रोकते हैं।

बच्चोंमें भय

बच्चोंमें भय क्यों होता है? क्योंकि वे कमजोर होते हैं। वे अपने चारों ओरके वयस्क लोगोंसे शारीरिक तौरपर कमजोर होते हैं और साधारणतः प्राणिक और मानसिक तौरपर भी कमजोर होते हैं। भय हीनता-भावसे पैदा होता है।

फिर भी, उससे छुटकारा पानेका एक उपाय है, और यह है: भागवत कृपापर विश्वास रखना और सभी परिस्थितियोंमें रक्षाके लिये उसीपर निर्भर रहना।

तुम जैसे-जैसे विकसित होते जाओगे, वैसे-वैसे यदि तुम अपने अंदर अंतरात्मा—यानी, अपनी सत्ताके सत्य—के साथ संपर्कको विकसित होने दो, तो अपने भयपर विजय पाते जाओगे और हमेशा यह प्रयास करो कि तुम जो कुछ सोचो, जो कुछ बोलो, जो कुछ करो वह सब इस सत्यकी अधिकाधिक अभिव्यक्ति हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब तुम सचेतन रूपसे उसमें निवास करोगे, तो फिर तुम्हें अपने जीवनके किसी भी क्षेत्रमें किसी चीजका भय न रहेगा, क्योंकि तुम उस वैश्व 'सत्य'के साथ एक होगे जो संसारपर शासन करता है।

हमारा पथ

साधना-पथपर चलनेके लिये तुम्हारे अंदर निर्भीक वीरता होनी चाहिये, तुम्हें कभी इस हीन, तुच्छ, दुर्बल और कुत्सित वृत्ति अर्थात् भयके कारण पीछे नहीं हटना चाहिये। दुर्दमनीय साहस, पूर्ण सचाई, सर्वांगपूर्ण आत्मदान—इस हदतक कि तुम कभी हिसाब या मोल-तोल न करो, तुम इसलिये न दो कि तुम पाओगे, तुम इस उद्देश्यसे आत्मोत्सर्ग न करो कि तुम सुरक्षित रहोगे, तुम ऐसी श्रद्धा न रखो जिसे प्रमाणकी आवश्यकता हो, इस पथपर अग्रसर होनेके लिये यह सब अनिवार्य है, बस यही तुम्हें सब विपत्तियोंसे बचनेके लिये आश्रय प्रदान कर सकता है।

डरनेकी कोई बात नहीं

मनुष्यो, देशो और महाद्वीपो !
चुनाव अनिवार्य है :
सत्य या फिर रसातल।

१९६७ के नव वर्षके संदेशमें आप कहती हैं कि चुनाव सत्य और रसातलके बीच है। रसातल मुंह बाये सामने दीखता है, फिर भी यह विश्वास है कि इसे मार्गसे हटा लिया जायगा।

विश्वास उचित ही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संदेश केवल उन्हींके लिये है जो अभीतक सोये हुए हैं और अपनी नींदसे काफी संतुष्ट हैं।

आपके नव वर्षके संदेशमें "रसातल"का क्या अर्थ है, या दूसरे शब्दोंमें, साधकको किस चीजसे डरना चाहिये ?

ठीक इस समय बहुत बड़ा तनाव है। सबने ऐसी स्थिति ले ली है मानों युद्ध आरंभ करनेवाले हों। वह अंधा आवेग है जिसे मनुष्य अपने अंतर्राष्ट्रीय संबंधोंमें ले आते हैं।

इस सबके मूलमें एक भय है, व्यापक अविश्वास है, और वह है जिन्हें वे अपने "हित" कहते हैं (धन, व्यापार)—इन तीन चीजोंका संयोजन ही है। जब मानवताके इन तीन निम्नतम आवेगोंको सक्रिय किया जाता है, उन्हींको मैं रसातल कहती हूं।

जब व्यक्तिने भगवान्‌को पानेके लिये अपने जीवनका उत्सर्ग करनेका निश्चय कर लिया हो, और अगर वह निष्कपट हो, यानी अगर संकल्प निष्कपट हो और उसका निष्कपटताके साथ पालन किया जाय तो बिल्कुल किसी चीजसे भयभीत न होना चाहिये, क्योंकि उसके साथ जो हो रहा है या होगा वह सब उसे इस सिद्धितक छोटे-से-छोटे मार्गद्वारा ले जायगा।

भागवत कृपाका यह उत्तर है। लोग यह मानते हैं कि भागवत कृपाका अर्थ है, तुम्हारे सारे जीवनमें सब कुछ सरल और सहज बना दिया जाय। यह सच नहीं है।

भागवत कृपा तुम्हारी अभीप्साकी चरितार्थताके लिये कार्य करती है और सबसे अधिक तत्पर, सबसे तेज चरितार्थता पानेके लिये सभी चीजोंकी व्यवस्था की जाती है—अतः डरनेकी कोई बात नहीं।

भय कपटसे आता है। अगर तुम आरामदेह जीवन, अनुकूल परिस्थितियां इत्यादि चाहो, तो तुम शर्तों और सीमाओंको लगाते हो, और तब तुम भयभीत हो सकते हो।

लेकिन इसका साधनाके साथ कोई संबंध नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्फुट वचन

मेरा बालक डर नहीं सकता।

*

जो भगवान्‌का है वह किससे डर सकता है? क्या वह विस्तृत होती हुई अंतरात्मा, प्रदीप्त भौंहोंके साथ उस मार्गपर नहीं चल सकता जो भगवान्‌ने उसके लिये बना दिया है, वह चाहे जैसा हो, चाहे उसकी सीमित बुद्धिके लिये एकदम दुर्बोध्य क्यों न हो?

*

...जैसे ही अहंकार समर्पण कर देता और अपनी गद्दी छोड़ देता है वैसे ही भय विलीन होकर अपना स्थान इस शांत आश्वासन-को दे देता है कि कुछ भी असंभव नहीं है।

*

निर्भय होकर अपने-आपको मेरी भुजाओंमें छोड़ दो और विश्वास रखो कि कोई चीज तुम्हें हानि नहीं पहुंचा सकती। मेरी शक्ति और मेरी सुरक्षा हमेशा तुम्हारे साथ हैं।

प्रेम और आशीर्वाद सहित।

*

भय हमेशा बहुत बुरा सलाहकार होता है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय सबसे बुरी बीमारीसे भी खराब है।

*

भय विरोधी शक्तियोंकी खोज है जिन्होंने उसका अन्वेषण जगत्के प्राणियों, मनुष्यों और पशुओंपर अधिकार करनेके सबसे अच्छे साधनोंके रूपमें किया है।

*

जो **शुद्ध** हैं, यानी ऐकांतिक रूपसे भागवत प्रभावमें हैं, उन्हें कोई डर नहीं होता।

१५ अगस्त १९५० का संदेश

हमारी साधना ऐसी स्थितितक जा पहुंची है जहां हम अधिकतर अवचेतना और निश्चेतनासे ही व्यवहार रखते हैं। परिणामस्वरूप भौतिक निर्णयने प्रमुख स्थान ले लिया है और मार्गमें कठिनाइयोंको बढ़ा दिया है, इनका सामना करना होगा बढ़ते साहस और दृढ़ निश्चयके साथ।

बहरहाल जो कुछ हो, तुम जो भी करो, **भयको** अपने ऊपर आक्रमण न करने दो। उसका जरा-सा स्पर्श होते ही प्रतिक्रिया करो और सहायताको पुकारो।

तुम्हें यह सीखना होगा कि अपने शरीरके साथ एकात्म न हो जाओ और उसके साथ एक छोटे बच्चेकी तरह व्यवहार करो जिसे यह विश्वास दिलानेकी आवश्यकता होती है कि उसे डरना नहीं चाहिये।

भय सभी शत्रुओंसे सबसे बड़ा शत्रु है और हमें यहां, हमेशाके लिये उसपर विजय पा लेनी चाहिये।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...अगर तुम अपने अंदर अपनी अंतरात्माके साथ—अर्थात् अपनी सत्ताके सत्यके साथ—संपर्कको विकसित होने दो और अगर तुम हमेशा यह कोशिश करो कि तुम जो कुछ सोचते हो, जो कुछ कहते हो, जो कुछ करते हो उसे इस गभीर सत्यकी अधिकाधिक अभिव्यक्ति होना चाहिये तो तुम अपने भयपर विजय पा लोगे।

जब तुम सचेतन रूपसे इसमें निवास करोगे, तब तुम अपनी सत्ताके किसी भी क्षेत्रमें किसी भी चीजसे न डरोगे क्योंकि तुम उस वैश्व परम सत्यके साथ एकात्म हो जाओगे जो जगत्पर शासन करता है।

*

डरकी कोई चीज ही नहीं है, सब कुछ प्रभु है। प्रभुके सिवा कुछ है ही नहीं। केवल प्रभुका ही अस्तित्व है और जो कुछ हमें डरानेकी कोशिश करता है वह प्रभुका मूर्खतापूर्ण और निरर्थक मुखौटा है।

*

रही बात तुम्हारे ऊपरकी ओर खुलनेकी—तो किसी चीजसे न डरो, सब कुछ तुम्हारी सचाईपर निर्भर है। अगर तुम एकमात्र भगवान्‌को ही चाहते हो, कोई निजी लाभ नहीं चाहते तो एकमात्र भगवान् ही तुम्हारी पुकारका उत्तर देंगे, विरोधी उत्तरोंका खतरा तभी होता है जब तुम्हारा उद्देश्य अहंकारपूर्ण हो।

मेरे आशीर्वाद सहित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अवेकनिंग'से

सब कुछ दे दो

तुम जितना अधिक स्वयंको भगवान्‌को देते हो उतने अधिक पूर्ण रूपसे, निरंतर, प्रत्येक क्षण, वे तुम्हारे सभी विचारोंमें, तुम्हारी सभी आवश्यकताओंमें तुम्हारे साथ रहते हैं, और ऐसी कोई अभीप्सा नहीं है जिसका उत्तर तुरंत न मिलता हो; और तुम्हारे अंदर पूर्ण, सतत घनिष्ठता, पूर्ण निकटताका भाव रहता है। यह ऐसा है मानों तुम साथ लिये हो... मानों भगवान् हर वक्त तुम्हारे साथ हों; तुम चलो और वे तुम्हारे साथ-साथ चलते हैं, तुम सोओ और वे तुम्हारे साथ-साथ सोते हैं, तुम खाओ और वे तुम्हारे साथ-साथ खाते हैं, तुम सोचो और वे तुम्हारे साथ-साथ सोचते हैं, तुम प्रेम करो और वे वही प्रेम हैं जो तुम प्राप्त करते हो। लेकिन इसके लिये तुम्हें स्वयंको पूरा-पूरा समग्र-भावसे, अनन्य भावसे देना चाहिये, कुछ भी बचाकर न रखो, अपने लिये कुछ भी न रखो और अपने पास कुछ भी न रखो, और न कोई चीज बिखेरो ही: तुम्हारी सत्तामें छोटी-से-छोटी चीज भी जो भगवान्‌को नहीं दी गयी है अपव्यय है; यह तुम्हारे आनंदका अपव्यय है, यह ऐसी चीज है, जो तुम्हारे सुखको उतनी मात्रामें कम कर देती है, और जो कुछ तुम भगवान्‌को नहीं देते उसे मानों तुम भगवान् अपने-आपको तुम्हें दे सकें इस संभावनाके मार्गमें खड़ा कर देते हो। तुम उन्हें अपने नजदीक, हमेशा अपने साथ अनुभव नहीं करते क्योंकि तुम उनके नहीं हो, क्योंकि तुम सैंकड़ों अन्य वस्तुओं और व्यक्तियोंके हो; तुम्हारे विचारमें, तुम्हारी क्रियामें, तुम्हारी भावनाओंमें, तुम्हारे आवेशोंमें... लाखों ऐसी चीजें हैं जो तुम उन्हें नहीं देते, और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीलिये तुम उन्हें हमेशा अपने निकट अनुभव नहीं करते, क्योंकि ये सब चीजें तुम्हारे और उनके बीच इतने सारे परदे और दीवारें हैं। लेकिन अगर तुम उन्हें सब कुछ दे दो, अगर तुम कुछ भी बचाकर न रखो, तो वे हमेशा पूरी तरह, तुम जो कुछ भी करते हो, जो कुछ भी सोचते हो, जो कुछ भी अनुभव करते हो, उसमें हमेशा हर क्षण, तुम्हारे साथ होंगे। लेकिन इसके लिये तुम्हें अपने-आपको पूरी तरह देना होगा, कुछ भी बचाकर न रखना होगा; हर छोटी-सी चीज जिसे तुम बचाकर रखते हो एक ऐसा पत्थर है जिसे तुम अपने और भगवान्‌के बीच दीवार खड़ी करनेके लिये रखते हो। और फिर बादमें तुम शिकायत करते हो: "ओह, मैं उनका (भगवान्‌का) अनुभव नहीं करता!" आश्चर्यकी बात तो तब होती अगर तुम उन्हें अनुभव कर पाते।

—माताजी

ऋषिवर बोले :

अहंकार

नम्रता सवेरेसे कुछ परेशान सी थी। उसने कहीं पढ़ा था कि अहंकारका कीड़ा अच्छे-से-अच्छे फूलोंको नष्ट कर देता है। उसने निश्चय कर लिया कि ऋषिवरके आते ही वह अपना प्रश्न दाग देगी कि अहंकार होता क्या है और कैसे फूलोंको नष्ट करता है।

ऋषिवर आये उनके हाथमें कुछ फूल थे। उन्होंने आते ही फूलोंके अर्थ बतलाने शुरू किये। चम्पाका अर्थ बताया मनोवैज्ञानिक पूर्णता, बेला चमेलीका पवित्रता, गुलाबका समर्पण, तुलसीका भक्ति और घासका नम्रता।

अपना नाम सुनते ही नम्रता उठ खड़ी हुई और बोली ऋषिवर यहां मेरा एक प्रश्न है। आपने इतने सारे फूलोंके नाम बतलाये,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब जरा यह बतलाइये कि इन फूलोंको खानेवाला कीड़ा अहंकार क्या होता है।

ऋषिवर हंस पड़े और बोले तुमने शायद सुना हो—

मैं ना मैं ना मैना करे, अरु दूध भात नित खाय।
मैं मैं मैं बकरी करे, छुरीके नीचे जाय॥

आदमीके अंदर यह जो भाव होता है कि यह मैंने किया, यह मेरे कारण हुआ, इसका श्रेय मुझे मिलना चाहिए—इसी 'मैं' को अहंकार कहते हैं और यह बड़ा खतरनाक होता है। सचमुच हम कोई अच्छी चीज कर पाते हैं तो वह भगवान्‌की कृपा और सहायता-से होती है लेकिन अगर हम उसका श्रेय अपने-आप लेना शुरू करें तो उसकी सारी अच्छाई चौपट हो जाती है। कहते हैं मुखमें अग्निका वास होता है। तुम अपनी अच्छी बातोंकी डींग मारो तो वे जल जाती हैं।

स्वाति बोली, ऋषिवर, मैंने अभी एक कहानी पढ़ी है। किसी राजाने एक बड़ी सुन्दर वाटिका लगायी। जमीन उसीने खोदी, खाद दी, रोज पानी देता था। पौधोंकी सेवाटहल उसीका अपना काम था। वहां शक्ति, शूरता, पवित्रता, सिद्धि, सेवा, समर्पण आदिके सुन्दरसे सुन्दर पौधे लगाये और कुछ ही दिनोंमें राजाका बाग राज्यका सबसे सुन्दर बाग बन गया। उसकी सुगंध सारे राज्यमें फैल गयी।

एक दिन राजाने देखा बगीचेके एक कोनेमें एक छोटा-सा पौधा उग रहा है। उसने पौधेकी ओर ध्यान न दिया। वह बढ़ता गया और बढ़नेके साथ-साथ सुन्दर भी होता गया। लेकिन यह क्या? उसके पहले फूलके आते ही वाटिकाका वातावरण बदल गया, सब फूलोंकी महक दब गयी और चारों ओर बड़ी जबरदस्त दुर्गन्ध फैल गयी।

राजा परेशान, प्रजा परेशान, इस दुर्गन्धसे कैसे पिंड छुड़ाएं? इतने अच्छे-अच्छे गुणोंवाले फूल इसके आगे मानों टें बोल गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वनस्पति शास्त्रके विद्वान् बुलाये गये, वाटिकाओंके विशेषज्ञ बुलाये गये लेकिन कोई कुछ न कर सका।

आखिर राजाने एक महात्माको उधरसे गुजरते देखा और जाकर उनके पांव पकड़ लिए। महात्माने इस फूलको देखा और देखते ही हंस पड़े और बोले राजन् यह फूल है अहंकार। यह एक बाकी सबको नष्ट करनेके लिए काफी है। इसे निकाल दो, सब कुछ ठीक हो जायेगा। तुमने तुलसी रामायणकी वह कहानी नहीं पढ़ी कि एक बार नारद मुनिको गर्व हो गया कि उन्होंने काम देवको जीत लिया। भगवान् तो ठहरे भक्तवत्सलके साथ-साथ गर्वप्रहारी, अपने भक्तके अंदर ऐसी चीज कैसे रहने देते।

राह चलते नारदको एक नगर मिला जहांके राजाकी बेटीका स्वयंवर हो रहा था। राजाने बेटीको मुनिके पैरोंमें डाला और उनसे अच्छे वरके लिए आशीर्वाद मांगा। भगवान्का कौतुक देखो मुनि स्वयं उस लड़कीपर आसक्त हो गये 'हरि सो मांगौ सुन्दरताई'। उसे रिझानेके लिए स्वयं भगवान् विष्णुकी सुन्दरता मांग बैठे। भगवान् कब पीछे रहनेवाले थे। उन्होंने कहा मैं अपने भक्तका हित करूंगा और कुछ नहीं। नारदने सोचा उनका काम बन गया और वे स्वयंवर सभामें जा बैठे। साधारण सभीने उनको नारद मुनिके रूपमें ही देखा पर विश्वमोहनी बालाने उनकी ओर मुंहतक न किया।

स्वयंवर समाप्त हो गया। एक सुन्दर युवकके गलेमें माला पहना दी गयी और नारद मुनि अपना-सा मुंह लेकर लौट पड़े। पानीमें अपना रूप देखा तो भाड़में पड़े चनेकी तरह उछलने लगे। सुन्दर युवककी जगह उनका चेहरा बिष्णु भगवान्के परमभक्त वानर जैसा था!! उनके गुस्सेकी सीमा न रही। भगवान्को शाप दे डाला।

भगवान्ने साक्षात् दर्शन देकर बताया कि यह सब नाटक था स्वयंवरमें स्वयं विष्णु और लक्ष्मीने नारदका घमंड चूर करनेके लिए यह नाटक रचा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूं तो अहंकार और गर्व अलग-अलग चीजें हैं पर हिन्दी बोल-चालमें बहुत बार इनका एक ही अर्थमें प्रयोग कर लिया जाता है।

कहानी सबको पसंद आयी लेकिन कोई कुछ कहे उससे पहले मंजुला बोल पड़ी : ऋषिवर, मैंने भी इस तरहकी एक कहानी सुनी है। एक आदमीने बहुत सुन्दर बगीचा बनाया और वह बड़े शौकसे सबको दिखाया करता था। भगवान् इन्द्रने देखा तो सोचा यह इतना अच्छा आदमी है, इतनी मेहनत करता है पर एक अहंके कारण अपना सब कुछ बरबाद कर रहा है। चलें इसकी मदद करें।

देवताओंके सोचने और करनेके बीच समय नहीं लगता। इन्द्रदेव एक बूढ़े ब्राह्मणका रूप धारण करके उस बगीचेमें जा पहुंचे और लगे पौधोंको सराहने। बागके मालिकने देखा तो खुश होता हुआ उनके पास आ पहुंचा और सब कुछ विस्तारसे दिखाने लगा।

ब्राह्मण भी मजा ले लेकर देख रहा था और बार-बार पूछता जाता था, यह किसने किया? यह किसका काम है। और हर बार बगीचेका मालिक प्रथम पुरुष एकवचनमें उत्तर देता था। आखिर एक ऐसी जगह आयी जो एकदम सूखी थी, जहां घासका एक पत्ता-तक न था। बूढ़ेने पूछा यह क्या है? मालिक उत्तर दिये बिना आगे चलने लगा। बूढ़ा भी इतना सीधा न था, बस वहीं डट गया। इसका रहस्य जाने बिना वह आगे न बढ़ेगा।

मालिकने कहा, कुछ नहीं यहां गोहत्या हो गयी थी। बूढ़ेने पूछा क्या गोहत्या हो गयी थी या गाय आकर मर गयी थी? मालिकने कहा "जी नहीं एक गाय यहां घुस आयी थी और उसकी हत्या हो गयी थी।" बूढ़ेने कहा, "किसीने तो हत्या की ही होगी, कौन था वह?" मालिकने कहा, "जी इन्द्रसे गोहत्या हो गयी थी।" ब्राह्मणने पूछा "क्या इन्द्र यहां हत्या करनेके लिए आये थे?" मालिकने कहा, "बात यह है कि शास्त्रोंमें कहा गया है कि हमारे हाथमें इन्द्रका निवास है। हत्या मेरे हाथसे अर्थात् मेरे हाथमें विराजमान इन्द्रसे हो गयी थी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब स्वयं इन्द्र देवता सामने प्रकट हो गये और बोले, "तो, जो कुछ अच्छा किया वह तुमने और जो कुछ बुरा किया वह इन्द्रने। यही है न?"

ऋषिवरने कहा अच्छी कहानी सुनायी तुमने। भगवान् इसी तरह समय-समयपर हमारी आंखें खोलनेके लिए कभी सामने आकर और कभी पीछेसे चोट करते रहते हैं। हम उससे लाभ उठायें या न उठायें, यह हमारे हाथमें है।

रामकृष्ण वचनामृत

(माताजी द्वारा चुने हुए कुछ वचन)

एक सुविख्यात ब्रह्म समाजी उपदेशकने कहा कि परमहंस पागल हैं और निरंतर एक ही विषयपर सोचते-सोचते उनका दिमाग बिगड़ गया है। परमहंसने उपदेशकसे कहा: "आप कहते हैं कि यूरोपमें भी बुद्धिमान् लोग एक ही विषयपर सोचते रहनेके कारण पागल हो जाते हैं। परंतु वह विषय क्या है, जड़ या आत्मा? इसमें आश्चर्यकी बात ही क्या है कि जड़के बारेमें निरंतर सोचनेके कारण आदमी पागल हो जाय? लेकिन उस बुद्धिका ध्यान धरनेसे कोई कैसे पागल हो सकता है जिससे सारा विश्व बुद्धिमान बना है?"

*

अनंत सांतके द्वारा सिखाया जाना चाहिये, वास्तविक अवास्तविकता-के द्वारा और तात्विक प्रतीयमानकी सहायतासे।

*

जिसका मन भगवान्‌के लिये तरस रहा है वह खाने-पीने जैसे नगण्य मामलोंको महत्त्व नहीं दे सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

जनवरी १९८८

वर्ष १८, अंक ६, पूर्णांक २१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

नये वर्षका संकल्प	१
दैनन्दिनी	१
संपादकीय : नये वर्षका व्रत	५
'अवेकनिंग'से	६
योगके बारेमें	८
ध्यानका अर्थ और विषय	९
ध्यान और प्रगति	११
व्यक्तिगत और सामूहिक ध्यान	१४
ध्यान और उसके बाद	१८
ध्यान और कल्पना	२०
किसी वाक्यपर ध्यान	२४
ध्यान—कई प्रकारके	२७
ध्यान और काम	३०
ध्यानकी कठिनाइयां	३३
सक्रिय ध्यान	३५

ग्राहकोंसे

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० दे कर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नये वर्षका संकल्प

मानवजातिसे बढ़कर भगवान् हैं, किंतु हमें उन्हें मानवजातिमें भी खोजना चाहिये, उनकी सेवा करनी चाहिये। मानवजातिकी उपासनाका अर्थ है बढ़ती हुई दयालुता, सहिष्णुता, उदारता, सहायता, एक-प्राणता, वैश्विकता, ऐक्य और व्यक्तिगत और सामूहिक विकासकी परिपक्वता। इन चीजोंकी ओर हम अन्य किसी भी युगकी अपेक्षा अधिक तेजीसे आगे बढ़ रहे हैं, यद्यपि लड़खड़ाते कदमोंसे और भयंकर पतनोंद्वारा भगवान्‌की उपासनाके अंदर ही हमारे अन्य मानव स्व-ओंकी उपासना हमारे अधिक विशाल आदर्शके रूपमें हमारे अधिक निकट आती है। इनमेंसे किसी एकको भी एक कदम निकट लाना, अपने मनमें उन्हें कितनी भी अपूर्ण अभिव्यक्ति और सूत्रके साथ बिठानेमें सहायक होना, उनकी ओर अपनी गतिविधिको तेजीसे बढ़ाना ही ओजस्वी उपलब्धियां, उदात्त सेवाएं हैं।

—श्रीअरविंद

दैनन्दिनी

जनवरी

१. भूतकाल एक ही साथ अड़ंगा भी है और प्रगतिके लिये शक्ति भी। उसमें वह सब है जिसने वर्तमानकी रचना की है और वह उस शक्तिका भी हिस्सा है जो भविष्यकी रचना कर रही है; क्योंकि भूतकाल अभीतक मरा नहीं है, उसके रूप चले गये हैं और उन्हें जाना ही पड़ा अन्यथा वर्तमानका जन्म न होता; लेकिन वर्तमानमें उसकी आत्मा, उसकी शक्ति, उसका प्रधान तत्त्व पर्देके पीछे जीवित हैं और हमेशा संचित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हुए, बढ़ते हुए, गहरे होते हुए भविष्यमें भी जीवित रहेंगे।

२. समस्त विश्वका सृजन भागवत शक्तिको अभिव्यक्त करनेके लिये हुआ है और मानव सत्ताओंको, स्त्री या पुरुषको यह विशेष उद्देश्य दिया गया है कि वे उस शाश्वत दिव्य सत्वके बारेमें सचेतन हों और उसे अभिव्यक्त करें।

३. जरूरत है ऐसी निर्भरताकी जिसमें कोई मांग न हो, तभी भागवत शक्तिका प्रवेश होता है और वह सत्ताको हर क्षण निर्देशन देती, उसकी सहायता करती और उसे सहारा देती है।

४. ऐसे लोग जिन्हें मैं एकदम आदिम कहती हूं—जब उन्हें कोई चीज मिलती है तो उसे छोड़ना नहीं चाहते, उससे आसक्त हो जाते हैं। मुझे यह बहुत बचकाना लगता है।... जब उन्हें कुछ छोड़ना पड़ता है तो उन्हें कष्ट होता है!

५. तुम जितना अधिक विशाल बनोगे उतना ही अधिक तुम्हें प्राप्त होगा। तुम्हारा तादात्म्य जितना अधिक होगा उतने ही अधिक तुम 'वह', बन जाओगे; तब तुम लेनेकी जगह दोगे। जितना अधिक दोगे उतना ही तुम्हारा विकास होगा।

६. भगवान्‌को जाननेका एकमात्र उपाय है उनके साथ तादात्म्य —लेकिन जबतक तुम तादात्म्यका यह तरीका नहीं जानते, एक सौ एक चीजें तुम्हारी राहका रोड़ा बनेंगी, तुम्हें इस ओर, उस ओर खींचेंगी, तुम्हें बिखेर देंगी और तुम भगवान्‌के साथ एक न हो पाओगे।

७. श्रद्धा रखो और निश्छल, सहृदय रहो।

८. भूतकालको जाने दो, केवल शाश्वतपर एकाग्र रहो।

९. काम शुरू कर दो और श्रद्धा बनाये रखो, तुम्हारी आवश्यकताके अनुसार शक्ति आयेगी। तुम्हारी ग्रहणशीलता तुम्हारी श्रद्धा और विश्वासपर निर्भर है।

१०. ऐसा कुछ भी नहीं है जो ईश्वर न हो। ईश्वर वह सब है जो अभिव्यक्त है और वह भी जो अनभिव्यक्त है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसे व्यक्ति कम हैं जो ईश्वरके बारेमें सचेतन हों और यह अचेतना ही जगत्का मिथ्यात्व बनती है।

११. मानवजातिकी प्रगति और भारतकी उज्ज्वल नियतिके लिये जो लोग सहयोग देना चाहते हैं उन्हें स्पष्टदर्शी अभीप्सा और ज्योतिर्मय कार्यमें ऐक्य प्राप्त करना चाहिये।

१२. भगवान्के बिना हम सीमित और बेबस सत्ताएं हैं, अगर हम अपने-आपको पूरी तरह भगवान्के अर्पित कर दें तो उनके साथ सब कुछ संभव है और हमारी प्रगति असीम होती है।

१३. प्रत्येक व्यक्तिका साधना करनेका अपना तरीका और भगवान्-तक पहुंचनेका अपना मार्ग होता है। और यह चिंता न करनी चाहिये दूसरे कैसे करते हैं।

१४. अगर असुविधाएं और मुसीबतें हैं और सब कुछ वैसा नहीं है जैसा वह चाहता है, तब भी उसे ऐसी परिस्थितिमें भी काम अच्छे-से-अच्छी तरह करते रहना चाहिये। यही साधनाका विधान है।

१५. माताजीको अर्पित किया गया कार्य साधनाका अंग बन जाता है और आंतरिक विकासके लिये एक साधन बनता है।

१६. जब कोई बड़ा कार्य करना हो जहां कई व्यक्ति एक ही लक्ष्यके लिये एक साथ ऐसा कार्य करें जिसमें व्यक्तिगत कुछ भी न हो, तो ऐसा काम तबतक नहीं हो सकता जबतक उसमें ऐसी व्यवस्था न हो जिसमें अधीनस्थता भी हो और अनु-शासन भी।

१७. शरीर भी मन और प्राणकी तरह साधना करनेके लिये एक यंत्र है और जहांतक संभव हो उसे अच्छी स्थितिमें रखना चाहिये।

१८. प्रत्येकको आंतरिक प्रगति करनी होगी तभी बाह्य तकलीफें गायब या नगण्य हो सकेंगी।

१९. जहां उसका अस्तित्व न हो वहां हमें शक्तिको जगाना होगा;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने स्वभावको बदलना होगा और नये हृदयके साथ नव मानव बनना होगा। नव जन्म लेना होगा।

२०. हिंदू-मुसलमान ऐक्य राजनीतिक समाधानसे न हो पाएगा। जहां अनैक्यके कारण हैं वहीं गहराईमें, हृदय और मनमें उसके उपाय ढूंढ़ने होंगे।

२१. हमें गलतफहमियोंके कारणोंको अधिक अच्छी पारस्परिक समझ और सहानुभूतिके द्वारा हटानेका प्रयास करना चाहिये; हमें देशप्रेमीका अडिग प्रेम अपने मुसलमान भाईकी ओर बढ़ाना चाहिये और यह याद रखना चाहिये कि उसमें भी नारायणका निवास है।

२२. मानव, तू भगवान्‌की प्रकृति और उनके तत्त्वके साथ एक है, अपने साथी-मानवोंके साथ एक है। जाग उठ और अपने शुद्ध देवत्वकी ओर प्रगति कर; अपने अंदर और दूसरोंके अंदर भगवान्‌के लिये जी।

२३. केवल भगवान्‌में जी कर और मन, हृदय और शरीरको उनके वैश्व ऐक्यके बिंबमें बदल कर ही गभीर, निःस्वार्थ और अजेय प्रेम संभव होता है।

२४. पृथ्वीका भविष्य चेतनाके परिवर्तनपर निर्भर है। भविष्यके लिये एकमात्र आशा है मानव चेतनाका परिवर्तन और वह परिवर्तन आकर रहेगा।

२५. मानव यात्रा, दिव्य-जीवनकी ओर आरोहण है, यह कार्योंका भी कार्य स्वीकारने योग्य यज्ञ है। केवल यही मानवका जगत्‌में सच्चा व्यापार है और उसके अस्तित्वका औचित्य भी।

२६. आध्यात्मिक परिवर्तन है शांति, प्रकाश, ज्ञान, शक्ति और ऊपरसे आते उल्लासके अवतरणकी प्रतिष्ठा और आत्मा, भगवान् और उच्चतर वैश्व चेतनाकी अभिज्ञता...

२७. सहनशीलता है प्रयास, कठिनाई या मुसीबत सहते जानेकी शक्ति जिससे न तुम थकते हो, न निराश या अधीर होते हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और न प्रयास करना छोड़ते या अपने लक्ष्य या संकल्पसे हटते हो।

२८. भूल-भ्रांति भरी मानव सत्ताओंकी जाति हमेशा स्वप्न देखती रही है कि सरकार और समाजके यंत्रसे वह अपने परिसरको संपूर्ण बना पाएगी किंतु केवल अपने अंदर आत्माकी पूर्णता-से ही बाहरी परिसरको संपूर्ण बनाया जा सकता है।

२९. जो गरीब, अभागे और असभ्य हैं, वे जन-साधारण नहीं हैं, जन-साधारण वे हैं जो क्षुद्रता और औसत मानवतासे संतुष्ट हैं।

३०. दुःख केवल भूतकालीन भूलोंका स्वाभाविक परिणाम है, वह कोई सजा नहीं है। वह वैसा है जैसे आगसे खेलनेसे फफोले उठते हैं।

३१. भक्ति योगकी प्रथम स्थितिके कुल योग हैं ये तीन शब्द : श्रद्धा, आराधना और आज्ञाकारिता।

संपादकीय :

नये वर्षका व्रत

हर वर्षकी भांति पिछला वर्ष भी हमारे लिये कई पाठ लाया था। व्यक्तिके रूपमें और राष्ट्रके रूपमें हम आज भी किंकर्तव्य-विमूढ़ अपने-आपसे पूछ रहे हैं, "इतने वर्षोंके प्रयासके बाद कहीं कोई प्रकाश-रेखा नहीं दीखती; हम कहां भटक गये हैं, क्या मार्ग-भ्रष्ट होकर बियाबानमें खो जायेंगे ? हमने इतनी आशासे स्वाधीनता-के सपने संजोये थे। स्वाधीनता क्या मृगतृष्णा बनकर रह जाएगी ?"

ऐसे प्रश्नोंके उत्तर हम सबको अपने अंदर डुबकी लगा कर खोजने होंगे और प्रत्येक व्यक्तिको अपना, निजी उत्तर मिलेगा क्योंकि हर व्यक्तिके जीवनकी रेखा भिन्न है, उसके लक्ष्य, आकांक्षा और कामनाएं भिन्न हैं किंतु एक राष्ट्रके रूपमें हम अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों ओर निरीक्षण कर अपने-आपको भी देख कर समझ पाएंगे कि कौन-सी कमी हमें इतना बेबस बना रही है और उलझनमें डाल रही है। हमारी कमियां कई हैं। सर्व प्रधान कमी है: अपनी निष्पक्ष, निर्मम जांच करनेवाली दृष्टि। हम या तो अपने-आपको दुनियाका सर्व श्रेष्ठ राष्ट्र मानते हैं या फिर सभी राष्ट्रोंसे गया बीता! कितनी बार हम अपने भाइयोंसे भारतकी अति-रंजित प्रशंसा सुनते हैं या एकदम कटु आलोचना।

दूसरी कमी जो हर क्षेत्रमें भारतको पीछे धकेल देती है, वह है अनुशासनहीनता। राष्ट्रीय जीवनके किसी भी क्षेत्रपर दृष्टि डालें तो हम पाएंगे कि भारतकी अनुशासनहीनता उसे पराजित करती और उचित स्थान पानेसे रोकती है।

तीसरी कमी है देश प्रेमकी। हम कभी उसके लिये अपना सुख, आराम छोड़नेके लिये तैयार नहीं रहते। व्यक्तिसे बढ़कर राष्ट्र-हितकी चिंता हम कभी-कदास ही करते हैं।

क्या नव-वर्षके इस पुण्य अवसरपर हममेंसे प्रत्येक यह व्रत न ले पाएगा कि वह स्वार्थकी बलि चढ़ा कर मांको श्रद्धा और भक्ति-पूर्ण अर्घ्य देगा?

—अनुबेन

'नारी स्तम्भ':

'अवेकनिंग'से

मां मुझे रोग मुक्त करो!

जब कोई किसी बीमारीके चंगुलमें फंस जाय तो उसे माताजीसे किस तरह प्रार्थना करनी चाहिये?

किस तरह प्रार्थना करनी चाहिये?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे मां ! मुझे रोगमुक्त करो।

*

हर एक स्थितिमें शक्ति ही रोगमुक्त करती है।

दवाइयोंका प्रभाव कम ही होता है; दवाइयोंमें श्रद्धा ही रोग-मुक्त करती है।

उस चिकित्सकसे इलाज करवाओ जिसपर तुम्हें विश्वास है और केवल वही दवाइयां लो जो तुम्हारे अंदर विश्वास जगायें।

शरीरको केवल भौतिक प्रक्रियाओंपर विश्वास होता है इसीलिये तुम्हें उसे दवाइयां देनी पड़ती हैं—लेकिन दवाइयोंका असर केवल तभी होता है अगर उनके द्वारा शक्ति कार्य करे।

एलोपैथी चिकित्सक साधारणतः एक चीजको रोगमुक्त कर देते हैं लेकिन दूसरी किसी चीजको बिगाड़ कर रख देते हैं। आयुर्वेद चिकित्सामें सामान्यतः यह त्रुटि नहीं होती। इसीलिये मैं उनके पास जानेकी सलाह देती हूं।

खांसी

माताजी, कई दिनोंसे मैं नियमित रूपसे सूर्य-स्नान कर रहा हूं, खांसी धीरे-धीरे जा रही है अब थोड़ी-सी खांसी आती है लेकिन अब वह मुझे परेशान नहीं करती। क्या सूर्य-स्नान जारी रखना अच्छा होगा ?

हां, तुम्हें यह प्रतिदिन करना चाहिये; यह बल देता है और तुम्हारी ऊर्जाको बनाये रखता है जहांतक हो सके तुम्हें खांसीको रोकना चाहिये। इच्छा द्वारा खांसीको वशमें किया जा सकता है। और तुम्हें हमेशा इस संयमको पानेकी कोशिश करनी चाहिये, क्योंकि खांसी अनावश्यक रूपसे थकाने वाली होती है।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यान

योगके बारेमें

क्या आप योगके विषयमें कुछ कहनेकी कृपा करेंगी ?

तुम योग-साधना किसलिये करना चाहते हो ? शक्ति प्राप्त करनेके लिये ? शांति और स्थिरताकी प्राप्तिके लिये ? मानवजातिकी सेवाके लिये ?

इनमेंसे कोई भी उद्देश्य यह बतानेके लिये काफी नहीं है कि तुम इस योग-मार्गके लिये हो।

तुम्हें जिस प्रश्नका उत्तर देना है वह यह है। क्या तुम भगवान्‌के लिये योग-साधना करना चाहते हो। क्या भगवान् ही तुम्हारे जीवनके परम सत्य हैं, यहांतक कि तुम उनके बिना रह ही नहीं सकते ? क्या तुम यह अनुभव करते हो कि तुम्हारे जीवनका एकमात्र उद्देश्य भगवान् ही हैं और उनके बिना तुम्हारे जीवनका कोई अर्थ नहीं है ? यदि ऐसा हो तभी कहा जा सकता है कि तुम्हारे अंदर इस योग-मार्गके लिये पुकार है।

सबसे पहली आवश्यक चीज है भगवान्‌के लिये अभीप्सा।

और दूसरी बात है इस अभीप्साको सतत बनाये रखना, उसे सदा जीवंत, ज्वलंत और जाग्रत् रखना। और इसके लिये जिस बातकी आवश्यकता है वह है एकाग्रता—भगवान्‌पर एकाग्रता—जो उनके संकल्प और अभिप्रायके प्रति पूर्ण और निरपेक्ष आत्म-समर्पणके भावसे की गयी हो।

हृदय-केंद्रमें अपने-आपको एकाग्र करो। हृदयमें प्रवेश करो, उसके अंदर जाओ, उसकी गहराईमें उतरो और दूरतक, जितनी दूरतक तुम जा सको, जाओ। अपनी चेतनाके बाहर बिखरे हुए तारोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकत्र कर लो, उन्हें समेटकर अंदर डुबकी लगाओ और तहमें जाकर बैठ जाओ।

वहां, हृदयकी गभीर शांतिमें एक अग्नि जल रही है। यही है तुम्हारे अंतरमें रहनेवाले भगवान्‌का दिव्य अंश––तुम्हारी सत्य सत्ता (हृत्पुरुष)। इसकी आवाज सुनो और इसके आदेशका पालन करो।

एकाग्रताके लिये दूसरे केंद्र भी हैं, उदाहरणस्वरूप, एक केंद्र मस्तिष्कके ऊपर है (सहस्रार), दूसरा भ्रू-मध्यमें है (आज्ञा)। इनमेंसे हर एकका अपना प्रभाव है और हर एक किसी परिणामपर पहुंचाता है। परंतु केंद्रीय पुरुषका स्थान हृदय है और हृदयसे ही सब केंद्रीय प्रवृत्तियां निकलती हैं––यहींसे रूपांतरके लिये समस्त गतिशीलता और वेग और आत्म-दर्शन करनेकी शक्ति निकलती है।

७ अप्रैल, १९२९ (मातृवाणी खंड ३; प्रश्न और उत्तर १९२९)

ध्यानका अर्थ और विषय

वस्तुतः ध्यानका क्या अर्थ है?

भारतीय शब्द 'ध्यान'को अभिव्यक्त करनेके लिये अंग्रेजीमें दो शब्दोंका उपयोग किया जाता है, 'मेडिटेशन' और 'कान्टेम्प्लेशन' यानी 'ध्यान' और 'निदिध्यासन'। ध्यानका ठीक-ठीक अर्थ है मनको एक ही श्रेणीके विचारोंकी एक शृंखलापर एकाग्र करना जो एक ही विषयपर कार्य करे। निदिध्यासनका अर्थ है मानसिक रूपसे एक ही वस्तु, एक ही बिम्ब, एक ही विचारपर मनन करना ताकि एकाग्रताकी शक्तिद्वारा वस्तु, बिंब या विचारके विषयमें स्वाभाविक रूपसे मनमें ज्ञान उपजे। ये दोनों ध्यानके रूप हैं, क्योंकि ध्यानका तत्त्व है विचार, अंतर्दर्शन या ज्ञानमें मानसिक एकाग्रता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यानके और भी रूप हैं। विवेकानन्दने कहीं यह सलाह दी है कि तुम अपने विचारोंसे पीछे हट जाओ, उन्हें अपनी मर्जी मुताबिक मनमें आने दो, तुम केवल उनका निरीक्षण करो और यह देखो कि वे क्या हैं। इसे आत्म-निरीक्षणमें एकाग्रता कहा जा सकता है।

यह रूप दूसरे रूपकी ओर ले जाता है। अपने मनसे समस्त विचारोंको निकाल दो ताकि तुम उसे एक तरहसे पवित्र, जागरूक, कोरा बना दो। उसपर साधारण मानवके निम्न विचारोंसे अक्षुब्ध भागवत ज्ञान, काले फलकपर सफेद खड़ियासे लिखे अक्षरोंकी स्पष्टताके साथ अपनी मुहर लगा दे। तुम देखोगे कि गीतामें समस्त मानसिक विचारोंके परित्यागको योगकी प्रणालियोंमेंसे एक प्रणाली बताया है और ऐसा लगता है उसे यह अधिक पसंद है। इसे मुक्तिका ध्यान कहा जा सकता है, क्योंकि यह मनको यांत्रिक रूपसे सोचनेकी प्रक्रियाकी दासतासे छुड़ाती है और उसे सोचने या न सोचने, जैसा चाहे, जब चाहे, सोचने, अपने विचारोंको चुनने या फिर विचारके परे सत्यके पवित्र अंतर्दर्शनमें, जिसे हमारे दर्शनमें 'विज्ञान' कहा गया है, जानेकी छूट देती है।

मानव मनके लिये, ध्यानकी प्रक्रिया सबसे सरल है, लेकिन अपने परिणामोंमें यह सबसे संकीर्ण है; निदिध्यासन अधिक कठिन लेकिन अधिक महान् है; आत्म-निरीक्षण और विचारकी शृंखलासे मुक्ति सबसे अधिक कठिन लेकिन परिणाममें सबसे अधिक विशाल और सबसे अधिक महान् है। तुम अपने झुकाव और अपनी क्षमताके अनुसार इनमेंसे किसीको भी चुन सकते हो। पूर्ण पद्धति तो यह है कि इनमेंसे हर एकको उसके अपने स्थानपर और अपनी विषयवस्तुके लिये उपयोगमें लाया जाय; लेकिन इसके लिये यह जरूरी होगा कि तुम्हारे अंदर अपने-आपको योगमें लगानेके लिये स्थिर श्रद्धा, दृढ़ धैर्य और महान् संकल्प-शक्ति हो।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यानके लिये कौन-सा विषय या कौन-से विचार होने चाहियें ?

जो तुम्हारी प्रकृति और तुम्हारी उच्चतम अभीप्साओंके सबसे अधिक अनुकूल हो। लेकिन अगर तुम मुझसे सुनिश्चित उत्तर मांगो तो मैं कहूंगा कि ध्यान या निदिध्यासनके लिये ब्रह्म ही उत्तम विषय है और मनको जिस विचारपर तल्लीन होना चाहिये वह है सबमें भगवान्, सब कुछ भगवान्में, और सब कुछ भगवान्। तत्त्वत: इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह निराकार भगवान् है या साकार या आत्मनिष्ठ, एकमेव सत्ता हैं। यह विचार मुझे उत्तम लगा, क्योंकि यह सबसे उच्च है और दूसरे सभी सत्योंको अपने अंदर लिये रहता है चाहे वे इस जगत्के सत्य हों या दूसरे जगतोंके या इस गोचर अस्तित्वके परेके सत्य हों—"सर्वं खल्विदं ब्रह्म"।

'आर्य'के तीसरे अंकमें, ईशोपनिषद्के विश्लेषणकी दूसरी किस्तके अंतमें सर्वके इस अंतर्दर्शनकी व्याख्या है, वह तुम्हें इस विचारको समझनेमें सहायता दे सकती है।

ध्यान और प्रगति

क्या ध्यान करनेके लिये अधिकाधिक प्रयत्न करनेकी आवश्यकता नहीं है ? क्या यह सच नहीं है कि जितनी अधिक देरतक कोई ध्यान करता है उतनी अधिक प्रगति होती है ?

ध्यानमें बिताये गये घंटे आध्यात्मिक प्रगतिका प्रमाण नहीं हैं। आध्यात्मिक प्रगतिका प्रमाण तो तब होगा जब यह अवस्था आ जाय कि ध्यान करनेके लिये तुम्हें किसी प्रकारका प्रयास ही न करना पड़े, ध्यानको रोकनेके लिये भले ही प्रयासकी आवश्यकता हो। तब ऐसी अवस्था हो जाती है कि ध्यानको रोकना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कठिन हो जाता है। भगवान्‌के चिंतनको रोकना, साधारण चेतनामें नीचे उतरना कठिन हो जाता है। जब भगवान्‌में एकाग्रता तुम्हारे जीवनकी परम आवश्यकता बन जाय, जब तुम उसके बिना रह ही न सको, तुम चाहे किसी काममें क्यों न लगे रहो, जब यह अवस्था स्वाभाविक रूपसे रात-दिन बनी रहे—तब समझना चाहिये कि निश्चित रूपसे तुम्हारी प्रगति हुई है, तुमने वास्तविक उन्नति की है। चाहे तुम ध्यान लगाकर बैठो या घूमो-फिरो और काम-काज करो, जिस बातकी तुमसे अपेक्षा की जाती है वह है चेतना। यही एक-मात्र आवश्यकता है—भगवान्‌के बारेमें सदा सचेतन रहना।

परंतु क्या ध्यानमें बैठना अनिवार्य संयम नहीं है और क्या इससे भगवान्‌के साथ अधिक प्रगाढ़ और केंद्रित एकता नहीं आती?

हो सकता है। परंतु हमें कोरा संयम अभीष्ट नहीं है। हम चाहते हैं कि प्रत्येक कर्म करते समय, प्रत्येक क्षण, हमारी समस्त क्रियाओं और प्रत्येक गतिमें, हमारी चेतना भगवान्‌में केंद्रित रहे। यहां कुछ साधक ऐसे हैं जिनसे ध्यान करनेको कहा गया है, किंतु ऐसे साधक भी हैं जिन्हें किसी प्रकारका ध्यान करनेको नहीं कहा गया। परंतु इससे यह नहीं समझना चाहिये कि ध्यान न करने-वालोंकी प्रगति नहीं हो रही है। वे भी एक साधना करते हैं, किंतु वह दूसरे प्रकारकी साधना है। भक्ति और आत्मोत्सर्गके भावके साथ कर्म करना, कार्य करना आध्यात्मिक साधना है। अंतिम उद्देश्य यह है कि केवल ध्यानमें ही नहीं, बल्कि प्रत्येक अवस्थामें, जीवनकी प्रत्येक क्रियामें भगवान्‌के साथ सतत एकताका अनुभव किया जाय।

कुछ लोग ऐसे हैं जो ध्यानमें बैठते हैं तो एक ऐसी अवस्थामें चले जाते हैं जिसे वे बहुत ही सुन्दर और आनंदमय समझते हैं। वे इस अवस्थामें आत्म-संतोषपूर्वक बैठे रहते हैं और जगत्‌को भूल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते हैं; किंतु यदि उनके ध्यानमें कोई बाधा पहुंचे तो वे उस अवस्थामेंसे क्षुब्ध और क्रुद्ध होकर निकलते हैं, क्योंकि उनके ध्यानमें बाधा पड़ी। यह किसी आध्यात्मिक प्रगतिका या साधनाका लक्षण नहीं है। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो ऐसा आचरण करते हैं मानों उन्हें लगता हो कि यह ध्यानका कर्जा चुकानेके लिये है। ये उन लोगोंकी तरह हैं जो सप्ताहमें एक बार गिरजाघर हो आते हैं और समझते हैं कि उन्होंने भगवान्‌का सारा पावना चुका दिया।

यदि तुम्हें ध्यान करनेके लिये प्रयत्न करना पड़ता है तो अभी तुम आध्यात्मिक जीवन जी सकनेकी अवस्थासे बहुत दूर हो: जब ध्यानावस्थासे बाहर निकलनेके लिये प्रयत्न करनेकी आवश्यकता हो तब तुम्हारा ध्यान इस बातका संकेत हो सकेगा कि तुम आध्यात्मिक जीवन जी रहे हो। हठयोग और राजयोग जैसी कुछ ऐसी साधनाएं भी हैं जिनका अभ्यास करते हुए भी हो सकता है कि साधकका आध्यात्मिक जीवनसे कोई संबंध न हो। अधिकतर हठयोगद्वारा शरीरपर और राजयोगद्वारा मनपर संयम हो जाता है। परंतु आध्यात्मिक जीवनमें प्रवेश करनेका अर्थ है भगवान्‌में गोता लगाना, ठीक उसी तरह जैसे कोई समुद्रमें कूद पड़े। और यह भी केवल आरंभ है, अंत नहीं क्योंकि गोता लगानेके बाद तुम्हें भगवान्‌में निवास करना सीखना होगा। इसका क्या उपाय है? तुम्हें सीधे कूद पड़ना चाहिये, सोचे बिना: "मैं कहां गिरूंगा, मेरी क्या दशा होगी?" तुम्हारी मनकी झिझक ही है जो तुम्हें रोकती है। तुम्हें अपने-आपको छोड़ देना चाहिये। यदि तुम समुद्रमें गोता लगाना चाहो और साथ-ही-साथ यह सोचते रहो: "कहीं आसपास कोई पत्थर या चट्टान न हो।" तो तुम गोता नहीं लगा सकोगे।

२१ अप्रैल, १९२९ (मातृवाणी खंड ३; प्रश्न और उत्तर १९२९)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्तिगत और सामूहिक ध्यान

इस शाम, ध्यानसे पहले मैं कुछ शब्द कहूंगी, क्योंकि कई व्यक्तियोंने पूछा है कि सम्मिलित ध्यान और व्यक्तिगत ध्यानमें क्या भेद है?

व्यक्तिगत ध्यान--ध्यान कई प्रकारके होते हैं जिनका कि हम अभ्यास कर सकते हैं, इस चीजको मैं कई बार पहले बता चुकी हूं, उसके बारेमें आज फिरसे नहीं कह रही।

परंतु सम्मिलित ध्यानका अभ्यास सब कालोंमें किया जाता रहा है--विभिन्न कारणोंसे, विभिन्न तरीकोंसे और विभिन्न प्रयोजनोंको लेकर। जिसे सम्मिलित ध्यान कहा जाता है वह कुछ लोगोंका एक समुदाय होता है जिसमें लोग किसी निश्चित प्रयोजनके लिये एक जगह एकत्र होते हैं। उदाहरणार्थ, सभी कालोंमें प्रार्थनाके लिये लोग एक जगह इकट्ठे हुआ करते थे; अवश्य ही गिरजाघरों-में यह एक प्रकारका सम्मिलित ध्यान ही है। परंतु गिरजाघरसे बाहर भी, ऐसे लोग रहे हैं जिन्होंने सार्वजनिक प्रार्थनाओंके लिये सम्मिलित ध्यानका आयोजन किया था। ये प्रार्थनाएं दो विभिन्न प्रकारकी हैं।

हम जानते हैं कि मानव इतिहासके प्रारंभसे लोगोंके कुछ समुदाय अपनी आंतरात्मिक स्थितियोंको सम्मिलित रूपसे अभिव्यक्त करने-के लिये एक जगह इकट्ठे हुआ करते थे। कुछ लोग मिलकर परमात्म-स्तुतिके गीत गाने, भजन गाने, कृपाओंका गुण-गान करने, पूजा-भाव, आभार व कृतज्ञता प्रदर्शित करने और इस प्रकार परमात्माकी स्तुति करनेके लिये इकट्ठे होते थे। दूसरे कुछ लोग --इसके भी ऐतिहासिक उदाहरण हैं--सम्मिलित रूपसे ईश्वरका आवाहन करनेके लिये इकट्ठे होते थे, उदाहरणार्थ, परमेश्वरसे कुछ चीज मांगनेके लिये, और इसे सब एक साथ मिलकर, एक होकर किया करते थे, इस आशासे कि इस आवाहनमें, इस प्रार्थनामें, इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांगमें अधिक बल होगा। इसके अनेक लोक-विख्यात उदाहरण हैं। बहुत पुराने उदाहरणोंमेंसे एक १००० ई० का है, जब कुछ भविष्यवक्ताओंने यह उद्घोषित किया था कि अब यह संसारका अंत है, और तब सब स्थानोंपर लोग एकत्र हुए थे सम्मिलित प्रार्थनाएं करनेके लिए और यह अनुरोध करनेके लिये कि संसारका अंत न हो (!) अथवा कुछ भी हो इसकी रक्षा की जाय। अभी बिल्कुल हाल ही में, आधुनिक कालमें, जब कि इंग्लैंडका राजा-जार्ज, निमोनियासे मर रहा था, लोग न केवल चर्चोंमें, बल्कि राज, प्रासादके सामने, सड़कोंपर एकत्र हुए थे, प्रार्थनाएं करने और परमेश्वरसे यह मांगने कि उसे अच्छा कर दें। ऐसा हुआ कि वह अच्छा हो गया, लोगोंने विश्वास किया कि यह उनकी प्रार्थनाओंसे हुआ...। निःसंदेह, यह सामूहिक ध्यानका एकदम बाहरी, कह सकती हूं कि, एकदम सांसारिक रूप है।

प्राचीन कालके सभी दीक्षा-समुदायोंमें, सभी आध्यात्मिक स्थानों-में सामूहिक ध्यानका सदा ही अभ्यास किया जाता था, पर वहां प्रेरक भाव सर्वथा भिन्न होता था। वे एकत्र होते थे सामूहिक प्रगतिके लिये, शक्ति, प्रकाश और प्रभावके प्रति एक साथ मिलकर अपने-आपको खोलनेके लिये और...। न्यूनाधिक रूपमें यही चीज है जिसके लिये हम प्रयास करना चाहते हैं।

तो, इसकी पद्धतियां दो हैं और इन्हींके बारेमें मैं तुम्हें आज बताने जा रही हूं। दोनों हालतोंमें अभ्यास वैसे ही किया जाता है जैसा कि व्यक्तिगत ध्यानमें, अर्थात्, एक ऐसे आसनसे बैठ जाओ जिसे बनाये रखना तुम्हारे लिये पर्याप्त सुखकर हो, पर ऐसा सुख-कर न हो कि नींद ही आने लगे! और उसके बाद, जो कुछ मैंने तुम्हें तब बताया था, जब मैं उधर दूसरी ओर वितरणके लिये जाया करती थी, उसे करो, अर्थात्, अपने-आपको ध्यानके लिये तैयार करो, स्थिर और शांत होनेकी कोशिश करो, केवल बाहरी तौरपर ही गप्पें लगाना बंद न करो, बल्कि अपने मनको भी चुप करनेकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोशिश करो और अपनी चेतनाको, जो तुम्हारे अंदर उठते हुए सब विचारों और तुम्हारे पूर्वाग्रहोंमें छितरी रहती है, उसे जहांतक हो सके पूरी तरह समेटकर वापस लाकर यहां हृदयके क्षेत्रमें, सौरचक्र-में इस तरह केंद्रित करो कि मस्तिष्ककी सभी सक्रिय शक्तियां और वे सब गतियां जो दिमागको दौड़ाती रहती हैं, वापस लायी जा सकें और यहां केंद्रित की जा सकें। यह कुछ सेकंडोंमें भी किया जा सकता है और कुछ मिनट भी लग सकते हैं, यह प्रत्येक व्यक्तिपर निर्भर है। निश्चय ही यह प्रारंभिक मनःस्थिति है। इसके बाद, जब यह हो जाय (अथवा तुम जितनी अच्छी तरह कर सकते हो उतनी अच्छी तरह हो जाय), तो तुम दो वृत्तियां अपना सकते हो, अर्थात्, सक्रिय वृत्ति या निष्क्रिय वृत्ति।

जिसे मैं सक्रिय वृत्ति कहती हूं वह है (मैं इसे सामान्य रूपमें रखूंगी), उस व्यक्तिपर, जो ध्यानका संचालन कर रहा है, अपने-आपको एकाग्र करना, वह तुम्हें जो वस्तु देना चाहता है उसे प्राप्त करनेके संकल्पके साथ उसके प्रति अपने-आपको खोलना अथवा उस शक्तिके प्रति खोलना जिसके संपर्कमें वह तुम्हें लाना चाहता है। यह सक्रिय वृत्ति है, क्योंकि यहां एक संकल्प है जो काम करता है और किसी व्यक्तिके प्रति अपने-आपको खोलनेके लिये, किसी व्यक्तिपर एकाग्र होनेके लिये सक्रिय एकाग्रता है।

दूसरी, निष्क्रिय वृत्ति, बस, यह है : पहले एकाग्रचित्त होओ, जैसा कि मैं तुम्हें बता चुकी हूं, उसके बाद अपने-आपको खोलो, ठीक ऐसे जैसे कोई दरवाजा खोलता है, तुम जानते हो, जानते हो न ! कि तुम्हारे यहांपर (हृदयकी ओर संकेत करते हुए) एक दरवाजा है, एकाग्रचित हो चुकनेके बाद तुम दरवाजा खोलते हो और इस प्रकार बने रहते हो (निश्चलताका संकेत करते हुए) अथवा तुम दूसरा, एक पुस्तकका रूपक ले सकते हो, तुम अपनी पुस्तकको पूरा-पूरा खोल देते हो जिसके पृष्ठ बढ़िया और एकदम सफेद हैं, अर्थात्, सर्वथा नीरव रहो और जो होगा उसकी प्रतीक्षा करते हुए तुम उसी अवस्थामें बने रहो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये दो वृत्तियां हैं। जैसा दिन या जैसा अवसर हो उसके अनुसार तुम किसी एक या दूसरीको अपना सकते हो अथवा तुम किसी एकको ही प्रमुखतः चुन सकते हो यदि उससे तुम्हें अधिक सहायता मिलती हो। दोनों ही प्रभावकारी हैं और समान रूपसे उत्तम फल देनेवाली हैं।

अच्छा तो, अब, खास हमारे अपने मामलेमें, मैं तुम्हें बताती हूं कि मैं क्या करनेका प्रयत्न करती हूं...। जल्दी ही अब उसे एक वर्ष हो जायगा जब एक बुधवारको अतिमानसिक शक्तिका आविर्भाव हुआ था। तबसे यह बहुत सक्रिय रूपसे कार्य कर रही है, भले बहुत थोड़े लोग ही इसे जानते हैं (!) परंतु फिर भी मैंने सोचा कि अब हमारे लिये समय आ गया है—इसे कैसे समझाऊं ? —जब हम ग्रहणशीलता बढ़ानेका प्रयत्न करके उसके कार्यमें कुछ सहायता कर सकते हैं।

अवश्य ही यह केवल आश्रममें ही नहीं, बल्कि सारे संसार-भर-में अपना कार्य कर रही है और हर जगह, जहां कहीं थोड़ी-सी ग्रहणशीलता है, यह—'शक्ति' कार्यमें लगी है। और मुझे कहना चाहिये कि संसारमें आश्रमके पास ही एकमात्र ग्रहणशीलता, ग्रहण-शीलताका एकाधिकार नहीं है परंतु चूंकि बात ऐसी है कि हम सब यहां कम या अधिक यह जानते हैं कि क्या घटित हुआ है, तो हां, मैं आशा करती हूं कि व्यक्तिगत रूपसे तो हर एक इस अवसरसे लाभ उठानेका पूरा प्रयास कर ही रहा होगा, पर सामूहिक रूपसे भी हम कुछ कर सकते हैं, अर्थात्, सामूहिक रूपमें अधिक-से-अधिक ग्रहणशीलता प्राप्त की जा सके इसके लिये विशेष रूपसे उर्वरा भूमि तैयार करनेके लिये हम क्षेत्रको एक रूप बनानेका प्रयास कर सकते हैं, जिससे समय और शक्तिका यथासंभव कम-से-कम अपव्यय हो।

तो अब, तुम्हें एक सामान्य रूपसे मैंने बता दिया है कि हम क्या करनेका प्रयास करना चाहते हैं और तुम्हें बस... उसे करना है।

७ फरवरी १९५७ (मातृवाणी खंड ९; प्रश्न और उत्तर १९५७-५८)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यान और उसके बाद

मां, जब आप कुछ कहती हैं तो हम उसे मनसे समझनेकी कोशिश करते हैं, पर जब आप नीरवतामें कुछ देती हैं तो हमें सत्ताके किस भागपर एकाग्र होना चाहिये ?

ध्यानके लिये सदा ही यह अधिक अच्छा है,—समझ रहे हो न ? हम यहां "ध्यान" शब्दका प्रयोग तो कर रहे हैं, पर इसका मतलब "सिरमें विचारोंकी क्रियाशीलता" नहीं है, बल्कि ठीक इसके विपरीत है—तो ध्यानके लिये सदा ही यह अधिक अच्छा है कि उसे एक केंद्रपर एकाग्र किया जाय, उस केंद्रपर जिसे अभीप्साका केंद्र कहा जा सकता है, जहां अभीप्साकी लौ जलती रहती है, उस सौरचक्रके केंद्रपर अपनी सब शक्तियोंको एकत्र कर लिया जाय, और यदि संभव हो तो, एक ऐसी सजग नीरवताकी स्थिति प्राप्त कर ली जाय जिसमें व्यक्ति मानों किसी अत्यधिक सूक्ष्म चीजको सुननेका प्रयास कर रहा हो, किसी ऐसी चीजको जो उसकी पूर्ण सजगता, पूर्ण एकाग्रता और संपूर्ण नीरवता-की अपेक्षा रखती हो। और फिर, बिल्कुल भी क्रियाशील न हुआ जाय। सोचे या क्रियाशील हुए बिना अपने-आपको इतना खोल देना कि जो कुछ ग्रहण किया जा सकता हो वह सब ग्रहण कर लिया जाय, पर इसकी पूरी सावधानी रखते हुए कि जो वस्तु उस समय हो रही है उसे समझनेकी कोशिश भी न की जाय, क्योंकि यदि व्यक्ति उसे जानना, यहांतक कि ध्यानसे देखना भी चाहता है तो उसमें एक प्रकारकी मस्तिष्ककी क्रिया बनी रहती है जो ग्रहण-शीलताकी पूर्णताके अनुकूल नहीं होती—नीरव रहना, सजग एका-ग्रतामें जितना संभव हो उतने समग्र रूपमें नीरव रहना और फिर निश्चल हो जाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि व्यक्ति इसमें सफल हो जाय तो सब समाप्त होनेपर, जब वह ध्यानसे बाहर आता है तो कुछ देर बाद (सामान्यतः, तुरत नहीं), सत्ताके अंदरसे चेतनामें कुछ नयी चीज प्रकट होती है: एक नयी बोध-शक्ति, वस्तुओंका एक नया मूल्यांकन, जीवनमें एक नयी वृत्ति--संक्षेपमें, जीवनका एक नया ढंग प्रकट होता है। यह सब क्षणिक हो सकता है, परंतु उस क्षणमें, यदि व्यक्ति इधर ध्यान दे तो, उसे पता चलता है कि कोई चीज है जो बोध-शक्ति या रूपांतरके मार्गपर एक कदम आगे बढ़ गयी है। यह एक ज्ञानालोक हो सकता है, एक ऐसी बोध-शक्ति हो सकती है जो अधिक सच्ची हो या सत्यके अधिक निकट हो, या एक रूपांतरकारी शक्ति हो सकती है जो तुम्हें आंतरिक प्रगति करनेमें या चेतनाको विस्तारित करनेमें या अपनी गतियों एवं क्रियाओंपर प्रभुत्वकी वृद्धिमें सहायता पहुंचाती है।

पर ये परिणाम कभी तात्कालिक नहीं होते। क्योंकि यदि व्यक्ति उन्हें किसी समय देखनेकी कोशिश करे तो वह एक ऐसी सक्रिय अवस्थामें रहता है जो सच्ची ग्रहणशीलताकी विरोधी है। व्यक्तिको उस समय जितना संभव हो उतना तटस्थ, निश्चल और निष्क्रिय रहना चाहिये, पृष्ठभूमिमें नीरव अभीप्सा अवश्य रहनी चाहिये, पर उसे शब्दों, विचारों, यहांतक कि भावनाके रूपमें भी रूपायित नहीं होना चाहिये। उसे एक ऐसी वस्तु होना चाहिये जो तीव्र स्पंदनके रूपमें इस प्रकार ऊपर उठती है (ऊपर उठती लौ की तरहका संकेत), पर जो कोई रूप धारण नहीं करती और सबसे बढ़कर, जो समझनेका कोई प्रयास नहीं करती।

थोड़े अभ्यासके बाद व्यक्ति ऐसी स्थिति प्राप्त कर लेता है कि जब चाहे, कुछ क्षणोंमें ही, इस स्थितिमें आ जाय, अर्थात्, तब वह ध्यानमें कोई समय नहीं खोता। शुरूमें, स्वभावतः व्यक्तिको धीरे-धीरे मनको शांत करना, चेतनाको एकत्रित और एकाग्र करना होता है, इस प्रकार तीन-चौथाई समय वह तैयारीमें खो देता है। परंतु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब व्यक्ति अभ्यास कर लेता है तो वह दो-तीन क्षणोंमें ही इसे प्राप्त कर लेता है और तब उसे ग्रहण करनेके लिये सारे समयका लाभ मिल जाता है।

स्वभावतः, इससे और आगेकी तथा अधिक पूर्ण अवस्थाएं भी हैं, पर वे बादमें प्राप्त होती हैं। परंतु यदि तुम कम-से-कम इस अवस्थाको पा लो तो ध्यानका पूरा लाभ उठा सकते हो।

अब हम प्रयत्न करते हैं।

(५ जून, १९५७ मातृवाणी खंड ९; प्रश्न और उत्तर १९५७-५८)

ध्यान और कल्पना

मधुर मां, जब आप हमें किसी विषयपर ध्यान करनेके लिये कहती हैं, उदाहरणके लिये, जब हम ध्यानके लिये यह विषय चुनते हैं कि हम प्रकाशकी ओर खुल रहे हैं; तो हम अजीब-अजीब चीजों-की कल्पना करने लगते हैं, एक दरवाजा खुलनेकी कल्पना करते हैं आदि-आदि। लेकिन यह सब हमेशा मानसिक रूप ले लेता है।

यह व्यक्ति-व्यक्तिपर निर्भर है। हर एकका अपना विशेष तरीका होता है। यह पूरी तरह हर व्यक्तिपर निर्भर है। कुछ लोगोंके लिये ऐसे बिंब हो सकते हैं जो उनकी सहायता करते हैं; दूसरी ओर, कइयोंका मन ज्यादा भावात्मक होता है और वे केवल भावों या विचारोंको देखते हैं, दूसरे, जो ज्यादा संवेदनों और भावनाओंमें रहते हैं, मनोवैज्ञानिक गतियां, आंतरिक भावनाएं और संवेदन पाते हैं—यह हर एकपर निर्भर है। जिनका भौतिक मन सक्रिय, खासकर रचनात्मक होता है वे चित्र देखते हैं, पर हर एक एक ही चीजको अनुभव नहीं करता। उदा-हरणार्थ, यदि तुम अपने साथवालेसे पूछो . . . (साथवालेको संबोधित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हुए) जब मैं तुम्हें कोई विषय देती हूं तो क्या तुम भी इसी तरहके बिम्ब देखते हो ?

कभी-कभी।

कभी-कभी ?

अधिकतर मैं कुछ महसूस करता हूं।

अधिकतर क्या होता है ?

एक संवेदन।

एक संवेदन, हां। बहुधा यह संवेदन होता है (मेरा मतलब सामान्यतया) बिंबसे ज्यादा एक संवेदन या अनुभव होता है। बिंब हमेशा उनको दीखते हैं जिनमें रचनात्मक मानसिक शक्ति होती है, जिनका स्थूल मन सक्रिय होता है। यह इस बातका लक्षण है कि वह अपनी मानसिक चेतनामें सक्रिय है।

(वह बच्चा जिसने पहला प्रश्न पूछा था) **लेकिन क्या इस तरह यह ठीक है ?**

हर चीज ठीक है, यदि उससे कुछ परिणाम आये ! उपाय कुछ भी हो, वह अच्छा है। वह ठीक क्यों न हो ? ...यह जरूरी नहीं है कि इस तरहके बिंब हास्यास्पद ही हों। वे बिल्कुल हास्यास्पद नहीं होते, वे मानसिक बिंब हैं। यदि उनसे कुछ परिणाम हाथ लगता है तो वे बिल्कुल ठीक हैं। यदि उससे तुम्हें कोई अनुभव होता है तो वह ठीक है।

दृष्टांतके रूपमें, जब मैं तुमसे अपने भीतर गहरे पैठनको कहूं तो तुममेंसे कुछ संवेदनपर एकाग्र होंगे। इसी तरह कुछ दूसरोंको एक गहरे कुएंमें उतरनेका अनुभव होगा, वे एक अंधेरे और गहरे कुएंकी ओर जाती हुई सीढ़ियोंका चित्र स्पष्टतया देखेंगे और वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीचे, और नीचे, गहरे, और गहरे उतरते जाते हैं और कभी-कभी ठीक एक द्वारपर जा पहुंचते हैं; वे उसमें घुसनेकी इच्छा लिये वहीं बैठ जाते हैं और कभी-कभी द्वार खुल जाता है, वे अंदर जाते हैं और एक तरहका हॉल या कमरा या गुफा देखते हैं, कुछ इसी तरहका, और वहांसे, यदि वे आगे बढ़ना जारी रखें तो एक और दरवाजेपर पहुंचते हैं और पुनः रुक जाते हैं, प्रयाससे दरवाजा खुल जाता है और वे और आगे बढ़ते हैं, और यदि यह अध्यवसायके साथ किया जाय और वे अनुभवको जारी रख सकें, तो वे अपने-आपको एक दरवाजेके सम्मुख खड़ा पाते हैं जो . . . एक खास तरहकी दृढ़ता और गांभीर्य लिये होता है। एकाग्रताके महाप्रयाससे दरवाजा खुल जाता है और वे सहसा निर्मलता और ज्योतिके एक हॉलमें प्रवेश करते हैं; और तब—जानते हो?—वे अपनी आत्माके साथ संपर्कका अनुभव प्राप्त करते हैं . . .। मुझे तो बिंबोंमें कोई बुराई नहीं दीखती।

नहीं मां, लेकिन यह तो कोरी कल्पना है, नहीं है, क्या, मां?

कल्पना? पर कल्पना क्या है? . . . तुम ऐसी किसी चीजकी कल्पना नहीं कर सकते जिसका विश्वमें अस्तित्व न हो। जो चीज कहीं न हो उसकी कल्पना करना असंभव है। केवल एक ही चीज संभव है, वह यह कि तुम अपना बिंब यथास्थान न रखो: या तो तुम उसे वे गुण और विशिष्टताएं दे दो जो उसमें नहीं हैं या फिर उसकी उचित व्याख्या न देकर और तरहसे व्याख्या कर दो। लेकिन तुम जो कुछ कल्पना करते हो उसका कहीं-न-कहीं अस्तित्व है; सारी बात है उचित स्थानको जानना और उसे वहां बिठा देना।

स्वभावतः, यदि यह कल्पना करनेके बाद कि तुम एक दरवाजेके सामने खड़े हो जो खुल रहा है, तुम यह सोचो कि सचमुच तुम्हारे शरीरके भीतर एक भौतिक दरवाजा है तो वह भूल होगी। लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि तुम यह समझो कि तुम्हारी एकाग्रताके प्रयासने यह मानसिक रूप लिया है तो यह बिल्कुल ठीक है। यदि तुम मानसिक जगत्-की सैर करने निकलो तो तुम्हें इस तरहके अनेक रूप दिखायी देंगे, सब तरहके रूप जिनका भौतिक अस्तित्व नहीं है पर मानसिक जगत्-में वे भली-भांति विद्यमान हैं।

तुम्हारे विचारके रूप लिये बिना तुम किसी चीजके बारेमें सशक्त रूपसे नहीं सोच सकते। लेकिन अगर तुम मान बैठो कि यह रूप भौतिक था तो, स्पष्ट ही, यह भूल होगी। फिर भी मानसिक जगत्में यह पूरी तरह विद्यमान है।

कल्पना निर्माणकी शक्ति है। असलमें, जिनमें कल्पना नहीं होती वे मानसिक दृष्टिकोणसे निर्माता नहीं होते, वे अपने विचारको ठोस शक्ति नहीं दे सकते। कल्पना कर्मका एक बहुत शक्तिशाली साधन है। उदाहरणार्थ, यदि तुम्हारे कहीं दर्द हो रहा है और तुम यह कल्पना कर सको कि तुम उसका लोप किये दे रहे हो या दूर हटा दे रहे हो या नष्ट कर रहे हो—ऐसी सब तरहकी कल्पनाएं—तो बहुत अच्छी तरह सफल होते हो।

एक आदमीकी कहानी है कि उसके बाल बड़ी तेजीसे झड़ रहे थे, इतने कि कुछ ही हफ्तोंमें वह गंजा हो जाता। तब किसीने उससे कहा: "जब तुम कंघी करो तो यह कल्पना करो कि ये बढ़ रहे हैं, और बड़ी तेजीसे बढ़ रहे हैं।" और हर बार कंघी करते समय वह कहता: "ओह! मेरे बाल बढ़ रहे हैं, ये बड़ी तेजीसे बढ़ रहे हैं...।" और ऐसा ही हुआ! जब कि, सामान्यतया, लोग करते यह हैं कि वे अपने-आपसे कहते हैं: "ओह! फिरसे मेरे बाल झड़ने शुरू हो गये, अब मैं गंजा हो जाऊंगा, यह निश्चित है, यह जरूर होगा!"

स्पष्ट है कि ऐसा ही होता!

२७ अगस्त, १९५८ (मातृवाणी खंड ९, प्रश्न और उत्तर १९५७-५८)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी वाक्यपर ध्यान

मां, शुक्रवारकी कक्षाओंमें, आप प्रायः हमें कोई एक वाक्य पढ़कर सुनाती हैं और उसपर ध्यान करनेके लिये कहती हैं। लेकिन एक वाक्यपर ध्यान कैसे किया जाय? क्या हमें सोचना चाहिये, उसके भावपर ध्यान करना चाहिये या... क्या करना चाहिये?

वाक्यपर ध्यान करना?

जी।

स्पष्ट ही है, उसके अर्थपर।

अर्थात्, हमें सोचना चाहिये...

हां, तो फिर?

क्योंकि मां, वह मानसिक क्रिया हो जाती है, नहीं होती क्या?

वाक्य तो पहलेसे ही मानसिक रचना है; मानसिक रचना की जा चुकी है। वाक्य उस मानसिक रचनाकी अभिव्यक्ति है। अतः जब तुम किसी वाक्यपर ध्यान करो तो उसके दो तरीके हैं। एक सक्रिय, साधारण बाह्य तरीका है शब्दोंके अर्थपर विचार करने और उन्हें समझनेकी कोशिश करनेका, वाक्यके ठीक-ठीक अर्थको बौद्धिक रूपसे समझनेका—यह है सक्रिय ध्यान। तुम उन चंद शब्दोंपर एकाग्र होते हो और उनसे जो विचार व्यक्त हुआ है उसे लेकर तर्क, निगमन, विश्लेषणद्वारा उसके अर्थको समझनेकी कोशिश करते हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दूसरा तरीका है जो अधिक सीधा और गहरा है; इस मानसिक रचनाको, शब्दोंके इस समवायको और जिस विचारका ये प्रतिनिधित्व करते हैं उसको लेना और अपने ध्यानकी सारी शक्ति-को उसपर केंद्रित करना, अपनी सारी शक्तिको उस रचनापर एकाग्र होनेके लिये अपने-आपको बाध्य करना। उदाहरणके लिये, स्थूल रूपसे देखी हुई किसी चीजपर अपनी सारी शक्तिको एकाग्र करनेके स्थानपर तुम उस विचारको लेते हो और उसपर अपनी सारी शक्ति एकाग्र करते हो—स्वभावतः, मनमें।

और उसके बाद यदि तुम विचारको एकाग्र करनेमें और उसकी चंचलताको रोकनेमें सफल हो जाते हो तो बहुत सहज ढंगसे शब्दों-द्वारा व्यक्त विचारको लांघकर उनके पीछेके भावतक पहुंच जाते हो जो दूसरे शब्दोंद्वारा, दूसरे रूपोंद्वारा व्यक्त हो सकता है। भावकी विशिष्टता है अपनेको अलग-अलग विचारोंसे भूषित करनेकी शक्ति। और जब तुम इतनी दूरतक चले जाते हो तो तुम शब्दोंके सरल बोधकी अपेक्षा कहीं अधिक गहरे जा पहुंचते हो। स्वाभाविक है कि यदि तुम एकाग्रताका अभ्यास करते रहो और तुम्हें यह पता हो कि इसे ऐसे किया जाता है तो तुम भावको पार कर इसके पीछे छिपी आलोकमयी शक्तितक जा सकते हो। तब वहां तुम बृहत्तर और गहनतर प्रदेशमें प्रवेश करते हो। पर उसके लिये कुछ प्रशिक्षण अपेक्षित है। फिर भी, अंततः ध्यानकी रीति यही है।

यदि तुम काफी गहराईमें जानेमें सफल हो जाते हो तो तुम्हें भावके पीछे 'मूलतत्व' और 'शक्ति' मिलती है और ये ही तुम्हें सिद्धिकी शक्ति प्रदान करती हैं। जो लोग ध्यानको आध्यात्मिक विकासके साधनके रूपमें अपनाते हैं वे इसी तरहसे चीजोंके पीछे स्थित 'मूलतत्त्व'के साथ एक हो जानेमें और इन चीजोंपर ऊपरसे क्रिया करनेमें सफल होनेकी शक्ति पाते हैं।

पर इतनी दूर गये बिना भी (इसका मतलब है काफी कड़ा अनुशासन, कठोर अभ्यास, है न?), तुम विचारसे भावतक काफी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसानीसे जा सकते हो, तब वह तुम्हें मनमें प्रकाश और बोध प्रदान करता है जिसके कारण तुम्हें भावको अपने मनचाहे रूपमें व्यक्त करनेकी छूट होती है। एक भाव बहुत-से विभिन्न रूपोंमें, बहुत-से विभिन्न विचारोंमें उसी तरह व्यक्त हो सकता है, जैसे, जब तुम अधिक भौतिक स्तरपर उतर आते हो तो एक विचार बहुत-से विभिन्न शब्दोंद्वारा व्यक्त किया जा सकता है। नीचेकी ओर, अभिव्यक्ति-की ओर जाते हुए, यानी, भाषण या लेखनद्वारा व्यक्त करनेके लिये बहुत-से विभिन्न सूत्र होते हैं जो विचारको व्यक्त करनेके काममें आते हैं, लेकिन यह विचार, विचारके उन अनेक रूपोंमेंसे सिर्फ एक रूप है जो भावको, पीछे स्थित 'मूलतत्व'को व्यक्त करते हैं और यदि और गहराईतक जाया जाय तो स्वयं इस भावके पीछे आध्यात्मिक ज्ञान और शक्तिका एक सारतत्त्व विद्यमान है जो, फिर, सब जगह फैल सकता है और अभिव्यक्त जगत्पर कार्य कर सकता है।

जब तुम्हारे पास कोई विचार होता है तो तुम शब्द ढूंढ़ते हो, है न? और फिर अपने विचारको अभिव्यक्त करनेके लिये तुम शब्दोंको व्यवस्थित करनेकी कोशिश करते हो; तुम एक विचारको व्यक्त करनेके लिये अनेक शब्दोंका प्रयोग कर सकते हो, तुम अपने-आपसे कहते हो: "नहीं, जरा ठहरो, यदि मैं उस शब्दके बदले इस शब्दका उपयोग करूं तो मैं जो सोच रहा हूं उसे यह कहीं अधिक अच्छी तरह व्यक्त करेगा।" जब तुम्हें लिखनेका और लेखन शैलीका प्रशिक्षण दिया जाता है तो यही सिखाया जाता है।

परंतु जब मैं तुम्हें एक लिखित वाक्य देती हूं जिसमें विचारको व्यक्त करनेकी शक्ति होती है और तुम्हें उसपर एकाग्र होनेके लिये कहती हूं, तब, विचारके इस रूपसे तुम इसके पीछे स्थित भावतक जा सकते हो जो अनेक विभिन्न विचारोंमें अभिव्यक्त हो सकता है। यह एक बड़ी क्रम-परंपराके समान है: 'मूलतत्व' एकदम शिखरपर है, पर वह अपने-आपमें अंतिम नहीं है क्योंकि तुम उससे और भी ऊपर उठ सकते हो; पर इस 'मूलतत्व'को भावोंमें व्यक्त किया जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है, और ये भाव अनेक विचारोंमें व्यक्त किये जा सकते हैं और ये अनेक विचार बहुत-सी भाषाओंका, और उससे भी अधिक शब्दोंका प्रयोग कर सकते हैं।

जब मैं तुम्हें कोई विचार देती हूं, तो वह केवल तुम्हें एकाग्र होनेमें सहायता देनेके लिये होता है...। कुछ संप्रदाय तुम्हारे सामने कोई चीज रख देते हैं--एक फूल या पत्थर, कुछ इसी तरहकी चीज और फिर तुम सब उसके इर्द-गिर्द बैठकर उसपर एकाग्र होते हो और तुम्हारी आंखें इस तरह स्थिर हो जाती हैं (माताजी आखें भेंगी करके देखती हैं।) जबतक कि तुम वह विषय-वस्तु ही न बन जाओ। एकाग्रताका यह भी एक तरीका है। उस तरह लगातार, बिना हिले-डुले देखनेसे, अंतमें, जिस वस्तुको तुम देखते हो उसमें प्रवेश पा जाते हो। लेकिन तुम्हें सब तरहकी चीजोंको देखना शुरू नहीं कर देना चाहिये : स्थिरतासे उसीको देखो। वह तुम्हें एक ऐसा रूप देती है जो... तुम्हें भेंगा कर देती है।

यह सब एकाग्रता सिखानेके लिये है। बस, इतना ही।

कभी-कभी इनमेंसे कोई वाक्य बहुत गहन सत्यको व्यक्त करता है। यह उन सौभाग्यशाली वाक्योंमेंसे एक होता है जो बड़े भाव-पूर्ण होते हैं। अतः यह पीछे स्थित सत्यको पानेमें तुम्हारी सहायता करता है।

२७ अगस्त, १९५८ (मातृवाणी खंड ९; प्रश्न और उत्तर १९५७-५८)

ध्यान--कई प्रकारके

कुछ लोगोंका ख्याल है कि आध्यात्मिक जीवनका चिह्न है एक कोनेमें चुपचाप बैठ जाना और ध्यान करना! यह बहुत, बहुत अधिक प्रचलित धारणा है। मैं कठोर होना नहीं चाहती, परंतु जो लोग ध्यान करनेकी अपनी क्षमताके विषयमें गर्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हैं, उनमेंसे, मैं नहीं समझती कि, अधिकतर व्यक्ति एक घंटेमें एक मिनट भी ध्यान करते हैं। जो लोग सचमुच ध्यान करते हैं वे उसके विषयमें कभी गर्व नहीं करते; उनके लिये यह एक बिल्कुल स्वाभाविक चीज होती है। जब यह एक स्वाभाविक चीज बन जाती है और उसमें गौरव अनुभव करनेका कुछ नहीं रहता, तुम अपने-आपसे कह सकते हो कि तुम प्रगति कर रहे हो। जो लोग इस विषयमें बहुत बातें करते हैं और समझते हैं कि यह चीज उन्हें बाकी मनुष्योंके मुकाबले एक प्रकारका बड़प्पन प्रदान करती है, उनके विषयमें तुम निश्चित रूपसे यह मान सकते हो कि वे अपना अधिकांश समय पूर्ण जड़ताकी स्थितिमें बिताते हैं।

ध्यान करना बड़ा कठिन है। ध्यान कई प्रकारके हैं...। तुम एक विचारको ले सकते हो और एक विशेष परिणामपर पहुंचनेके लिये उसका अनुसरण कर सकते हो—यह एक प्रकारका सक्रिय ध्यान है; जो लोग कोई समस्या सुलझानेका प्रयास करते हैं या जो लोग लिखना चाहते हैं वे यह जाने बिना कि वे ध्यान कर रहे हैं, इस प्रकार ध्यान करते हैं। दूसरे, बैठ जाते और किसी चीजपर एकाग्र होनेका प्रयत्न करते हैं, वे किसी विचारका अनुगमन नहीं करते; वे बस एक बिंदुपर एकाग्र होनेका प्रयास करते हैं ताकि उनकी एकाग्रताकी शक्ति घनीभूत हो उठे। और तब वही होता है जो साधारणतया एक बिंदुपर एकाग्र होनेपर होता है: यदि तुम एक बिंदुपर—वह चाहे मानसिक, प्राणिक या भौतिक हो—अपनी एकाग्रताकी क्षमताको पर्याप्त रूपमें एकत्र करनेमें सफलता पा लेते हो तो एक विशेष मुहूर्तमें तुम आगे बढ़ जाते और एक दूसरी चेतनामें प्रवेश कर जाते हो। फिर दूसरे लोग अपने मस्तकमेंसे सारी क्रियाओं, विचारों, प्रक्षेपों, प्रतिक्रियाओंको निकाल बाहर करने-की चेष्टा करते हैं और एक प्रकारकी यथार्थ रूपमें निश्चल-नीरव प्रशांतिको प्राप्त करते हैं। यह अत्यंत कठिन कार्य है। कुछ लोगोंने २५ वर्षोंतक इसका प्रयास किया पर वे सफल नहीं हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि यह काम कुछ-कुछ वैसा ही है जैसा कि किसी सांडको सींगोंसे पकड़ना।

एक दूसरे प्रकारका ध्यान है जिसमें मनुष्य जहांतक संभव होता है, शांत-स्थिर होता है, परंतु सभी विचारोंको बंद कर देनेका प्रयास नहीं करता, क्योंकि कुछ विचार ऐसे होते हैं जो शुद्ध रूपमें यंत्रवत् होते हैं और यदि तुम उन्हें बंद करनेकी कोशिश करो तो उसमें तुम्हें वर्षों लग जायंगे और फिर भी इस व्यापारमें तुम फलके विषय-में निस्संदिग्ध नहीं हो सकते। उसके स्थानपर तुम अपनी समूची चेतनाको एक साथ एकत्र कर लेते हो और जितना संभव होता है उतना स्थिर और शांत बने रहते हो; तुम बाहरी चीजोंसे इस तरह अपनेको पृथक् कर लेते हो मानों उनमें तुम्हें बिल्कुल रस नहीं मिलता और एकाएक तुम अभीप्साकी उस लौको उद्दीप्त कर लेते हो और जो कुछ तुम्हारे पास आता है उसको उसमें झोंक देते हो ताकि वह लौ अधिक और अधिक, अधिक और अधिक ऊपर उठे; तुम उसके साथ एकात्म हो जाते हो और अपनी चेतना और अभीप्सा-के चरम शिखरतक ऊपर चले जाते हो,—उस समय अन्य किसी चीजका विचार नहीं करते—महज एक अभीप्सा होती है जो ऊपर उठती है, ऊपर-ही-ऊपर उठती चली जाती है, परिणामका एक क्षण भी विचार नहीं आता, क्या होगा और विशेष रूपसे क्या नहीं होगा, इसका जरा भी विचार नहीं रहता और सबसे ऊपर, तुम्हारे लिये कोई चीज हो इसकी इच्छा रखनेका विचार भी नहीं होता—बस, होता है उस अभीप्साका आनंद जो ऊपर उठती है, ऊपर-ही-ऊपर उठती जाती है, अधिकाधिक तीव्र होती हुई एक सतत एकाग्रतामें बदल जाती है। और तब, मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूं कि सबसे उत्तम बात जो हो सकती है वही होती है। कहनेका तात्पर्य, उस समय, जब तुम इसे करते हो तब, तुम्हारे अंदरकी अधिक-से-अधिक संभावनाएं ही चरितार्थ होती हैं। ये संभावनाएं व्यक्ति-व्यक्तिके अनुसार बहुत भिन्न प्रकारकी हो सकती हैं। परंतु उस समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चल-नीरव होने, वाह्य रूपोंके पीछे जाने, उत्तर देनेवाली शक्ति-को पुकारने, अपने प्रश्नोंके उत्तरकी प्रतीक्षा करने आदिकी चेष्टा करनेकी सारी चिंता मिथ्या कुहासेकी तरह विलीन हो जाती है। और यदि इस लौके अंदर, ऊपर उठनेवाली अभीप्साके इस स्तंभके अंदर सचेतन रूपसे रहनेमें तुम सफल होओ तो देखोगे कि यद्यपि तुम्हें तुरंत कोई परिणाम नहीं प्राप्त होता, तो भी कुछ समय बाद कुछ-न-कुछ तुम्हें अवश्य प्राप्त होगा।

१२ फरवरी, १९५१

(मातृवाणी, खंड ४; प्रश्न और उत्तर १९५०-५१; पृ० १०४-०६)

ध्यान और काम

"...एक समय ऐसा आता है जब तुम्हें ध्यान बंद करनेका प्रयास करना पड़ता है; उस समय तुम्हारे लिये ध्यान बंद करना कठिन हो जाता है, भगवान्‌का चिंतन बंद करना कठिन हो जाता है, साधारण चेतनाके स्तरपर नीचे उतर आना कठिन हो जाता है।"

(प्रश्न और उत्तर, १९२९)

मैं कितना चाहती हूं कि यह बात सबके लिये सच्ची हो जाती!

तुम अत्यंत श्रमसाध्य काममें लग सकते हो, उदाहरणार्थ, 'बास्केटबाल' खेल सकते हो, जिसमें बहुत अधिक दौड़-धूप करनेकी आवश्यकता होती है, और फिर भी तुम भगवान्‌के ऊपर अपने आंतरिक ध्यान और एकाग्रताका भाव नहीं खोओगे। और जब तुम इस स्थितिमें पहुंच जाओगे तो तुम देखोगे कि जो कुछ भी तुम करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो वह अब एक दूसरे प्रकारका होता है, तुम केवल पहलेसे अच्छा ही नहीं करते, बल्कि उसे एकदम अप्रत्याशित शक्तिके साथ करते हो और उसके साथ ही तुम अपनी चेतनाको इतनी ऊंची और इतनी पवित्र बनाये रखते हो कि अब उसे कोई चीज छू भी न सके। और यह याद रखो कि यह अवस्था इतनी दूर तक जा सकती है कि यदि कोई दुर्घटना भी तुम्हारे साथ हो जाय तो उससे तुम्हें कोई क्षति नहीं पहुंचेगी। अवश्य ही यह परमोच्च अवस्था है, पर यह एक ऐसी परमोच्च अवस्था है जिसकी हम अभीप्सा कर सकते हैं। तुम सर्व सामान्य लोगोंकी तरह यह विश्वास करनेकी भूल मत करो कि तुम्हें एक ऐसे एकांत, नीरव कोनेमें बैठ जाना चाहिये जिधर कोई नहीं आता-जाता, जहां तुम अत्यंत उच्च स्थितिमें और एकदम अचल-अटल रहते हो जिसमें कि तुम ध्यान कर सको--यह बात सत्य नहीं है। आवश्यक यह है कि तुम सभी परिस्थितियोंमें ध्यान करनेमें समर्थ होओ, और मैं कहती हूं कि "ध्यान करनेमें" समर्थ होओ, अपने मस्तकको खाली करनेमें ही नहीं, बल्कि भगवान्‌के ध्यानमें अपनेको एकाग्र कर लो; और, तुम यदि अपने अंदर इस ध्यानकी स्थितिको बनाये रखो तो जो कुछ तुम करोगे उसकी जाति ही बदल जायगी--उसका बाहरी रूप नहीं बदलेगा, क्योंकि ऊपरसे देखनेमें तो वह वही चीज रहेगी, पर उसका विशिष्ट गुण बदल जायगा। जीवनका स्वरूप बदल जायगा और तुम; तुम अनुभव करोगे कि जो कुछ तुम थे उससे कुछ भिन्न व्यक्ति हो गये हो, तुम अपने साथ एक प्रकारकी शांति, निश्चयता, आंतरिक स्थिरता, अपरिवर्तनीय शक्ति, एक ऐसी चीज अनुभव करोगे जो कभी हार नहीं मानती।

ऐसी स्थितिमें तुम्हें हानि पहुंचाना कठिन होगा--शक्तियां बराबर चेष्टा करती हैं, यह संसार ऐसी विरोधी शक्तियोंसे भरा हुआ है जो प्रत्येक चीजको उलट-पुलट देनेका प्रयास करती हैं...। परंतु उन्हें बहुत थोड़ी मात्रामें ही सफलता मिलती है, केवल उतनी ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रामें जो नये रूपमें उन्नति करनेके लिये तुम्हारे लिये आवश्यक होता है।

जीवनमें जब-जब तुम्हें कोई आघात मिले तब-तब तुम तुरत अपने-आपसे कहो: "ओह! मुझे प्रगति करनी है;" तब आघात आशीर्वाद बन जायगा। तुम अपने सिरको कंधोंके बीच झुकानेके बदले हर्षके साथ उसे ऊपर उठा लो और कहो: "वह कौन-सी चीज है जिसे मुझे अभी सीखना है? मैं यह जानना चाहता हूं। कौन-सी चीज है जिसे मुझे परिवर्तित करना है? मैं उसे जानना चाहता हूं।" बस, यही तुम्हें करना चाहिये।....

आप जिस अभीप्साकी, जिस ध्यान-चिंतनकी बात कर रही हैं वह क्या बाह्य क्रिया-कलापोंसे असंगत नहीं है?

नहीं, यदि विरोध है तो इसका अर्थ है कि एकाग्रता समुचित ढंगसे नहीं की जाती। निस्संदेह, जगत् मिथ्यात्वकी इसी स्थितिमें है जिसमें मनुष्य अपनी बाह्य सत्ताके संपर्कको खोये बिना अपने अंदर दिव्य उपस्थितिके ऊपर एकाग्र नहीं हो सकता। मैं यह नहीं कहती कि यह बहुत आसान है, मैंने इसे कुछ-कुछ सुदूरस्थित आदर्श-के रूपमें ही तुम्हें दिया है, पर यह बिल्कुल संभव है और इसे किया जा चुका है, इस बातका मैं तुम्हें विश्वास दिला सकती हूं, और इससे सुरक्षित रूपसे आगे बढ़नेकी क्षमतामें कोई कमी नहीं आती।

१७ फरवरी, १९५१

(मातृवाणी खंड ४, प्रश्न और उत्तर १९५०-५१; पृ० १२२-२५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यानकी कठिनाइयां

योगमें प्रार्थना और ध्यानका बहुत महत्त्व है, लेकिन प्रार्थना हृदयसे भाव या अभीप्साकी लहरपरसे उठनी चाहिये। जप या ध्यानको वस्तुके आनंद या प्रकाशको अपने अंदर लिये हुए जीवित प्रेरणाके साथ आना चाहिये। अगर इसे यांत्रिक ढंगसे गंभीर कर्तव्यके रूपमें किये जानेवाले कार्यकी तरह किया जाय तो वह रुचिके अभाव और शुष्कताकी ओर प्रवृत्त होगा और उसका कोई प्रभाव न होगा।

*

अगर ध्यानमें यह कठिनाई हो कि सभी तरहके विचार अंदर आते हैं तो ये विरोधी शक्तियोंके कारण नहीं बल्कि मानव मनकी सामान्य प्रकृतिके कारण हैं। सभी साधकोंके लिये यह कठिनाई होती है और कइयोंके साथ यह बहुत समयतक बनी रहती है। इससे छुटकारा पानेके कई तरीके हैं। उनमेंसे एक है विचारको देखना और मानव मनके उस रूपका अवलोकन करना जिसे विचार दिखाते हैं। लेकिन उन्हें किसी तरहकी स्वीकृति न देना और जबतक वे चुप न हो जायें तबतक उन्हें कमजोर पड़ते रहने देना—विवेकानन्दने अपने राजयोगमें इस तरीकेको अपनानेकी सलाह दी है। दूसरा तरीका है विचारोंको ऐसे देखना मानों वे अपने नहीं हैं, बल्कि साक्षी पुरुषकी भांति पीछे खड़े रहना और उनका अनुमोदन करनेसे इंकार करना—विचार बाहर प्रकृतिसे आनेवाली चीजोंके रूपमें देखे जाते हैं और उनके बारेमें यह अनुभव होना चाहिये मानों वे मनके देशको पार करनेवाले पथिक हैं जिनके साथ तुम्हारा कोई संबंध नहीं और जिनमें तुम्हें कोई रस नहीं है। इस तरह साधारणतः ऐसा होता है कि कुछ समयके बाद मन दो भागोंमें विभक्त हो जाता है, एक वह भाग जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक साक्षी है, जो पूर्ण रूपसे अविक्षुब्ध और अचंचल रहकर सब कुछ देखता है और दूसरा वह भाग जो अवलोकनकी वस्तु, **प्रकृति** है जिसमें विचार आते-जाते, घूमते-फिरते हैं। बादमें तुम प्रकृति भागको भी नीरव और अचंचल बना सकते हो। एक तीसरा सक्रिय तरीका है जिसमें तुम यह देखते हो कि विचार कहांसे आ रहे हैं और तुम्हें इसका पता लगाना है कि वे तुम्हारे अंदरसे नहीं, बल्कि, मानो सिरके बाहरसे आ रहे हैं; अगर तुम उन्हें आते हुए पकड़ लो, तो उनके अंदर घुसनेसे पहले ही तुम्हें उन्हें पूरी तरह एकदम फेंक देना चाहिये। शायद यह सबसे कठिन तरीका है और इसे सब नहीं कर सकते, लेकिन अगर इसे किया जा सके तो यह नीरवताकी ओर जानेवाला सबसे छोटा, सबसे शक्तिशाली मार्ग है।

*

जब तुम ध्यान करनेकी कोशिश करते हो, तो अंदर जानेके लिये जागती हुई चेतना खोकर, अंदर, गभीर आंतरिक चेतनामें जगनेके लिये एक दबाव पड़ता है। लेकिन पहले पहल मन इस दबावको सोनेके दबावके रूपमें लेता है क्योंकि नींद ही उस प्रकार-की एकमात्र आंतरिक चेतना है जिसका वह अभ्यस्त होता है। अतः ध्यानद्वारा योगमें बहुधा नींद ही पहली कठिनाई होती है— लेकिन अगर तुम डटे रहो, तो क्रमशः नींद आंतरिक सचेतन अवस्थामें बदल जाती है।

*

मस्तिष्ककी एकाग्रता हमेशा एक तपस्या होती है और अनिवार्य रूपसे तनाव लाती है। केवल तभी जब तुम मस्तिष्क मनसे एकदम पूरी तरहसे उठा लिये जाओ, तभी मानसिक एकाग्रताका तनाव विलीन होता है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें शुरू-शुरूमें लंबे समयतक एकाग्र होकर स्वयंको थकाना नहीं चाहिये। अगर तुम इसे करनेके अभ्यस्त न हो तो क्लांत मनमें ध्यान अपनी शक्ति और अपने महत्त्वको खो बैठता है, तुम एकाग्रचित्त होनेके स्थानपर शिथिल होकर ध्यान कर सकते हो। धीरे-धीरे जब एकाग्रता सामान्य बनती जाय, केवल तभी तुम अधिकाधिक लंबे समयके लिये ध्यान कर सकते हो।

*

अपने ऊपर भार देना और एकाग्र होना एक ही चीज नहीं है। भार डालनेमें बहुत उतावली और प्रयासकी उग्रता होती है, जब कि एकाग्रता अपने स्वभावमें शांत और स्थिर होती है। अगर अस्थिरता और बहुत उतावली हो तो वह एकाग्रता नहीं होती।

सक्रिय ध्यान

प्यारी मां, "अपने-आपको क्रियाशील बनानेवाले ध्यान"से श्रीअरविंदका क्या मतलब है?

यह एक ऐसा ध्यान है जिसमें तुम्हारी सत्ताको रूपांतरित करनेकी शक्ति होती है। यह एक ऐसा ध्यान है जो तुम्हें आगे बढ़ाता है, यह उस निश्चल-निष्क्रिय ध्यानके विपरीत है जो गतिहीन और अपेक्षाकृत जड़ होता है और जो न तो तुम्हारी चेतनामें किसी चीजको परिवर्तित करता है, और न तुम्हारी जीवन-पद्धतिमें। सक्रिय ध्यान रूपांतर सिद्ध करनेका ध्यान होता है।

साधारणतया, लोग ध्यानका अभ्यास नहीं करते। जब वे ध्यान-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में (अथवा कम-से-कम जिसे वे "ध्यान" कहते हैं) प्रवेश करते हैं, वे एक प्रकारकी निश्चलतामें घुस जाते हैं जहां कुछ भी हिलता-डुलता नहीं—और वे उसमेंसे ठीक वैसे ही बाहर निकलते हैं जैसे प्रवेश करते समय होते हैं; और न तो उनकी सत्तामें, और न उनकी चेतनामें ही कोई परिवर्तन होता है। और वह ध्यान जितना ही अधिक गतिहीन होता है वे उतना ही अधिक प्रसन्न होते हैं। वे इस प्रकार शाश्वत कालतक ध्यान कर सकते हैं, पर इससे न तो विश्वमें और न उनके अंदर कभी कोई परिवर्तन आयेगा। यही कारण है कि श्रीअरविंद सक्रिय ध्यानकी बात कर रहे हैं जो इसके एकदम विपरीत है। यह रूपांतर लानेवाला ध्यान है।

इसे कैसे किया जाता है? क्या इसे किसी भिन्न तरीकेसे किया जाता है?

मैं समझती हूं कि अभीप्सा भिन्न प्रकारकी होनी चाहिये, मनोभाव भिन्न प्रकारका होना चाहिये। "भिन्न तरीका", "तरीका"से तुम्हारा क्या मतलब है? (हंसी) बैठनेका तरीका?... वह नहीं? आंतरिक मनोभाव?

हां।

परंतु हर एकके लिये यह भिन्न होता है।

मैं समझती हूं कि सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात है यह जानना कि हम क्यों ध्यान करते है, बस, यही चीज है जो ध्यानको उसकी विशेषता प्रदान करती है जो उसे इस या उस प्रकारका बनाती है।

तुम दिव्य शक्तिकी ओर उद्घाटित होनेके लिये ध्यान कर सकते हो, तुम साधारण चेतनाका त्याग करनेके लिये ध्यान कर सकते हो, तुम अपनी सत्ताकी गहराइयोंमें पैठनेके लिये ध्यान कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते हो, तुम यह जाननेके लिये ध्यान कर सकते हो कि तुम अपने-आपको सर्वांगपूर्ण रूपसे कैसे दे सकते हो; तुम सभी प्रकार-की चीजोंके लिये ध्यान कर सकते हो, तुम शांति और स्थिरता और निश्चल-नीरवतामें प्रवेश करनेके लिये ध्यान कर सकते हो (लोग साधारणतया यही करते हैं, पर अधिक सफलता पाये बिना)। परंतु तुम रूपांतर साधित करनेकी 'शक्ति' पानेके लिये, जिन सब स्थलोंको रूपांतरित करनेकी आवश्यकता है उनका पता लगानेके लिये, प्रगतिकी धाराका पता लगानेके लिये भी ध्यान कर सकते हो। और फिर, तुम बहुत व्यावहारिक कारणोंसे भी ध्यान कर सकते हो: जब कोई कठिनाई दूर करनी हो, कोई समाधान पाना हो, जब तुम किसी-न-किसी कार्यमें सहायता चाहते हो, तुम उस सबके लिये भी ध्यान कर सकते हो।

मैं समझती हूं प्रत्येक व्यक्तिकी ध्यान करनेकी अपनी निजी पद्धति होती है। परंतु कोई यदि अपने ध्यानको सक्रिय बनाना चाहता हो तो उसमें प्रगति करनेकी अभीप्सा अवश्य होनी चाहिये और प्रगतिकी इस अभीप्सामें सहायता करने तथा उसे चरितार्थ करनेके लिये उसे ध्यान करना चाहिये। तब वह सक्रिय बन जाता है।

७ मार्च १९५६

(मातृवाणी, खंड ८; प्रश्न और उत्तर १९५६; पृ० ९४-९५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो जीवन लक्ष्यहीन होता है वह सुखहीन भी होता है।

तुम्हारा लक्ष्य होना चाहिये उच्च और विशाल, उदार और उन्मुक्त और फिर तुम्हारा जीवन तुम्हारे लिये और दूसरोंके लिये भी बहुमूल्य हो जायगा।

— श्रीमां

सहारनपुर सर्विस स्टेशन
पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड
सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

236

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संग्रहीत
पुस्तकालय
हिन्दी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

फरवरी १९८८ वर्ष १८, अंक ७, पूर्णांक २११

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश	१
संपादकीय : विनम्र अर्पण	१
दैनन्दिनी	३
ध्यानकी अवस्थाएं	८
ध्यान और आध्यात्मिक प्रगति	१५
ध्यान और अभीप्सा	१६
ध्यान और एकाग्रता	१९
एकाग्रता	२२
एकाग्रता अनिवार्य है	२३
एकाग्रताकी आवश्यकता	२४
एकाग्रताका महत्त्व	२६
एकाग्रताके केंद्र	२७
ध्यान करनेका दिखावा	२८
सम्यक् समाधि	३१
सच्चा एकांत	३२
ध्यानके लिये कुछ मंत्र	३४
स्फुट वचन	३५
सोसायटी समाचार	३६

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संदेश

मातः दुर्गे! भारत स्वार्थ, भयातुरता और क्षुद्रतामें डूबा हुआ है। हमें महान् बनाओ, हमारे प्रयासोंको महान् बनाओ, हमारे हृदयोंको विशाल बनाओ, अपने निश्चयके प्रति हमें सच्चा बनाओ। हम भविष्यमें कभी तुच्छकी कामना न करें, शक्तिहीन, आलसी, भयाक्रांत न रहें...

मातः दुर्गे! अंदरके शत्रुका नाश कर, फिर बाहरकी सब विघ्न-बाधाओंको जड़से उखाड़ दे। ऐसा हो कि उदात्त, वीर, शक्तिमान भारत जाति, जो प्रेम और एकतामें, सत्य और सामर्थ्यमें, कला और साहित्यमें, शक्ति और ज्ञानमें सर्वश्रेष्ठ है, हमेशा भारतके पवित्र वनोंमें, उर्वर खेतोंमें, गगन-स्पर्शी पहाड़ोंमें और पुनीत कलकल करती नदियों-के तटोंपर निवास करे। मांके चरणोंमें यही हमारी प्रार्थना है। अपने-आपको प्रकट कर मां!

—श्रीअरविंद

संपादकीय :

विनम्र अर्पण

श्रीअरविंदने एक पत्रमें लिखा है कि संसार अपने महानतम व्यक्तियोंको नहीं सराह पाता क्योंकि वे अपने समयसे इतने अधिक आगे होते हैं कि उनका मूल्यांकन करनेकी जन-साधारणमें क्षमता ही नहीं होती। विरले, संवेदनशील और विश्व गतिको समझनेवाले ही उनको पहचान पाते हैं।

हमारे इस संघर्ष, विरोधाभास और संकटपूर्ण समयमें ऐसी एक

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महान् आत्माके जन्मकी स्मृति जागती है क्योंकि इस महीनेकी २१ तारीखको उन्होंने धरतीपर पांव धरे थे। वे कई अर्थोंमें विलक्षण थीं। फरासीसी न होते हुए वे शिक्षा, दीक्षा, आदिसे फ्रेंच थीं। उनका नाम भी फ्रांसके लिये अपरिचित था मीरा; यह नाम सुनते ही अनायास कृष्णके प्रेममें डूबी राजस्थानकी मीरा हमारे मानस पटलपर आ खड़ी होती है। जन्मसे भिन्न मीराने विद्यार्थी-अवस्थामें औपचारिक शिक्षाके अतिरिक्त चित्रकला, संगीत, नाटकमें भी दक्षता पाई। उन दिनों आजकी तरह शिक्षा अनेक आयामी न होकर केवल पढ़ने, लिखने, गणित और विज्ञानतक सीमित थी। आजसे सौ साल पहले मीरा आजकी-सी शिक्षा ले रही थी।

विवाहके बादका उनका जीवन भी लीकसे हटकर रहा। गृहस्थी-में फंसे रहनेकी जगह उन्होंने अपने आंतरिक जीवनकी सबसे महत्त्व-पूर्ण अभीप्साको चरितार्थ करनेके प्रयासमें अज्ञात अफ्रीकामें प्रवेश कर गुह्य ज्ञान प्राप्त किया। ध्यानमें मार्ग दर्शन देनेवाले "कृष्ण" की खोजमें भारत आईं और तब वे जान पाईं कि ध्यानके "कृष्ण" सचमुच पृथ्वीपर हैं किंतु उनका नाम है श्रीअरविंद। दोनोंने मिलकर नया अभियान शुरू किया। वैज्ञानिकोंकी तरह उन्होंने मनुष्यके आंतरिक जगत्के अंधकारपूर्ण जंगलमें प्रवेश कर नया मार्ग ढूंढ़नेका साहसिक कार्य आरंभ किया। अपनी खोजोंको कसौटीपर कसने, परीक्षण करनेके लिये उन्होंने अपनी प्रयोगशालाके रूपमें आश्रमकी स्थापना की।

आज वे दोनों सशरीर नहीं हैं किंतु मीरा जिन्हें श्रीअरविंदने माताजी कहा और जो समस्त आश्रमवासियोंके लिये मां रहीं उनके परीक्षणोंका जीता जागता, कई अंशोंमें सफल परिणाम श्रीअरविंद आश्रम आज भी प्रगति पथपर अग्रसर है। आश्रम मांकी कल्पना-दृष्टि या आध्यात्मिक दृष्टि, संचालन क्षमता, सुरुचि और अपूर्व आध्यात्मिक सफलताका चित्र है।

इस नारी अवतारको पहचाना था श्री कपाली शास्त्रीने जो शास्त्रके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धुरंधर ज्ञाता, और अध्यात्म-पथके ज्ञानी पथिक थे। श्रीमांकी वंदना उन्होंने इन शब्दोंमें की थी :

"नरकुलशक्ति नवयुगयुक्ताम्
अबलामतिकृतबन्धनमुक्ताम्।
आदधते गुरमहसे लसते
नम, नम, नारीवरवेष भृते॥"

"नये युगको लानेवाली, मनुष्योंके समूहकी शक्ति जो निर्बल तथा मतिहीनको बन्धनोंसे मुक्त करती है उसे प्रणाम। गुरुकी यह शोभायमान ज्योति जिसने उत्तम नारीका रूप धारण किया है उसे प्रणाम।"

हम भी विनम्र वन्दना अर्पित करें उस अद्‌भुत, विलक्षण अवतारको।

—अनुबेन

दैनन्दिनी

फरवरी

१. आत्माको तैयार करनेके तरीकोंमें कोई भी कृत्रिम या औपचारिक तरीका अपने प्रभावमें, मनुष्यकी अपनी आशाओं, कामनाओं और अपने जीवनतकको बृहत्तर व्यक्तित्व जैसे कि अपने राष्ट्रमें मिलनेकी आध्यात्मिक प्रक्रियाकी बराबरी नहीं कर सकता।

२. यह उस विशालतर हिंदू धर्मकी बात है जो मतवाद या मतोंके समूह नहीं, बल्कि जीवनका विधान है, जो सामाजिक ढांचा नहीं बल्कि भूत और भावी सामाजिक विकासकी आत्मा है, जो किसी चीजका बहिष्कार नहीं करता लेकिन जिसे सब कुछकी जांच करने और सबका अनुभव करनेका आग्रह होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और जब जांच ले, उसका अनुभव कर ले तो उसका उपयोग आत्माके लिये करता है।

३. ऐसे विशाल हिंदू धर्ममें हम भावी जगत्-धर्मका आधार पाते हैं।

४. आध्यात्मिक, आंतरिक स्वाधीनता ही पूर्ण मानव स्थितिकी रचना कर सकती है। बौद्धिक ज्ञानसे महानतर आध्यात्मिक ज्ञान ही मनुष्यकी प्राणिक प्रकृतिको समझा सकता और उसकी स्वार्थपरताओं, विरोध और मनमुटावोंपर सामंजस्य आरोपित कर सकता है।

५. पूर्णयोगका उत्तम शास्त्र है, प्रत्येक व्यक्तिमें छिपा हुआ शाश्वत वेद। इसलिये उसका सर्वश्रेष्ठ पथ-प्रदर्शक और गुरु है आंतरिक पथ-प्रदर्शक, जगत्-गुरु, जो हम सबमें विद्यमान है।

६. साहसके बिना मनुष्य देवत्वकी ओर विकास नहीं कर पाता; हिम्मत, शक्ति और सामर्थ्य, ये कार्यरत दिव्य प्रकृतिके सर्वप्रथम सिद्धांत हैं।

७. लोगोंको सहायता देनेकी कामनामें न फंस जाना—आंतरिक संतुलनमें रह कर कार्य करो और बोलो और भगवान्‌की ओरसे उनके लिये सहायता आने दो। कोई भी सचमुच मदद नहीं कर पाता—भागवत करुणाको छोड़ कर।

८. अपने कामके बारेमें तभी सोचो जब तुम उसे करते हो, उससे पहले भी नहीं और न बादमें।
जो काम पूरा हो गया है, मनको उसकी ओर मुड़ने न दो। वह भूतकालकी बात है और उसे फिरसे याद करनेसे केवल शक्तिका अपव्यय होगा।

९. सारा अस्तित्व वैश्व शक्तियोंकी क्रीड़ा है। व्यक्ति उन वैश्व शक्तियोंको व्यक्तिगत रूप देता है किंतु वही निश्चित कर सकता है कि वह किसी शक्तिको प्रत्युत्तर देगा या नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. निम्नतर प्रकृतिकी कुरूपताओंको स्वीकारना क्योंकि उनका अस्तित्व है, यह साधनाका अंग नहीं है—अगर इसीको वास्तविकता कहते हैं तो हमारा उद्देश्य इन चीजोंको स्वीकारना या इनका उपभोग करना नहीं है, बल्कि हम इनसे पिंड छुड़ा कर आध्यात्मिक सौंदर्य और पूर्णताकी रचना करना चाहते हैं।

११. जब लोग कहते हैं, "मैं बुरा हूं, मैं पापी हूं", तो वे अपने-आपको दुर्बल बना लेते हैं, तुम्हें स्वस्थतासे कहना चाहिये "हां, मुझमें दोष हैं, जैसे सब मानव सत्ताओंमें होते हैं, लेकिन वे चले जाएंगे, क्योंकि मैं सचाईसे भगवान्‌के लिये अभीप्सा करता हूं।"

१२. दिव्य प्रेम, सौंदर्य और आनंदको इस संसारमें लाना ही हमारे योगका सार और किरीट है। लेकिन मुझे यह काम असंभव लगता है जबतक वह दिव्य सत्य उसके सहायक और आधारके रूपमें और रक्षकके रूपमें न आये जिसे मैं अतिमानस कहती हूं।

१३. श्रद्धा आदिको प्राप्त करनेका तरीका है उन्हें प्राप्त करनेके लिये आग्रह करना और ढीला पड़ने या निराश होने या छोड़ देनेसे इंकार करना—जबसे इस कठिन-साध्य पृथ्वीने विचारशील और अभीप्सा करनेवाले जीव पाये हैं तभीसे सब कुछ पानेका यही तरीका रहा है।

१४. निष्ठावान् बने रहो और तुम विजय प्राप्त करोगे।

१५. जैसे जीवनमें होता है वैसे ही योगमें होता है कि जो व्यक्ति हर पराजय और निराशा और सब विपरीत, विरोधी और विरोधाभासी घटनाओं और शक्तियोंके रहते, बिना थके प्रयास करता रहता है उसीकी अंतमें जीत होती है और उसे अपनी श्रद्धाका प्रमाण मिलता है क्योंकि मनुष्यमें विद्यमान अंतरात्मा और शक्तिके लिये कुछ भी असंभव नहीं होता।

१६. मार्गदर्शनका सच्चा अर्थ अधिक स्पष्ट होता है जब हम आंतरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गहराईमें जा पायं और वहांसे अधिक बारीकीसे शक्तियोंका खेल देख पायं और उनके पीछेकी दिव्य इच्छाकी सूचनाओंको ग्रहण कर सकें।

१७. इस साधनामें जो सबसे आवश्यक चीज है, खास कर प्राणमें, वह है शांति और निश्चल नीरवता—ऐसी शांति जो परिस्थितियों या परिसरपर निर्भर नहीं है बल्कि उच्चतर चेतनाके साथ, जो भगवान्‌की चेतना है, माताजीकी चेतना है, उसके आंतरिक संबंधपर निर्भर है।

१८. औरोंके लिये घृणाके लिये स्थान नहीं है, खास कर जब भगवान् सबमें विद्यमान हैं। स्पष्ट है कि मनुष्योंके कार्य, उनकी अभीप्साएं क्षुद्र या नगण्य नहीं होतीं, क्योंकि सारा जीवन ही अंतरात्माके प्रकाशकी ओर वृद्धि होता है।

१९. तुम जो कहते हो वह भी सच है। शरीरके बारेमें सोचते न रहना, शरीरकी चिंता न करना और किसी बीमारीको "बकवास" कहना और अपना काम करते रहना, यह बहुधा बहुत प्रभावशाली होता है।

२०. हमारा योग पुराने मार्गोंपर फिर चलना नहीं है, बल्कि एक आध्यात्मिक साहस यात्रा है।

२१. अपनी पूरी चेतनासे तुम सचमुच यह निश्चय करो कि तुम अपनी सत्ताको भगवान्‌के अर्पित करोगे ताकि वे अपनी इच्छाके अनुसार उसे घड़ें तो तुम्हारी अधिकतर व्यक्तिगत मुसीबतें गायब हो जाएंगी।

२२. साधनाका यह एक बड़ा रहस्य है कि मनके प्रयासकी जगह, पीछे या ऊपर स्थित दिव्य शक्तिद्वारा कार्य कैसे कराया जाय।

२३. यह पृथ्वी-जीवन एक महान् दिव्यताका चुना हुआ आवास है और उस दिव्यताका युग-युगसे संकल्प है कि उसे अंधेरे बंदीगृहसे अपने भव्य प्रासाद और गगनचुंबी मंदिरमें बदल दे।

२४ अंतिम खोज मनुष्य यह करता है कि इस संसारमें सब कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेतना और उसकी क्रियापर निर्भर है, वे चीजें भी जो उस-पर निर्भर नहीं दीखतीं।

२५. निद्रावस्थामें अपनी इच्छा आरोपित करनेके लिये तुम्हें सोनेसे पहले जाग्रत मनके द्वारा दिये गये आदेशका पालन करनेकी अवचेतनको आदत डलवानी चाहिये। उदाहरणके लिये बहुधा यह होता है कि अगर तुम अपने अवचेतनपर अपनी इच्छा एकाग्र करो कि तुम्हें प्रातः अमुक समय उठना है तो अवचेतना आज्ञा पालेगी और तुम नियत समयपर स्वतः जाग उठोगे। ऐसा ही और कार्योंके लिये किया जा सकता है।

२६. अगर तुम अपना सारा जोर श्रद्धा और अभीप्सापर लगाओ और जिसकी अभीप्सा करते हो उसपर सतत एकाग्र होओ तो देर सवेर तुम्हें सिद्धि प्राप्त होकर रहेगी।

२७. इसका रहस्य हृदयमें है, मनमें नहीं—ऐसे हृदयमें जो अपने अंदरके दरवाजे खोल देता है और उसके द्वारा अंतरात्माके प्रफुल्ल, दीप्त विश्वास और आत्म-समर्पणकी ज्वालामें बाहर झांकता है।

२८. उस आंतरिक ज्वालाके आगे मनके तर्क और उसकी कठिनाइयां झड़ जाती हैं और फिर पथ चाहे कितना लंबा और दुष्कर क्यों न हो, वह सूर्यालोकित मार्ग बन जाता है जो न केवल प्रेम और आनंदकी ओर ले जाता है बल्कि उनके द्वारा ही चलता है।

२९. प्रकृतिके अधीन होकर हम प्रकृति और भगवान्, दोनोंसे दूर हो जाते हैं; प्रकृतिका अतिक्रमण करके हम एक साथ प्रकृति-की सारी संभावनाओंको चरितार्थ करते हैं और भगवान्की ओर ऊपर उठते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यानकी अवस्थाएं

"कुछ ऐसे लोग हैं, जब वे ध्यानके लिये बैठते हैं तो एक ऐसी अवस्थामें चले जाते हैं जिसे वे बहुत अच्छा और आनंददायक मानते हैं।"

(प्रश्न और उत्तर १९२९; २१ अप्रैल, पृ० २१)

वह कौन-सी अवस्था है?

वह जो भी हो, वह सोचते हैं कि यह आनंददायक और अनोखी है। उनकी अपने बारेमें बहुत अच्छी राय होती है। वह मानते हैं कि चूंकि वह बिना हिले-डुले, चुपचाप बैठ सकते हैं इसलिये बहुत ही ज्यादा विलक्षण हैं, और अगर वह किसी चीजके बारेमें सोचते भी नहीं तब तो और भी विलक्षण हैं। लेकिन साधारणतः उनके दिमागमें एक प्रकारका बहुमूर्तिदर्शी या बहुरंगदर्शी-यंत्र चलता रहता है और उन्हें उसकी खबर भी नहीं होती। फिर भी जो लोग कुछ क्षण कुछ बोले और सोचे बिना, हिले-डुले बिना रह सकते हैं, उनकी अपने बारेमें बहुत ही अच्छी राय होती है। हां, जैसा कि मैंने कहा, अगर उन्हें उस अवस्थामेंसे बाहर निकाला जाय, अगर कोई आकर उनका दरवाजा खटखटाये और उनसे कहे: "कोई आपके लिये प्रतीक्षा कर रहा है," या "श्रीमतीजी, आपका बच्चा रो रहा है," तो वे आपेसे बाहर होकर चिल्ला पड़ेंगे: "लो, तुमने मेरा ध्यान खराब कर दिया, सत्यानाश कर दिया।" मैं ऐसी बातें कह रही हूं जो मैंने अपनी आंखोंसे देखी हैं। ऐसे लोग देखे हैं जो अपने ध्यानके बारेमें बहुत गंभीर थे और ध्यानमें जरा-सी बाधा पड़ते ही उग्र रूपसे क्रुद्ध हो उठते थे।... स्वभावतः यह बड़ी आध्यात्मिक प्रगतिका चिह्न नहीं है। अगर उन्हें अपने आनंदपूर्ण ध्यानसे बाहर निकाला जाता तो वे हर एकपर झल्ला पड़ते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो लोग ध्यान करते हैं उनमेंसे कुछ ध्यान करना जानते हैं। वह किसी विचारपर नहीं, नीरवतामें ध्यान लगाते हैं—आंतरिक ध्यान, जिसमें उनका कहना है कि वे भगवान्‌के साथ एकत्व भी पा लेते हैं। और वह बिल्कुल ठीक है। कुछ और हैं, बहुत थोड़े-से, जो किसी विचारका बहुत सावधानीसे अनुसरण कर सकते हैं और यह जाननेकी कोशिश करते हैं कि उसका ठीक-ठीक अर्थ क्या है। यह भी ठीक है। लेकिन अधिकतर लोग एकाग्र होनेकी कोशिश करते हैं और एक प्रकारकी आधी नींदमें या कम-से-कम तामसिक अवस्थामें प्रवेश कर जाते हैं। वह किसी प्रकारकी जड़ चीज बन जाते हैं, मन जड़ हो जाता है, भावना जड़ हो जाती है, शरीर जड़ हो जाता है। वह घंटों इस अवस्थामें रह सकते हैं क्योंकि तमस्‌के जैसी स्थायी चीज और कोई नहीं होती! मैं इस समय तुमसे जो कुछ कह रही हूं—ये सब ऐसे लोगोंके अनुभव हैं जिनसे मैं मिली हूं। और ये लोग जब अपने ध्यानसे बाहर आते हैं तो यही समझते हैं कि उन्होंने कोई बहुत बड़ा काम कर लिया है। लेकिन सचमुच वे सीधे-सीधे तमस् और निश्चेतनामें उतर गये थे: ऐसे लोग बहुत कम होते हैं जो सचमुच ध्यान करना जानते हों। और फिर यह मान भी लें कि बहुत-सी साधना और बरसोंके प्रयासके बाद तुम अपने ध्यानमें भागवत सत्ताके साथ सचेतन संपर्क साधनेमें सफल हो गये हो तो स्पष्ट है कि यह परिणाम है और इस परिणामका तुम्हारे चरित्र और जीवनपर प्रभाव होना चाहिये। परंतु यह प्रभाव व्यक्ति-व्यक्तिपर अलग-अलग होता है। ऐसे उदाहरण हैं जहां व्यक्ति ऐसे दो भागोंमें बंट जाता है कि जब ऐसे लोग ध्यानमें होते हैं तो भगवान्‌के साथ संपर्कमें आते हैं और उनके साथ तादात्म्यका परम आनंद प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन जब ध्यानसे बाहर आते हैं, साधारण जीवनमें उतरते हैं, जीना और काम करना शुरू करते हैं तो बहुत ही मामूली आदमी बन जाते हैं जिनकी बहुत मामूली और कभी-कभी तो बहुत ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंवारू और भद्दी प्रतिक्रियाएं होती हैं। वास्तवमें, मैं ऐसे लोगोंको जानती हूं जो एकदम साधारण मनुष्य बन जाते हैं और तब, उदाहरणके लिये, ऐसी सब चीजें करते हैं जो नहीं करनी चाहिये, जैसे, दूसरोंके बारेमें गप्पें लगानेमें समय बिताते हैं, केवल अपने बारेमें ही सोचते हैं, उनकी एकदम स्वार्थ-भरी प्रतिक्रिया होती है, हमेशा अपनी ही तुच्छ भलाईके बारेमें सोचते हैं, किसी औरके बारेमें सोचते भी नहीं, कभी किसीके लिये कुछ नहीं करते और उनमें कोई बड़े विचार नहीं उठते। फिर भी वे अपने ध्यानमें उस संपर्कको पा चुके हैं। इसीलिये जो लोग यह जान चुके हैं कि इस शरीरके साथ लगी तुच्छ बाहरी प्रकृतिको बदलना कितना मुश्किल है, अपने परे जाना, अपनी गतिविधियोंका रूपांतर करना कितना कठिन है, वे कहते हैं कि यह संभव नहीं है, प्रयास करनेका कोई लाभ नहीं। संसारमें आकर तुमने माटीका शरीर धारण किया है। तुम्हें बस उसे छोड़कर चले जानेकी तैयारी करनी चाहिये, संसार जैसा है, रहने दो। बस, करने लायक काम यही है, जितनी जल्दी हो सके यहांसे भाग चलो। और अगर सभी भाग जायं तो फिर संसार ही न रह जायगा और दुःख-दारिद्रय न रहेगा। बात तर्कसंगत है। अगर उनसे कहा जाय: "तुम जो कह रहे हो वह बहुत स्वार्थपूर्ण है, तुम अपने-आप तो चले जाओ और दूसरोंको छटपटाते छोड़ दो,"—"बस, वे सब भी यही करें जो मैं कर रहा हूं। अगर हर एक वही करे जो मैं कर रहा हूं तो वे सब भी छुटकारा पा जायेंगे, तब कोई संसार ही न रहेगा, कोई दुःख-दर्द न रहेगा।" मानों यह सब व्यक्तियोंकी इच्छापर निर्भर है जिनका संसारके निर्माणमें कोई हाथ न था! वे उसे समाप्त करनेकी आशा कैसे कर सकते हैं? कम-से-कम यदि यह संसार उनका बनाया हुआ होता तो वे यह जानते यह कैसे बनाया गया है और तब उसे बिगाड़नेकी कोशिश कर सकते थे (यद्यपि अपनी बनायी चीजको बिगाड़ना हमेशा आसान नहीं होता)। लेकिन यह सृष्टि उन्होंने नहीं बनायी, उन्हें यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी पता नहीं है कि इसे कैसे बनाया गया है और उन्हें यह दुराशा है कि वे इसे मेट सकेंगे क्योंकि उन्हें आशा है कि वे स्वयं इससे भाग सकेंगे . . .। मुझे नहीं लगता कि वह संभव है। आदमी प्रयत्न करनेपर भी भाग नहीं सकता। लेकिन यह एक और ही विषय है। बहरहाल, मेरे लिये, मेरा अनुभव (जो काफी लंबा है। मैं प्रायः तिरपन वर्षसे लोगोंके साथ, उनके योग और उनके आंतरिक जीवनके साथ व्यवहार रखती आयी हूं। मैंने यहां और वहां बहुत कुछ देखा है और सारी दुनियामें भी थोड़ा-बहुत देखा है), हां, तो मैं नहीं मानती कि ध्यानके द्वारा तुम अपने-आपको रूपांतरित कर सकते हो। मुझे इससे उल्टी बातपर पूरा विश्वास है।

जो तुम्हें करना है, उसे करते हुए, वह चाहे कुछ क्यों न हो, चाहे जो काम हो--अगर तुम उसे करो और करते समय इस बातकी सावधानी रखो कि भगवान्‌को भूलने न पाओ, तुम जो कुछ करते हो उसे भगवान्‌के अर्पण कर दो, अपने-आपको भगवान्‌को इस तरह देनेकी कोशिश करो कि वे तुम्हारी सारी प्रतिक्रियाओंको बदल दें, स्वार्थी, तुच्छ, मूढ़ और अज्ञानी होनेकी जगह उन्हें आलोकपूर्ण, उदार बना दें, तो तुम इस दिशामें प्रगति करोगे। यही नहीं कि स्वयं तुम कुछ प्रगति कर लोगे बल्कि तुम सामान्य प्रगतिमें भी सहायता दोगे। मैंने यह कभी नहीं देखा कि जो लोग सब कुछ छोड़कर रीते चिंतन-मननके लिये बैठ जाते हैं (क्योंकि वह लगभग रीता ही होता है), मैंने ऐसे लोगोंको कभी प्रगति करते नहीं देखा, किसी भी सूरतमें उनकी प्रगति नगण्य-सी होती है। मैंने ऐसे लोग देखे हैं जिन्होंने योग करनेका दावा कभी नहीं किया, जो पार्थिव रूपांतर और धरतीपर भगवान्‌के अवतरणके विचारसे ही उत्साहमें भरे रहते थे। उन्होंने हृदयमें उत्साह लिये, अपने-आपको पूरी तरह, बिना कुछ बचाये, बिना व्यक्तिगत मुक्तिके स्वार्थपूर्ण विचारके, अपना थोड़ा-सा काम किया। मैंने इन लोगोंको शानदार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगति करते हुए देखा है, सचमुच शानदार प्रगति। और कभी-कभी वे अद्‌भुत होते हैं। मैंने संन्यासी देखे हैं, मठोंमें रहनेवाले देखे हैं, ऐसे लोग देखे हैं जो योगी होनेका दावा करते हैं। मैं उस पहले प्रकारके एकके बदले इस तरहके बारह लेना पसंद न करूंगी--मेरा मतलब है पार्थिव रूपांतर और जगत्‌की प्रगतिकी दृष्टिसे, यानी, जो काम हम करना चाहते हैं उसकी दृष्टिसे–यह प्रयास करनेके लिये कि यह जगत् जैसा है वैसा ही न बना रहे, यह सचमुच भागवत चेतनाके साथ भागवत संकल्पका यंत्र बन जाय। तुम जगत्‌से भागकर उसे नहीं बदल सकते। यहां काम करते हुए, नम्रता और विनयके साथ काम करते हुए उसे बदला जा सकता है, तुम्हारे हृदयमें आग हो, ऐसी चीज हो जो आहुतिकी तरह जलती हो। तो बस।

तो ध्यानका कोई उपयोग नहीं ?

नहीं, और जिस हदतक वह जरूरी होगा, वह सहज रूपसे आ जायगा। अचानक तुम्हें कोई ऐसी चीज आकर पकड़ लेगी जो तुम्हें निश्चल बना देगी, तुम्हें किसी भावके अंतर्दर्शन या किसी मनोवैज्ञानिक अवस्थापर केंद्रित कर देगी। वह तुम्हें पकड़ लेगी। तुम्हें प्रतिरोध न करना चाहिये। तब तुम आवश्यक प्रगति करोगे। ऐसे अवसरपर तुम कुछ देखते, कुछ समझते हो और अगले क्षण, अपने अंदर उस चीजको प्राप्त करके, बिना किसी दावे या पाखंडके अपना काम शुरू कर देते हो। मुझे सबसे ज्यादा डर उनका लगता है जो अपने-आपको बहुत श्रेष्ठ मानते हैं क्योंकि वे बैठकर ध्यान करते हैं और सब चीजोंमें यही सबसे अधिक भयंकर है क्योंकि ये लोग मिथ्याभिमानसे भर जाते हैं और इतने अधिक आत्म-तुष्ट हो जाते हैं कि वे प्रगतिके सभी रास्तोंको बंद कर लेते हैं...।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बात है जो हमेशा कही गयी है लेकिन हमेशा गलत समझी गयी है, यह है नम्रताकी आवश्यकता। हम उसे बुरी तरह लेते हैं, बुरी तरह समझते हैं और बुरी तरह उसका उपयोग करते हैं। नम्र बनो, यदि तुम ठीक ढंगसे नम्र बन सकते हो; और इससे बढ़कर, गलत तरीकेसे मत बनो क्योंकि यह तुम्हें कहीं नहीं पहुंचाता। लेकिन एक बात है। अगर तुम अपने अंदरसे इस जंगली घासको—जिसे मिथ्याभिमान कहते हैं—खींचकर बाहर कर सको तो वास्तवमें तुम कुछ प्राप्त करोगे। काश, तुम्हें मालूम होता कि यह कितना कठिन है! तुम (बिना जाने ही) अंदरसे संतुष्ट होकर फूले बिना कोई चीज ठीक तरह नहीं कर सकते, कोई अच्छा विचार नहीं कर सकते, कोई सच्ची गति नहीं कर सकते, थोड़ी-सी प्रगति नहीं कर सकते। और तब तुम जोरसे हथौड़े बरसाकर इसे तोड़नेके लिये बाधित होते हो। फिर भी टूटे टुकड़े बचे रहते हैं। और फिरसे अंकुरित होने लगते हैं। इस रूखड़ीको जड़से निकालनेके लिये तुम्हें जन्म-भर काम करना पड़ता है। यह बार-बार निकल आती है और इतने छिपे रूपमें उगती है कि तुम मान बैठते हो कि अब यह चली गयी। तुम अपने-आपको बहुत विनम्र मानकर कहते हो: "यह मैंने नहीं किया। मुझे लगता है कि यह भगवान्‌ने किया है। भगवान् न हों तो मैं कुछ भी नहीं हूं," और अगले ही क्षण, ऐसी बात सोचनेके लिये तुम अपने-आपसे बहुत संतुष्ट होते हो!

१३ मई, १९५३ (मातृवाणी खंड ५; प्रश्न और उत्तर १९५३)

कोई बाहरी **अनिवार्य** अवस्थाएं नहीं हैं, लेकिन ध्यानके समय एकांत और निर्जनता, और साथ ही शरीरकी निश्चेष्टता सहायक होती है, कभी-कभी, योग आरंभ करनेवालेके लिये एकदमसे अनिवार्य होती है। लेकिन तुम्हें बाहरी परिस्थितियोंसे बंधना नहीं चाहिये। एक बार ध्यानका अभ्यास हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानेपर, सभी परिस्थितियोंमें, लेटे हुए, बैठे हुए, चलते हुए, अकेलेमें, दूसरोंके साथ, नीरवतामें या कोलाहलके बीच हर एक परिस्थितिमें ध्यान करना संभव होना चाहिये।

पहली आवश्यक आंतरिक स्थिति है ध्यानमें आनेवाली बाधाओंके विरुद्ध संकल्पशक्तिकी एकाग्रता, उदाहरणके लिये ये बाधाएं हैं: मनका इधर-उधर भटकना, विस्मृति, निद्रा, भौतिक और स्नायविक अधैर्य और अस्थिरता इत्यादि।

दूसरी स्थिति है आंतरिक चेतना, 'चित्'की बढ़ती हुई पवित्रता और स्थिरता जिससे विचार और संवेग उठते हैं, उदाहरणके लिये, सभी बाधक प्रतिक्रियाओंसे मुक्ति जैसे क्रोध, दुःख, विषाद, जगत्में होनेवाली घटनाओंके बारेमें दुश्चिन्ता इत्यादि। मानसिक और नैतिक पूर्णतामें हमेशा एक-दूसरेसे बहुत निकटका संबंध होता है।

*

एकाग्रचित्त ध्यानके लिये बैठी हुई निश्चल स्थिति स्वाभाविक स्थिति होती है—चलना और खड़ा होना सक्रिय अवस्थाएं हैं। जब तुम चेतनाका चिरस्थायी विश्राम और निष्क्रियता पा लो तभी चलते हुए, या कुछ भी करते हुए एकाग्र होना और ग्रहण करना आसान होता है। अपने-आपमें सिमटी हुई चेतनाकी मूलभूत निष्क्रिय अवस्था एकाग्रताके लिये उचित स्थिति है और उसके लिये बैठकर शरीरको अपने-आपमें समेटकर निष्क्रिय बनाना सबसे अच्छी अवस्था है। इसे लेटकर भी किया जा सकता है लेकिन वह अवस्था बहुत निष्क्रिय होती है, और उसमें संहित करनेके स्थानपर जड़तामें चले जानेकी प्रवृत्ति होती है। यही कारण है कि योगी हमेशा किसी आसनमें बैठते हैं। तुम चलते हुए, खड़े हुए, लेटे हुए ध्यान करनेका अभ्यास कर सकते हो लेकिन बैठी हुई अवस्था पहली स्वाभाविक अवस्था है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम एक गहरी आंतरिकता और निश्चलताकी अवस्थामें चले जाते हो। लेकिन अगर तुम एकदम सहसा उसमेंसे सामान्य चेतनामें आ जाओ तो जरा-सा स्नायविक धक्का लग सकता है या दिलमें थोड़ी देरके लिये वैसी धुकधुकी हो सकती है जिसका तुमने वर्णन किया है। आंखें खोलने और आंतरिकतामेंसे बाहर आनेसे पहले हमेशा कुछ मिनटोंके लिये अचंचल रहना अच्छा है।

ध्यान और आध्यात्मिक प्रगति

"आध्यात्मिक प्रगतिका यह कोई प्रमाण नहीं है कि तुमने ध्यानमें कितने घंटे बिताये। वास्तवमें तुम्हारी प्रगतिका प्रमाण यह है कि अब तुम्हें ध्यान करनेका कोई प्रयास ही नहीं करना पड़ता।"

(प्रश्न और उत्तर १९२९)

इसका मतलब यह है कि अपनी आंतरिक मशीनको निश्चल-नीरव बनानेके लिये, जिस चीजको तुम चाहते हो उसपर अपने विचारको केंद्रित करनेमें समर्थ होनेके लिये तनावपूर्ण प्रबल प्रयास करनेके स्थानपर तुम इसे एकदम सामान्य ढंगसे, स्वाभाविक भावसे, बिना किसी प्रयत्नके सहज ढंगसे करते हो और जिस किसी कारणसे तुम ध्यान करनेका निश्चय करते हो तब उसमें जो कुछ तुम देखना या जानना या पहचानना चाहते हो वह तो तुम्हारी चेतनामें बना रहता है, बाकी सब कुछ मानों जादूकी तरह विलीन हो जाता है, तुम्हारे अंदर सब कुछ स्थिर हो जाता है, तुम्हारी सारी सत्ता नीरव बन जाती है, तुम्हारी स्नायुएं पूर्णतः शांत हो जाती हैं, तुम्हारी चेतना पूरी तरह एकाग्र हो जाती है—स्वाभाविक रूपसे, स्वयं अपने-आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम तीव्र आनंदके साथ एक और भी अधिक प्रगाढ़ ध्यानावस्थामें प्रवेश कर जाते हो।

यह इस बातका चिह्न है कि तुम सफल हुए हो, अन्यथा वह ध्यान नहीं है।

१७ फरवरी, १९५१

(मातृवाणी, खंड ४; प्रश्न और उत्तर १९५०-५१; पृ० १२१-२२)

ध्यान और अभीप्सा

जिस समय कोई चुपचाप ध्यानावस्थामें होता है तब उसके अंदर कौन-सी शक्तियां काम करती हैं?

यह बात ध्यान करनेवालेपर निर्भर है।

परंतु क्या निश्चल-नीरव ध्यानकी अवस्थामें साधक अपने-आपको पूर्ण रूपसे खाली नहीं कर देता? तब फिर कोई बात उसपर कैसे निर्भर कर सकती है?

यदि तुम अपने-आपको संपूर्ण रूपसे शून्य कर डालो तो भी इससे तुम्हारी अभीप्सामें कोई परिवर्तन नहीं होता, इसका कार्यक्षेत्र नहीं बदलता। किसीकी अभीप्सा मानसिक भूमिकाओंपर अथवा प्राणके क्षेत्रोंमें कार्य करती है; किसीकी अभीप्सा आध्यात्मिक होती है। यह तुम्हारी अभीप्साके गुणपर निर्भर है कि कैसी शक्ति उसका उत्तर देगी और वह क्या काम करेगी। ध्यानके समय अपने-आपको शून्य कर लेनेसे तुममें एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंतरिक निश्चल-नीरवता पैदा हो जाती है; किंतु इसका यह अर्थ नहीं कि तुम शून्य बन गये हो या तुम कोई निर्जीव या जड़ वस्तु बन गये हो। अपने-आपको खाली पात्र बनाकर तुम उस वस्तुका आवाहन करते हो जो उसे भर देगी, अर्थात्, तुम अपनी आंतरिक चेतनाके दबावको सिद्धिकी ओर खोल देते हो। यह तुम्हारी चेतनाके स्वभाव और उसके दबावपर निर्भर है कि तुम किन शक्तियोंको कार्य-क्षेत्रमें उतार सको और वे शक्तियां तुम्हारे कार्यमें सहायता पहुंचायें और उसे सफल करें या विफल करें अथवा हानि पहुंचायें या बाधा दें।

तुम विभिन्न अवस्थाओंके ध्यान कर सकते हो और उन सभीका बंद या नीचेकी ओर उतारी गयी शक्तियोंपर तथा उनके कार्यपर प्रभाव पड़ता है। यदि तुम अकेले ध्यानमें बैठो तो तुम्हारी आंतर और बाह्य अवस्था ही मुख्य होगी। और यदि तुम दूसरोंके साथ बैठो तो फिर सामान्य अवस्थाका महत्त्व अधिक होगा। परंतु इन दोनों दशाओंमें अवस्थाएं सदा बदलती रहेंगी और जो शक्तियां उनका उत्तर देंगी वे भी एक-सी न होंगी। उचित रूपमें की गयी सम्मिलित एकाग्रता एक महान् शक्ति हो सकती है। एक प्राचीन कहावत है: "यदि एक दर्जन सच्चे मनुष्य अपने संकल्प और अभीप्साको एक करके भगवान्‌को पुकारें तो भगवान् प्रकट हुए बिना न रह सकेंगे।" परंतु उनका संकल्प एकनिष्ठ होना चाहिये, उनकी अभीप्सा सच्ची होनी चाहिये। हो सकता है कि इस प्रकारका प्रयास करनेवाले किसी प्रकारकी जड़ताके वश अथवा किसी भ्रांत या विकृत इच्छाके कारण एक हो गये हों और ऐसी अवस्थामें परिणाम विनाशकारी हो सकते हैं।

ध्यानके समय पहली और अनिवार्य आवश्यकता है तुम्हारी समस्त चेतनाका पूर्ण और नितांत सचाईकी अवस्थामें होना। यह अपरिहार्य है कि तुम अपने-आपको धोखा न दो और दूसरेको न तो धोखा दो और न दूसरेके धोखेमें आओ। बहुधा लोगोंकी कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामना होती है, कोई मनकी पसंद या प्राणकी वासना होती है, वे चाहते हैं कि उनके ध्यानमें होनेवाली अनुभूति किसी विशिष्ट रूपमें हो अथवा वह कुछ ऐसा मार्ग ले जिससे उनकी भावनाओं, इच्छाओं और पसंदोंको संतोष मिले; वे अपने-आपको खाली और निष्पक्ष रखकर जो कुछ होता है उसे सरलता और सचाईके साथ साक्षी रूपमें नहीं देखते। यदि ऐसी अवस्थामें होनेवाली चीज तुम्हें पसंद न हो तो अपने-आपको धोखा देना सहज होगा। तुम एक चीज देखोगे, किंतु उसे थोड़ा-सा तोड़-मरोड़कर कोई और ही चीज बना डालोगे, अथवा किसी सहज और स्पष्ट वस्तुको विकृत कर डालोगे या उसे बढ़ाकर असाधारण अनुभूति बना दोगे। जब तुम ध्यान करने बैठो तो तुम्हें एक बालककी भांति सरल और निष्कपट रहना चाहिये, अपने बाहरी मनको किसी प्रकारका हस्तक्षेप न करने दो, कोई आशा या किसी तरहका हठ न करो। यदि यह अवस्था हो तो बाकी सब तुम्हारे अंदरकी अभीप्सापर निर्भर होगा। यदि तुम अंदरसे शांति मांगोगे तो वह मिलेगी; यदि बल मांगोगे, शक्ति मांगोगे, ज्ञान मांगोगे तो वे भी मिलेंगे—किंतु सब-के-सब तुम्हारी ग्रहण करनेकी शक्तिके परिमाणमें मिलेंगे। और यदि तुम भगवान्-का आवाहन करो—यह स्वीकार करते हुए कि भगवान् तुम्हारे आवाहनको सुननेके लिये सदा तैयार हैं और इसका यह अर्थ हुआ कि यदि तुम्हारा आवाहन उनतक पहुंचनेके लिये पर्याप्त रूपसे शुद्ध और बलवान् हो—तो तुम्हें उसका उत्तर अवश्य मिलेगा।

२३ जून, १९२९ (श्रीमातृवाणी खंड ३, प्रश्न और उत्तर १९२९)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यान और एकाग्रता

ध्यान और एकाग्रतामें क्या अंतर है?

ध्यान विशुद्धतः मानसिक क्रिया है; इसमें केवल मानसिक सत्ता रस लेती है। मनुष्य ध्यान करते समय एकाग्र हो सकता है पर यह मानसिक एकाग्रता है; वह नीरवता प्राप्त कर सकता है पर यह शुद्ध मानसिक नीरवता है, और सत्ताके अन्य भाग अचल-अटल और निष्क्रिय रखे जाते हैं ताकि वे ध्यानमें बाधा न डालें। तुम दिनके बीस घंटे ध्यानमें बिता सकते हो, फिर भी बाकी चार घंटे एकदम साधारण मनुष्य ही बने रहोगे, क्योंकि ध्यानके समय केवल मन ही संलग्न रहा है—सत्ताके बाकी अंगोंको, प्राण और शरीरको दबाकर रखा गया था ताकि वे बाधा न डालें। ध्यानमें सत्ताके अन्य भागोंके लिये सीधे तौरपर कुछ भी नहीं किया जाता।

अवश्य ही इसकी अप्रत्यक्ष क्रियाका कुछ फल हो सकता है पर...। मैंने अपने जीवनमें ऐसे लोगोंको देखा है जिनमें ध्यान करनेकी अद्‌भुत क्षमता थी, परंतु ध्यानसे बाहर आनेपर, वे अत्यंत साधारण व्यक्ति बन जाते थे, यहांतक कि कभी-कभी बुरे व्यक्ति बन जाते थे; अगर उनके ध्यानमें बाधा पड़ती तो वे आग-बबूला हो उठते थे। क्योंकि उन्होंने केवल अपने मनको ही अपने वशमें रखना सीखा था, सत्ताके बाकी अंगोंको नहीं।

परंतु एकाग्रता उससे अधिक सक्रिय स्थिति है। तुम मनमें एकाग्र हो सकते हो, प्राणमें, चैत्य पुरुषमें, शरीरमें एकाग्र हो सकते हो; यहांतक कि सर्वांगीण रूपसे सत्ताके समस्त भागोंमें एकाग्र हो सकते हो। एकाग्र होना अथवा एक बिंदुपर अपने-आपको एकत्र कर लेनेमें समर्थ होना ध्यान करनेसे कहीं अधिक कठिन है। तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी सत्ता या चेतनाके एक भागको एकाग्र कर सकते हो अथवा अपनी संपूर्ण चेतनाको या उसके विभिन्न अंशोंको एकत्र कर सकते हो, अर्थात्, तुम्हारी एकाग्रता आंशिक, पूर्ण या सर्वांगीण हो सकती है, और प्रत्येक अवस्थामें परिणाम अलग-अलग होगा।

अगर तुममें एकाग्र होनेकी शक्ति है तो तुम्हारा ध्यान अधिक मजेदार और करनेमें आसान होगा। परंतु मनुष्य एकाग्रताके बिना भी ध्यान कर सकता है। बहुत-से लोग अपने ध्यानमें विचारोंकी एक शृंखलाका अनुसरण करते हैं—इसे ध्यान कहते हैं, एकाग्रता नहीं।

जिस क्षण हम पूर्ण एकाग्रताकी स्थितिमें पहुंच जाते हैं और फिर जिस क्षण इस एकाग्रतासे आरंभ करके विश्वव्यापी शक्तिकी ओर खुलते हैं, उन दोनों क्षणोंको क्या हम स्पष्ट जान सकते हैं?

हां, तुम किसी चीजपर एकाग्र होते हो या जहांतक तुम्हारे लिये संभव हो अपने-आपको एकत्र करते हो। जब तुम अपनी एकाग्रतामें एक प्रकारकी पूर्णता प्राप्त कर लो और यदि इस पूर्णताको पर्याप्त दीर्घकालतक बनाये रख सको तो एक दरवाजा खुल जाता है और तुम अपनी सामान्य चेतनाकी सीमाके परे चले जाते हो—तुम एक गभीरतर या उच्चतर ज्ञानमें प्रवेश कर जाते हो अथवा अपने अंदर पैठ जाते हो। तब तुम एक प्रकारकी चकाचौंध करनेवाली ज्योतिका, एक आंतरिक चमत्कारका, एक प्रकारके आनंद, पूर्ण ज्ञान, पूर्ण निश्चल-नीरवताका अनुभव करते हो। निःसंदेह, अनेक संभावनाएं हैं पर घटनाचक्र बराबर एक जैसा ही होता है।

इस अनुभवको प्राप्त करना पूरी तरह इस बातपर निर्भर है कि अपनी एकाग्रताको उसकी पूर्णताके सर्वोच्च शिखरपर पर्याप्त लंबे कालतक बनाये रखनेकी तुममें कितनी क्षमता है।

क्या इस अनुभवको पानेके लिये हर बार एकाग्र होना आवश्यक है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरंभमें हां, क्योंकि, जो कुछ तुमने प्राप्त किया है उसे बनाये रखनेकी, अपनी एकाग्रताको अधिक-से-अधिक मात्रामें बनाये रखनेकी सामर्थ्य तुममें नहीं है—तुम नीचे सरक आते हो और जो अनुभूति तुम्हें हुई है उसकी स्मृति भी खो देते हो। परंतु तुम जब एक बार एक पथपर चल चुकते हो तो उसी पथपर दूसरी बार और बार-बार चलना अधिक आसान होता जाता है। अतएव, दूसरी एकाग्रता पहलीसे अधिक आसान होती है। तुम्हें एकाग्रताका अभ्यास तबतक करते रहना चाहिये जबतक कि तुम एक ऐसी स्थिति-में न पहुंच जाओ जहां फिर अपना आंतरिक संपर्क कभी न खोओ।

उस समयसे तुम्हें इसी आंतरिक और उच्चतर चेतनामें बराबर बने रहना चाहिये जहांसे तुम सब कार्य कर सकते हो। उस समय तुम अपने शरीरको और जड़ जगत्‌को देखते हो और यह जानते हो कि तुम्हें क्या करना चाहिये और उसे कैसे करना चाहिये।

यह एकाग्रताका प्रथम उद्देश्य है, पर स्वभावतः ही अंतिम लक्ष्य नहीं है।

इस एकाग्रताको प्राप्त करनेके लिये बहुत अधिक प्रयासकी आवश्यकता है; तुरत-फुरत, यहांतक कि शीघ्रतासे इसका फल पाना बहुत कम संभव होता है। परंतु एक बार यदि भीतरी दरवाजा खुल जाता है तो तुम इस संबंधमें निस्संदिग्ध हो सकते हो कि तुम यदि निरंतर प्रयास करते रहना जानो तो वह फिर अवश्य खुलेगा।

जबतक दरवाजा नहीं खुल जाता तबतक तुम अपनी क्षमतापर संदेह कर सकते हो, पर जब एक बार वह खुल गया तो फिर संदेह करना संभव नहीं, बशर्ते कि तुम अपनी अभीप्सा और संकल्पको निरंतर बनाये रखो।

इस अनुभवका बहुत बड़ा मूल्य है।

२५ दिसंबर, १९५०

(श्रीमातृवाणी खंड ४; प्रश्न और उत्तर १९५०-५१; पृ० ८-१०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाग्रता

एकाग्रता क्या चीज है ?

इसका अर्थ है अपनी चेतनाके बिखरे हुए सभी धागोंको एक ही बिंदुपर, एक ही भाव या विचारपर वापस ले आना। जो लोग पूर्ण मनोयोगकी स्थिति प्राप्त करनेमें समर्थ होते हैं वे जो कार्य हाथमें लेते हैं उसीमें सफल होते हैं; वे हमेशा तेज प्रगति करते हैं। और इस प्रकारकी एकाग्रता ठीक मांसपेशीकी भांति विकसित की जा सकती है; इसके लिये मनुष्य प्रशिक्षणके विभिन्न पथों, विभिन्न पद्धतियोंका अनुसरण कर सकता है। उदाहरणके लिये, तुम जानते हो कि अत्यंत दयनीय, दुर्बल व्यक्ति भी नियमित अभ्यासके द्वारा किसी भी अन्य व्यक्तिके समान बलशाली हो सकता है। मनुष्यका संकल्प ऐसा नहीं होना चाहिये जो मोमबत्तीकी तरह झिलमिलाकर बुझ जाय।

संकल्प-शक्तिको, एकाग्रताकी शक्तिको अवश्य बढ़ाना चाहिये, बस, प्रश्न है पद्धतिका, नियमित अभ्यासका। यदि तुम चाहो तो कर सकते हो।

परंतु संकल्पको कमजोर बनानेके लिये यह विचार नहीं उठना चाहिये : "भला इससे क्या लाभ ?" यह भावना कि मनुष्य एक विशिष्ट स्वभाव लेकर पैदा होता है और उस विषयमें कुछ भी नहीं कर सकता, एक मूर्खतापूर्ण बात है।

२३ दिसंबर, १९५०

(श्रीमातृवाणी, खंड ४; प्रश्न और उत्तर १९५०-५१; पृ० ५-६)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाग्रता अनिवार्य है

इसके अतिरिक्त, जीवनमें तुम कुछ भी करना चाहो, एक चीज नितांत अपरिहार्य है और **सब**के मूलमें है, वह है ध्यान एकाग्र करनेकी क्षमता। यदि तुम एक **बिंदु**पर ध्यान और चेतनाकी किरणोंको केंद्रित करनेमें सफल हो जाते हो और इस एकाग्रताको दृढ़ संकल्पद्वारा बनाये रख सकते हो तो **ऐसी कोई चीज नहीं** जो इसका प्रतिरोध कर सके—चाहे कुछ भी क्यों न हो, नितांत जड़ भौतिक विकाससे लेकर उच्चतम आध्यात्मिक विकासतक, पर इस अनुशासनका पालन करना चाहिये निरंतर, या यूं कहें, निर्विकार रहते हुए; यह नहीं कि हमेशा एक ही चीजपर एकाग्र रहना होगा—मेरा मतलब यह नहीं है, मेरा मतलब है एकाग्रता सीखनेसे।

भौतिक रूपमें, अध्ययन, खेल-कूद, सब तरहके शारीरिक और मानसिक विकासके लिये यह नितांत अपरिहार्य है। और मनुष्यकी कीमत उसके अवधानके गुणके अनुपातमें होती है।

और आध्यात्मिक दृष्टिसे तो इसका और भी अधिक महत्त्व है। कोई भी आध्यात्मिक बाधा ऐसी **नहीं** जो एकाग्रताकी मर्मभेदी शक्तिका प्रतिरोध कर सके। उदाहरणके लिये, चैत्य पुरुषका संधान, अन्तरस्थित भगवान्‌के साथ मिलन, उच्चतर प्रदेशोंकी ओर उन्मीलन, **सब** प्रगाढ़ और आग्रही एकाग्रताकी शक्तिद्वारा उपलब्ध किये जा सकते हैं—लेकिन इसे करना सीखना होगा।

मानवी क्षेत्रमें, और अतिमानवीतकमें ऐसी कोई चीज नहीं है जिसकी कुंजी एकाग्रताकी शक्ति न हो।

इस क्षमताके साथ तुम श्रेष्ठ खिलाड़ी हो सकते हो, श्रेष्ठ विद्यार्थी हो सकते हो, कलाकार, साहित्यिक और वैज्ञानिक बन सकते हो, सबसे बड़े संत बन सकते हो। और प्रत्येक व्यक्तिमें यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रारंभिक-बिंदुके रूपमें रहता है—यह सबको मिला हुआ है, पर वे इसे बढ़ाते नहीं।

२३ जुलाई १९५८

(श्रीमातृवाणी, खंड ९; प्रश्न और उत्तर १९५७-५८)

एकाग्रताकी आवश्यकता

यह प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि समस्याको हल करने, कोई पाठ पढ़नेके लिये बहुत अधिक एकाग्रता और लवलीनता-की—बौद्धिक लवलीनता और एकाग्रताकी—आवश्यकता होती है। परंतु एकाग्रता केवल बौद्धिक वस्तु ही नहीं है, यह सत्ता-की सभी क्रियाओंमें, यहांतक कि शारीरिक क्रियाओंमें भी, पायी जा सकती है। अपनी स्नायुओंपर तुम्हारा ऐसा संयम होना चाहिये कि तुम जो कुछ करते हो उसपर पूर्ण रूपसे एकाग्र हो सको और, अपनी एकाग्रताकी तीव्रताद्वारा ही बाह्य स्पर्शोंके प्रति तुरत प्रत्युत्तर प्राप्त कर लो। ऐसी एकाग्रता प्राप्त करनेके लिये शक्तियोंके ऊपर सचेतन प्रभुत्व प्राप्त करनेकी आवश्यकता होती है।

क्या तुम उन शक्तियोंके प्रति सचेतन हो जिन्हें तुम ग्रहण करते और खर्च करते हो?

मनुष्य जब कोई शक्ति खर्च कर देता है, विशेषकर जब वह उसे अत्यधिक नष्ट कर देता है तो वह उसके विषयमें कम या अधिक सचेतन होता है। यहां मुख्य प्रश्न है ग्रहण और व्ययके बीचके सतत विनिमयका! समझ आनेसे पहले छोटे-छोटे बच्चे बहुत सारी शक्ति ग्रहण करते हैं और उसे खुले दिल, बिना सोचे-विचारे खर्च करते हैं और इस कारण बिना थके लगातार घंटों खेलते रहते हैं। परंतु धीरे-धीरे, जैसे-जैसे विचार विकसित होता है वैसे-वैसे, मनुष्य खर्च

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की हुई शक्तिको नापता-तोलता और उसका हिसाब लगाना आरंभ कर देता है—साधारणतया यह निरर्थक है, क्योंकि तुम्हें जबतक शक्ति ग्रहण करनेकी प्रक्रियाका ज्ञान नहीं हो जाता तबतक ग्रहण की हुई शक्तिको अपने अंदर निष्क्रिय रखनेकी जगह मुक्त रूपसे खर्च करते रहना ही अधिक अच्छा है।

सबसे पहले तुम्हें शक्तियोंको ग्रहण करनेके विषयमें, अपनी सत्तामें उनके प्रवेश करने तथा खर्च हो जानेके विषयमें सचेतन होना चाहिये। दूसरे, तुम्हारे अंदर एक प्रकारकी उच्चतर सहजवृत्ति होनी चाहिये जो तुम्हें यह बता दे कि अत्यंत अनुकूल शक्तियां कहांसे आती हैं; फिर तुम विचारके द्वारा, स्थिरताके द्वारा अथवा किसी दूसरी प्रक्रियाके द्वारा—बहुत-सी प्रक्रियाएं हैं—उन शक्तियोंके साथ अपना संपर्क स्थापित करो। तुम्हें इस बातका ज्ञान होना चाहिये कि तुम किस शक्तिको चाहते हो, वह कहांसे आती है और उसमें क्या है। उसके बाद ही ग्रहण की हुई शक्तिपर संयम प्राप्त होता है। नब्बे प्रतिशत लोग पर्याप्त शक्ति ग्रहण नहीं करते या बहुत अधिक ग्रहण करते हैं और जो कुछ ग्रहण करते हैं उसे हजम नहीं करते—ज्यों ही वे काफी मात्रामें ले चुकते हैं त्यों ही तुरत-फुरत अशांत-चंचल बनकर, बातचीत करके, शोरगुल मचाकर या अन्य उपायोंसे उसे बाहर फेंक देते हैं। तुम्हें यह जानना चाहिये कि ग्रहण की हुई शक्तिको किस प्रकार अपने अंदर बनाये रखा जाता है और किसी दूसरी चीजपर नहीं, केवल अभीप्सित क्रियापर उसे पूर्णतः एकाग्र किया जाता है। यदि तुम यह कर सको तो तुम्हें अपनी इच्छाका उपयोग करनेकी आवश्यकता नहीं होगी। तुम्हें बस आवश्यकता होगी गृहीत शक्तियोंको एक साथ एकत्र करने तथा उन्हें सचेतन रूपमें व्यवहृत करनेकी, जो कुछ तुम चाहते हो उसे संपन्न करनेके लिये अधिक-से-अधिक तल्लीनताके साथ एकाग्र होनेकी। फिर तुम जो करना चाहते हो—तुम्हारी सत्ताका उच्चतर भाग जो करना चाहता है—उसका सच्चा मूल्य आंकना आना चाहिये,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि मनुष्य जो कुछ करना चाहता है उसे करना कठिन नहीं है।

२३ दिसंबर, १९५०

(श्रीमातृवाणी, खंड ४, प्रश्न और उत्तर १९५०-५१; पृ० ४-५)

एकाग्रताका महत्त्व

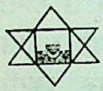

किसी भी वस्तुपर एकाग्र होकर, वह चाहे कुछ क्यों न हो, हम उसे जान सकते हैं, उसके गुप्त रहस्योंका उद्घाटन करवानेके लिये हमें इस शक्तिका उपयोग करना चाहिये, वस्तुओंको जाननेके लिये नहीं बल्कि स्वयं एकमात्र परम वस्तुको जाननेके लिये। एकाग्रताद्वारा समस्त संकल्पको उस वस्तुको पानेके लिये एकत्र किया जा सकता है जो अभीतक हमारी पकड़में नहीं है, अभीतक हमसे परे है; अगर यह शक्ति पर्याप्त रूपसे प्रशिक्षित हो, पर्याप्त रूपसे एकनिष्ठ हो, पर्याप्त रूपसे निष्कपट हो, जिसे अपने-आपपर भरोसा हो, केवल स्वयंके प्रति निष्ठावान् हो, श्रद्धामें निरपेक्ष हो तो हम किसी भी वस्तुको प्राप्त करनेके लिये इसका उपयोग कर सकते हैं, लेकिन हमें इसका उपयोग उन असंख्य वस्तुओंको पानेके लिये नहीं करना चाहिये जिन्हें जगत् हमारे सामने प्रस्तुत करता है बल्कि आध्यात्मिक रूपसे एकमात्र वस्तुको पानेके लिये करना चाहिये जो अन्वेषण करनेके योग्य है और जो जाननेके योग्य एकमात्र विषय है। अपनी संपूर्ण सत्ताको स्वयं उसीकी स्थितिपर एकाग्र करके हम जो कुछ बनना पसंद करें बन सकते हैं; उदाहरणके लिये हम चाहे दुर्बलता, भयकी राशिके सामने क्यों न हों फिर भी बल और साहसकी राशि बन सकते हैं, या हम एक महान् पवित्रता, शुद्धि और शांति या प्रेमकी एकमात्र वैश्व अंतरात्मा बन सकते हैं; लेकिन कहा गया है कि हमें इस शक्तिका उपयोग ये सब बननेके लिये भी नहीं करना चाहिये, भले हम आज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस अवस्थामें हैं उसकी तुलनामें ये बहुत ऊंची क्यों न हों। हमें इसका उपयोग वह बननेके लिये करना चाहिये जो सभी चीजोंसे परे, सभी क्रियाओं और सभी गुणोंसे मुक्त, पवित्र और निरपेक्ष सत्ता है। बाकी सब, सब तरहकी एकाग्रता प्राथमिक सोपानकी तैयारीके लिये, दुराचारी और अपने-आपको छितरानेवाले विचारों, इच्छा और सत्ताको धीरे-धीरे प्रशिक्षण देने और उन्हें अपने महान् अनोखे उद्देश्यकी ओर ले जानेके लिये ही मूल्यवान् हो सकते हैं।

एकाग्रताके केंद्र

अधिकतर लोग चेतनाका संबंध मस्तिष्क या मनसे जोड़ते हैं क्योंकि वही बौद्धिक विचार और मानसिक अंतर्दर्शनका केंद्र है, लेकिन चेतना उस तरहके विचार और अंतर्दर्शनतक सीमित नहीं है। वह शरीरमें सब जगह है और उसके बहुतसे केंद्र हैं, उदाहरणके लिये आंतरिक एकाग्रताका केंद्र मस्तिष्क नहीं, हृदय है—प्राणिक कामनाका आरंभिक केंद्र और भी नीचे है।

योगमें तुम जिन दो स्थानोंपर अपनी चेतनाको केंद्रित कर सकते हो वे हैं सिर और हृदय—मानसिक केंद्र और अंतरात्माका केंद्र।

*

कभी हृदयमें तो कभी सिरके ऊपर एकाग्र होनेमें कोई हर्ज नहीं है लेकिन दोनोंमेंसे किसी भी स्थानपर एकाग्र होनेका मतलब यह नहीं है कि तुम अपना ध्यान एक निश्चित स्थानपर लगाओ; तुम्हें अपनी चेतनाको इनमेंसे किसी भी स्थानपर स्थिर करना और वहां, उस स्थानपर नहीं, बल्कि भगवान्पर एकाग्रचित्त होना चाहिये। यह आंखें बन्द करके, आंखोंको खुला रखकर, जैसा जिसके लिये अधिक अनुकूल हो, किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम सूर्यपर एकाग्र हो सकते हो, लेकिन सूर्यपर एकाग्र होनेकी जगह भगवान्‌पर एकाग्र होना अधिक अच्छा है।

*

एकाग्रचित्त होनेके लिये उत्तम सहायता है माताजीकी स्थिरता और शांतिको अपने मनमें ग्रहण करना। वह तुम्हारे ऊपर उपस्थित है—केवल मन और उसके केंद्रोंको उसके प्रति खोलना है।

*

जितना अधिक चैत्य बाहरी सत्तामें फैलता है उतनी अधिक ये सभी चीजें (अवचेतन मनकी यांत्रिक क्रिया) शांत हो जाती हैं। यह उत्तम तरीका है। मनको स्थिर करनेके प्रत्यक्ष तरीके कठिन होते हैं।

ध्यान करनेका दिखावा

मैं बड़े उत्साह और तीव्रताके साथ ध्यान और प्रार्थना करना आरंभ करता हूं, मेरी अभीप्सा गहरी होती है और मेरी प्रार्थना भक्तिसे भरी होती है; और फिर, कुछ समयके बाद (कभी तो शीघ्र ही और कभी देरसे), अभीप्सा यंत्रवत् और प्रार्थना शुद्ध शाब्दिक बन जाती है। मुझे क्या करना चाहिये?

यह कोई व्यक्तिगत स्थिति नहीं है, बिल्कुल सार्वजनीन है। मैं पहले ही यह बात कई बार कह चुकी हूं (पर फिर भी, चलते-चलाते ही कही थी) कि जो लोग रोज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घंटों ध्यान करनेका दिखावा करते हैं और सारा दिन प्रार्थनामें बिताते हैं, मुझे ऐसा लगता है कि तीन-चौथाई समयतक वह पूर्णतः यंत्रवत् ही चलता है; कहनेका मतलब, उसमें तनिक भी सचाई नहीं रह जाती। कारण, मानव प्रकृति ऐसी चीजके लिये नहीं बनी है और मानव मन उस ढंगसे नहीं निर्मित हुआ है।

एकाग्र होने और ध्यान करनेके लिये मनुष्यको एक प्रकारकी कसरत करनी चाहिये जिसे मैं एकाग्रताका "मानसिक मांसपेशी-निर्माण" कह सकती हूं। निश्चय ही मनुष्यको प्रयास करना होगा—जैसे कि मनुष्य, उदाहरणार्थ, वजन उठानेके लिये अपनी मांसपेशियों-से प्रयास करता है—यदि तुम चाहो कि तुम्हारी एकाग्रता सच्ची हो, नकली न हो।

वही बात प्रार्थनाके आवेगकी है: एकाएक एक लौ जल उठती है, तुम एक उत्साहपूर्ण आवेग, एक महान् तीव्रता महसूस करते हो और उसे शब्दोंमें व्यक्त करते हो जो, सच पूछो तो, सहज स्फूर्त होना चाहिये। इसे सीधे हृदयसे, तीव्रताके साथ, मस्तिष्कमेंसे गुजरे बिना आना चाहिये। वही है प्रार्थना। यदि वे तुम्हारे मस्तिष्क-में धक्कम-धक्का करनेवाले केवल शब्द हों तो फिर वह कोई प्रार्थना बिल्कुल नहीं रह जाती। हां, यदि तुम आगमें अधिक ईंधन न डालो तो कुछ समय बाद वह बुझ जाती है। यदि तुम अपनी मांसपेशियोंको विश्राम करनेका समय न दो, यदि तुम अपनी गति-विधियोंको कम न करो तो तुम्हारी मांसपेशियां श्रम करनेकी क्षमता खो देंगी। अतएव, यह बिल्कुल स्वाभाविक है, और यहांतक कि अनिवार्य है, कि कुछ खास समयके बाद क्रियाकी तीव्रता नष्ट हो जाती है। स्वभावतः, जो वजन उठानेका आदी है वह उसकी अपेक्षा जिसने कभी भार नहीं उठाया अधिक देरतक उठाये रह सकता है। बस, वही बात है; जिसे एकाग्र होनेका अभ्यास है वह उस व्यक्तिकी अपेक्षा बहुत अधिक देरतक एकाग्र हो सकता है जिसे उसका अभ्यास नहीं है। परंतु प्रत्येक व्यक्तिके लिये एक क्षण आता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब उसे बंद कर देना पड़ता है, विश्राम करना पड़ता है ताकि फिर दुबारा आरंभ किया जाय। परिणामतः चाहे तुरत हो या कुछ क्षण बाद हो या कई घंटों बाद हो, यदि क्रिया यंत्रवत् बन जाती है तो इसका मतलब है कि तुमने ढील दे दी है और अब तुम्हें यह बहाना करनेकी आवश्यकता नहीं कि तुम ध्यान कर रहे हो। उससे अधिक अच्छा यह है कि तब कोई उपयोगी कार्य किया जाय।

उदाहरणार्थ, यदि तुम मानसिक तनावको संतुलित करनेके लिये थोड़ी-सी कसरत करनेका इंतजाम कर सको तो तुम कुछ पढ़ सकते या जो कुछ तुम्हारे साथ हुआ था उसे लिखनेकी कोशिश कर सकते हो, तुम कुछ चीजें शब्दोंमें व्यक्त कर सकते हो। तो वह चीज एक प्रकारकी विश्रांति, आवश्यक विश्रांति उत्पन्न करती है। परंतु ध्यानका लंबा समय केवल सापेक्षिक महत्त्व रखता है; उसकी लंबाई महज यह सूचित करती है कि तुम्हें उस क्रियाका कितना अधिक अभ्यास है।

निस्संदेह, ध्यानका काल बहुत अधिक बढ़ सकता है, पर सर्वदा ही उसकी एक सीमा होती है; और जब वह सीमा आ जाती है तो मनुष्यको बंद कर देना चाहिये, बस यही बात है। यह कोई कपट नहीं है, यह अक्षमता है। कपट तो वह है जब तुम ध्यान न करते हुए भी ध्यान करनेका दिखावा करते हो, अथवा उन बहुतेरे लोगोंकी तरह प्रार्थना करते हो जो मंदिर या चर्चमें जाकर धार्मिक विधियोंका पालन करते और अपनी प्रार्थनाएं उसी प्रकार दुहराते हैं जैसे कोई कम या अधिक कंठस्थ पाठको दुहराता है। तब वह न तो कोई प्रार्थना होती है और न ध्यान, वह महज एक प्रकारका प्रदर्शन होता है। वह बात मजेदार नहीं है।

१८ जुलाई १९५६

(श्रीमातृवाणी, खंड ८; प्रश्न और उत्तर १९५६, पृ० २३८-४०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्यक् समाधि

विचार वस्तुओंके मूल तत्त्वपर, गभीर सत्य प्राप्त करनेके योग्य लक्ष्यपर बिना अहंके केंद्रित हो।

अस्तित्वके प्रवाहमें कितनी ही बार एक तरहका खालीपन आता है, एक व्यस्तताहीन क्षण, कुछ मिनट, कभी-कभी ज्यादा ही। तब तुम क्या करते हो? उस क्षण तुम दिल-बहलावकी चेष्टा करते हो और अपना समय काटनेके लिये कोई-न-कोई मूर्खता खोज निकालते हो। यह एक सामान्य तथ्य है। मनुष्य, छोटे-से लेकर बड़ेतक, अपने समयका अधिकांश अपने-आपको ऊबसे बचानेमें बिताता है। उसके लिये ऊब ही सबसे बड़ा हौआ है और ऊबसे बचनेका उपाय है बहुत सारी मूर्खता करना।

खैर, एक और उपाय है जो उससे कहीं अधिक अच्छा है: वह है स्मरण करना।

जब तुम्हारे पास थोड़ा समय हो, चाहे वह एक घंटा हो या कुछ मिनट, अपने-आपसे कहो: "हाश! अपने-आपको केंद्रित करनेका, अपने-आपको इकट्ठा करनेका, अपने जीवनके मूल कारणको फिरसे जीनेका और जो 'सत्य' और 'सनातन' है उसे अपने-आपको अर्पित करनेका मेरे पास समय है।" हर बार जब तुम बाहरी परिस्थितियों-से परेशान न हो तब अगर तुम यह करनेकी सावधानी बरतो तो देखोगे कि तुम राहपर बहुत जल्दी बढ़ते जा रहे हो। अपना समय बकवासमें, अनावश्यक चीजें करनेमें और ऐसी चीजें पढ़नेमें गंवानेकी जगह जो चेतनाको गिराती हैं (यह तो अच्छी-से-अच्छी दशाओंके चुनावकी बात है, मैं दूसरी मूर्खताओंकी बात नहीं करती जो बहुत ज्यादा गंभीर होती हैं), अपना मनोरंजन करनेकी जगह, ऐसा करनेकी जगह कि समय जो पहलेसे ही कम है और भी कम हो जाय और फिर देखना कि जीवनके अंतमें हमने तीन-चौथाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवसर खो दिये हैं—तब फिर तुम दोनों हाथोंसे कौर निगलने लगते हो, लेकिन उससे कोई फायदा नहीं होता—ज्यादा अच्छा है संयत होना, संतुलित होना, धैर्यवान् रहना, शांत होना और कभी दिये गये अवसरको न गंवाना। इसका मतलब है खाली समयका सच्चे ध्येयके लिये, तुम्हारे सामने जो मिनट व्यस्तताहीन होता है उसका उपयोग करना।

जब तुम्हारे पास करनेके लिये कुछ न हो तो तुम क्षुब्ध हो उठते हो, तुम भागते फिरते हो, मित्रोंसे मिलने चले जाते हो, घूमने निकल पड़ते हो—मात्र अच्छी चीजोंकी ही बात करती हूं, मैं उन चीजोंकी बात नहीं करना चाहती जो स्पष्ट रूपसे ऐसी हैं जिन्हें नहीं करना चाहिये—इन सबकी जगह शांतिपूर्वक, तुम्हारे लिये जो संभव हो उसके अनुसार, आकाशके नीचे, समुद्रके आगे या पेड़ों तले बैठ जाओ (यहां तो सब कुछ है), और इनमेंसे किसी एक चीजको सिद्ध करनेकी कोशिश करो, यह समझनेकी कोशिश करो कि तुम क्यों जीवित हो और यह सीखनेकी कोशिश करो कि किस तरह जीना चाहिये, इसपर विचार करो कि तुम क्या करना चाहते हो और क्या करना चाहिये, 'अज्ञान', 'मिथ्यात्व' और दुःख जिसमें तुम जीते हो उससे बच निकलनेका उत्तम उपाय क्या है।

१६-५-५८

(श्रीमातृवाणी, खंड ३; धम्मपद, अध्याय १४)

सच्चा एकांत

यह निश्चित बात है कि अकेले खाना, अकेले सोना, अकेले चलना और जंगलमें अकेले रहना ही आत्माको मुक्ति देनेके लिये पर्याप्त नहीं है।

हमने यह सत्य स्थापित किया है कि जो लोग जंगलमें जाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकेले रहते हैं उनमेंसे अधिकतर उन सब प्राणियों और उन सब पौधोंके मित्र बन जाते हैं जो उनके आस-पास होते हैं; और यह यथार्थमें वह एकाकीपन नहीं है जो तुम्हें आंतरिक ध्यानमें प्रवेश करनेकी और परम सत्यके साथ तादात्म्यमें जीनेकी शक्ति देता है। शायद यह अधिक आसान होता हो जब परिस्थितियोंके दबावके कारण तुम्हारे पास करनेके लिये कुछ भी न हो, लेकिन मुझे यकीन नहीं है। व्यक्ति हमेशा कुछ-न-कुछ काम खोज निकालेगा। जीवनके अपने अनुभवके अनुसार मुझे लगता है कि भागवत करुणाने हमें जो परिस्थितियां दी हैं उन्हें रखते हुए अगर हम मुसीबतोंके बीच अपने स्वभावके ऊपर प्रभुत्व पा सकें, अगर सनातन उपस्थितिके साथ आंतरिक रूपसे एकाकी रहनेका प्रयत्न करें तो हमें जो सिद्धि प्राप्त होगी वह अत्यधिक सच्ची, गभीर और स्थायी होगी।

मुसीबतोंको जीतनेके लिये उनसे भागना कोई हल नहीं है। यह बड़ा लुभावना है। जो आध्यात्मिक जीवनकी खोजमें हैं उनमें कोई चीज होती है जो कहती है: "ओह! एकदम अकेले किसी पेड़के नीचे जा बैठना, ध्यानमग्न रहना, बोलने या कुछ करनेके प्रलोभनमें न पड़ना, यह कितना अच्छा होगा!" क्योंकि इस भावकी एक बहुत मजबूत रचना है, लेकिन वह है बहुत अधिक भ्रांतिपूर्ण।

सबसे अच्छे ध्यान वे होते हैं जो तुम हठात् करते हो, क्योंकि वे तुमपर अनिवार्य आवश्यकताकी तरह हावी हो जाते हैं—तुम अपने-आपको एकाग्र किये बिना, ध्यान किये बिना, बाहरी रंग-रूपके परे देखे बिना नहीं रह सकते। और यह आवश्यक नहीं है कि यह ध्यान जंगलके एकांतमें ही तुम्हें पकड़े, यह तब आता है जब तुम्हारे अंदर कोई चीज तैयार हो, जब वह समय आ जाय, जब सच्ची आवश्यकता हो, जब भागवत करुणा तुम्हारे साथ हो।

मेरी समझमें, मानवजातिने प्रगति की है और सच्ची विजय वह है जिसे वह जीवनमें प्राप्त कर सके।

सब परिस्थितियोंके बीच 'शाश्वत' और 'असीम'के साथ कैसे अकेले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा जाय, यह जानना चाहिये। सभी व्यस्तताओंके बीच परमेश्वर-को साथीके रूपमें रखकर स्वतंत्र रहना जानना चाहिये। यह, यही सच्ची विजय है।

१४-७-५८

(श्रीमातृवाणी, खंड ३; धम्मपद, अध्याय २१)

ध्यानके लिये कुछ मंत्र

OM Tat Sat Jyotir Aravinda

ॐ तत् सत् ज्योतिररविन्द

OM Satyam Jnanam Jyotir Aravinda

ॐ सत्यं ज्ञानं ज्योतिररविन्द

तत्सवितुर्वरं रूपं ज्योतिः परस्य धीमहि।
यन्नः सत्येन दीपयेत् ॥

सावित्रीके परम कल्याणकारी (सर्व श्रेष्ठ) रूपका, परम पुरुषकी ज्योतिका हम ध्यान करें। यह ज्योति हमें सत्यसे आलोकित करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्फुट वचन

निश्चल-नीरव ध्यानके समय, क्या हमें अपने-आपको पूर्णतः शून्य नहीं बना देना चाहिये ? परंतु उस स्थितिमें यह उस व्यक्तिपर कैसे निर्भर कर सकता है जो ध्यान करता है ?

मैं समझती हूं कि मनकी निश्चल-नीरवता और सत्ताकी पूर्ण शून्यावस्थाके बीच कुछ भ्रम है, ये दोनों बहुत अलग-अलग चीजें हैं। इसके अलावा, मैं यह बहुत अच्छी तरह नहीं समझ पाती कि मनुष्य अपने-आपको पूर्णतः शून्य कैसे बना सकता है,—उसके बाद तो उसका अस्तित्व ही नहीं रहेगा।

५ अप्रैल, १९५१

(श्रीमातृवाणी, खंड ४; प्रश्न और उत्तर १९५०-५१, पृ० २८९)

*

हम मनमें स्थायी शांति और नीरवता कैसे स्थापित करें ?

सबसे पहले तुम्हें संकल्प करना चाहिये, और फिर तुम्हें कोशिश करनी चाहिये, करते रहना चाहिये। बहुत-से तरीके हैं। यह लो एक। बैठ जाओ और पचासों चीजोंके बारेमें सोचनेके स्थानपर, अपने-आपसे कहो, शांति, शांति, शांति। स्थिरता और नीरवताकी कल्पना करो। विचारोंकी ओर मत देखो, उनके शोरपर कान मत दो। जब कोई तुम्हें तंग कर रहा हो और तुम उससे छुटकारा पाना चाहो तो तुम क्या करते हो ? तुम उसकी बातको सुननेसे इंकार कर देते हो, तुम अपना मुंह फेर लेते हो और दूसरी चीजोंका विचार करते हो। अपने विचारोंके साथ भी ऐसा ही बरताव करो।

बार-बार बैठकर 'शांति'के जादूको पैदा करनेका मौका लो। सुबह उठते ही और शामको सोनेके लिये जाते समय ऐसा करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका तुम्हारे स्वास्थ्यपर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा: खानेसे पहले कुछ क्षण करो। तुम्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि वह तुम्हारे भोजनको पचानेमें कितनी सहायता देता है।

अगर तुम पर्याप्त समयतक यह करते रहो तो शांतिको तुम्हारे सिरमें घुसना नहीं पड़ेगा। तुम चाहे कुछ क्यों न करो, परिस्थितियां कुछ क्यों न हों, वह हमेशा उपस्थित रहेगी। लेकिन इसमें बरसों लग जाते हैं। शुरू-शुरूमें शांति-सूत्रको दो-तीन मिनटों-तक—बहुत ही सरल ढंगसे—बनाये रखो। जब कोई अभ्यास जटिल हो तो तुम्हें प्रयास करना पड़ता है और प्रयास करनेका मतलब है शांत होना बंद कर देना। तुम अपने किसी घनिष्ठ मित्रको अपने पास कैसे बुलाते हो? बिना प्रयासके, एक शब्दमात्र, और वह तुम्हारे पास आ जाता है। इसी प्रकार तुम्हें शांतिको अपना मित्र बनाना चाहिये और उसे बुलाना चाहिये।

('मदर इंडिया', मई ७५)

सोसायटी समाचार

१९८८ का आरंभ सुनीलके विशेष संगीतसे हुआ। ९ बजेसे कैलेंडर, प्रसाद और 'बॉन आने' (शुभ वर्ष) के कार्डका वितरण शुरू हुआ। इस वर्षका संदेश था:

अज्ञानकी गतियोंमें भी जिज्ञासुकी अंतरात्मा उनके (जगज्जननी) सचेतन मार्गदर्शनके प्रति अभिज्ञ हो जाती है जो उसके चरणोंको सहारा देती, उसे तेज या धीमी गतिसे, सीधे या बहुतसे घुमावोंसे होती हुई अंधकारसे निकाल कर एक महानतर चेतनाके प्रकाशमें लाती हैं, मर्त्यतामें से अमरतामें, अशुभ तथा दुःख-दर्दमेंसे उस उच्चतम शुभ तथा परमानन्दकी ओर ले जाती हैं जिसका मानव मन अब तक केवल एक हल्का-सा बिंब बना सकता है। —श्रीअरविंद

(शेष आवरण ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O Lord, awaken in me an ardent desire to know Thee. I aspire that my life may be consecrated to Thy service.

The Mother

Space donated by

Kooverji Devshi & Co., Pvt. Ltd.

FIREX LEADS TO SAFETY
SAFETY LEADS TO PROSPERITY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी लोकतांत्रिक स्वतंत्रता

लोकतंत्र
समाजवाद
धर्म निरपेक्षता
न्याय
स्वतंत्रता
समानता
भ्रातृत्व
एकता
अखंडता

"हम अपनी लोकतांत्रिक स्वतंत्रता के साथ क्या न्याय करते हैं, यह कुछ ऐसे मूलभूत सिद्धांतों पर निर्भर करता है, जिन्हें जीवन भर महात्मा गांधी प्रतिपादित करते रहे—जैसे उच्च चरित्र, उद्देश्यों और लक्ष्योंके प्रति निष्ठा, सहिष्णुता की भावना, सहयोग एवं कठिन परिश्रम। मैं तो अपने लोगों से यही अनुरोध करूंगा कि वे अपने गणतंत्र की स्थापना इन्हीं मूलभूत सिद्धांतों पर करें तथा अपने हृदय में व्याप्त घृणा और भय का त्याग करके हमेशा अपने लाखों करोड़ों देशवासियों की भलाई के बारे में ही सोचें।"

—जवाहरलाल नेहरू

प्रगति और शांतिका सुदृढ़ आधार

davp 87/500

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

236
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

913188
पुस्तकालय

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

मार्च १९८८ वर्ष १८, अंक ८, पूर्णांक २१२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

प्रार्थना		१
'संपादकीय' : संबल	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
मनुष्यका मन		७
सोसायटी समाचार		३७

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रार्थना

(जो लोग भगवान्‌की सेवा करना चाहते हैं उनके लिये एक प्रार्थना)

हे सब प्रकारके विघ्नोंका नाश करनेवाले प्रभो, तेरी जय हो।

वर दे कि हमारे अंदर कोई चीज तेरे काममें बाधक न हो।

वर दे कि तेरी अभिव्यक्तिमें कोई भी चीज रुकावट न डाले।

वर दे कि सभी चीजोंमें, हर क्षण तेरी ही इच्छा पूरी हो।

हम तेरे आगे खड़े हैं ताकि हमारे अंदर, हमारी सत्ताके अंग-प्रत्यंगमें, हर एक क्रियामें, हमारी उच्चतम ऊंचाइयोंसे लेकर शरीरके छोटे-से-छोटे कोषोंतकमें तेरी इच्छा पूरी हो।

वर दे कि हम तेरे प्रति संपूर्ण रूपसे, सदाके लिये निष्ठावान् हों।

हम और सभी प्रभावोंसे अलग रहते हुए पूरी तरह तेरे प्रभावमें रहें।

वर दे कि हम तेरे प्रति गभीर और तीव्र कृतज्ञता रखना कभी न भूलें।

वर दे कि हम कभी उन अद्‌भुत चीजोंका अपव्यय न करें जो तू हमें हर क्षण देता रहता है।

वर दे कि हमारे अंदरकी हर चीज तेरे कार्यमें सहयोग दे और सब कुछ तेरी उपलब्धिके लिये तैयार हो जाय।

हे समस्त सिद्धियोंके स्वामी, प्रभो, तेरी जय हो।

प्रदान कर हमें, अपनी विजयमें ज्वलंत और सक्रिय, अखंड और अटल-अचल श्रद्धा।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

संबल

अभी कुछ दिन हुए एक पाठक, श्री नरेन्द्रजीकी चिट्ठी आई जिसमें वे अग्निशिखाके संपादकीय 'नये वर्षका व्रत' को लेकर शंका या यूं कहें अपने हृदयकी वेदना प्रकट कर रहे हैं। वे कहते हैं, "मैं प्रतिदिन कहता हूं कि हे मां, भारतवासियोंके हृदयसे स्वार्थ, क्षुद्रता, भय एवं संशय निकाल दे और वे विशाल और उच्च लक्ष्य-की ओर प्रेरित हों।

"क्या यह हो सकेगा। मैं नहीं जानता।"

नरेन्द्रजीकी निराशा अकारण या केवल अधरमें कल्पित परिस्थितियों-के कारण नहीं है यह हम स्वीकार करते हैं। आज भारतकी जो स्थिति है उसमें ऐसी निराशा स्वाभाविक है। ऐसा प्रतीत होता है मानो राष्ट्र गहन अंधकारमें ठोकरें खाता, लड़खड़ाता हुआ अधिक भयंकर अंधकारमें भक्टता जा रहा है किंतु हमें उन मनीषियोंकी वाणीपर कान देना चाहिये जो भावीमें छिपी भारतकी जाज्वल्यमान भाग्य रेखाको पढ़ चुके हैं। उन्होंने भारतकी स्वाधीनताकी घोषणा तब की थी जब अंग्रेजी साम्राज्यपर सूर्य कभी अस्त न होता था, जब ब्रिटेन अपराजेय माना जाता था। उन्होंने यह भी कहा था कि भारतकी विजय भौतिक न होकर आध्यात्मिक होगी जैसी कि भूतकालमें एक समय थी। अबतक हमें लंका, जावा, केमात्रा रूस और चीन और अमरीकामें ऐसे चिह्न प्राप्त होते हैं जिनसे आध्यात्मिक विजय प्रमाणित होती है। जावामें अगस्त्यकी मूर्ति, लंकामें बुद्धकी मूर्ति, रूसमें कई स्थानोंपर संस्कृतमें प्राप्त ताम्रपत्र इस विजयकी घोषणा करते हैं।

यह सच है कि भूतकालीन गौरवमें लीन रह कर हम वर्तमानकी अवहेलना नहीं कर सकते, न ही हम इस तरह उचित प्रगति कर पाएंगे। वर्तमान भारत और भूतकालीन भारतमें कहीं साम्य नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीखता। हम अपने पूर्वजोंके व्यंग्य-चित्रसे लगते हैं फिर भी लोक मान्यता है "गहनतम अंधकारके बाद उषाका आगमन निश्चित है" वैसे इस दीन-हीन अवस्थामें आशाकी छोटी किरणोंसे एक दो मानव किरणें झिलमिलाने लगी हैं। अमरीका आधुनिक भारतीयके लिए परम लक्ष्य बन गया है। जिस किसीमें क्षमता, शक्ति हो मुंह उठाए वहां जा बैठता है। वहांका नागरिक बन कर गौरवान्वित होता है।

ऐसी परिस्थितिमें अत्यधिक योग्य, विज्ञानके शोध छात्र वहांके सब प्रलोभनों, आकर्षणोंको ठुकरा कर अपने राष्ट्रकी सेवा करनेके लिये भारत लौटते हैं तो हम उन्हें एक आशा-किरण मान सकते हैं। इतना ही नहीं उन होनहार युवकोंने संघर्ष कर, बिना निरुत्साहित हुए, सफलता पा राष्ट्रको अधिक समृद्ध बना दिया है।

हम ऐसी आशा किरणोंका भावी संकेतके रूपमें हार्दिक स्वागत करते हैं।

हमें विश्वास है कि भारतके भाग्य विधाता हमारे स्खलनों, पतनोंके बावजूद भारतको अपनी उज्ज्वल नियतिकी ओर ले चलेंगे।

भगवान्‌की परम प्रज्ञामें विश्वास, उनकी शक्तिमें अटल श्रद्धा हमारा संबल बने, यही प्रार्थना है। —अनुबेन

दैनन्दिनी

मार्च

१. इस तरह हमेशा प्रकाश बढ़ता रहता है, और परछाई; वह तो केवल छाया है और बढ़ते हुए प्रकाशमें लुप्त हो जायगी।

२. दिव्य शक्ति कार्य कर रही है और वह हर क्षण चुनेगी कि क्या करना है या नहीं करना है, किस चीजको तात्कालिक या स्थायी रूपसे रखना या छोड़ना है।

३. शरीरका महत्त्व स्पष्ट है; इसका कारण यह है कि मानवको ऐसा शरीर और मस्तिष्क दिया गया है या उसने उन्हें इस तरह विकसित किया है कि वे बढ़ते मानसिक प्रकाशको ग्रहण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने और उसका उपयोग करनेमें सक्षम हों, इस तरह मानव पशुसे ऊपर उठ गया है।

४. मनुष्यको स्वयंको जानना चाहिये और अपनी सारी संभाव्यताओं-को ढूंढ़ना और उनका उपयोग करना चाहिये; किंतु स्वयं-को और संसारको पूरी तरह जाननेके लिये उसे अपने और संसारकी सतहके पीछे जाना होगा, उसे अपनी मानसिक सतह और प्रकृतिकी भौतिक सतहकी गहराईमें डुबकी लगानी होगी।

५. समस्त मानवजातिमें मनुष्यकी आत्माका लक्ष्य एक ही है, लेकिन भिन्न महाद्वीप और जातियां उस ओर विभिन्न सूत्रों और भिन्न विचार धारामें अलग-अलग मार्गोंसे आती हैं। चूंकि मनुष्य चरम दिव्य उद्देश्यके आधारभूत ऐक्यको नहीं जानते इसलिये वे एक दूसरेसे लड़ पड़ते हैं और कहते हैं कि उन्हींका मार्ग मानवजातिके लिये एकमात्र मार्ग है।

६. संसारकी सारी असाधारण शक्तियोंसे बढ़कर है एक सच्चा निष्कपट हृदय।

७. जब पश्चिमके सबसे प्रगतिशील मानस उसके सांध्यकालमें एशियाकी प्रतिभाकी ओर नयी और अधिक आध्यात्मिक संस्कृतिकी आशामें मुड़ रहे हैं तब हम अपनी आत्मा और उसकी संभावनाओंको फेंक कर अगर यूरोपके विघटित होते और मृत प्रायः अतीतमें विश्वास रखनेकी अपेक्षा अधिक अच्छा न कर सकें तो यह बात विचित्र होगी।

८. अपने अंदर जो कठिनाई है उससे न तो मुंह मोड़ो और न उसे अनदेखा करो, साथ ही उससे हतोत्साह भी मत होओ। अगर तुम डटे रहो तो विजय निश्चित है; ऐसी विजयके लिये कठिनाई और प्रयासकी कीमत कब अधिक होती है!

९. आध्यात्मिक रूपसे जो कार्य शुद्ध करता है वह कार्य है जिसे बिना व्यक्तिगत स्वार्थ, बिना कीर्ति या सामाजिक मान-सम्मान या सांसारिक महानताकी इच्छासे किया गया हो, अपने मानसिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्देश्य या प्राणिक कामनाओंपर आग्रह किये बिना और शारीरिक पसंद या मांगके बिना, पदवी या प्रतिष्ठाके लिये, मिथ्याभिमान या हठके बिना, केवल भगवान्‌के लिये और उनके आदेशके अनुसार किया गया हो।

१०. अहंकारके भावसे किया गया सब कार्य, अज्ञानके जगत्‌के लोगोंके लिए चाहे जितना अच्छा हो, योगके जिज्ञासुके लिये बेकार है।

११. अपनी अभीप्साको सशक्त, सच्चा और निष्कपट रखो और हर चीजमें, हर क्षण भगवान्‌को सहारेके लिये पुकारो और तुम जो कुछ अनुभव करो उसमें उनकी ओर खुले रहो।

१२. जीवनमें बहुत-सी चीजें मनुष्यके सामने अपने-आपको अर्पित करती हैं। प्रत्येक वस्तुको भगवान्‌की ओरसे आयी हुई, मानकर स्वीकार न करो। मनुष्यको चुनना होगा और गलत चुनाव अपने परिणाम लाता है।

१३. अपने मन और प्राणको सत्यसे परिप्लावित कर दो और शांत और नीरव बने रहो।

१४. असंतुष्ट कामनाओंसे सब दुःख उठते हैं, ऐसी निश्चल-नीरवता-की स्थितिमें रहो जो कामनासे मुक्त हो। जब ऐसा हो जाय तब बाकी सब, दिव्य सत्य, प्रेम और आनंद आ सकते हैं और उसपर सुरक्षित रह सकते हैं।

१५. अगर हम भगवान्‌को स्वीकार करें तो दोनों, सच्ची बुद्धि और भक्ति, एक साथ निर्विवाद श्रद्धा और समर्पणकी मांग करेंगी।

१६. हमें जो विजय पानी है उसके मार्गमें जो भी कठिनाइयां क्यों न आयें वे उस विजयके लिये बहुत मंहगी हैं अगर उन्हें ठीक भावमें लिया जाय, वे विजयका साधन भी हो सकती हैं।

१७. चाहे कोई भी मार्ग क्यों न हो, तुम्हें उसे पूरी तरह स्वीकारना चाहिये, और उसमें अपनी पूरी इच्छा-शक्ति लगानी चाहिये। विभाजित और लड़खड़ाती इच्छा-शक्तिके साथ तुम किसी बातमें सफल होनेकी आशा नहीं कर सकते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८. गीताके सिद्धांतका अभ्यास करनेके लिये किसी क्षेत्रका कोई भी कार्य किया जा सकता है।

१९. अगर हम स्थिर बने रहें तो पतनोंका महत्त्व नहीं रहता, हम फिरसे उठकर आगे बढ़ेंगे।

२०. साहस और प्रेम, दो गुण अनिवार्य हैं; अन्य सब गुण ग्रसित हो जायं या तंद्रामें गिर जायं तो भी ये दो आत्माको जीवित बचा लेंगे।

२१. कैसा वीभत्स है मिथ्यात्वका सारी धरतीपर फैलाव और अपने अंधकारके विधान द्वारा सारे जगत्पर उसका शासन! मुझे लगता है कि उसका शासन काफी लंबे समयतक चल चुका। अब हमें इस स्वामीकी सेवा करनेसे इंकार कर देना चाहिये। यही महान् और एकमात्र उपचार है।

२२. पाप योगकी नहीं संसारकी चीज है।

२३. तुम यह आशा करते हो कि जो लोग तुम्हारे साथ काम करते हैं वे प्रतिभासंपन्न होंगे। यह उचित नहीं है।

२४. समझना अच्छा है पर इच्छा करना ज्यादा अच्छा है।
आत्म-प्रेम बड़ी बाधा है।
भागवत प्रेम महान् उपचार है।

२५. मैं अपने-आपको तेरे प्रति खोलता हूं और पूर्ण निष्ठाके साथ तेरी आज्ञाका पालन करूंगा।

२६. सच्ची महानता, सच्ची श्रेष्ठता दयाभाव और सद्भावमें है।

२७. हर एकमें अपने दोष होते हैं और दूसरोंके साथ व्यवहार करते समय उसे यह कभी न भूलना चाहिये।

२८. चालाक होनेकी अपेक्षा बिल्कुल निष्कपट होना ज्यादा अच्छा है।

२९. भगवान्के साथ प्रेम करनेका अर्थ है, उनसे प्रेम पाना।

३०. भगवान्पर संपूर्ण भरोसा करनेमें ही आनंद है।

३१. क्यों, जब तुम तकलीफमें होते हो तो क्या तुम भागवत कृपा-की सहायता नहीं मांगते? फिर भी तुम अनुभवसे जानते हो कि उसका प्रभाव कितना अमोघ और अद्भुत होता है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्यका मन

(एक समय था जब श्रीअरविंद शामके समय अपने शिष्योंके साथ बैठकर बातचीत किया करते थे। १९२३ में जब श्री अंबालाल पुराणी आश्रममें आये तो उन्हें भी इन बैठकोंमें उपस्थित रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे कर्मठ आदमी थे, वार्तालापको अपने लिये लिखने लगे और बादमें माताजीकी स्वीकृतिके साथ यही वार्तालाप 'ईवनिंग टॉक्स'के नामसे छपा। श्रीअरविंदको इसे देखनेका समय नहीं मिला था इसलिये इसकी जिम्मेदारी लेखककी ही है। इसके कई खंड अलग-अलग पुस्तकोंके रूपमें प्रकाशित हो चुके हैं।—सं०)

१०-७-१९२३

शिष्य—जब मनुष्य अपना शरीर छोड़ता है तो क्या उसकी अंतरात्मा तुरंत नया शरीर धारण कर लेती है?

श्रीअरविंद—यह इसपर निर्भर है कि तुम्हारा शरीर और अंतरात्मासे क्या मतलब है।

शिष्य—यह कहा जाता है कि अपने विकासको पूरा करनेके लिये अंतरात्माको एक और भौतिक शरीर अपनाना पड़ता है।

श्रीअरविंद—अंतरात्माके 'विकास'से तुम्हारा क्या मतलब है? अगर अंतरात्मासे तुम्हारा मतलब है तात्विक आत्मा तो उसे विकासकी जरूरत नहीं।

शिष्य—मृत और जीवितके बीच संबंधका क्या नियम है?

श्रीअरविंद—तुम्हारे प्रश्नका यह मतलब मालूम होता है कि भौतिक अभिव्यक्ति ही सारी अभिव्यक्ति है। शरीर जीवकी अभिव्यक्तिमें एक परिस्थिति मात्र है। हम जब जगत् या स्तर कहते हैं तो उसका मतलब होता है चेतनाकी एक स्थिति। तब फिर "जाने" का क्या अर्थ होगा। जीवको किसी देशकी यात्रा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनी होती है। वह बस चेतनाकी एक और स्थितिमें चला जाता है।

शिष्य––जीव मृत्युके बाद कहां जाता है?

श्रीअरविंद––चले जानेसे तुम्हारा मतलब क्या है? जैसा कि मैंने कहा, वह चेतनाके एक और स्तरमें चला जाता है।

शिष्य––हमारे देशमें यह मान्यता है कि मनुष्यकी मृत्युके बाद जीव अमुक स्थितिमें रहता है लेकिन चूंकि वहांपर वह अपने विकासको पूरा नहीं कर पाता इसलिये उसे मानव जीवनमें लौटना पड़ता है। प्रश्न यह है कि यह कैसे होता है?

श्रीअरविंद––जैसा कि मैंने कहा, तात्विक जीवमें कोई वृद्धि या विकास नहीं होता।

शिष्य––छान्दोग्य उपनिषद्में कहा गया है कि मृतात्मा वर्षाके रूपमें वापिस आती है और वनस्पति जीवनमें प्रवेश करती है उसके बाद वह नारीकी कोखसे जन्म लेती है।

श्रीअरविंद––क्या तुम्हारा मतलब है कि जब-जब वर्षा होती है तब इतने सारे जीव ऊपरसे गिरते हैं? (हंसी)

शिष्य––शायद यह कोई रूपक हो।

दूसरा शिष्य––ऐसा लगता है कि आत्माएं दो कारणोंसे मानव जन्म लेती हैं। पूर्ण आत्माएं अवतारके साथ लीलामें भाग लेनेके लिये आती हैं।

श्रीअरविंद––यह सामान्य जन्म नहीं है। लेकिन प्रश्न यह हो सकता है कि जन्म होता ही क्यों है। यह तो यह पूछनेके जैसा हुआ कि दुनिया क्यों बनायी गयी? या तुम यह पूछ सकते हो कि यद्यपि हम भगवान् हैं फिर भी हम और तुम यहां क्यों हैं? हम केवल यही कह सकते हैं कि जीव जीवनमें भागवत पूर्णता प्रकट करनेके लिये जन्म लेता है। बस इतना ही कह सकते हैं हम।

शिष्य––मैं यूं कह सकता हूं कि प्रश्नका एक हिस्सा जीवनके यंत्र-विन्यासके बारेमें था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—दो चीजें हैं, शरीर और जीव। शरीर एक सामान्य रचना है और शायद तुम जानते हो कि विज्ञान जड़-पदार्थकी संरचना-के बारेमें क्या कहता है। यह सब परमाणुओंका खेल है और उन्हें विद्युदणुमें विघटित किया जा सकता है और विद्युदणु भौतिक जगत्में कुछ शक्तियोंका रूपायन हैं। फिर आता है प्राणिक शरीर और फिर आता है मनोमय शरीर। ये प्राण और मनकी रचनाएं हैं। इसी तरहसे चैत्य सत्ताकी भी रचना होती है, मैं सत्ताके अन्य छोटे-मोटे अंशोंको छोड़ दे रहा हूं। यह एक मोटा-मोटा खाका है, अगर तुम विस्तारमें जाना चाहो तो केवल भौतिकके ही पांच भाग हैं इसी तरह औरोंके भी हैं। इसके बाद तुम आते हो अंतरात्मा-पर। साधारणतः अंतरात्माको जीव नहीं माना जाता। अंतरात्मा वह तात्विक व्यक्तित्व नहीं है जो हमेशा भगवान्के साथ एक रहता है और हमेशा भगवान्की उपस्थितिमें रहता है। इसी तरह अंतरात्माका मतलब आत्मा भी नहीं है क्योंकि आत्माका विकास नहीं होता। साधारणतः अंतरात्माका अर्थ होता है चैत्य और मनोमय व्यक्तित्व जो शरीर और प्राणमय कोषके विलयके बाद भी बना रहता है।

हां, तो जब आदमी मरता है तो उसका भौतिक शरीर विलीन हो जाता है। कुछ समयके बाद प्राणमय शरीर भी विलीन हो जाता है और फिर चैत्य और मनोमय शरीर भी विलीन हो जाते हैं। एक कीड़ेका उदाहरण लो। कीड़ेमें केवल भौतिक चेतना होती है और कुछ नहीं। जगत्में अन्य रचनाएं इतनी नीची हैं कि उनके बारेमें विचार करनेकी जरूरत नहीं। कीड़ा कुछ अनुभव भौतिक स्तरपर पा लेता है। मेरी अपनी दृष्टि यह है कि कीड़ा किसी अवलंब देनेवाली आत्माकी सहायताके बिना एक जगत्से दूसरे जगत्की ओर विकसित नहीं होता चला जाता। ऐसी बात नहीं होती कि वह एक जगत्से दूसरे जगत्तक चढ़ता जाता है और इसका अंत होता है अंतरात्मामें। अंतरात्मा या जीव पहले भी होता है। भौतिक स्तरपर रहनेवाला सूक्ष्म देही जीवके पास लौट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर आता है जो सारे समय भौतिक चेतनामें कीड़ेको सहारा देता रहता है। जब वह तैयार हो जाय तो उसे प्राणमय स्तरपर ले लिया जाता है जहां वह अनुभव इकट्ठे करता रहता है जबतक कि मनुष्यके मनोमय लोकतक न पहुंच जाय। और इसके बाद अति-मानसिक लोक भी हैं।

हम अपने योगमें अतिमानसिक लोकको नीचे उतार लाते हैं ताकि अंतरात्मा पूर्ण अनुभवके साथ उच्चतर लोकको लौट सके। प्रश्न यह है कि हम कहांतक अतिमानसिक भावापन्न कर सकते हैं। अगर हम मनोमय और प्राणमय सत्ताको अतिमानसिक भावापन्न कर सकें तो हम उस अनुभवकी स्मृतिके साथ लौट सकते हैं और अन्य अभिव्यक्तिमें तैयार रचनाको ला सकते हैं। अगर हम चाहें तो हम मृत्युके बाद भी प्राणमय शरीरको रख सकते और प्राणमय लोकपर प्रभाव डाल सकते हैं।

अब मान लो हम शरीरको अतिमानसिक भावापन्न करते हैं। तब हम भौतिक अनुभवको पूरी-पूरी भौतिक, प्राणिक और मानसिक शक्तिको लेकर लौट सकते और भगवान्‌को अभिव्यक्त कर सकते हैं। अवतारों और विभूतियोंके बारेमें यही होता है—विगत प्राण-मय और मनोमय अनुभवोंकी पूरी स्मृति रहती है और अवतार तो भौतिकके अनुभवकी स्मृति भी रखते हैं। अगर हम शरीरको अतिमानसिक भावापन्न कर सकें तो शरीरको रखा या त्यागा जा सकता है—इच्छा मृत्यु। और शरीर त्यागनेपर भी—जब अभि-व्यक्तिकी प्रक्रियाको फिरसे अपनाया जाता है तो जीवको वैश्व प्रकृतिकी किन्हीं भी रचनाओंमेंसे सामान्य जीवोंकी तरह भौतिक, प्राणिक तथा मानसिकका संग्रह नहीं करना होता। अगर ये अति-मानसिक भावापन्न हो जायें तो सारी सत्ता पूरी तरहसे तैयार हो जाती है; उसे केवल तैयार रचनाको लेकर भगवान्‌को प्रकट करना होता है।

शिष्य—लेकिन भौतिक या प्राणिक शरीरके लिये कौन उपादान प्रदान करता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—"कौन प्रदान करता है" से तुम्हारा मतलब क्या है। वह तो प्रकृतिमें होता ही जैसे बिजली, गैस वगैरह हैं।

शिष्य—प्रकृति क्या है?

श्रीअरविंद—वैश्व भगवान्‌ने विश्वको फैला रखा है और एक वैश्व प्रकृति है जो हमारे लिये समस्त उपादान जुटाती है। तत्वतः प्रकृतिमें हर चीज वैश्व आत्माकी किसी-न-किसी चीजके साथ मेल खाती है, उदाहरणके लिये प्राण दिव्य तपसके अनुरूप है।

पुनर्जन्मकी प्रक्रियाके बारेमें नियम और ब्यौरे बहुत अधिक जटिल हैं, उन्हें ठीक-ठीक समझाना बहुत कठिन है। यह बड़ा पेचीदा प्रश्न है।

१-६-१९२४

वर्षा ऋतुके कारण बिजलीके बल्बके चारों ओर बहुतसे पतिंगे उड़ते फिर रहे थे। वहीं एक मकड़ी उन्हें पकड़नेके लिये जाल बनानेमें व्यस्त थी। श्रीअरविंद इसे देखनेमें लगे थे।

मकड़ी बहुत तेजीमें थी। बार-बार इधर-उधरसे आते हुए पतिंगोंके कारण जाल टूट जाता था, किसी-न-किसी तरहसे मकड़ीने पांच मिनटमें एक जाल-सा तैयार कर ही लिया।

श्रीअरविंद—आज इसकी अच्छी दावत होगी! वह फिर भी जालको मजबूत बनानेमें लगी है। वह एक पतिंगेको जालके एक कोनेमें बांध कर फिरसे जाल बनानेके काममें लग जाती है। उसे गणितका अच्छा ज्ञान है!

श्रीअरविंदने 'गेस्ट हाउस' की बरसों पुरानी एक घटना सुनायी। एक मकड़ी अपने जालको संतुलित करना चाहती थी। उसने एक ओर रेतका दाना रखा तो देखा कि जाल भारी हो गया है। उसने झट उसे हटा कर एक तिनका रख दिया और जालका संतुलन ठीक हो गया। तो देखो, ये मकड़ियां बड़ी कुशल होती हैं। वे जानती हैं कि उन्हें क्या करना चाहिये और वे अनुभव और परीक्षणसे सीखती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४-८-१९२४

सवेरे साधनाके बारेमें बातचीत।

शिष्य––प्राणिक मन और मानसिक इच्छामें क्या फर्क होता है?

श्रीअरविंद––प्राणिक मन पहले आवेश है और पीछे विचार। तुम कह सकते हो कि वह पहले शक्ति है और पीछे विचार। उदाहरणके लिये कामना, अगर कामनाके तत्वको निकाल दिया जाय तो, यह आवेग या शक्ति है जो बाहर जाती है या अपने-आपको चरितार्थ करनेकी कोशिशमें लगी है।

जब कि मानसिक इच्छा विचारके साथ जुड़ी होती है। वह पहली विचार शक्ति है। हर विचारकी अपनी इच्छा होती है। अतिमानसमें भी एक भेद होता है। कभी एक शक्ति होती है जो अपने-आपको चरितार्थ करना चाहती है, कभी-कभी ज्ञान होती है जो अपने-आपको प्रभावकारी बनानेकी कोशिश करता है, यद्यपि वह पहले ज्ञान है और पीछे शक्ति। उच्चतम अतिमानसमें दोनों एक होते हैं: सत्य और शक्ति, ज्ञान और इच्छा––दोनों साथ-साथ और प्रभावशाली होते हैं। साधकको चाहिये कि अपनी अचंचलता और समताको एकदम सुरक्षित रखे ताकि चाहे जो कुछ हुआ करे, भीतरी अनासक्ति और समतापर आंच न आये।

३०-८-१९२५

श्रीअरविंद––कोई मेजर हिल है जिसे सचमुच किसी पागलखानेमें होना चाहिये। उसने महात्मा गांधीको 'सोसायटी ऑफ साइको एनालिस्ट्स' में निमंत्रण दिया और यह समझाया है कि हिंदू मुस्लिम समस्या केवल ग्रंथिकी समस्या है। यह गौ ग्रंथिकी समस्या है (हंसी) मेजर कहता है, "अगर तुम इस समस्याको हल करना चाहते हो तो गायका प्रतीक बदल डालो फिर कोई समस्या न रहेगी।

शिष्य––मैंने एक जैविकी विश्लेषणका लेख पढ़ा है जिसमें वह कमाल पाशा और उसकी स्त्रीके तलाककी बात समझा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका कहना है कि श्रीमती कमालको अपने मां-बापसे बहुत प्रेम था, अपने पतिसे प्रेम न था। दूसरे यह कि उसमें पुरुषोचित्त ग्रंथि थी जिसके कारण वह नारी मताधिकारके आंन्दोलनमें भरती हो गयी। लेखकने यह भी समझाया है कि नैपोलियनने जोसेफीन-को इसलिये तलाक दिया था क्योंकि उसे अपनी मांसे प्रेम था और रानी एलिजाबेथ (प्रथम) में पुरुषोचित्त ग्रंथि थी लेकिन उसके साथ मिलने-जुलने वालोंमें काफी मजबूत नारी ग्रंथि न थी जिसके कारण वे उसे अपने साथ न रख सके। उसका कहना है कि गांधीजीमें भी कोई ग्रंथि है! इस ग्रंथिके मामलेको समझना असंभव बात है।

श्रीअरविंद—मैं तो बस इतना ही जानता हूं कि जब तुम अपनी प्रकृतिमें किसी चीजको दबाते हो तो वह नीचे अवचेतनामें चली जाती है। लेकिन यह सर्व-सामान्य नियम बनाना कि तुम जो कुछ करते हो इन ग्रंथियोंके कारण करते हो, एक नया विचार है।

शिष्य—क्या यह ठीक है?

श्रीअरविंद—नहीं, प्राचीन यूरोपीय मनोविज्ञानमें तो कुछ भी न था, आधुनिकमें कुछ तो है पर है मिथ्या।

शिष्य—क्या वह बिल्कुल मिथ्या है? क्या वह प्राचीनकी तुलना-में आगे बढ़ा हुआ नहीं है।

श्रीअरविंद—यह इस अर्थमें प्रगति है कि जैसा कि मैंने कहा, प्राचीनमें कुछ भी न था पर नवीनमें कुछ तो है पर है मिथ्या।

इन विज्ञानोंके बारेमें यूरोपीय लोगोंके निश्चित विचार होते हैं। वे कुछ असामान्य घटनाएं देखते हैं, उनका अध्ययन करते हैं, सामान्य नियम खोजते हैं और फिर उसे सब जगह लागू करनेकी कोशिश करते हैं नैपोलियन, एलिजाबेथ और बेगम समरूने एक खास तरहसे व्यवहार किया क्योंकि उनमें अमुक ग्रंथि थी। इसका अर्थ यह हुआ कि मनुष्यका चरित्र होता है और उसका चरित्र ही उसके क्रिया-कलाप-के बारेमें निश्चय करता है। यह बात हम लोग दस हजार वर्ष पहले जानते थे। इसमें नया कुछ भी नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुश्किल यह है कि वे मनोविज्ञानमें भी उसी तरह काम करना चाहते हैं जैसे भौतिक विज्ञानमें करते हैं, परंतु मनोविज्ञान इतना सीधा-सादा नहीं है। तुम इसके नियमोंको उसी तरह सर्व-सामान्य नहीं बना सकते जैसे तुम भौतिक विज्ञानके साथ कर सकते हो। यह बहुत सूक्ष्म है और इसमें बहुत-सी बातें देखनी होती हैं।

अगर तुम कहो कि हर चीजका, जो हम करते हैं, हमारी आंतरिक सत्तापर प्रभाव पड़ता है और इसी तरह जो कुछ हमारे भीतर है, अवचेतनामें है वह कुछ हदतक हमारी क्रियाओंपर असर डालता है —तो यह बात ठीक है। लेकिन इससे ज्यादा नहीं माना जा सकता। उदाहरणके लिये स्वप्नोंको ले लो। यह बात बिल्कुल ठीक है कि स्वप्न नींदके समय अनियमित तथा मनमाने तरीकेसे अवचेतनासे उठनेवाली किसी चीजके कारण आते हैं, लेकिन यह बात सभी स्वप्नोंके लिये नहीं कही जा सकती। स्वप्नोंका क्षेत्र बहुत बड़ा है। अन्य प्रकारके स्वप्न भी होते हैं जो अवचेतनासे नहीं आते। मनुष्यका मनोविज्ञान बड़ा कठिन है।

शिष्य—क्या आपका मतलब यह है कि नया मनोविज्ञान बिल्कुल गलत है?

श्रीअरविंद—मैं कहता हूं कि वह मिथ्या है और जहां वह भौतिक विज्ञानोंकी रेखाओंपर चलनेकी कोशिश करता है, वह व्यर्थ है। क्योंकि इन दोनोंमें कोई मेल नहीं है।

एक शिष्य—फ्रायडने इस जटिल सिद्धांतका आरंभ किया था।

दूसरा शिष्य—और उसने अपने सिद्धांतसे बहुत-से लोगोंको नीरोग कर दिया था।

श्रीअरविंद—सिद्धांत किसीको नीरोग नहीं कर सकता। क्या तुम अब भी यह विश्वास करते हो कि सिद्धांत लोगोंको नीरोग करते हैं। लोगोंको उपचार या परिणाम प्राप्ति किसी भी सिद्धांतपर निर्भर नहीं होती। सिद्धांत ठीक हो सकता है या गलत फिर भी तुम उससे परिणाम पा सकते हो, सिद्धांत तुम्हें ऐसी स्थितिमें रख देता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जब तुम्हारे पीछेसे कोई चीज काम कर सकती है, बर्गसांका यही कहना है। सिद्धांत तुम्हें आश्वासन दिला देता है और आवश्यक आंतरिक स्थिति पैदा करता है, बस इतना ही। वह ठीक भी हो सकता है और गलत भी, हो सकता है कि जैसे आज कल कूए लोगों-को नीरोग बना देता है उसी तरह फायड भी किया करता हो। लेकिन क्या वह उन्हें अपने सिद्धांत द्वारा नीरोग करता है? बिल्कुल नहीं, उसके अंदर कोई शक्ति होती है जो लोगोंको रोग-मुक्त कर देती है।

तुम मानस विश्लेषणके परिणामोंका उपयोग करके विघ्नबाधाओं और मानव प्रकृतिसे जटिलताओंको दूर कर सकते हो और तुम देखोगे कि वे सफल नहीं हो पाते।

शिष्य—यह सच है, वह योगकी तरह गहराईमें नहीं जाता।

श्रीअरविंद—वह अपने कार्यको गलत आधारसे शुरू करता है।

१८-१०-१९२५

आज पशुओंके मनके बारेमें बात चली।

श्रीअरविंद—चूहोंके बारेमें समाचारके साथ ही बंदरोंके नदी पार करनेकी बात भी तो है। यह केवल सहज वृत्ति नहीं है। पेड़-की ऊंचाईका हिसाब, शृंखलाका निर्माण और नदीकी चौड़ाईका अंदाज, इनके लिये मनकी जरूरत है।

अभी उस दिन मैंने एक कुत्तेके बारेमें पढ़ा था जिसने एक घोड़ेसे दोस्ती कर ली थी। उसका साईस घोड़ेके खानेसे सामान चुरा लेता था। या तो घोड़ेने कुत्तेसे शिकायत की या कुत्तेको अपने-आप पता लग गया, पर कुत्तेको चोरीका पता चल गया। एक दिन जब चोर सचमुच चोरी कर रहा था तो वह जाकर मालिकको ले आया। ऐसा लगता है कि पशु १. स्मृति, २. संसर्ग, ३. खोज ४. उद्देश्यके अनुकूल साधन खोजना—इन चार चीजोंके आधारपर काम करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा ख्याल है कि पशु प्राणिक मनसे सोचता है जब कि मनुष्य तर्क-बुद्धिसे सोचता है।

१९-१०-१९२५

बिल्लियोंके बारेमें बात चली:

श्रीअरविंद—उनमें बहुत प्राण-शक्ति होती है। जब वे उत्तेजित होती हैं तो सारे वातारवणको क्षुब्ध कर देती हैं। जब वे उस अवस्थामें होती हैं तो चारों ओर प्राणिक-शक्ति फेंकती रहती हैं। उनमें अद्‌भूत प्राण-शक्ति होती है।

अप्रैल या मई १९२६

बात इस विषयमें चली कि 'क' को बिल्लिको दी जानेवाली मछली और 'ख' को मांसाहारको देख कर सिकुड़न होती है।

श्रीअरविंद—स्वयं मुझे इस तरहकी स्नायविक झिझक हुआ करती थी। एक बार मैं विपिन रायके साथ दक्षिणेश्वर गया था। वहां बलि चल रही थी। मैं तो उसे देख सका पर विपिन पाल इससे बहुत विचलित हो गये। जेलमें मैं इस भावसे पूरी तरह मुक्त हो गया। दया और स्नायविक झिझक प्राणिक सत्ताकी कमजोरियां हैं।

शिष्य—पातंजलिमें अहिंसाका क्या अर्थ है?

श्रीअरविंद—मुझे नहीं मालूम। इसके लिये तुम्हें पातंजलिसे पूछना चाहिये। (हंसी)

शिष्य—प्रश्न यह है कि खटमलोंके साथ क्या किया जाय? 'क' अनगिनत खटमलोंकी परवाह किये बिना रह सकता है।

दूसरा शिष्य—हां, लेकिन उसकी क्षमता खटमलोंके आकारपर निर्भर है। अगर वे बड़े-बड़े हों तो वह परवाह करता है। (हंसी)

और एक शिष्य—'ग' खटमलोंका जल्लाद है।

श्रीअरविंद—जब कोई चीज करनी हो तो वह कर्तव्य कर्म होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, जैसा कि तुमने गीतामें देखा है! उस समय अगर मैं दयासे भरा होऊं तो यह कमजोरी होगी। अगर देशसे अंग्रेजोंको निकाल बाहर करनेका प्रश्न है तो उस समय तुम दयाकी बात नहीं सोच सकते! तुम यह नहीं सोच सकते कि कितने लोगोंकी नौकरी छूट जायगी या अंग्रेजोंके व्यापारको कितना नुकसान होगा।

सकुचाना या झिझकना स्नायविक प्रकृतिकी चीज है, दया हृदय-की। वह एक भावना है, उसका संबंध चैत्यके साथ ज्यादा होता है। जैन लोगोंकी दया ज्यादा बौद्धिक होती है। उन्हें क्रूरताके विरुद्ध कोई आपत्ति नहीं होती यदि वह वैसे रूप न धारण करे जिनसे घृणा करना उन्हें परिपाटी और संस्कारने सिखाया है।

महात्मा गांधीकी अहिंसा उन्हें स्वयं अपने-आपको तथा औरोंको कष्ट देनेसे नहीं रोकती, वह यह नहीं देख पाते कि कितने दुःखोंका कारण वे स्वयं हैं।

शिष्य—हमें कैसे पता लगे कि यह सकुचाना है या दया करना?

श्रीअरविंद—तुम उसे अपने अंदर अनुभव कर सकते हो, तुम झिझकका अनुभव करते हो। संवेदन और अनुभव अलग-अलग चीजें हैं। सकुचाना मुख्य रूपसे स्नायविक है और दया है भावना।

२९-५-१९२६

शिष्य—'क' पांडिचेरी छोड़ते हुए बहुत दुःख प्रकट कर रहा था।

श्रीअरविंद—क्या वह सच्चा दुःख था?

शिष्य—कम-से-कम उस समय मुझे ऐसा लगा। लेकिन ऐसा लगता है कि उसमें दोहरा व्यक्तित्व है।

श्रीअरविंद—लेकिन यह ऐसा दोहरा व्यक्तित्व नहीं है जिसमें एक हिस्सा दूसरेके बारेमें अजाना होता है क्योंकि स्पष्ट है कि उसे याद था कि उसने क्या लिखा था।

शिष्य—शुरूमें ऐसा लगता था कि वह कोई और ही व्यक्ति है, फिर वह बदल गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—नहीं, यह एक ऐसी प्राणिक सत्ताका मामला है जो आकर उसपर कब्जा कर लेती है। वह सत्ता मेरे या माताजीके रूपमें आती है और उसे मेरे लिखे हुए पत्रोंके अजीबोगरीब अर्थ समझाती है।

शिष्य—इस तरहके कब्जेका क्या परिणाम होगा?

श्रीअरविंद—दो परिणाम संभव हैं १. या तो वह पागल हो जाय या २. वह किसी शक्तिको प्रकट करे और महान् अवतार होनेका दावा करे (कुछ ठहर कर) इस योगमें पतन आसान है लेकिन फिरसे चढ़ना बहुत कठिन है।

शिष्य—क्या उसका पतन भौतिक सत्ताकी किसी कमजोरीके कारण था?

श्रीअरविंद—उसने असहयोग आंदलोनके दिनोंमें तपस्याके द्वारा अपने शरीरको कमजोर बना डाला था लेकिन उसकी कमजोरी औरोंकी कमजोरीसे बहुत अधिक न थी। उसके मुख्य दोष मन और प्राणमें थे। उसकी मानसिक सत्ता बहुत ही संकीर्ण है—हम कह सकते हैं कि उसमें मन है ही नहीं, केवल धर्म और आध्यात्मिकता-के बारेमें रूढ़िग्रस्त विचार हैं। लेकिन उसकी प्राणमय सत्तामें अद्भुत अभीप्सा और तीव्रता थी। उसने औरोंसे बहुत अधिक प्रगति की लेकिन उसमें बहुत अधिक दर्प भी था। उसने मान लिया कि वह बहुत अधिक विशेष व्यक्ति है। उसने अहं भावके साथ अतिमानव होनेकी ठानी। इसके बाद वह भावमय भक्तिकी ओर मुड़ा और अतिमानसको एक वर्षके अंदर खींच लानेके लिये वह माताजी और श्रीअरविंदको बुलाता और फिर रोता! स्थिति यहांतक पहुंच गयी कि भौतिक वास्तविकतापर उसका जरा भी अधिकार न रहा और वह यह सोचता था कि यह सब ऊट-पटांग चीजें उससे मैं ही करवा रहा हूं जब कि सच्ची बात यह थी कि मैं नहीं चाहता था कि वह यह सब करे! उसे अपने शरीरपर अधिकार न था और कोई बार जब आवेश आता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था तो वह घुटनोंके बल गिर-गिर पड़ता था। उसे जादुई और चमत्कारिक चीजोंके लिये बहुत आकर्षण था। वह सोचता था कि योगीको खाना और सोना न चाहिये।

शिष्य—क्या यह संभव है कि वैश्व प्राणिक स्तरपर इतना अधिकार पा लिया जाय कि इन शक्तियोंके लिये सत्यका, आपका या माताजी-का रूप बना कर भरमाना असंभव हो जाये?

श्रीअरविंद—यह चेतनाकी बात है पार्थिव स्तरकी नहीं जहां तुम किसीको कुछ करनेसे रोक सकते हो। व्यक्तिके सहयोगके बिना कुछ भी संभव नहीं है। मुश्किल तो यह है कि वह प्राणलोककी उस सत्ताको रखना चाहता है और अगर उसे भगा भी दिया जाय तो वह उसे वापिस बुला लेता है।

शिष्य—इस सत्ताका उसपर क्या प्रभाव होता है?

श्रीअरविंद—जब हमने दबाव हटा लिया तो वह साधारण आदमी-की तरह अनुभव करने लगा। उसे शरीरके दर्दका अनुभव होने लगा। कभी-कभी जब मनुष्य प्रतिकार करता है तो दौरे आने लगते हैं, हिस्टीरिया हो जाता है।

शिष्य—लेकिन यह प्राणिक सत्ता उसे बार-बार पांडिचेरीमें लाकर क्यों पटकती है?

श्रीअरविंद—अनेक सत्ताएं हैं और उनकी बहुत-सी प्रवृत्तियां तथा हेतु होते हैं। वे विविध कारणोंसे इस स्थानकी ओर आकर्षित होती हैं पर वे आज्ञापालन करना नहीं चाहतीं।

शिष्य—मनुष्यको बसमें कर लेनेमें इन सत्ताओंका उद्देश्य क्या होता है?

श्रीअरविंद—पहला यह कि आदमीको बसमें करके वे भौतिक जगत्पर प्रभाव डाल सकती हैं। दूसरे, विनोदके लिये, यह देखने-के लिये कि इससे क्या होता है। तीसरे, भगवान्का अभिनय करके अपनी पूजा करवाना, चौथे प्राणिक शक्तिको अभिव्यक्त करना। इस श्रेणीमें वे सब आते हैं जो चमत्कारी इलाज करते हैं, जिनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपचारकी खास शक्तियां होती हैं, पांचवें, किसी कामना या आवेश-की पूर्तिके लिये जैसे हत्या, काम-वासना आदि।

इस दृष्टिसे तुम देखोगे कि मृत्यु-दंड बेकार है। जिस आदमीने हत्या की वह संभवतः किसी सत्ताके आवेगके वशमें था। जब हत्यारेको फांसी हो जाती है तो वह सत्ता किसी और पर कब्जा कर लेती है। कई हत्यारोंने यह स्वीकारा है कि उनमें हत्याका पहला आवेग तब आया जब उन्होंने किसीको फांसीपर झूलते देखा।

कुछ प्राणिक सत्ताएं यहांपर अपना खेल करना चाहती हैं।

शिष्य—वे ऐसा क्यों करती हैं?

श्रीअरविंद—उन्हें सहारा मिलता है। लेकिन ये कोई मजबूत सत्ताएं नहीं होतीं। सचमुच मजबूत सत्ताएं तो वे हैं जो जगत् आन्दोलनोंके पीछे होती हैं जैसे थियोसोफी। उनमें केवल प्राणिक बल ही नहीं मनःशक्ति भी होती है।

शिष्य—विकासमें उनकी क्या भूमिका है?

श्रीअरविंद—वे केवल शक्ति-प्रदर्शन करती हैं। वे सामान्यतः भौतिक शरीर धारण नहीं करतीं।

शिष्य—क्या उनमें प्रगतिका कोई विचार होता है?

श्रीअरविंद—प्रगतिसे उनका मतलब होता है केवल शक्तिकी वृद्धि, लेकिन उनको बदला जा सकता है।

तेओं, जिसने अलजीरियामें माताजीको गुह्य विद्या सिखायी थी, मानता था कि जो शक्तियां या सत्ताएं भौतिकके साथ संपर्कमें आनेकी कोशिश करती हैं, परिवर्तन उनकी नियतिमें होता है।

शिष्य—क्या वे अपनी प्राणिक प्रकृति बदलती हैं?

श्रीअरविंद—वे रहती तो हैं प्राणिक सत्ताएं ही पर अपने लिये शक्तिको लक्ष्य बनानेकी जगह और अहंकारके साथ कुछ अभिव्यक्त करनेकी जगह वे किसी उच्चतर चीजको प्रकट करनेके लिये राजी हो जाती हैं। इसके लिये उन्हें शरीर धारण करनेकी जरूरत नहीं। वे अपने ही लोकमें रहते हुए उच्चतर प्रभावके रूपमें वहां काम कर सकती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—क्या जिसपर भूत-बाधा हो वह अपनी खोयी हुई भूमि-को फिरसे पानेका प्रयास कर सकता है?

श्रीअरविंद—कुछ समयके बाद, भूत बाधाके समय अंतरात्मा नहीं होती, उसे पीछे, पृष्ठभूमिमें धकेल दिया जाता है। साधारणतः मनुष्यमें अंतरात्मा सामने नहीं होती। आशा की जाती है कि योग-द्वारा वह सामने आ जायगी। लेकिन कुछ कमजोरियोंका लाभ उठा कर, किसी प्राणिक या शारीरिक दोषके कारण उसे पीछे धकेल दिया जा सकता है, जबतक कि केंद्रीय सत्ता नीचे आकर अपने उपकरणोंपर अधिकार न कर ले।

शिष्य—क्या ये शक्तियां तब भी अधिकार जमा सकती हैं जब मनुष्यका मन अच्छा हो यानी उसके प्राणिक आवेगोंसे ऊंचा हो?

श्रीअरविंद—उन सत्ताओंके आगे मनुष्यका मानसिक ज्ञान क्या है? आदमी जानता ही क्या है? लगभग कुछ नहीं। वे कार्य-कारिणी शक्तियोंकी जटिलताओंके बारेमें जानती हैं जिनके बारेमें मनुष्य कुछ नहीं जानता। मनुष्य अगर ठीक रेखाओंपर चले तो उसके प्रारब्धमें बहुत कुछ है पर जैसा कि वह है, वह भौतिक चेतना-में बंद है, और यह बहुत ही घटिया स्तर है। उसकी तर्क-बुद्धि-को भी ज्ञानके लिये सामग्रीकी जरूरत होती है, तर्क-वितर्क और दलीलें उसके लिये सब कुछ प्रमाणित कर सकती हैं। एक ही तर्क द्वारा दो विपरीत निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं और तुम्हारी अभिरुचि यह तय करती है कि तुम कौन-सेको चुनते हो। और तर्ककी सामग्रीके लिये तुम उन बातोंपर निर्भर रहते हो जो तुमने अपनी इन्द्रियोंसे देखी या सुनी हैं। प्राणिक सत्ताएं इतनी मूर्ख या इतनी संकुचित नहीं होतीं।

२२-६-१९२६

शिष्य—आंतरिक मन, प्राण और शरीरकी सत्ताओंका चैत्य सत्ता-से क्या संबंध होता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—मानसिक, प्राणिक और भौतिक सत्ताएं चैत्य सत्ताकी अभिव्यक्तिके उपकरण हैं। तुम यूं कह सकते हो कि वे यहां पार्थिव क्रम-विकासमें अभिव्यक्तिके लिये चैत्य सत्ताके रूपायन हैं। चैत्य सत्ता ही यहां मन, प्राण और शरीरको अवलंब देती है। वह उनके पीछे खड़ी रहती है। चैत्य सत्ताको ही यूरोपीय अंतरात्मा या जीव कहते हैं। वही आदमीमें 'सच्चा व्यक्ति' है। निम्नतर प्रकृतिमें वह अंतर्तम सत्ता है। निचली प्रकृतिमें वह भगवान्‌का प्रत्यक्ष प्रतिनिधि है। साधारणतः यह माना जाता है कि वह हृदयके पीछे रहती है। वह भावमय क्रिया-कलापके पीछे होती है जो उसकी सतही अभिव्यक्ति है। सामान्यतः भावमय क्रिया-कलाप स्वभावसे चैत्य नहीं होते। सच्चा चैत्य भाव बहुत गहरा होता है और वह शुद्ध रूपसे आध्यात्मिक भाव होता है। चैत्य सत्ता सीधी उच्चतर सत्यके प्रति खुलती है और वही यहांपर उसको ग्रहण कर सकती है।

शिष्य—क्या चैत्य सत्ता ही मानसिक, प्राणिक और भौतिक सत्ता-पर शासन करती है?

श्रीअरविंद—हां, लेकिन साधारण मनुष्यमें चैत्य सत्ता उसकी अधिकतर क्रियाओंपर शासन नहीं करती। वे बहुधा बाहरी प्रभावों-से अनुशासित होती हैं।

शिष्य—आपने 'क' के बारेमें बोलते हुए कहा था कि उसने आंतरिक मन और चैत्यके बीचका परदा फाड़ दिया। इससे आपका ठीक-ठीक क्या मतलब था? क्या इस तरहका कोई परदा होता है।

श्रीअरविंद—हां, इस तरहका परदा होता है और इसी कारण अधिकतर मनुष्य अपनी आंतरिक सत्ताके बारेमें सचेतन नहीं होते। 'क' के मामलेमें मैंने "चैत्य" शब्दका प्रयोग सामान्य अर्थमें किया था। उसने मानसिक और प्राणिक लोकोंके बीचका परदा फाड़ दिया था और अपने-आपको उनके पीछेके लोकोंके प्रति खोल दिया और उसके बाद जो कुछ हुआ वह उसे सह न सका। वहां मैंने इस शब्दका प्रयोग 'अंतस्तल आत्मा' के अर्थमें किया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—क्या चैत्य सत्ताकी क्रिया मुख्यतः आंतरिक मानसिक और आंतरिक प्राणमें ही होती है या वह अवचेतन होती है?

श्रीअरविंद—हर वह चीज जिसके बारेमें मनुष्य साधारणतः सचेतन नहीं होता, उसके लिये अवचेतन होती है। इसका मतलब इतना ही है कि कोई चीज पीछे हो रही है जिसके बारेमें सतही मनुष्य कुछ नहीं जानता लेकिन वास्तवमें कोई चीज अवचेतन नहीं है। एक अर्थमें यह कहा जा सकता है कि अतिचेतन भी अवचेतन है।

शिष्य—चैत्य सत्ताका अतिमानससे क्या संबंध होता है?

श्रीअरविंद—चैत्य सत्ता अतिमानस नहीं है, उदाहरणके लिये हम कह सकते हैं कि परदा फाड़ कर हम किसी-न-किसी तरह अंतस्तलीय या चैत्य सत्तामें पहुंच सकते हैं लेकिन इस तरह अतिमानसमें नहीं जा सकते। चैत्य सत्ता उच्चतर सत्यके प्रति खुलती है परंतु वह तत् नहीं है, वह सत्यको ग्रहण करती है। चैत्य सत्ता मन, प्राण और शरीरकी सत्ताके पीछे "होती" है पर "ऊपर" नहीं।

शिष्य—चैत्य सत्ता और आध्यात्मिक सत्तामें क्या फर्क है?

श्रीअरविंद—तुम आध्यात्मिक सत्ताके बारेमें इसके सिवा कुछ नहीं कह सकते कि वह सच्चिदानन्दकी सत्ता है परंतु वह व्यष्टिगत नहीं होती। ये तीनों लोक मनके ऊपर हैं। मानसिक प्राणिक और भौतिक तीनों निचले गोलार्द्धमें हैं। दोनों गोलार्द्धोंके बीच है वह जिसे मैं अतिमानस कहता हूं।

तुम वास्तविक सच्चिदान्नदतक नहीं पहुंच सकते। अधिकतर जो लोग कहते हैं कि उन्होंने सच्चिदानन्दको पा लिया है उनकी तरह तुम भी उसका अनुभव मन और प्राणमें कर सकते हो लेकिन उसकी अनुभूति पा लेनेपर भी तुम उसे यहां संगठित नहीं कर सकते, सच्चिदानन्दका संगठन केवल अतिमानस ही कर सकता है।

शिष्य—क्या चैत्य वह सत्ता है जो मृत्युके बाद भी बनी रहती है, कारण-शरीर किसे कहते हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—पुनर्जन्मकी अध्यक्षता चैत्य पुरुष नहीं, केंद्रीय सत्ता या जीवके हाथमें होती है जो आवश्यकताके अनुसार प्रकृतिसे सामग्री जुटा लेता है। साधारणतः कारण शरीरका मतलब होता है अतिमानसिक शरीर।

शिष्य—प्रचलित परिभाषामें यद्यपि कारण शरीरका मतलब विज्ञानमय ही होता है पर वे उसे विकासका नहीं, छुटकारा पानेका साधन मानते हैं। उनके अनुसार कारण शरीरका उपयोग है प्रकृतिमें बचे हुए सारे बीजोंको भस्म कर देना। उनकी मान्यता है कि जबतक कारण शरीरमें स्थित बीजको न जला दिया जाय तबतक मोक्ष प्राप्ति नहीं हो सकती।

श्रीअरविंद—यह बात सच है। यहांपर तुम जो कुछ देखते हो उस सबका बीज अतिमानसमें है और अतिमानसतक पहुंचे बिना तुम सचमुच प्रकृतिकी अपूर्णतासे छुटकारा नहीं पा सकते।

उदाहरणके लिये पुत्रके प्रेमको लो। साधारणतः वह ऊपरकी किसी चीजका प्रतिनिधि होता है लेकिन वह जो रूप धारण करता है वह ऊपरके सत्यको एकदम गलत रूपक दे देता है। अब, अगर तुम इस भ्रांतिको दूर करना चाहो तो तुम्हें उसे दबाना नहीं चाहिये क्योंकि इस तरह वह सचमुच जाता नहीं है, बल्कि तुम्हें उसे उच्चतर सत्यको अर्पण कर देना चाहिये और एक बार तुम उसके पीछेके सत्यको जान जाओ तो तुम उसके सामान्यतः प्रचलित मिथ्या रूपके आधीन नहीं रहते। हर चीजके साथ ऐसी ही बात है।

शिष्य—सामान्यतः लोगोंने सभी अपूर्णताओंके बीजको यहीं पानेकी कोशिश की और फिर जगत्‌से भाग निकलनेका प्रयास किया।

श्रीअरविंद—यह पुराना विचार था। इसकी नींवमें यह विचार था कि सत्यको, अतिमानसको यहां धरतीपर स्थापित नहीं किया जा सकता। चूंकि यहां जो कुछ है सब अपूर्ण है, सत्य नहीं मिथ्या है, चूंकि मनने सत्यको यहां प्रतिष्ठित करनेकी कोशिश की पर असफल हुआ। इसलिये उन्होंने सोचा कि "सत्यमें जाने" का अर्थ है मन,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राण इत्यादिको छोड़ देना। इसी विचारको बढ़ा-चढ़ा कर उन्होंने मान लिया कि जगत् केवल अपूर्ण ही नहीं, भ्रम है। उनके लिये जीवनमें लौटनेका अर्थ था मिथ्यात्वमें लौटना, उपनिषद्के रूपक "सूर्यके द्वारा मोक्ष पाने"का यही अर्थ है। जबतक तुम सूर्य रश्मियोंमें हो तबतक तो लौट सकते हो पर एक बार सूर्यमें पहुंच जाओ तो लौटना संभव नहीं है। हम एक और ही धारणाको लेकर चल सकते हैं वह यह कि जीवन है तो मिथ्या और अपूर्ण लेकिन हम यहां सत्य और पूर्णताको अभिव्यक्त कर सकते हैं। यहां जीवनमें सत्य मानव चेतनाके वर्तमान रूपायन और संगठनमें प्रकट नहीं हो सकता जिसका मुख्य उपकरण है मन। मन यहांपर सत्य-को संगठित नहीं कर सकता लेकिन चेतनाका एक उच्चतर रूपायन और संगठन यहांपर संभव है।

शिष्य—यहां संगिठत करनेकी इच्छाको भी तो मायावादी माया ही बतायेगा।

श्रीअरविंद—इस तरह तो जगत्से छुटकारा पानेकी इच्छा भी माया है!

शिष्य—तंत्रमें कहा गया है कि हमें मोक्षकी इच्छाको भी त्याग देना चाहिये।

श्रीअरविंद—मोक्ष प्राप्तिके लिये मोक्षकी इच्छाको त्यागनेमें बहुत सहायता नहीं मिलती।

शिष्य—यह उन लोगोंके लिये ठीक है जो मोक्ष प्राप्त कर चुके, उनके लिये नहीं जो अभी मार्गमें ही हैं। (हंसी)

श्रीअरविंद—मायावादका एक तर्क संगत निष्कर्ष यह विचार था कि तुम्हें हर चीजको बड़े जोरसे त्याग देना चाहिये, और यह कि तुम्हें तबतक सत्य नहीं मिल सकता जबतक कि तुम दुनियाकी हर चीज़से विरक्त न हो जाओ, वैराग्यका यही मतलब समझा जाने लगा, दुनिया भरके लिए विरक्ति।

लेकिन मेरी समझमें नहीं आता कि आध्यात्मिक जीवन प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेसे पहले हमें हर चीजसे विरक्त क्यों हो जाना चाहिये। हम इतना ही करते हैं कि संसारकी अपूर्णताको देखते हैं, सामान्य जीवनको स्वीकार नहीं करते जो अज्ञान और मिथ्यात्वके आधीन है लेकिन हम उससे घृणा नहीं करते, हम उसे घृणा और जुगुप्साकी दृष्टिसे नहीं देखते, हम उसे अचंचलता और समताके साथ देखते हैं और यह समझनेकी कोशिश करते हैं कि वह क्या है और भगवान्‌की लीलामें उसका क्या स्थान और प्रयोजन है।

शिष्य––साधारणतः यह माना जाता है कि आदमी किसी असंतोषके कारण ही आध्यात्मिक जीवनको अपनाता है। क्या यह चैत्य असंतोष होता है?

श्रीअरविंद––चैत्य असंतोषसे तुम्हारा मतलब क्या है?

शिष्य––मन और प्राणमें प्रतिबिंबित चैत्य असंतोष।

श्रीअरविंद––सच्चा असंतोष मन और प्राणके उस असंतोषसे भिन्न है जो उदाहरणके लिये तब आता है जब कोई तुम्हारी स्त्रीको ले भागे या तुम्हें आर्थिक हानि हो।

शिष्य––तब सीधे गुरुकी शरणमें जाओ! (हंसी)

श्रीअरविंद–सच्चा असंतोष आंतरिक सत्तासे आता है जिसे, एक बार आंतरिक सत्ताका स्पर्श मिल जाय तो फिर सामान्य जीवनसे संतुष्ट नहीं होती।

शिष्य––क्या अभीप्सा हमेशा चैत्य होती है?

श्रीअरविंद––हां, सच्ची अभीप्सा हमेशा मूलतः चैत्य होती है। यह वेदकी भाषामें "धरतीसे अपने घरकी ओर उठती हुई ज्वाला है।" अग्नि 'अभीप्साकी आग' है। वह मानसिक और प्राणिक रूप ले सकती है जो अधकचरे हो सकते हैं और इस तरह स्वयं अभीप्सामें भी अपूर्णता हो सकती है। लेकिन इन अपूर्ण रूपोंके पीछे भी कोई चीज जलती है। एक बार तुम्हारे जीवनमें यह अग्नि सुलग जाय तो फिर साधारण जीवनसे संतुष्ट रहना असंभव हो जाता है।

शिष्य––क्या वेदमें अग्निका अर्थ हमेशा अभीप्सा होता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद––हां, लेकिन हमारे अंदर और विश्वमें अग्निके बहुतसे रूप होते हैं, बहुत-सी शक्तियां होती हैं। आंतरिक सत्ताके भीतर-की अग्निको उन लोगोंने संभवतः गार्हपत्याग्नि कहा है।

शिष्य––जब हम कहते हैं कि अमुकके अंदर चैत्य सत्ता सामने आ गयी है या मजबूत हो गयी है तो इसका क्या मतलब होता है?

श्रीअरविंद––जब हम कहते हैं कि चैत्य सत्ता सतहपर आ गयी है तो इसका अर्थ यह होता है कि उसने मनुष्यकी प्रकृतिके अन्य अवयवोंपर प्रभाव डालना शुरू कर दिया है, वह पहले सक्रिय प्रभाव बनती है और फिर अन्ततः प्रकृतिपर केवल उसीका प्रभाव रहता है और इसका परिणाम यह होता है कि सारी सत्ता सत्यकी ओर मुड़ जाती है। जिस अनुपातमें वह व्यक्तिमें अपना अधिकार तथा प्रभाव, अपने रूपायनों तथा व्यक्तित्वोंको बढ़ाती है उसी अनुपातमें हम कह सकते हैं कि व्यक्तिकी चैत्य सत्ता अधिक विकसित है।

सामान्यतः कुछ ऐसे बाहरी लक्षण भी होते हैं जिनसे तुम्हें पता चल सकता है कि व्यक्तिका चैत्य अधिक विकसित है। उदाहरणके लिये ऐसे व्यक्तिमें अधिक शुद्धि होती है, औरोंके साथ व्यवहारमें अधिक कोमलता होती है, सुरुचि होती है। तुम इसके द्वारा अंतरात्माकी आवाज भी सुन सकते हो जो चैत्य द्वारा आती है। लेकिन मनमें सुनायी देनेवाली आवाजके साथ उसे मिला न देना चाहिये। चैत्य आवाज सच्ची होती है और उसमें मानसिक आवाज-की अपेक्षा अधिक अनिवार्यता होती है।

शिष्य––मन, प्राण और शरीर द्वारा काम करनेके अतिरिक्त क्या चैत्य सत्ताका कोई अपना क्षेत्र और अपनी क्रिया भी होती है?

श्रीअरविंद––हां, उसका अपना क्षेत्र भी होता है और अपनी क्रिया भी।

शिष्य––लेकिन यह चैत्य सत्ता सबके अंदर उपस्थित होते हुए भी उनके लिये अज्ञात रहती है?

श्रीअरविंद––तुम कह सकते हो कि साधारण मनुष्यकी अंतरात्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी पहुंचके भीतर नहीं होती। वह इतना ज्यादा प्राणिक जीवन और अन्य आवेगोंमें रमा हुआ होता है कि उसे कदाचित् ही अपनी अंतरात्माकी उपस्थितिका भान होता है, कभी एक आध झलक मिल जाय तो और बात है।

शिष्य—क्या मनुष्यके लिए यह संभव है कि वह अंतरात्मासे अपना संबंध बिल्कुल काट ले? गुह्यवादी 'आत्मा-विहीन मनुष्य'-की बात कहते हैं।

श्रीअरविंद—प्रश्न यह है कि क्या अधिकतर लोगोंका अपनी अंतरात्मासे कोई संबंध होता है?

शिष्य—इसका तो यह मतलब हुआ कि मनुष्यकी अंतरात्मा उसके नब्बे प्रतिशत क्रिया-कलापमें रस नहीं रखती और अपने-आपको अलग-थलग रखती है।

श्रीअरविंद—हां, मनुष्यकी अधिकतर क्रियाएं बाहरी प्रभावोंसे निर्देशित होती हैं, आंतरिक सत्तासे नहीं।

शिष्य—तो क्या अंतरात्माको आध्यात्मिक जीवनकी पुकार सुनायी देती है?

श्रीअरविंद—हां।

शिष्य—क्या यह संभव है कि पूरा-का-पूरा चैत्य पुरुष एक साथ बाहर निकल आये या वह धीरे-धीरे आता है?

श्रीअरविंद—साधारणतः मनुष्यको अंतरात्माकी झलकें दिखायी देती हैं और वह जरा-जरा करके सतहतक आती है और उसके बाद ही उसका सबपर शासन होता है। लेकिन कोई बंधा हुआ नियम नहीं है। चैत्य पुरुष एक साथ पूरी तरहसे सतहपर आ सकता है।

शिष्य—ऐसा लगता है कि अधिकतर लोग दुःख-दर्दके कारण ही जाग पाते हैं। क्या दुःख-दर्द जाग्रतिका आवश्यक अंग है।

श्रीअरविंद—नहीं, मैं ऐसा नहीं मानता। यह निश्चय ही एक गलत विचार है। यह ईसाई सिद्धांत है और सत्यका विकृत रूप है।

शिष्य—क्या दुःख शुद्धिका साधन नहीं है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—हमेशा नहीं। इसमें ऐसी शक्तियां आ जाती हैं जो आध्यात्मिक नहीं होतीं। आत्म शुद्धिके लिये सदा दुःख-दर्दमेंसे गुजरना जरूरी नहीं है।

शिष्य—अधिकतर लोग कोई आघात पानेके बाद ही आध्यात्मिक जीवनकी ओर मुड़ते हैं।

श्रीअरविंद—कुछ लोगोंके बारेमें यह बात ठीक है, सबके बारेमें नहीं। कभी मनुष्य किसी चीजसे आसक्त होता है और आसक्तिका विषय अचानक हटा दिया जाता है और उसके जीवनमें एक नया अध्याय शुरू हो जाता है। कभी-कभी रास्तेमें खड़ी बाधा गिरा दी जाती है और वह पुकार सुन पाता है।

शिष्य—इसका मतलब यह हुआ कि पहलेसे परदेके पीछे तैयारी चल रही थी और किसी आघातके कारण वह अचानक सतहपर आ जाती है।

मनुष्यके पास जिस तरहसे पुकार आती है वह तरीका भी कभी-कभी अचानक मिलता है। उदाहरणके लिये लालाके जीवनमें यूं हुआ। एक बार वह कहीं चला जा रहा था कि उसने रास्तेमें दो मछुआरी स्त्रियोंको बात करते हुए सुना, 'देर हो गयी है, अंधेरा छाता जा रहा है, रास्तेमें बाधाएं आ सकती हैं, चलो जल्दी घर चलें। इस बात-चीतने उसे आध्यात्मिक जीवनमें धकेल दिया।

श्रीअरविंद—ऐसी बातें बहुत बार होती रहती हैं, ये बाहरी बातें बहाने या यूं कहें आवश्यक स्पर्श देनेके लिये अवसर होती हैं। यह विशेष रूपसे भारतमें होता है जहां आध्यात्मिक वातावरण हमें घेरे रहता है। यहां जरा-सा स्पर्श भी आदमीको खोलनेके लिये काफी होता है।

शिष्य—क्या आपका ख्याल है कि अन्य देशोंकी अपेक्षा भारतमें आध्यात्मिक जीवन ज्यादा आसानीसे मिल सकता है?

श्रीअरविंद—यह मेरे ख्यालकी बात नहीं, एक तथ्य है क्योंकि हम यह काम पिछले चार पांच हजार वर्षोंसे करते चले आ रहे हैं। सारा अतीत विलक्षण रूपमें जिन्दा है तो जरा-सा स्पर्श ही मनुष्यको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी ओर खोल देता है, अगर उसके अंदर ऐसी कोई चीज हो जो आवश्यक सामग्री जुटाती है।

शिष्य——ऐसा क्यों है कि आध्यात्मिक जीवन भारतकी अपेक्षा यूरोपमें अधिक कठिन है?

श्रीअरविंद——पहला कारण तो यह कि यूरोपमें यह चीज कमी इस मात्रामें नहीं रही जितनी भारतमें। दूसरे यह कि उनके यहां जो कुछ था वह भी उनके मानसिक और प्राणिक जीवनसे बहुत दूर है अतः वह पीछे हट गया है। शायद आजकल यह वहां भी वापिस आ रहा है। इसलिये जिन यूरोपीय लोगोंमें आध्यात्मिक अभीप्साकी ओर झुकाव है वे भारतकी ओर मुड़ते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि वे भारतीय लोगोंकी ओर मुड़ते हैं बल्कि यहां संचित आध्यात्मिक शक्तिकी ओर मुड़ते हैं। बहरहाल भारतमें आरंभ करना ज्यादा सरल है।

शिष्य——क्या आध्यात्मिक मार्गमें आनेवाली कठिनाइयोंके साथ संघर्ष करना बाहरकी अपेक्षा भारतमें ज्यादा आसान नहीं है?

श्रीअरविंद——जरूरी नहीं है, और सब नहीं। कुछ ऐसी कठिनाइयां हैं जिन्हें तुम आसानीसे यहां हल कर सकते हो पर कुछ कठिनाइयां हैं जिन्हें हल करनेमें यूरोपमें ज्यादा आसानी रहती है। उदाहरणके लिये यूरोपकी अपेक्षा हिंदूस्तानमें मायावादसे पीछा छुड़ाना ज्यादा कठिन है।

शिष्य——क्या अन्य लोगोंकी अपेक्षा भारतीय अधिक आध्यात्मिक हैं?

श्रीअरविंद——नहीं, ऐसा नहीं है। कोई भी राष्ट्र पूरी तरह आध्यात्मिक नहीं है। भारतीय औरोंकी अपेक्षा अधिक आध्यात्मिक नहीं है लेकिन भारतीय जातिके पीछे पिछला आध्यात्मिक प्रभाव है।

शिष्य——कुछ लोग जो प्रमुख राष्ट्रीय कार्यकर्ता हैं, मुझे यूरोपीय शक्तियोंके भारतमें अवतार मालूम होते हैं।

श्रीअरविंद——हो सकता है अवतार न हों, यूरोपीय विचारसे बहुत अधिक प्रभावित हों, उदाहरणके लिये महात्मा यूरोपीय हैं, सचमुच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतमें रूसी ईसाई और कुछ यूरोपीय शरीरोंमें भारतीय हैं।

शिष्य—महात्माजी यूरोपीय हैं!

श्रीअरविंद—हां, जब यूरोपीय कहते हैं कि वे बहुत-से ईसाइयोंमें ज्यादा ईसाई हैं, कि वे आधुनिक कालके ईसा हैं तो उनकी बात बिल्कुल ठीक होती है। उनकी सारी शिक्षा ईसाइयतसे आती है और जब कि उसे जो रूप दिया जाता है वह भारतीय होता है पर भाव एकदम ईसाइयतका होता है। वे भले ठीक-ठीक ईसा न हों पर उसी धारामें हैं। उनकी शिक्षा अधिकांशतः टॉलसटाय, इंजील और जैन धर्मसे प्रभावित है, बहरहाल भारतीय शास्त्र—उपनिषदों और गीता, जिनकी व्याख्या वे अपनी ही दृष्टिसे करते हैं, उनकी अपेक्षा कहीं अधिक दूसरेसे प्रभावित है।

शिष्य—बहुत-से शिक्षित भारतीय उन्हें आध्यात्मिक पुरुष मानते हैं।

श्रीअरविंद—हां, क्योंकि यूरोपीय उन्हें आध्यात्मिक पुरुष कहते हैं। वे जिस बातका प्रचार करते हैं वह भारतीय आध्यात्मिकता नहीं है। वह रूसी ईसाइयतसे उत्पन्न अहिंसा, कष्ट सहन आदि है।

शिष्य—वे स्वीकार करते हैं कि वे टॉलस्टायसे बहुत प्रभावित थे।

श्रीअरविंद—हां, टॉलस्टाय उनके गुरु थे।

शिष्य—रूसी लोगोंका मिजाज उत्साहपूर्ण और साथ ही दुःखमय और विषादग्रस्त होता है।

श्रीअरविंद—वे बल और दुर्बलताका विचित्र मिश्रण हैं, उनकी बुद्धिमें आवेग होता है, उसे आवेगमना बुद्धि कह सकते हैं। लेकिन उनकी सत्ता उद्विग्न और बेचैन होती है। लेकिन उनमें कोई चीज बहुत कोमल और चैत्य भी है यद्यपि उनकी अंतरात्मा बहुत स्वस्थ नहीं है। इसलिये मेरा यह कहना ठीक नहीं है कि गांधी रूसी ईसाई हैं क्योंकि वे बहुत ज्यादा शुष्क हैं। उनमें बौद्धिक आवेग है, प्रबल नैतिक इच्छा शक्ति है लेकिन वे रूसियोंकी अपेक्षा अधिक शुष्क हैं। पीड़ा सहनके जिस सिद्धांतका वे प्रचार कर रहे हैं वह रूसमें यूरोपके सब देशोंसे अधिक है। अन्य ईसाई जातियां इसपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास नहीं करतीं हैं, वे उसे मंनमें भले रखें पर रूसियोंके तो रक्तमें ही यह है। वे पीड़ा सहनका प्रचार करनेकी भूल करते हैं, हम भारतीय भी इसी तरह वैराग्यका प्रचार करनेकी भूल करते हैं।

शिष्य—शायद महात्माजी नेताके रूपमें यूरोपमें ज्यादा सफल होते।

श्रीअरविंद—अगर तुम्हारा मतलब राजनीतिक नेतासे है तो वे कहीं भी सफल न हो पाते।

शिष्य—लेकिन यूरोप उनके मशीनोंके विरोध और जीवनमें सादगीके विचारको स्वीकार कर लेता।

श्रीअरविंद—मुझे नहीं लगता। बहुतसे लोग मशीनोंके विरोधमें हैं, यद्यपि वे हैं अल्प संख्यामें और उनके हाथमें कोई शक्ति नहीं है, यूरोपमें सादगीका भी एक फैशन रहा है। वे यहां होते तो शायद उसे यूरोपीय रंग दे देते।

शिष्य—और चरखेके बारेमें?

श्रीअरविंद—यूरोपमें ऐसे लोग हैं जिन्हें इसके बारेमें उत्साह है। लेकिन आखिर चरखा मामूली-सी चीज है।

शिष्य—भारतमें ऐसे लोग हैं जो यम, नियम, अहिंसा और सादगीके कारण महात्माजीको आध्यात्मिक पुरुष मानते हैं।

श्रीअरविंद—पातंजलि और गांधी तथा टॉल्सटायके लक्ष्यमें बहुत फर्क है, पतंजलिका लक्ष्य था एक उच्चतर चेतनातक उठना। उनका तरीका था राजसिकके स्थानपर सात्विक प्रकृतिको बिठाना। उसमें नैतिकता या सदाचारका कोई विचार न था और उन्होंने यम नियमको कभी अपने प्रयासका आदर्श नहीं बनाया। उनका लक्ष्य था सामान्य चेतनासे ऊपर उठना और संयमके बारेमें भी उनका विचार नैतिकतापर आधारित न था।

वे आध्यात्मिक प्रयोजनके लिये शक्ति संग्रह करना चाहते थे इसलिये वे सामान्य तरीकेसे अपने बलके अपव्ययको प्रोत्साहन न देते थे।

शिष्य—गीताने चार तरहके भक्तोंकी बात की है—आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी। इसमें अर्थार्थीका मतलब क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—ऐसा भक्त जो किसी अर्थकी पूर्तिके लिये भगवान्‌से मांग करता है।

शिष्य—उदाहरणके लिये जब आप भगवान्‌से भारतकी स्वाधीनता चाहते थे।

श्रीअरविंद—तब मैं अर्थार्थी भक्त था।

शिष्य—या ज्ञानी और अर्थार्थीके मिश्रण।

श्रीअरविंद—नहीं, मेरे अंदर ज्ञान न था। मैं न जानता था कि भगवान् हैं क्या। लेलेसे मिलनेके दो वर्ष पहले मैंने गंभीरतासे साधना शुरू की थी। उन दिनों देशपांडे हठयोग, आसन कर रहे थे, उनमें प्रचारकी भावना थी। वे मुझे भी अपने साथ ले लेना चाहते थे लेकिन मैंने सोचा कि जो योग मुझसे जगत्‌को छुड़वाना चाहता है वह मेरे लिये नहीं है। मुझे अपने देशको स्वतंत्र करवाना था मैंने इसे तब गंभीर रूपसे लिया जब मैंने यह जाना कि जिस तपस्याका उपयोग संसारको छोड़ जानेके लिये किया जाता है उसे क्रियामें बदला जा सकता है। मैंने जाना कि योगसे शक्ति प्राप्त होती है और मैंने सोचा: भला मैं शक्ति प्राप्त करके उसका उपयोग अपने देशको स्वतंत्र करनेमें क्यों न करूं?

शिष्य—भगवान्‌ने चालाकीसे आपकी देशको स्वाधीन बनानेकी इच्छाका उपयोग कर लिया।

श्रीअरविंद—वह समय था जब देश पहले था, मानव जाति बादमें और बाकी सबके लिये कोई जगह न थी। मैंने आध्यात्मिक जीवनमें एक ओरके पार्श्व द्वारसे प्रवेश किया था।

२५-६-१९२६

श्रीअरविंद—(एक शिष्यकी ओर देखते हुए) पिछली बार तुमने कहा था कि कष्ट और दुःखसे शुद्धि होती है क्या तुम कह सकते हो कि कैसे?

शिष्य—जब दुःख-दर्द आता है तो वह आदमीको अपने उपकरणों-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अलग होनेके लिये और उसे अपनी सच्ची आत्माका परिचय प्राप्त करनेके लिये बाधित करता है इसलिये वह शुद्धिका अनुभव करता है और अपनी निम्न प्रकृतिके ऊपर उठनेमें सहायता पाता है।

श्रीअरविंद—यह जरूरी नहीं है कि इस कारण तुम दुःख-दर्दसे अलग हो जाओ, जबतक कि तुम्हारे अंदर उससे हट कर पीछे खड़े होनेकी क्षमता न हो। यह शक्ति दुःख-दर्दके अंदर अंतर्निहित नहीं होती। उन अभागोंका उदाहरण लो जो जेलमें बंद किये जाते हैं। वे दुःख तो पाते हैं पर उससे उनकी शुद्धि नहीं होती, इसके विपरीत वे पहलेसे ज्यादा बिगड़ जाते हैं। मेरे मतानुसार दुःख-दर्द प्रकृतिकी अपूर्णताका चिह्न है। यह वैयक्तिक और वैश्व प्रकृतिपर अपूर्णता-की छाप है। तुम्हें दुःख-दर्दसे दो बातें सीखनी चाहियें, एक तो यह कि वह क्यों है दूसरे यह कि उसे कैसे जीता जाय।

लेकिन अगर तुम उसमें रस लो और ईसाई साधुओंकी तरह उसे निमंत्रण दो—वे चाबुक खाते और उसमें मजा लेते थे—तो मैं इसे पथ विचलन और विकृति कहूंगा।

शिष्य—क्या यह सच नहीं है कि जब हम कष्ट पाते हैं तो भगवान्‌की ओर मुड़ते हैं?

श्रीअरविंद—जरूरी नहीं है। ऐसे लोग हैं जो कष्ट पर कष्ट पाते हैं पर कभी भगवान्‌की ओर नहीं मुड़ते।

शिष्य—रवीन्द्रनाथ ठाकुरका कहना है "दुःख हो या सुख तू जो कुछ दे मैं उसे सिर लेता हूं और समान आनंदके साथ स्वीकार करता हूं।"

श्रीअरविंद—हां, हां, यह ठीक है। यह बहुत ज्यादा भावुकता-पूर्ण है और जरूरी नहीं कि सच हो।

शिष्य—अगर भगवान् मेरे लिये कष्ट भेजें तो मैं किसलिये विरोध करूं?

श्रीअरविंद—मैं विरोध नहीं करता, मैं केवल सीखता हूं। मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न तो भागता हूं न झिझकता हूं। तुम्हें उसे भी उसी तरह देखना चाहिये जैसे जगत्‌की और चीजोंको देखते हो, उदाहरणके लिये पाप और अशुभको लेकिन तुम्हें पाप और अशुभको स्वीकार न करना चाहिये।

शिष्य—लेकिन हर चीज भगवान्‌से आती है।

एक और शिष्य—ईसाई गुह्यवादमें भक्तिकी तीव्रतासे पीड़ाके सुख अनुभव करनेका विचार आया है। वे यही मानते हैं कि हर चीज प्रियतमासे आती है और स्वागतके योग्य है।

श्रीअरविंद—कौन-सी चीज भगवान्‌से नहीं आती? अशुभ और पाप भी तो भगवान्‌से आते हैं, तब उन्हें भी क्यों न अपनाया जाय? पाप और अशुभका भी विश्वमें और विकासमें अपना स्थान है।

लेकिन यह मानव अंतरात्माका विधान नहीं है। मानव जीव यहां कष्ट सहनेके लिये नहीं आया है। गीता आसुरी तपस्याकी बात करते हुए कहती है कि जो लोग दुःख-कष्टको निमंत्रण देते हैं और शरीरके तत्त्वोंको यातना देते हैं वे स्वयं "मुझे", शरीरमें स्थित कृष्णको यातना देते हैं।

जब तुम कहते हो कि सब कुछ भगवान्‌से आता है तो इस बात-को समझदारीके साथ लेना चाहिये। अगर तुम वेदांती चेतनामें रहो तो यह ठीक है। हर चीज भगवान्‌से आती है, इसका दूसरी भाषामें यह अर्थ है कि अनंत अपने-आपको हर चीजमें अभिव्यक्त करता है लेकिन यह जरूरी नहीं है कि यहांपर अनंतकी अभिव्यक्ति दुःख-दर्द और अशुभका रूप ले।

शिष्य—मान लीजिये कि मैं यह वृत्ति अपनाऊं कि हर चीज भगवान्‌से आती है तो क्या मैं आध्यात्मिक प्रगति न कर सकूंगा?

श्रीअरविंद—तुम ऐसी कोई भी वृत्ति अपना सकते हो जो तुम्हें आध्यात्मिक लाभ पहुंचाये। उदाहरणके लिये जब दुःख-दर्द आये तो तुम यह मान सकते हो "मुझे यह स्पर्श मिला है, मैं जानता हूं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि यह किस कारणसे आया है, मुझे इससे पिंड छुड़ाना चाहिये।"

यह ईसाईयोंकी तरह दुःखमें मजा लेनेसे बहुत भिन्न है। अनंतकी गतिमें शुभ और अशुभ, दुःख और सुख दोनों हैं यानी उच्चतर और निम्नतर गतियां हैं! अगर तुम निम्नतरको बुलाते हो, उसमें मजा लेते हो तो तुम ऐसा कर सकते हो! अगर तुम दुःख चाहते हो, भगवान् तुम्हें प्रचुर दुःख दे सकते हैं लेकिन इससे तुम उसके ऊपर न उठ सकोगे।

शिष्य—साधारणतः दुःख तभी आता है जब मनुष्यके अंदर कोई चीज उसमें मजा लेती है।

श्रीअरविंद—हां, निश्चय ही। जब त्याग भी किया जाता है तब भी प्राण और भौतिकके अंदर कोई बहुत ही अंधकारमय वस्तु उसमें आनंद लेती है।

शिष्य—मैं अनंतकी एक गतिको क्यों स्वीकार करूं और दूसरीको अस्वीकार? इसकी कसौटी क्या है?

श्रीअरविंद—ज्ञान ही कसौटी है। तुम उन गतियोंको स्वीकार करो जो तुम्हारे विकासमें सहायक हों, और तुम्हें दिव्य चेतनामें मुक्त करें और उन गतियोंको त्याग दो जो तुम्हें नीचेकी ओर बांध देती हैं।

शिष्य—और अगर मैं दुःखको सुखमें बदल दूं?

श्रीअरविंद—तब वह पीड़ा नहीं रहती। वह तो आनंदकी एक अनुभूति हो जाती है। दुःख और आत्म बलिका यह विचार आसुरी प्राण-लोकसे आता है जहां दुःख-दर्द ही विकासका नियम है और आसुरी प्रभाव ही उसे मानव जातिपर डालता है।

शिष्य—क्या दुःख-दर्द और अशुभ भी समस्त अभिव्यक्तिके विधान नहीं हैं?

श्रीअरविंद—बिल्कुल नहीं, यह हमारे विकासकी "एक परिस्थिति" मात्र है। ऐसे लोक भी हैं जहां दुःख-दर्दके तत्त्वका प्रवेशतक नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

यूथ कैम्प रिपोर्ट

(प्रेषक देवेशचन्द्र द्विवेदी)

श्रीअरविंद सोसायटी पांडिचेरी द्वारा प्रति वर्षकी भांति युवा शिविरका आयोजन दिनांक २२.१२.८७ से २.१.१९८८ तक किया गया।

विभिन्न प्रान्तोंसे आये हुये सम्मिलित सदस्योंको आपसमें सभी-की भेंट होनेके साथ-साथ भारतकी विविधतामें एकताको तथा आपसी सौहार्दको सभीने हृदयसे अनुभव किया, सभीमें अपने-अपने विचारोंसे एक दूसरेको अवगत कराते हुए ज्यादा-से-ज्यादा ज्ञान पानेकी अभीप्सा या ललक थी।

श्रीमां एवं श्रीअरविंदकी योग-शिक्षाके संबंधमें विस्तृत रूपसे चर्चामें सभीने भाग लिया तथा श्रीमांकी शिक्षाके अनुसार कर्म योगमें विश्वासको और अधिक दृढ़ करनेकी दिशामें सभीने सक्रिय क्रिया-कलापोंमें भाग लिया जिनमें मुख्यतः योग आसन, शारीरिक व्यायाम, पुष्प प्रदर्शनी, प्रकृति सौंदर्यबोध, संस्कृत शिक्षा, बच्चोंकी शिक्षा एवं उनके विकासके संबंधमें, पुरातन कला, सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा संगीत आदिपर श्री विजय भाईने विभिन्न प्रकारकी योजनाओं तथा विचारोंको क्रियान्वित करनेकी दिशामें अपना पूर्ण सक्रिय सहयोग प्रदान किया तथा पूरे शिविरके समय उन्होंने युवा पीढ़ी, जो कि भविष्यका आधार है, को श्रीमां एवं श्रीअरविंदकी शिक्षा एवं प्रेरणा-के अनुसार अपने जीवनको तद्स्वरूप बनाते हुए किस प्रकारसे हम अपने कर्मके साथ-साथ मानव सेवा कर सकते हैं, इस संबंधमें बताया।

शिविरमें विभिन्न विषयोंपर श्रीअरविंद आश्रम एवं श्रीअरविंद सोसायटीके विभिन्न साधकोंकी वार्ताएं एवं चर्चा आयोजित की गई जिनसे कि निश्चित रूपसे सामूहिक तौरपर सभीको श्रीमां, श्रीअरविंदके

(शेष, आवरण ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

SRI AUROBINDO

*
**

Assam Tea Warehousing Corporation

Registered and approved Ware House

at Gauhati (Assam)

H. O. 8, Camac Street, Room No. 7,

Shantiniketan Building,

CALCUTTA - 700 017

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in his Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

अप्रैल १९८८ वर्ष १८, अंक ९, पूर्णांक २१३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश (सबसे कहना चाहिये)
'संपादकीय' : किसका मूल्य ? अनुबेन
दैनन्दिनी
मनुष्यका मन
सोसायटी समाचार

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

संदेश

सबसे कहना चाहिये

अपनी कृतज्ञता जतानेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि हम अपने अंदर अहम्‌को जीतें और इस रूपांतरके लिये सतत प्रयास करते रहें। मानव अहम् गद्दी छोड़नेसे यह कहकर इंकार करता है कि दूसरे लोग रूपांतरित नहीं हुए हैं। लेकिन वही तो दुर्भावनाका गढ़ है। प्रत्येकका कर्तव्य यही है कि दूसरे क्या करते हैं उसकी चिंता किये बिना अपने-आपको रूपांतरित करे।

अगर मनुष्यको पता चले कि सतत शांति और आनंद पानेका एकमात्र उपाय है यह रूपांतर, अहम्‌का यह नाश, तो वह आवश्यक प्रयास करनेके लिये तत्पर होगा यही वह दृढ़ विश्वास है जो उनमें जागना चाहिये।

प्रत्येकसे बार-बार कहना चाहिये : अपने अहम्‌का नाश करो और तुम्हारे अंदर शांतिका राज्य होगा।

भागवत सहायता सच्ची अभीप्साको हमेशा प्रत्युत्तर देती है।

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

किसका मूल्य ?

बहुत पुरानी कहानी है जिसे याद कर अनेक प्रश्न मनकी पृष्ठ-भूमिपर उभरते हैं।

किसी अनिश्चित भूतकालमें एक सच्चरित राजा थे। उनका मंत्री स्वामिभक्त और राष्ट्रका शुभचिंतक था। उनके राज्यमें एक धीवर कन्याके सौंदर्यकी इतनी ख्याति फैली कि स्वयं महाराजके कानोंतक जा पहुंची। उन्हें अपने मंत्रीपर अटल विश्वास था अतः उस कन्या-को देखने और जांचनेके लिये उन्हें भेजा। जब मंत्रीने धीवरपुत्री उन्मादिनीको देखा तो उनकी सौंदर्यसे अभ्यस्त आंखें भी चौंधिया उठीं। वे अपने साथ राज ज्योतिषीको भी लिवा ले गये थे क्योंकि कन्याके ग्रह-नक्षत्रोंको जांचना भी आवश्यक था।

ज्योतिषिने कहा कि इस युवतीके भाग्यमें महलोंमें निवास लिखा है। मंत्रीवर बड़े घबराये, सोचने लगे, "ऐसी अनुपम सुन्दरीके मोहमें महाराज राजकाज भुला बैठेंगे, इसलिये ऐसी कुछ फांस डालनी चाहिये जिससे राज्य दुर्गतिसे बच जाय", उन्होंने अपना विचार ज्योतिषीको बताया और उनसे सहायता मांगी। महाराजने ज्योतिषी-को उनके सत्य भाषी होनेके कारण भजा था अतः बचारे ज्योतिषी धर्म-संकटमें पड़ गये। उन्होंने असत्यका सहारा लेनेसे इंकार किया।

मंत्री थे वाक्पटु, उन्होंने राष्ट्रके हितपर ऐसे भाव विह्वल होकर भाषण दिया कि ज्योतिषी पसीज गये और उन्होंने महाराजसे कहा कि यद्यपि धीवर कन्या उन्मादिनी, अद्वितीय सुन्दरी है किंतु उसके अंगपर कुछ लक्षण राज्यके लिये अशुभ हैं इसलिये वे उसे महाराजके योग्य नहीं मानते। महाराजने आदेश दिया कि उन्मादिनीका ब्याह उनके सेनापतिसे किया जाय। महाराजके आदेशको सिर आंखोंपर रख कर सेनापतिने उन्मादिनीसे विवाह तो कर लिया किंतु उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखते ही वे समझ गये कि कहीं दालमें काला है अन्यथा इस कन्याका स्थान तो राज सिंहासनपर होना चाहिये। सेनापतिने उसे अपनी बहनकी तरह घरमें रखा। कुछ महीने यूं ही बीत गये, एक दिन महाराज मृगयासे लौटते समय सेनापतिके निवासकी ओरसे आ रहे थे कि उनकी दृष्टि अट्टालिकापर अपने केश सुखाती अति सुन्दर रमणीपर पड़ी। उन दिनों राजा, श्रेष्ठी आदि अनेक विद्याओं-के धनी होते थे। उस सुन्दरीको देख कर, उसके अंगोंके शुभ लक्षण निहार राजा चकित रह गये। पूछ ताछ करवाई तो पता चला कि वह तो सेनापतिकी पत्नी धीवर कन्या उन्मादिनी है। महा-राजको झट धीवर कन्या और ज्योतिषीकी उसके विषयमें दी गयी राय याद हो आई। उन्हें षडयंत्रकी गंध आयी और उन्होंने तुरंत ज्योतिषीको बुलाकर बारीकीसे पूछ-ताछ की। बेचारेने मंत्रीकी सलाहके बारेमें सब कुछ उगल दिया और वे अपने असत्य भाषणको स्वीकार करके कांपने लगे। महाराजने उसी समय मंत्रीको बुला भेजा और उनके अपराध स्वीकार करते ही उन्हें अपने राज्यसे निष्कासित कर दिया। सेनापति यह सब सुनकर महाराजके पास आये और उन्हें बताया कि पाणि-ग्रहणके बाद उन्मादिनीको देखते ही वे समझ गये कि उसके भाग्यमें राज-योग है इसलिये उन्होंने उसे महाराजकी धरोहरके रूपमें संजोकर अपनी बहन मानकर रखा है। उन्होंने महाराजसे प्रार्थना की कि वे उसे पत्नीके रूपमें अपनाएं। किंतु महाराजको यह स्वीकार न था। दूसरी ओर वे उन्मादिनीको एक क्षणके लिये भी भूल न पाते थे। कुछ ही दिनोंमें वे अस्वस्थ हो गये, इतने अस्वस्थ कि बिस्तर छोड़ना असंभव हो गया। सेना-पति बार-बार अनुरोध करते परंतु महाराज अन्य पुरुषकी पत्नीसे संबंध रखना अनुचित समझते थे उनका इसी चिंतामें देहांत हो गया। सेनापति अपने स्वामीकी इस चरित्र निष्ठासे इतने प्रभावित हुए कि उसी समय उनके प्राण पंखेरु उड़ गये और उन्मादिनी भी पीछे न रह सकी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे युगमें इस कहानीका मर्म समझनेवाले कम ही होंगे। प्रश्न फिर भी यही उठता है कि जिस राष्ट्रमें अपने मूल्योंके लिये, अपने चरित्र-की रक्षाके लिये मनुष्य प्राणोत्सर्ग करते आये हैं उस राष्ट्रमें आज इतना पतन कैसे हो गया कि किसीको अपने पतनपर ग्लानितक नहीं होती, पतातक नहीं लगता कि वह गिर रहा है।

अगर ऐसा न होता तो क्या इतना भ्रष्टाचार, काला धन, हर तरहकी बेईमानी, धोखाधड़ी बेहिसाब चलती रह सकती!

इसके लिये सरकार नहीं हम स्वयं जिम्मेदार हैं। हमें अपने अंदर झांकना होगा, अपने-आपसे पूछना होगा कि हमारे लिये किस चीजका मूल्य है, धन-संपत्ति, पदवी, अधिकार, यश इत्यादिका या अपने ऊपर प्रभुत्व पाने, भगवान्‌को प्राप्त करनेका!

—अनुबेन

दैनन्दिनी

अप्रैल

१. समस्त शिक्षा एक रहस्यका उद्‌घाटन होती है। सारा संभवन एक खिलना होता है। आत्म-प्राप्ति उसका मर्म है; आत्म-ज्ञान और बढ़ती हुई चेतना उसके माध्यम और प्रक्रिया हैं।

२. शास्त्रोंको पढ़ना काफी नहीं है, न ही दर्शनके जोरपर तर्क-द्वारा भगवान्‌को बौद्धिक रूपसे समझना काफी है; क्योंकि अपनी लंबी मानसिक मेहनतके बाद हम, शाश्वतके बारेमें जो कुछ कहा गया है वह सब जान लेंगे, असीमके विषयमें जो सोचा गया है, वह जान लेंगे फिर भी हम उन्हें बिल्कुल न जान पायेंगे।

३. प्रभु, हम तुमसे निवेदन करते है कि हमारे अंदर कुछ भी तुम्हारी उपस्थितिको अस्वीकार न करे और हम वही बनें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो तुम चाहो कि हम बनें; वर दो कि हमारे अंदर सब कुछ तुम्हारी इच्छाका समर्थन करे।

४. सुखी और सफल जीवनके लिये पहली शर्त यह है कि तुम्हें व्यक्तिगत स्वार्थको अपना लक्ष्य न बनाना चाहिये।
साहस, हिम्मत और अध्यवसाय सर्व प्रथम गुण हैं जिनकी इनके लिये आवश्यकता है।

५. तुम्हें सचेतन रहना चाहिये कि तुम जो जानते हो, वह कुछ भी नहीं है उसकी तुलनामें जो तुम्हें जानना चाहिये, कि तुम्हें जो करना चाहिये उसकी तुलनामें तुम जो करते हो वह कुछ नहीं है, कि तुम्हें जो होना चाहिये उसकी तुलनामें तुम अभी कुछ भी नहीं हो।

६. तुम्हारे स्वभावमें जिस चीजकी कमी है उसे पानेके लिये, जो अभी जानते नहीं उसे जाननेके लिये, जो अभीतक कर नहीं पाते, उसे करनेके लिये तुम्हारे अंदर निरपवाद इच्छा-शक्ति होनी चाहिये।

७. मनुष्यको हमेशा, व्यक्तिगत कामनाओंके अभावसे जो प्रकाश और शांति आती है, उसमें प्रगति करनी चाहिये।

८. डटे रहो और जो तुम आज नहीं कर पाते उसे कल कर पाओगे।

९. अगर चेतनाकी वृद्धिको जीवनका मुख्य लक्ष्य मान लिया जाय तो बहुत सारी कठिनाइओंका समाधान मिल जाएगा।

१०. बुढ़ापेसे बचनेका उत्तम उपाय यही है कि प्रगतिको अपने जीवनका लक्ष्य बनाया जाय।

११. हमें पूरी सच्चाईसे उसीकी चाह करनी चाहिये जो भगवान् हमारे लिये चाहें, यही जीवनमें शांति और सुखकी पहली शर्त है।

१२. जीवनमें मनुष्य जिस दृष्टिकोणको अपनाते हैं उसके अनुसार चार विभिन्न कोटियोंमें उनका वर्गीकरण किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१—वे मनुष्य जो केवल अपने लिये जीते हैं। हर वस्तुको अपने संबंधमें ही तौलते हैं और उसके अनुसार कार्य करते हैं। अधिकतर मनुष्य ऐसे ही हैं।

१३. २—मनुष्य जो अपना प्रेम किसी अन्य मानव सत्ताको अर्पित करते हैं और उसके लिए जीते हैं। उनके प्रेमका परिणाम उस व्यक्तिपर निर्भर होता है जिसे वे प्रेम करनेके लिए चुनते हैं।

१४. ३—वे मनुष्य जो किसी कार्यके द्वारा मानव जातिकी सेवामें अपने जीवनका उत्सर्ग करते हैं जिसमें व्यक्तिगत संतोष नहीं बल्कि वे दूसरोंके लिये उपयोगी बनना चाहते हैं, हिसाब-किताब-के बिना अपने कार्यसे किसी तरहके व्यक्तिगत लाभके बिना, दूसरोंकी सहायता करते हैं।

१५. ४—वे मनुष्य जो अपने-आपको पूरी तरह भगवान्‌को देते हैं, केवल उनके लिये जीते हैं, उनके द्वारा जीते हैं। इसका अर्थ है उन्हें खोजनेका जरूरी प्रयास करना, उनकी इच्छाके बारेमें सचेतन होना, ऐकांतिक रूपसे उन्हींकी सेवामें लगे रहना।

१६. हमारी चेतनाकी ऐसी खिड़कियां हैं जो असीमकी ओर खुलती हैं, सामान्य मनुष्य उन्हें सावधानीसे बन्द रखते हैं। हमें उन्हें पूरी तरह खोलकर असीमको अपने अंदर प्रवेश करने देना चाहिये ताकि वह हमारा रूपांतर करे।

१७. मानव चेतना इतनी भ्रष्ट है कि भगवान्‌को सच्चा निष्कपट समर्पण करनेसे जो उज्ज्वल आनंद प्राप्त हो सकता है, उसकी जगह वह अहम्‌के दुःख-दर्द और उसके अज्ञानको पसंद करती है।

१८. मनुष्यका अंधापन इतना विराट है कि वे परीक्षण करनेसे भी इंकार करते हैं और दुःखोंसे छूटनेका प्रयास करनेकी जगह दुःखोंके अधीन रहना पसंद करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९. अपनी चैत्य सत्ताको खोजना आरंभ करनेका तुम्हारे लिये सबसे अच्छा उपाय यह है कि तुम उसे अपनी सारी आंतरिक गतिविधियोंका साक्षी बनाओ और तुम्हें क्या करना या न करना चाहिये उसका निर्णायक भी उसे बनाओ। उसके निर्णयोंके अनुसार अपनी बाह्य प्रकृतिको उसका अनुवर्ती बनानेका प्रयास करो।

२०. नीरवतामें अधिक ग्रहणशीलता होती है और स्थिर नीरवतामें बड़े कार्य किये जाते हैं।

२१. हम नीरव रहना सीखें ताकि प्रभु हमारा उपयोग कर पायं।

२२. प्रकृति जटिल है और उसमें हमेशा अच्छा और बुरा, सच्चा और झूठा मिला हुआ रहता है। अपने दोष और कमजोरियोंको स्पष्ट देखना बहुत उपयोगी है; किंतु केवल उन्हींको न देखना चाहिये, यह तो एक तरफा दृष्टि होती होगी।

२३. तुम्हें अपने अंदर जो अच्छा और सच्चा है, उसे भी देखना चाहिये और उसपर पूरा ध्यान देना चाहिये ताकि तुम्हारा यह अच्छा और सच्चा पक्ष विकसित हो सके और अंतमें बाकी सबको आत्मसात् कर प्रकृतिका रूपांतर कर पाय।

२४. ऐसा कोई भी नहीं है जिसके लिये भगवान्‌को प्राप्त करना असंभव हो। केवल कइयोंको प्राप्तिमें अनेक जन्म लग जाएंगे और दूसरे इसी जन्ममें प्राप्त कर पाएंगे।

२५. तुम जितने पूर्ण हो उससे अधिक पूर्ण होनेका तुम्हें ढोंग नहीं रचना चाहिये और झूठे दिखावेसे तो बिल्कुल संतुष्ट न रहना चाहिये।

२६. अपनी प्राणिक सत्ताको विकसित करने, उसपर अधिकार पानेके लिये, कामनाओंपर विजय प्राप्त करनेकी इच्छासे अपनी गतिविधियों और प्रतिक्रियाओंका सावधानीसे निरीक्षण करो। अपनी चैत्य सत्ताको पाने और उससे एक होनेकी अभीप्सा करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७. प्रगतिके लिये अभीप्सा होनी चाहिये; तुम जो हो, जैसे हो, जो कुछ करते हो, जो कुछ जानते हो या मानते हो कि तुम जानते हो उस सबसे संतुष्ट न रहना चाहिये बल्कि तुम्हें किसी और चीजके, ज्यादा अच्छी वस्तुके, अधिक प्रकाशके, बृहत्तर चेतनाके, अधिक सच्चे सत्यके और वैश्व सद्भावनाके लिये सतत अभीप्सा करनी चाहिये।

२८. हे प्रभो! मैं विनती करती हूं, मुझे ऐसा वर दे कि मैं इस व्यक्तित्वमें जितने तत्त्व हैं उन सबके बारेमें संपूर्ण रूपसे सचेतन बनूं और उनपर अधिकार पाऊं ताकि मैं अपने-आपसे मुक्त हो जाऊं और केवल तू ही इन बहुसंख्यक तत्त्वोंका स्वामी बने और तू ही उनमें जीये।

२९. प्रभु, मैं चाहती हूं कि तुम्हारे सामने हमेशा एक कोरा कागज बनी रहूं ताकि तुम्हारी इच्छा मुझमें बिना झंझटके, बिना मिलावटके लिखी जाय।

३०. हम यहां जिसे निर्वाण समझते हैं वह है परम प्रभुकी भव्यता-में अहम्का विलोपन। इस मार्गको मैं रचनात्मक मार्ग कहती हूं। वह ऐसा आत्म-दान है जो सर्वांगीण, समूचा, संपूर्ण, बिना अलग रखे, बिना सौदेबाजीके होता है।

अपने बारेमें न सोचनेके तथ्यमें ही, अपने लिये न जी कर, अपने साथ किसी चीजका संबंध न जोड़कर, केवल उसीका सोचनेमें जो उत्तम रूपसे सुन्दर, ज्योतिर्मय आनंददायक, शक्तिशाली, करुणामय और शाश्वत है, हमें ऐसा गभीर आनंद प्राप्त होता है कि उसकी तुलना किसी चीजसे नहीं की जा सकती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्यका मन

(गतांकसे आगे)

शिष्य—क्या द्वित्त अभिव्यक्तिका आवश्यक विधान नहीं है?

श्रीअरविंद—नहीं, यह भी "परिस्थिति" है हमारे विकासकी। द्वित्त अज्ञानमें अपूर्ण उपकरणोंद्वारा अनंतको अभिव्यक्त करनेका एक उपाय है। उदाहरणके लिये अतिमानस और अतिमानसिक जगत्में दुःख-दर्द, द्वित्त आदिका प्रवेश तक नहीं हो सकता क्योंकि वहां इनकी कोई संभावना ही नहीं है।

दुःख-दर्द और पीड़ा क्या है? पीड़ाका अर्थ है कि चेतना अमुक शक्तियोंके संस्पर्शको नहीं सह सकती, उसे आत्मसात् नहीं कर पाती क्योंकि मेरे अंदर वह नहीं है जिसे वेदकी भाषामें ऋतम् कहते हैं—चेतनाकी सच्ची या उचित गति। भौतिक दर्दको ले लो। वह क्या है? कोई शक्ति मेरे पास आती है, मैं उसे पकड़ नहीं पाता, उस-पर अधिकार नहीं कर पाता, उसके संपर्कको नहीं सह पाता और उसे आत्मसात् भी नहीं कर पाता तो उसकी प्रतिक्रिया होती है पीड़ा। अगर उस स्पर्शका सामना करनेके लिये पूरी शक्ति या पर्याप्त शक्ति होती तो दर्द न होता। जिसे भ्रांति, अशुभ, या पाप कहा जाता है उसके बारेमें भी यही बात है, वास्तवमें अनंत आनंद यहां द्वित्तमें, पीड़ामें विकृत हो जाता है परंतु पीड़ा अनंत आनंदमें प्रवेश नहीं कर पाती, वैसे ही जैसे शुभ और अशुभकी धारणाएं अनंत शक्तिमें या भ्रांति अनंत ज्ञानमें नहीं घुस पाती।

भ्रांति है और मेरे अंदर घुस आती है क्योंकि मैं उस ज्ञानमें प्रवेश करनेमें असमर्थ हूं जो मेरे पास उस रूपमें आता है। मैं उसमेंसे ज्ञानको निकाल कर उसे आत्मसात् करनेमें असमर्थ हूं। अशुभके बारेमें भी यही बात है।

शिष्य—लेकिन संसारमें पीड़ा है ही क्यों?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद––बात यह है कि अनंत निश्चेतनामें अपनी एक प्रतिमा बनाते हैं––तुम कह सकते हो निर्ज्ञानमें भी––और अपनी अनंत शक्तिके दबावकी सहायतासे उसमें उच्चतर और उच्चतम ज्ञानकी कोटियोंको प्रकट करनेकी कोशिश करते हैं, यहांतक कि वह भगवान्‌तक पहुंच जाय। यह इसलिये होता है क्योंकि अनंतके आगे अनंत संभावनाएं हैं और उनमें सभी किसी-न-किसी समय चरितार्थ अवश्य होंगी। यह विश्व तो उनमेंसे एक संभावना है। अगर तुम पूछो कि वह क्यों इसकी रचना करते हैं तो हमें यह कहना पड़ेगा कि "क्योंकि यह संभव है इसलिये हम यह कहनेके लिये बाधित होते हैं कि वे उसे लीलाके लिये करते हैं।"

यह उचित नहीं है कि हम भगवान्‌से आशा करें कि वे उन्हीं हेतुओंसे कार्य करें जिनसे मनुष्य करते हैं, अगर तुम मानव अर्थोंमें 'क्यों' और 'किस हेतु' पूछो तो इसका कोई उत्तर नहीं है।

शिष्य––आपने कहा था कि आसुरी स्तर या जगत्‌से पीड़ाका भाव आता है, आपने यह भी कहा था कि पीड़ा ही उनके विकासका विधान है। तो क्या पीड़ा एकमात्र विधान है?

श्रीअरविंद––दो जगत् हैं, एक दिव्य दूसरा आसुरी। दिव्य जगत् सामंजस्य और रमणीय सौंदर्यका जगत् है जहां हर चीज व्यवस्थामें रहती है, तुम उसे 'आदर्शोंका जगत्' कह सकते हो, स्वाधीनताका जगत् यानी सत्य, शक्ति और आनंदकी मुक्त गतियोंका जगत्। लेकिन उसे यहां धरतीपर चरितार्थ करना संभव नहीं है। दूसरी ओर है आसुरी जगत् जो शक्तिका, उग्र और कठोर शक्तिका जगत्, अपने-आपको बहुत बढ़ाने-चढ़ानेका, आत्म-पीड़नका, अपने-आपकी बलि देनेवाला जगत् है। वहां सामंजस्य नहीं है। वह संघर्ष, कलह और संग्रामसे गति करता है। असुर पीड़ाद्वारा, जिसे गीता "आसुरी तप" कहती है, उसके द्वारा, उग्र साधनोंद्वारा, अपने-आपको यातनाएं देकर अपनी शक्ति बढ़ाता है और इस तरह देवोंकी शक्तितक पहुंचनेकी कोशिश करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—देवों और असुरोंके बीच मानव जातिकी बुरी हालत है क्योंकि देवोंकी पूर्णता यहां धरतीपर चरितार्थ नहीं हो सकती, न वह इस जगत्का विधान है। दूसरी ओर आसुरी आवेग और प्रवृत्तियां तो हमारे पीछे हैं ही।

श्रीअरविंद—यही तो देवासुर संग्राम है जिसका सभी धर्मोंने चित्रण किया है।

शिष्य—धर्म कहते हैं, तुम देवोंका अनुसरण करो तो सुरक्षित रहोगे।

श्रीअरविंद—यह इतना सरल नहीं है। यह देवोंके लिये बहुत अच्छा हो सकता है पर मनुष्यके लिये नहीं क्योंकि देव उनके अपने ही लोकमें आनंदकी कामना करेंगे जैसे असुर अपने लोकमें। योग-की एक स्थितिमें तुम इन दोनों लोकोंको स्पष्ट देख सकते हो और उनसे आनेवाली प्रेरणाओं और आवेगोंको पहचान सकते हो लेकिन अगर तुम यहांपर सत्यको अभिव्यक्त करना चाहो तो तुम्हें और भी ऊंचे लोकमें चढ़ना होगा जहांसे देवों और असुरोंके लोक अपना सत्य पाते हैं। जब मैं दिव्य लोककी बात करता हूं तो उसका मत-लब महत्तर देवोंसे नहीं होता। दैवी और आसुरी जगत्, दोनों साधकोंको सीधी आध्यात्मिक चढ़ाईसे भटका देते हैं।[1]

शिष्य—आपने पीड़ाके कारण शक्तिके बढ़नेकी बात कही। मेरा ख्याल है कि यह उसी तरह है जैसे शारीरिक प्रतिक्रियाओंमें होता है। जब शरीरके अंदर कोई विष या जीवाणु प्रविष्ट किया जाता है तो सारा शरीर यूं प्रतिक्रिया करने लगता है कि रोगको मारनेके लिये

---

[1] यहां सच्चे देवोंकी बात नहीं है। ध्यान रहे कि बहुत प्रकारके छोटे-बड़े देव होते हैं जो चेतनाके अनेक स्तरोंपर रहते हैं। इनकी पूजा मनुष्योंको निचले लोकमें बांध देती है और मानसिक, प्राणिक और भौतिक चेतनासे परे उच्चतर चेतनाकी ओर चढ़नेमें बाधा देती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकतासे अधिक ऐंटी टाक्सीन और ऐंटी जर्म पैदा होने लगते हैं।

श्रीअरविंद—परंतु यह दुःख-दर्द या पीड़ाका उदाहरण नहीं है, यह संघर्षका विधान है। यह जानी हुई बात है कि कुछ हदतक लड़ाई मनुष्यकी शक्तिको बढ़ाती है परंतु पीड़ाकी बात कुछ और है।

शिष्य—लेकिन अगर हमें दुःखको अस्वीकार करना है तो साथ ही हमें सुखको भी तो अस्वीकार करना चाहिये क्योंकि वह भी तो अपूर्ण है।

श्रीअरविंद—हां, इसीलिये तो गीता कहती है कि तुम्हें राग द्वेष दोनोंको, अज्ञान और आंशिक ज्ञानको त्यागना चाहिये और इस द्वन्द्वके परे सच्चे आनंदकी ओर जाना चाहिये। यहां सुख-दुःख दोनों उसका गलत प्रतिनिधित्व करते हैं।

शिष्य—बंगालमें एक शैव संप्रदाय है जो अपने शरीरको बहुत अधिक यातना देता है। शायद वे सोचते हैं कि इससे उन्हें अधिक पुण्य लाभ होगा।

श्रीअरविंद—भारतीय वैरागियोंका शरीरको कष्ट देनेका भाव वही नहीं है जो ईसाइयोंका है। भारतीय पीड़ाद्वारा आत्म-शुद्धि नहीं चाहते। वे शरीरपर अधिकार पाना चाहते हैं, कि शरीर वही करे जो आत्मा उससे करवाना चाहे। तपश्चर्याके पीछे यही भाव था। आध्यात्मिक विकासमें सदा ही भारतीय विचारकी आत्म-संयमकी प्रवृत्ति रही है। शुरूमें ही बुद्धका विचार था कि जगत्से दुःख-दर्द और अशुभको जड़से उखाड़ फेंके। लेकिन उन्होंने कहा कि यह धरतीपर रह कर नहीं किया जा सकता। इसके लिये तुम्हें निर्वाणमें जाना होगा। भारतीय वैरागीका आत्म-पीड़न उग्र आसुरी रीति तथा आत्म-इच्छा द्वारा शरीरपर बहुत बड़ी प्राणिक शक्ति आरोपित करके शरीरपर प्रभुता प्राप्त करनेके प्रयासद्वारा किया जाता था। इसमें एक हदतक शरीरके लिये तिरस्कार भाव भी था, उन बाधाओं और सीमाओंके कारण जो शरीर आत्मापर आरोपित करता है, यह उस दासताके विरुद्ध उग्र विद्रोह था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—ईसाई भाव है "भाग्यवान् हैं वे जो शोक मनाते हैं क्योंकि उन्हें आश्वासन मिलेगा।" शायद वे यहां जितना कष्ट सहते हैं उसके अनुपातमें स्वर्गमें पुरस्कार पाते हैं।

श्रीअरविंद—इसमें इतना हिसाब नहीं है। इसका मतलब यह है कि जब तुम ज्यादा दुःखी होते हो तो तुम ज्यादा कृपा पाते हो यह एक ऐसा अवसर है जो भगवान् तुम्हें अपने-आपको मुक्त करने-के लिये भेजते हैं। उनके अनुसार मुक्ति क्रूसमें है—वस्तुतः वह मुक्तिका प्रतीक है।

शिष्य—हम देखते हैं कि ईसाइयोंमें भी अलग-अलग विचारोंवाले लोग हैं। उदाहरणके लिए 'क्रिश्चियन सायंटिस्ट' तो दुःखके अस्तित्व-से ही इंकार करते हैं। उनके अनुसार यह एक भ्रम है, अगर हम उसे अस्वीकार करें तो वह गायब हो जायगा।

श्रीअरविंद—बात ठीक है, लेकिन केवल मनमें अस्वीकार करना काफी नहीं है, सारी सत्तामें उसे अस्वीकार करना होगा।

शिष्य—एक आदमीके बारेमें कहा जाता है कि उसपर नागके विषका असर न होता था। क्या यह संभव है?

श्रीअरविंद—हां, यह संभव है लेकिन तब जब तुम उसे केवल मनसे नहीं, भौतिक चेतनासे भी अस्वीकार कर दो। तुम उसे मनसे तो अस्वीकार करते हो लेकिन तुम्हारा शरीर 'ओह, ओह।' करता रहे तो।

शिष्य—लेकिन क्या यह ज्यादा अच्छा न होगा कि दुःखसे इंकार करनेकी जगह हम दुःखके कारणका पता लगा कर उसे जड़से उखाड़ फेंकें, तब दुःख गायब हो जायगा।

श्रीअरविंद—और दुःखका कारण क्या है?

शिष्य—अगर मेरे पेटमें दर्द हो रहा है तो इसका कारण यह हो सकता है कि मैंने ज्यादा खा लिया हो।

श्रीअरविंद—यह सच है कि अधिक खानेसे बचनेपर तुम्हारे पेटमें दर्द न हो पर फिर भी पेटमें दर्द तो हो ही सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो तुम कह रहे हो उसका मतलब होगा तुम्हारी प्रकृतिके विधान-का पता लगाना और उसे बनाये रखना। दो तरीके हैं: एक है आज्ञापालन, दूसरा है प्रभुत्व। तुम जो बता रहे हो वह आज्ञापालन-का तरीका है। जबतक तुम सामान्य स्तरपर रहो तबतक यह बिल्कुल सच है लेकिन मैं इस बारेमें उच्चतर आध्यात्मिक दृष्टिकोणसे बात कर रहा हूं।

शिष्य—पीड़ाको आनंदमें रूपांतरित कैसे किया जा सकता है?

श्रीअरविंद—शुरूमें हम दो तरीकोंसे पीड़ासे लाभ उठा सकते हैं। एक तो हम उसे सहना सीखते हैं, दूसरे हम अपने अंदर किसी ऐसी चीजको पाते हैं जिसे दुःख नहीं सहना पड़ता।

इस अलगावके बाद हम उसे आनंदमें रूपांतरित करना सीख सकते हैं, पहली अवस्थामें सत्ताका एक अंश दुःखसे अलग खड़ा रहता है और उसमें मजा लेता है। दूसरी स्थितिमें अलग सत्ताका आनंद दुःखमें प्रवेश करता है और अंतमें केवल तीव्र आनंद रह जाता है, दुःख उसमें रूपांतरित हो जाता है।

(यहां विषय बदल गया)

शिष्य—कहते हैं कि तिब्बतमें एक हस्तलिखित पुस्तक मिली है जिसमें लिखा है कि ईसा हिंदुस्तान आये थे, यहां बौद्ध धर्म सीखा और फिर यरुसलम लौटकर उसका प्रचार करने लगे।

श्रीअरविंद—यह बहुत पुरानी कहानी है और शायद किसी रूसीकी ईजाद है। जब मैं इंग्लैंडसे लौटा था तभी मैंने सुनी थी।

शिष्य—ईसाके बारेमें इतनी परस्पर विरोधी बातें फैली हुई हैं, कोई कुछ भी प्रमाणित नहीं कर सकता। कुछ विद्वान् ईसाके होनेमें भी शंका करते हैं!

श्रीअरविंद—इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि ईसा हुए भी थे या नहीं। जिस चीजके साथ उनका नाम जुड़ा है, वह तो है ही।

शिष्य—क्या यह संभव है कि मानव जातिमें किसी प्रवर्तकके बिना ही इस तरहका आंदोलन चल पड़ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—यह असंभव नहीं है।

शिष्य—क्या काव्य-सृजन भी इस तरह जी सकते हैं?

श्रीअरविंद—ठीक उसी तरह नहीं।

शिष्य—क्या राम सचमुच हुए थे या वे वाल्मीकिकी कल्पना मात्र हैं?

श्रीअरविंद—यह माननेके लिये कोई आधार नहीं है कि राम कोई ऐतिहासिक व्यक्ति थे।

शिष्य—तब फिर विजयका वर्णन आदि?

श्रीअरविंद—क्या तुम यह मानते हो कि एक राजा बंदरोंकी सेना लेकर लंकापर धावा बोलता है। वाल्मीकिने इसे परंपरासे या कल्पनासे लिया होगा लेकिन उन्होंने ऐसे पात्र बनाये जो भारतीय मिजाजमें ठीक रम गये और सारी जातिकी चेतनामें समाकर आत्मसात् हो गये।

कुछ लोग तो यह भी मानते हैं कि वाल्मीकि रामायणसे पहले बहुत-सी रामायणें थीं और वेदमें भी राम भगवान्का प्रतीक हैं और सीता पृथ्वीका। यह भी हो सकता है कि वाल्मीकि इसे किसी देवलोकसे पृथ्वीपर लाये हों।

हो सकता है कि राम रहे हों पर निश्चित रूपसे कुछ नहीं कहा जा सकता।

शिष्य—और कृष्ण?

श्रीअरविंद—कृष्ण रामसे भिन्न स्तरपर हैं। वे ऐतिहासिक व्यक्ति मालूम होते हैं। उनके नामके साथ जितनी कहानियां जुड़ गयी हैं, हो सकता है कि वे बादमें जोड़ी गयी हों लेकिन उपनिषद्में भी उनका उल्लेख है और शायद वे रहे होंगे। वहां उनका उल्लेख देवकी-पुत्रके रूपमें है। वहां उन्हें ऐसा व्यक्ति बतलाया गया है जिसे दिव्य ज्ञान हो। वे निश्चय ही कोई ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने अपने कालपर बड़ी गहरी छाप छोड़ी। तब इसका कोई महत्त्व नहीं कि कृष्ण सचमुच उस रूपमें थे या नहीं जिस रूपमें बताया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है। कृष्ण भौतिककी अपेक्षा बहुत अधिक सच्चे रूपमें उपस्थित हैं।

संस्थापकने जो कहा था उसमें और बादमें उसके नामके साथ जो कुछ जोड़ा गया है उसे अलग करना बहुत कठिन है। उदाहरणके लिये बौद्ध धर्मके नामसे जो कुछ प्रचलित है उसमेंसे बहुत कम ही बुद्धकी शिक्षा है। करुणाके सिद्धांतको महायान संप्रदायके आचार्य ले आये थे।

शिष्य—जैन लोगोंकी प्रचलित मान्यताके अनुसार अब श्रीकृष्ण सातवें नरकमें हैं! और अगले युगमें वे तीर्थंकरोंमेंसे एक होंगे। वे नरकमें इसलिये हैं क्योंकि वे इतनी सारी हिंसाके कारण थे?

एक और शिष्य—बंगालमें मुसलमानोंने रामको मुसलमान बना दिया है और इसे प्रमाणित करनेके लिये पुस्तकें भी लिखी हैं।

और एक शिष्य—दो ईसाई साधुओंकी कहानी है और यह सिद्ध किया जाता है कि वे बुद्ध और आनंद थे।

श्रीअरविंद—धर्म भी अजीब है। इन सब बेतुकी बातोंकी जगह अगर वे धर्मके पीछे जो चीज है उसकी ओर जाएं तो ज्यादा उपयोगी और बुद्धिसंगत बात होगी।

शिष्य—प्रायश्चित्तके बारेमें आपका क्या विचार है?

श्रीअरविंद—प्रायश्चित्त किसी परिपाटी या सामाजिक विधानके तोड़नेपर दंडस्वरूप होता है। उसका आध्यात्मिक शुद्धिके साथ कोई संबंध नहीं है। यह कानूनी दंडके ज्यादा नजदीक है।

शिष्य—यह प्रायः स्मृतियों द्वारा निर्देशित है।

और एक शिष्य—कहते हैं गंगा-स्नान आदमीको शुद्ध कर देता है। क्या इसमें कुछ सत्य है?

श्रीअरविंद—इस तरह हर चीजसे कुछ-न-कुछ लाभ होता है।

शिष्य—रामकृष्ण परमहंस कहते थे कि जब तुम गंगा-स्नान करने जाते हो तो तुम्हारे पाप नजदीकके पेड़पर लटकते रहते हैं और तुम्हारे बाहर आते ही तुमपर टूट पड़ते हैं!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—कहते हैं कि कुछ लोग प्रायश्चित्तके बाद शुद्ध और हल्का अनुभव करते हैं लेकिन साधारणतः वे फिरसे वही चीज शुरू करनेके लिये तैयार रहते हैं! ये सब विचार जैसे काशी-मरण, पाप विमोचन आदि प्राणिक जगत्के अपसिद्धांत और धोखे हैं।

२-७-१९२६

शिष्य—आपने एक दिन कहा था कि जन्म, वृद्धि, ह्रास और मृत्यु —यह जीवनका विधान है पर यह परम विधान नहीं। प्रकृतिका बनाया हुआ खांचा है।

परमाणुओंमें अब हमें जीवनका एक और विधान मिलता है, उनमें जन्म मरण तो होते हैं पर वृद्धि और ह्रास नहीं। वैज्ञानिकोंने रेडियो-एक्टिव तत्त्वोंमें उनकी मृत्युका अध्ययन किया है। वैज्ञानिकों-के अनुसार परमाणुका जीवन वह अवधि है जो उसके विघटनमें लगती है। परमाणुओंके जीवनकी अवधि एक-सी नहीं रहती। रेडियमके लिये वह १५०० वर्षके आस-पास है। देखने लायक बात यह है कि जीवन-अवधि नये बने और पुराने परमाणुओंमें एक-सी होती है। व्यावहारिक रूपमें उनकी कोई उम्र नहीं होती। उनकी मृत्यु क्षीण होनेसे होती है।

श्रीअरविंद—उस दिन जब मैं जीवनकी बात कर रहा था तो मेरा मतलब वनस्पति और पशु जगत्से था जिनमें जीवन अधिक व्यवस्थित और जटिल है। निश्चय ही परमाणुओंमें भी प्राण और मन, यहांतक कि अतिमानस भी है लेकिन प्रकट और संगठित नहीं है, हम कह सकते हैं कि ऊपरी सतहपर नहीं है।

ये तत्त्व, प्राण और मन उच्चतर स्तरके दबावके बिना व्यक्त नहीं होते, उस दबावके कारण ही वे बाहर आते और अभिव्यक्त होते हैं।

यही कारण है कि जब हम अतिमानसको लाते हैं तो ऊपरसे दबाव-का अनुभव होता है। अतिमानस मन, प्राण और शरीरमें प्रवेश करके उन्हें रूपांतरित करना चाहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—जैविकीके अनुसार जीवनके लक्षण हैं: १. अंदरसे वृद्धि २. आत्मसात्करण ३. प्रजनन और ४. थकान।

श्रीअरविंद—प्राण शक्तिमें थकान नहीं होती। थकान केवल प्राण और शरीरके बीच असंतुलनकी परिस्थिति है। मनके बारेमें भी यही बात है। अगर तुम वैश्व मन और प्राणकी ओर खुल सको तो देखोगे कि वे अक्षय हैं।

शिष्य—शरीर और प्राणके बीच संतुलनका स्वभाव क्या है?

श्रीअरविंद—संतुलनके स्वभावसे तुम्हारा क्या मतलब है? भौतिक शरीर एक निश्चित मात्रामें प्राणशक्ति या मनःशक्तिका उपयोग कर सकता है। शरीर उनकी अधिक मात्राको नहीं सह सकता। इसी-लिये आजका सभ्य मनुष्य पुराने जंगलियोंकी अपेक्षा बहुत ज्यादा नाजुक है।

आत्मसात्करण और प्रजनन आदि शब्दोंसे ठीक पता नहीं चलता कि जीवन क्या है, ये केवल जीवनके गुण हैं। तुम मानसिक ज्ञानसे यह नहीं जान सकते कि जीवन क्या है।

शिष्य—भौतिक स्तरपर जीवनकी भिन्न-भिन्न अभिव्यक्तियां हैं। अगर हम अणुओं, कोषाणुओं और संगठित शरीरोंके तीन रूपोंको लें तो हम देखते हैं कि हर अवस्थामें ज्यादा ऊंची शक्तिकी जरूरत होती है। उदाहरणके लिये अणु अपने-आप कोषाणु नहीं बना सकते और उसी तरह कोषाणु शरीर नहीं बना सकते। उनकी वृद्धि अनियमित राशिमें होगी।

श्रीअरविंद—यह सच है। सोपानमें फर्क है परंतु सचमुच जड़-भौतिकसे उच्चतम चेतनातक बीचमें कोई व्यवधान नहीं है, चाहे मनसे देखनेमें जीवनकी अभिव्यक्ति ऐसी प्रतीत क्यों न हो।

शिष्य—उदाहरणके लिये वैज्ञानिकोंको जड़-भौतिक और जीवित भौतिक व्यवधान मालूम होता है। उदाहरणके लिये वे हमें बतला सकते हैं कि भोजनके मृत कण—जड़-भौतिक—आमाशयमेंसे गुजरते हैं और आत्मसात् होते हैं लेकिन वे यह नहीं बता सकते कि ये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवित कोषाणु कैसे बन जाते हैं। वे यह भी नहीं बता सकते कि स्नायविक उत्तेजना या संवेदनमेंसे विचार कैसे बन जाते हैं।

श्रीअरविंद—तुम यह कैसे कह सकते हो कि अन्नके कण मृत जड़ हैं? क्योंकि सचमुच ऐसा कोई व्यवधान नहीं है। भौतिक विज्ञान रूपांतरको नहीं समझ सकता। 'क्यों' पूछना बेकार है क्योंकि यह विज्ञान केवल 'कैसे', प्रक्रियाको जान सकता है।

शिष्य—बर्गसांका कहना है कि मानसिक विज्ञान केवल भौतिक-रासायनिक जगत्की बातें जान सकता है, जीवनकी समस्याओंको केवल अंतर्भास ही पकड़ सकता है।

श्रीअरविंद—हां, यह सच है। स्वयं मन कुछ नहीं समझता। तुम कहते हो, 'यह कारण है' लेकिन वही तर्क तुम्हें उससे उल्टे निष्कर्षपर भी पहुंचा सकता है। जब ऐसा मालूम होता है कि आदमी तर्क-बुद्धिके अनुसार काम कर रहा है तब भी वह मानसिक ऊहापोह द्वारा नहीं बल्कि किसी ऊपरकी चीज 'अंतर्भास' द्वारा काम कर रहा होता है। एक अवस्थामें मनका पदार्थ स्वयं किसी उच्चतर पदार्थ—अंतर्भासात्मक मन—में बदल जाता है। तब पुरानी मानसिक क्रियावलीको जारी रखना असंभव होता है। अंतर्भास अतिमानसकी छाया या प्रतिमा है। मनके द्वारा संचित पदार्थ उसमें होते जरूर हैं पर वे अंतिम निष्कर्षमें प्रवेश नहीं करते। वे मुख्य निर्णायक तत्त्व नहीं होते।

फिर तुम अधिकाधिक विकसित होते और अतिमानसकी उच्चतर और उच्चतम कोटियोंको अभिव्यक्त करते हो जहां क्रिया मनसे अधिकाधिक मुक्त होती जाती है।

शिष्य—क्या अतिमानसमें रहनेवाला व्यक्ति जड़ जगत्पर मानसिक विज्ञानके प्रत्यक्ष हस्तक्षेपके बिना क्रिया कर सकता है?

श्रीअरविंद—अगर वह पूर्ण हो तो मानसिक ज्ञानकी जरूरत नहीं रहती।

शिष्य—मेरा मतलब यह है: एक कांचके टुकड़ेको लें। परीक्षणसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पता लगता है कि अच्छे-से-अच्छा कांच बनानेके लिये अमुक अनुपातमें अमुक द्रव्योंकी जरूरत होती है।

श्रीअरविंद—अगर अतिमानसिक चेतना भौतिकमें पूर्ण हो जाय तो फिर परीक्षणोंकी जरूरत ही न रहेगी।

शिष्य—क्या आपका मतलब यह है कि अतिमानसिक सत्ता बिजलीके बारेमें पढ़े और सीखे बिना ज्यादा अच्छी बिजली-विशेषज्ञ बन सकती है?

श्रीअरविंद—क्यों नहीं? क्या तुम समझते हो कि अतिमानस मनसे घटिया है? तुम्हारे मनमें ऐसा संदेह छिपा हुआ है न कि क्या यह संभव हो सकता है?

शिष्य—जी हां, मन ऐसी बात सुनकर चकरा उठता है।

श्रीअरविंद—वर्तमान कालतक किसीने इस शक्तिको भौतिक स्तरपर उतारने और उसपर लागू करनेकी परवाह नहीं की है। मन और प्राणमें थोड़ा बहुत प्रयास किया गया था पर भौतिकमें नहीं।

पहले तो यह कि योगी भौतिक स्तरके इन प्रश्नोंकी परवाह न करते थे। दूसरे उनके पास इनके साथ व्यवहार करनेके लिये अधिक सीधे उपाय थे।

शिष्य—क्या सभी अतिमानव ऐसा कर सकेंगे?

श्रीअरविंद—अतिमानव हैं कितने? लेकिन जैसा कि मैंने कहा यह नयी चेतना एक क्रमिक उन्मीलन है। तुम उसे अपने शरीरके अणुओंमें पाते हो और कोषाणुओंमें एक चेतना है। जब इस शक्ति-का अवतरण होता है तो तुम उसे समझ और अनुभव कर सकते हो। लेकिन उसे भौतिकमें उतार लाना बहुत कठिन है और जब वह आती भी है तो ऐसे क्षेत्र हैं जहां वह अच्छी तरह संगठित होती है और ज्यादा अच्छी तरह काम कर सकती है, दूसरे ऐसे क्षेत्र हैं जहां वह लड़खड़ाती और भूल करती है।

पहले वह अपने-आपको ऐसे भागोंमें विकसित करती है जो तुम्हारे पिछले विकासके कारण अधिक विकसित हैं। और यह विकास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रमिक होता है चमत्कारिक नहीं। हमें यहांतक संदेह हो सकता है कि क्या आरंभ करना संभव भी है क्योंकि यह एक ऐसी चीज है जो कभी नहीं की गयी, जिसके लिये भूमि तैयार नहीं है। लेकिन अगर यह स्वीकार कर लें कि यह पृथ्वी चेतनाकी अधिकाधिक उच्च अभिव्यक्तियोंका क्षेत्र है तो यह बात समझमें आती है कि सभी भौतिक चीजें इस उच्चतर शक्तिके अधीन आ जाएंगी।

शिष्य—क्या सभी अतिमानव यह कर सकेंगे?

श्रीअरविंद—एक बार तुम शुरू कर दो तो वह चलता ही रहेगा। उसे सीमित करनेका कोई कारण नहीं। अतीतके प्रयासोंने उसकी तैयारी नहीं की है—हमें यह संदेह भी हो सकता है कि क्या यह भौतिक लोकमें आ भी सकता है। उच्चतर शक्ति ही हमारी एक आशा है। हम आरंभ तो कर दें फिर उसकी पूर्ति होती रहेगी।

शिष्य—क्या इसी जीवनमें?

श्रीअरविंद—यह इसपर निर्भर है कि तुम अपने शरीरको कितने समयतक रख सकते हो। बहरहाल यह पूरी तरह संभव है कि एक बार हम इसे शुरू कर दें तो वह मनुष्यमें क्रमशः विकसित होती चली जायेगी।

शिष्य—क्या इसपर पूर्ति समान जीवनमें की जा सकती है?

श्रीअरविंद—हां, यह इसपर निर्भर है कि तुम अपने शरीरको कितने समयतक रख सकते हो। हम उसे पूर्ण बनानेमें भले सफल न हों, उसे भौतिकमें ही प्रतिष्ठित कर लें तो अपने समयमें अतिमानस-की सभी कोटियां खुलती जाएंगी और यह माननेका कोई कारण नहीं कि अतिमानससे भी ऊंचे स्तरोंको अभिव्यक्त न कर सकेंगी, हां, सबके अंदर बराबर रूपमें नहीं।

९-७-१९२६

'क'के जैसे मामलेमें जो अपने-आप प्रेत-बाधासे छुटकारा नहीं पाना चाहता क्या आत्महत्या द्वारा छुटकारा मिल सकता है? क्या ऐसे मामलेमें भी आत्महत्या बुरी है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—मुझे नहीं लगता कि आत्महत्या कोई बचनेका तरीका है। साधारणतः आत्महत्याके विचार विरोधी शक्तियोंसे आते हैं।

शिष्य—विरोधी शक्तियां आत्महत्याके सुझाव क्यों देती है?

श्रीअरविंद—क्योंकि वे भोगसे छक जाती हैं और वे या तो शरीरको यांत्रिक पागलपनमें छोड़ जाती हैं या उसे नष्ट कर देती हैं।

शिष्य—'क'के भावी जीवनपर इस तरहकी प्रेत-बाधाका क्या असर होगा? क्या उसके अंदर ऐसी कमजोरी बनी रहेगी जो उसे इसी तरहके प्रभावोंके आधीन बनाये रखे?

श्रीअरविंद—यह कहना बहुत कठिन है। मेरा ख्याल है कि यह इसपर निर्भर है कि चैत्य सत्ता अपने-आपको क्रियासे कितनी दूर खींच लेती है। अगर चैत्य सत्ता इस प्राणिक व्यक्तित्वको पूरी तरह अस्वीकार कर सके जो इस पतनका कारण है तो प्राणिक व्यक्तित्व अपने भाग्यपर छोड़ दिया जायगा, वह या तो विघटित हो जायगा या पशु जन्ममें चला जायगा या और भी नीचे जा सकता है या आसुरी जगत्में मिल सकता है। लेकिन वह स्वयं अपना भाग न रहेगा और तब चैत्य सत्ताको अपने लिये प्राणिक और भौतिक सत्ताओंका निर्माण करना होगा और इसमें कई जन्म लग सकते हैं। अगर वह इस तरह भूत बाधाग्रस्त न रहे, जैसा कि अब है और अगर वह इस जीवनमें सामान्य मनुष्यकी तरह जीवन बिता सके तो उसके पहलेके कर्म उसके भावी विकासका आधार बन सकते हैं। लेकिन अभी तो उसने जो कुछ खो दिया है उसे वापिस पाना है, लेकिन मान लो कि उसका चैत्य इस व्यक्तित्वको उठा कर फेंक देनेमें समर्थ न हो तो हो सकता है कि वह अनेक जन्मोंतक दोहरी गति चलाता रहे और न जाने यह चीज उसे कहां ले जाय।

उसके आध्यात्मिक विकासके लिये यह अच्छा ही है कि उसके जीवनमें यह धमाका आया क्योंकि अगर वह ठीक बना रहता और इस शक्तिको अपने अंदर काम करने देता और स्वयं उसमें 'ख' की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरहसे रस लेता या एक बड़ा स्वामी बन जाता जिसके इर्द-गिर्द चेले-चांटे रहते तो उसको इसमेंसे निकलनेका बहुत कम अवसर रहता।

शिष्य—क्या वह इसी जन्ममें इस व्यक्तित्वको त्याग सकेगा?

श्रीअरविंद—यह तो स्पष्ट है कि वह उसे इस जन्ममें नहीं त्याग सकता। यह उसकी अंतरात्माकी बहुत गंभीर हार है और ऐसा प्रतीत होता है कि यह व्यक्तित्व उसकी प्रकृतिके संघटनका भाग बन गया है और वह उससे छुटकारा नहीं पा सकता।

लेकिन हो सकता है कि अगले जीवनमें चैत्य पुरुष आजसे अच्छे प्राणिक और भौतिकका पुनर्निर्माण करके खोया हुआ मैदान फिरसे पा ले।

१०-७-१९२६

शिष्य—'ग', जो पागल हो गया है, कहता है, "मैं कब्रस्तानके पास एक कमरा लेकर रहूंगा। अगर श्रीअरविंद कभी मेरे लिये करुणाका अनुभव करें तो मुझे सूचना दे देना।"

श्रीअरविंद—करुणाका नाप दूरीसे है। वह यहांसे जितनी दूर रहेगा उतनी ही अधिक करुणा पायेगा। (हंसी)

शिष्य—जैसे योगमें बाधक विरोधी शक्तियां हैं उसी तरह क्या ऐसी शक्तियां भी हैं जो योगमें सहायता करती हों? उनका स्वभाव कैसा होता है?

श्रीअरविंद—यह इसपर निर्भर है कि तुम कैसा योग कर रहे हो।

शिष्य—मेरा मतलब यह है कि क्या ऐसी शक्तियां हैं जो हमारे योगमें सहायता करती हों?

श्रीअरविंद—हां, ऐसी शक्तियां हैं जो हमारी सहायता करती हैं सीधी तरह नहीं, पीछेसे। तुम कह सकते हो कि वे देव हैं जो पीछेसे सहायता करते हैं और उस उच्चतर शक्तिके आधीन कार्य करते हैं जिसे हम पुकार रहे हैं। हम अपने योगमें उनकी पूरी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरी मदद नहीं ले सकते क्योंकि यद्यपि वे बहुत सहायता कर सकते हैं फिर भी उनकी सहायता किसी शर्तके साथ होती है। वे ऐसी सत्ताएं हैं जिन्हें हमारे प्रयासके साथ सहानुभूति होती है क्योंकि उन्हें भी हमारे योगसे लाभ होगा। वे उसी अनुपातमें सहायता करेंगी जिस अनुपातमें उन्हें लाभ होगा और तुम उनकी शर्तें पूरी करोगे।

यह भी हो सकता है कि जब तुम उनके परे जानेकी कोशिश करो तो वे तुम्हारे मार्गमें बाधक हों। उदाहरणके लिये तुम उनकी पूजा करो तो वे तुम्हारी मदद करेंगे। इस योगमें हम उच्चतम सत्यके लिये अभीप्सा करते हैं और हम अपनी सारी-की-सारी पूजा उस सत्यको छोड़ कर किसी औरको नहीं दे सकते। हमें पूरी तरहसे सत्य और सत्यकी शक्तिपर सहायताके लिये निर्भर रहना चाहिये।

शिष्य—क्या ऐसी शक्तियां हैं जो सभी लोकोंमें सहायता करती हैं?

श्रीअरविंद—विरोधी आक्रमण सीधे होते हैं इसलिये तुम उन्हें ज्यादा अनुभव करते हो लेकिन सहायता पीछेसे आती है।

शिष्य—क्या ये शक्तियां जो सहायता देती हैं वे मानसिक होती हैं?

श्रीअरविंद—हां, साधारणतः यह सहायता मानसिक और प्राणिक स्तरोंसे होती है और हम उसे नहीं ले सकते क्योंकि वह हमेशा शर्तके साथ होती है।

हां, मैं माताजीको 'न्यू इंडिया' में छपी उस खबरके बारेमें बतला रहा था कि एक ढाई वर्षके बच्चेमें पूर्व जन्मकी स्मृति जागी है। उन्होंने इसी तरहकी एक प्रामाणिक घटना सुनायी।

यह उनके परिवारकी घटना है। उनका एक भाई है जो सुसंस्कृत और बुद्धिमान् है। वह पुनर्जन्म या इस तरहकी बातोंको नहीं मानता। उनकी एक लड़की थी, अभी वह तीन या चार वर्ष-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ही होगी, एक दिन उसके पिता उसे नहला रहे थे कि उसने आंखें बंद कर लीं और एक अजीबसे स्वरमें गाना शुरू कर दिया। बापने पूछा, यह कहांकी धुन है? लड़कीने आंखें अधखुली रखते हुए कहा, जब मैं पुरुस (Purus) में गडेरिन थी तो यही धुन गाया करती थी।

परिवारमें कभी किसीने उसके आगे पुरुसकी बात न की थी। उस घरमें केवल मां-बाप बात कर सकते थे, घरका नौकर तो मूढ़ था। चीज इस घटनाके साथ ही समाप्त हो गयी, आगे नहीं चली। लेकिन यह तो स्पष्ट हो गया कि लड़कीके अंदर यह स्मृति जागी थी। बड़े बच्चोंमें यह कल्पना भी हो सकती है।

इस घटनासे इस बातकी पुष्टि होती है कि बच्चे अपने पूर्व जन्मको याद रख सकते हैं, हां, यह जरूरी है कि घटना प्रामाणिक हो।

६-८-१९२६

भाव और आवेगोंके बारेमें बात चली—

शिष्य—उदाहरणके लिये देशप्रेमको लीजिये। बिना पर्याप्त मानसिक विकास या विस्तारके हम देशप्रेमका अनुभव नहीं कर सकते।

श्रीअरविंद—मैं इसे नहीं मानता। कुत्तोंमें भी एक तरहका देशप्रेम होता है। मनुष्यने प्रकृतिके सभी पाशविक आवेगोंके चारों ओर बहुत सारी चीजें बुन डाली हैं। साधारणतः मनुष्य जिसे देशप्रेम कहते हैं वह झुंडकी भावनासे बढ़कर कुछ नहीं है। मधुमक्खियों और चींटियोंमें भी देशप्रेम होता है। वे भी अपने झुंडकी रक्षाके लिये युद्ध करती हैं, वे भी समुदायको बचानेके लिये व्यक्तिकी बलि चढ़ाती हैं।

शिष्य—जी, लेकिन वे यह सब लेक्चर झाड़े बिना करती हैं। (हंसी)

श्रीअरविंद—हां, जोर-जोरसे यह घोषणा किये बिना कि वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे ऊंची हैं क्योंकि वे यह सब करती हैं। यह वही पाशविक वृत्ति है। मनुष्य उसे मनोमय सत्तातक उठा देता है और वहां उसके चारों ओर सब तरहकी चीजें, आवेग, आदर्श, विचार आदि बुनता है और अपनी प्राणिक पाशविक-वृत्तिका औचित्य सिद्ध करता है।

शिष्य—गीताने कहा है कि विषयोंके बारेमें सोचनेसे उनके लिये आसक्ति पैदा होती है। इससे यह स्पष्ट है कि आसक्ति सोचनेके कारण होती है।

श्रीअरविंद—मुझे नहीं लगता कि अगर ठीक तरहसे देखा जाय तो गीताके इस श्लोकमें आवेगके मूलके बारेमें कहा गया है। वहां केवल यह बतानेकी कोशिश की गयी है कि जब मन किसी चीजके पीछे दौड़ता या उसपर टिक जाता है तो उसके साथ आसक्ति पैदा हो जाती है। इसका यह मतलब नहीं है कि हमेशा आवेगोंसे पहले विचार आते हैं।

शिष्य—कभी-कभी प्राणिक कामना और विचारके बीच एक संबंध बन जाता है।

श्रीअरविंद—यह तो हमेशा होता है। उदाहरणके लिये कुछ कामनाएं हैं जो अमुक विचार-गतियोंके साथ-साथ चलती हैं अतः जब कोई विचार गति होती है तो वह साथ-ही-साथ अपने अनुरूप आवेग या भावको भी जगाती है लेकिन वह तो मेलके कारण है। इसका यह मतलब नहीं कि विचार भावोंके अंदर गति पैदा करता है।

शिष्य—जब मैं अमुक घटनाओंके बारेमें सोचता हूं तो फिरसे उन आवेगोंको पैदा कर सकता हूं जिन्हें मैंने अतीतमें अनुभव किया था।

श्रीअरविंद—यह एक और ही चीज है, यह स्मृतिद्वारा वापिस बुलाना है। मैं याद करके शरीरमें बीमारीको भी वापिस ला सकता हूं। इसका यह मतलब नहीं है कि याद करना बीमारीके लिये उत्तरदायी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसा कि मैंने कहा, अधिकतर चीजें, जिनमें मनुष्य आनंद लेता है, वे पशुओंकी चीजोंसे बहुत भिन्न नहीं हैं। हम पाशविक प्रकृतिकी बहुत-सी चीजें दायके रूपमें अपने साथ जैसी-की-तैसी लाये हैं। जिन्हें तुम आवेग कहते हो वे सचमुच अपने मूलमें प्राणिक हैं और जैसा कि मैं कह चुका हूं मनुष्यने बस उनके चारों ओर एक जाल बुन दिया है। जानवरोंमें वही प्राणिक भाव, मनोभाव, यहांतक कि विचार भी होते हैं लेकिन वे मनुष्यमें एक भिन्न तरीकेसे काम करते हैं क्योंकि मनुष्य मानसिक सत्ता है। मनुष्य इन सब चीजोंको ऊपर उठा कर उसकी रचना करता है जिसे मैं 'प्राणिक मन' कहता हूं या जिन्हें तुम संवेग कहते हो। मेरे वर्गीकरणके अनुसार संवेग या मनोभाव मनका प्राणिक भाग है। मनुष्यने बस पशुके प्राणिक आवेगोंको उठाकर उन्हें मानसिक कर देनेकी कोशिश की है। इसका परिणाम वह है जिसे मैं जाल बुनना कहता हूं अतः ये सब उसकी तर्क-बुद्धिको तर्क-संगत मालूम होते हैं।

शिष्य—मैंने यह प्रश्न मानसिक, प्राणिक और भौतिकमें फर्क समझनेके लिये किया था।

श्रीअरविंद—मैं 'मानसिक प्राण' और 'यथातथ्य प्राण'में फर्क करता हूं।

शिष्य—यथातथ्य प्राण क्या है?

श्रीअरविंद—प्राण सत्ता वह है जिसका जीवनके साथ सीधा संबंध है। तुम उसे जीवनी शक्ति कह सकते हो और जीवन शक्तिके साथ संबंध रखनेवाली सभी गतियां प्राणिक सत्ताकी हैं। प्राणिक सत्ताकी मूलभूत क्रिया यह है कि वह कामनाका रूप ले लेती है। उदाहरणके लिये वस्तुओं, अधिकार, लोभ, महत्त्वाकांक्षा या यूं कहें सभी षड् रिपु काम, क्रोध, मोह, भय, और मत्सर प्राणिक क्षेत्रके हैं।

प्राणिक गतिविधिके इस गलत रूपके पीछे एक सत्य होता है जो अज्ञानके कारण यह गलत रूप ले लेता है। वास्तवमें प्राणिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्ता एक यंत्र है और जीवके यंत्रके रूपमें ही उसका उपयोग होना चाहिये, वह जीवनके संपादनका एक साधन है। अपने-आपको कार्यान्वित करनेके लिये वह कामनाका रूप ले लेती है परंतु उच्चतर ज्ञानमें वह शुद्ध इच्छा शक्ति बन जाती है यानी कामना अदिके बिना संपादन करनेकी शक्ति।

मनुष्य इन प्राणिक गति-विधियोंको, जो समान रूपसे पशु जगत्में भी हैं, मनतक उठा देता है और बस। वहां वह यह सोचकर अपने-आपको भरमाता है कि एक बार वह किसी भावको प्राणिक गतिके साथ जोड़ दे तो वह शुद्ध हो जाती है और जब मन उसे तर्क-संगत रूपमें समझा सकता है तो मनुष्य इस प्राणिक लीलाके साथ चलते-चले जानेके लिए औचित्य पा लेता है। वस्तुतः इसी तरीकेसे इन प्राणिक शक्तियोंने मनुष्यपर अपनी पकड़ बनाये रखी है। उदाहरणके लिये उस चीजको लो जिसे लोग साधारणतः प्रेम कहते हैं। मूलतः यह एक प्राण-आवेग है जिसे हम काम-आवेग कह सकते हैं। यह प्रकृतिमें सब जगह है। मनुष्य इसमें भावकी एक गति मिला देता है और उसे प्रेमका नाम दे देता है और सोचता है बस अब सब कुछ ठीक है।

शिष्य—भौतिक क्या है?

श्रीअरविंद—भौतिकसे तुम क्या समझते हो?

शिष्य—भौतिकसे हमारा मतलब होता है मन और जीवनहीन वस्तुएं।

श्रीअरविंद—यह बिल्कुल ठीक नहीं है क्योंकि तुम्हारा शरीर भौतिक है परंतु उसमें प्राण भी है और मन भी। स्वयं भौतिकके अंदर प्राण और मन होता है, लेकिन होता है अंतर्लीन। लेकिन अगर तुम भौतिक स्तरपर सचेतन हो सको तो देखोगे कि शरीरके कोषाणुओंतकमें प्राण और मन है। हां, हम भौतिक और मानसिक स्तरपर जिस प्राण और मनको देखते हैं वह उनसे भिन्न है जो प्राणिक या मानसिक स्तरपर है। लेकिन तुम इससे इंकार नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सकते कि उसमें मन है। वही शरीरकी गतियोंको इतने ठीक तरीकेसे चलाता है। भौतिक मन ऐसा मन है जो चीजोंके केवल भौतिक और जड़ पहलुओंको देखता है और अन्य पहलुओंको देखनेसे इंकार करता है।

श्रीअरविंद—यह तो सामान्य मन है।

श्रीअरविंद—अधिकतर मनमें इसके सिवा कुछ नहीं होता।

शिष्य—अपने-आपको मनसे अतिमानसतक उठानेके लिये हमें क्या करना चाहिये?

श्रीअरविंद—करने लायक पहली चीज यह है कि अपनी सत्ताकी प्रकृतिको जानो तब सत्यकी प्राप्तिके लिये मनसे ऊपर किसी चीजकी ओर मुड़ो। मन उसका थोड़ा-सा ज्ञान दे सकता है, पूर्ण ज्ञान नहीं और न ही वह रूपांतरको कार्यान्वित कर सकता है।

शिष्य—आपने अभी कहा कि मनुष्यके अधिकांशमें पाशविक प्रकृति है। यूरोपीय लोग इसी बातको बढ़ा-चढ़ा कर कहते हैं। वे मानते हैं कि मानव जातिकी हर चीजकी जड़में प्राण है। वे मानों उसे पूजते हैं।

श्रीअरविंद—तुम्हारा मतलब क्या है? मनुष्य पशु है या मनुष्यमें पशु है?

शिष्य—ये विचारक मनुष्यमें किसी भी उच्चतर चीजके अस्तित्व-को अस्वीकार करते हैं। वे लगभग यूं कहते हैं कि चूंकि मनुष्य पशु है अतः उसके लिये अच्छा यह है कि वह सचेतन और कार्यक्षम पशु हो। बस उसे कार्यक्षम होनेकी कोशिश करनी चाहिये और कुछ नहीं। बर्नार्ड शा में हम इस बातपर आग्रह देखते हैं।

श्रीअरविंद—लेकिन शा यह नहीं कहता कि मनुष्यमें पशुसे ऊंची कोई चीज नहीं है! शा कुशाग्र बुद्धि विचारक है। वह मनुष्यके बड़प्पनके विचारमें फंसनेसे इंकार करता है। वह कहता है कि मनुष्यको अधिक ऊंचा उठना चाहिये।

लेकिन ज्यादा ऊंचा उठनेका विचार रखना एक बात है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह मानना अलग बात है कि मनुष्य बहुत अधिक विकसित प्राणी है। सत्यकी खोजकी प्रारंभिक आवश्यकताओंमेंसे एक है आलोचक मन, कह सकते हैं कि एक सनकी मन जो मुखौटेको फाड़ फेंके और प्रचलित विचारों और मतोंको स्वीकार करनेसे इंकार करे। यह एक तरहका विलायक है। मनुष्यके अंदर इतना साहस होना चाहिये कि किसी धोखाधड़ीके बिना नंगे सत्यको देख सके। शा के अंदर एक बड़ी हदतक ऐसा आलोचक मन है। आनातोल फ्रांसके बारेमें भी यही बात है।

सत्यको पानेके लिये जिस दूसरी चीजकी जरूरत है वह है, अभी-तक जो प्राप्त हुआ है उससे ज्यादा ऊंचे सत्यको पानेकी अभीप्सा करना। उसे सभी आदर्शों, सिद्धांतों और सत्योंका अवलोकन करना चाहिये और देखना चाहिये कि कौन-से संभव हैं और कौन-सा आदर्श किस हदतक प्राप्त किया जा सकता है और सबसे बढ़ कर यह कि उसे यह जानना चाहिये कि उस आदर्शकी परिपूर्तिके लिये किन अवस्थाओंकी जरूरत है।

शिष्य—अगर अतिमानसिक शक्ति काम कर रही है तो 'क' जैसे साधकके मार्गमें इतनी कठिनाइयां क्यों आती हैं?

श्रीअरविंद—ऐसी विरोधी शक्तियां हैं जो इस उच्चतर शक्तिका अवतरण नहीं चाहतीं। तुम जितनी प्रगति करो वे उतनी ही ज्यादा क्रुद्ध होती हैं और तुमपर आक्रमण करनेकी कोशिश करती हैं। दूसरी बात यह कि आरंभमें स्वयं उच्चतम अतिमानसिक शक्ति काम नहीं कर रही। वह मनपर दबाव डालती है और उच्चतर मनकी गति द्वारा तुम्हें अज्ञान और अपूर्णताएं दिखलाती है।

शिष्य—हम इन कठिनाइयोंसे कैसे पिंड छुड़ाएं?

श्रीअरविंद—सबसे पहले तुम्हें स्थिर रहना चाहिये, यानी अपने स्वभावके अंदर पूर्ण समता स्थापित करो और इन चीजोंसे क्षुब्ध न हो। जब कभी तुम्हारे अंदर अज्ञान और अपूर्णताकी कोई गति आये तो तुम्हें सावधानीसे देखना होगा कि वह आती कहांसे है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी प्रकृतिके बाहरसे या भीतरसे। तब तुम्हें उसे उच्चतर ज्ञानको सौंप देना चाहिये। तुम्हें प्रकाश मिलेगा परंतु शुरूमें वह तुम्हारी मानसिक गतिविधियोंसे मिला रहेगा। उस ज्ञानके प्रकाशमें तुम्हें, जो मिथ्या हो उसे अस्वीकार करना होगा। केवल उच्चतम गतिविधिको स्वीकार करो। तुम जैसे-जैसे प्रगति करोगे वैसे-वैसे उच्चतर प्रकाश और उच्चतर शक्तिको पाते चलोगे जो इन शक्तियों-का सामना करने और उनपर काबू करनेका तरीका बताएंगी।

अंततः जब तुम्हें उच्चतम गति प्राप्त हो जाय तो तुम इतने मजबूत हो जाते हो कि कठिनाइयां तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं। हां, तब तुम्हें उच्चतम सुरक्षा दी जाती है। लेकिन उस सुरक्षाको पानेकी शर्तें ये हैं कि तुम उच्चतर शक्तिकी ओर हमेशा खुले रहो, दूसरे, तुम्हारे अंदर दृढ़ निश्चय और सचाई हो। और तीसरे उच्चतम शक्तिकी सुरक्षापर तुम्हें पूर्ण विश्वास हो।

शिष्य—क्या ये कठिनाइयां परीक्षाके रूपमें आती हैं?

श्रीअरविंद—हां, एक उच्चतर दृष्टिसे तुम उन्हें अपने योगमें प्रगतिकी कसौटीके रूपमें ले सकते हो, ये तुम्हें तुम्हारी कमजोरियां दिखाती हैं और अगर तुम उन्हें उचित मनोभावमें ले सको तो तुम उनसे लाभ उठा सकते हो।

शिष्य—मान लीजिये कि कोई योगी इन कठिनाइयोंको जीत लेता है तो क्या यह उसके लिये वैश्व विजय होगी?

श्रीअरविंद—सबसे पहले तुम्हें उन्हें अपने अंदर जीतना होगा, फिर अपने इर्द-गिर्द यानी उन लोगोंमें जो तुम्हारे संपर्कमें आते हैं और अंतमें, भगवान्‌की स्वीकृतिके साथ तुम घटनाओंपर भी प्रभाव डाल सकते हो।

इसका कोई कारण नहीं कि योगी अपनी कुरसीपर बैठा-बैठा रूस और अमरीकाकी घटनाओंपर प्रभाव न डाल सके। जो लोग क्षेत्रमें काम कर रहे हैं उनके पीछे अपनी शक्ति लगा कर वह घटनाओंका मार्ग भी बदल सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—क्या योगी जगत्-शक्तियोंपर क्रिया करता है?

श्रीअरविंद—हां, अपना प्रभाव उनपर डाल कर वह उनके मार्ग-को बदल सकता है।

शिष्य—क्या जगत् शक्तियोंको सत्यका ज्ञान होता है?

श्रीअरविंद—नहीं, वे केवल शक्तियां होती हैं और अपने-आपको चरितार्थ करना चाहती हैं। यह कहनेका एक तरीका है जब हम कहते हैं कि योगीकी शक्ति काम कर रही है। सारी शक्ति भगवान्‌की शक्ति है और मनुष्य तो केवल एक बिंदु होता है। वह सारे समय यह जानता है कि काम भगवान्‌की शक्ति कर रही है।

वह शक्तिका उपयोग अहंकारके साथ भी कर सकता है और अनुपातमें अधिक प्रभाव डाल सकता है। चूंकि वह अहंकार या कामनाके कारण सीमित और अपूर्ण होता है इसलिये क्षमता भी सीमित और अपूर्ण रहती है।

१३-८-१९२६

शिष्य—मैं सत्ताके विभिन्न मनोवैज्ञानिक भागोंमें फर्क जानना चाहता हूं, जैसे १. मानसिकमें मुख्य मानसिक, २. मानसिक प्राण, ३. मानसिक भौतिक। प्राणमें १. प्राणिक मन, २. मुख्य प्राण, ३. प्राणिक भौतिक और भौतिकमें १. भौतिक मन, भौतिक प्राण और मुख्य भौतिक।

श्रीअरविंद—इस भेदको भाषामें रखना कठिन है, अगर रखा भी जाय तो वह अपर्याप्त और आंशिक होगा। अगर तुम मनुष्यके मानसिक भागको लो तो देखोगे कि वहां एक भाग है जिसे शुद्ध मानसिक भाग कहा जा सकता है, जो सिरके ऊपर ऊंचाईपर रहता है और मस्तिष्क द्वारा भौतिक जीवनके साथ आदान-प्रदान करता है। यह विचारशील मन है। इसका मुख्य संबंध होता है तर्क-वितर्क, मानसिक रूपोंकी रचना और मानसिक इच्छाकी क्रियावली।

फिर मानसिक भाव और संवेदन हैं जो सचमुच मानसिक तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हैं, वे प्राणसे उठ कर मनमें जा पहुंचते हैं और मानसिक रूप धारण कर लेते हैं, मानसिक भाव और मानसिक संवेदन बन जाते हैं—इसे मैं मानसिक प्राण कहता हूं।

कुछ लोगोंके अनुसार यह शुद्ध रूपसे प्राण है जो सिरसे लेकर वाणीके केंद्र (गरदन) तक मानसिक सत्ता होती है।

शिष्य—बुद्धि क्या है?

श्रीअरविंद—बुद्धि वह है जिसे मैं शुद्ध मन कहता हूं। उसमें प्रज्ञा और इच्छाशक्ति मिली होती है। वह चिंतन और मननकी क्षमता है वह तर्क करती है। वह ऐसे प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिये उठती है जैसे 'सत्य क्या है', 'मुझे क्या करना चाहिये', 'मुझे कैसे करना चाहिये'? जब यह शुद्ध मानसिक क्षमता विकसित होती है तो हम उसमें अंतर्दर्शन और मानसिक दृष्टिकी कुछ शक्ति भी पाते हैं। वह रूप और वाणीकी रचना करती है।

शिष्य—वाणीका केंद्र कहां है?

श्रीअरविंद—वाणीका केंद्र कंठके नीचे है और सचमुच वाणी मानसिक क्षमता है। वह विचार और मननके परिणामोंको वाणीके माध्यमसे प्रकट करनेकी कोशिश करती है। यह विचारकी अभिव्यक्तिके लिये है परंतु भाव और प्राणिक सत्ता भी अपने-आपको प्रकट करनेके लिये इसका उपयोग करते हैं। पहले वे निम्न भागोंमें-से ऊपर जाते और फिर वाणी द्वारा अपने-आपको प्रकट करते हैं। लेकिन तत्वतः वाणी मनःशक्ति है।

शिष्य—मानस क्या है, बुद्धि और मानसमें क्या फर्क है?

श्रीअरविंद—सामान्यतः जब हम मानस शब्दका उपयोग करते हैं तो उसका अर्थ होता है मन, यानी सारी मानसिक क्रियावली—चिंतन, भाव, मानसिक संवेदन सब इसमें आ जाते हैं। लेकिन जब हम दर्शनमें मानसका उपयोग करते हैं तो उसका मतलब होता है ऐंद्रिय मन। इसका स्थान हृदयके पास होता है, जब कभी कुछ लोगोंमें पूर्वाभास जागते हैं तो ये मानसमें ही आते हैं—ऐंद्रिय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनमें—इसीलिये उपनिषद्में इसे छठी इंद्रिय कहा गया है।

साधारणतः वेदांतमें बुद्धिका अर्थ होता है समझके साथ इच्छा-शक्ति। वह सत्यको खोजती या खोजनेकी कोशिश करती है और फिर उसके अनुसार कार्य करनेका निश्चय करती है।

और फिर है मानसिक भौतिक। यह भौतिक मन नहीं है। यह वह चीज नहीं है जो जड़के पीछे रहती और उसे सहारा देती है। यह शुद्ध विवेचनकी किसी क्रियाके बिना अपने-आपको दोहराती रहनेवाली अभ्यासगत मानसिक गति है, उसमें अगर कोई विवेचन होता भी है तो यांत्रिक। वह अपने ही चक्करमें घूमता चलता जाता है और मनके अन्य भाग उसके बारेमें सचेतन नहीं होते। वह अपने पुराने भावों, संस्कारोंको यंत्रकी तरह दोहराता रहता है। उसमें न तो प्राणिक आवेग और न स्वयं मनकी कोई सृजनात्मक क्रिया होती है।

शिष्य—मेरा ख्याल है कि मानसिक, प्राणिक और शारीरिक स्तरपर अतिमानसका कोई तत्त्व रहता होगा। मानसिक सत्तामें कौन-सी चीज उससे मिलती-जुलती है?

श्रीअरविंद—मानसिक स्तरपर अतिमानस अंतर्भास है। यह शुद्ध अतिमानस नहीं, उसका मानसिक रूप है।

उसके बाद नाभि और उसके नीचे और कुछ लोगोंके मतानुसार हृदयसे नाभितक प्राणिक सत्ता है। अपनी निजी प्रकृतिमें यह प्राण-गति या जीवन शक्ति है जो अपने-आपको जीवनमें कार्यान्वित करना चाहती है। उसका सबसे अनगढ़, अपरिष्कृत रूप है कामना। वस्तुतः यह शक्ति है जो अधिकार करना और भोग करना चाहती है। वह वस्तुओंको पकड़ कर उनपर अपनी छाप लगाना चाहती है। यह अधिकार तथा भोगके लिये वस्तुओंको पकड़ती है। यही मनुष्यके अंदर महत्त्वाकांक्षा, नारीके लिये कामना, धन और शक्तिके लिये कामना, कामनाके सभी अहंकारात्मक रूप पैदा करती है। प्रकृतिमें जीवनके लिये यह अनगढ़ रूप बहुत उपयोगी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्यके अंदर प्राणिक सत्ता ही यह करना चाहती है और वह करना चाहती है! वह हमेशा अपने-आपको बाहर उछालनेमें व्यस्त रहती है। प्राणिक प्रकृतिका यह तात्त्विक रूप है। उसके पीछे होता है प्राणिक मन। वह एक विचारका रूप लेता है परंतु यह मानसिक विचारके रूपसे भिन्न होता है। यह कोई ऐसी चीज है जो मनसे न निकल कर सीधी प्राणसे निकलती है, वह प्राणिक गतिविधियोंके साथ रहती, उन्हें जानती और वाणी तथा मानसिक रूपोंमें प्रकट करती है। वह तर्क नहीं करती। वह भी शुद्ध मनकी तरह सोचती और योजना बनाती है लेकिन वह एक और तरीकेसे सोचती और योजना बनाती है। यह एक ऐसा मन है जो अलग खड़ा रहता और यह व्यवस्था करता है कि आवेगोंको कैसे चरितार्थ करे।

शिष्य—लेकिन तब यह सच्चा नहीं मिथ्या विचार होगा।

श्रीअरविंद—वह मिथ्या नहीं होता, केवल मानसिक विचार न होकर यह प्राणिक विचार है। उदाहरणके लिये जब मसोलिनी कहता है 'सूर्यालोकमें इटलीका अपना स्थान होगा' तो यह मानसिक नहीं प्राणिक विचार है।

शिष्य—क्या यह मनोभाव नहीं है?

श्रीअरविंद—यह मूलतः मनोभाव नहीं है। यह सीधा उसके प्राणिक अहंकारसे आनेवाला विचार है। फिर उसके साथ उसका देशप्रेमका भाव भी हो सकता है। वह अपने तर्कसे इसके औचित्य-को सिद्ध करनेके लिये भी कह सकता है। वह अपनी बुद्धिसे कह सकता है, "मैंने यह बात कही है, अब तुम इसके लिये कोई युक्ति ढूंढ़ निकालो और यह भी बताओ कि यह क्यों सत्य है।"

शिष्य—तब फिर क्रियाशील मन क्या है?

श्रीअरविंद—क्रियाशील मन है इच्छा-शक्ति, जब कि प्राणिक मन है कामना-मन। वह बिना किसी तर्कके प्राणिक ललककी कामना करता है। जैसा कि मैंने कहा जब मन कार्य करता है तो पहले वह इस प्रश्नका उत्तर देनेकी कोशिश करता है, "सत्य क्या है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे क्या करना चाहिये ?" वह इसीपर रुक नहीं जाता। वह निश्चय भी करता है कि "मैं इसे कैसे करूं ?" वह इच्छाका भाग है। वह योजना भी बनाता और व्यवस्थित भी करता है परंतु एक भिन्न तरीकेसे। क्रियाशील मन वह इच्छा-शक्ति है जो बुद्धिके निर्णयोंको कार्यान्वित करनेकी कोशिश करती है।

फिर है भौतिक प्राण यानी प्राणमें भौतिक भाग। भौतिक स्तरपर प्राणिक आवेगोंको चरितार्थ करनेके लिये यह जरूरी है। सामान्यतः यह गुजरती हुई घटनाओं और अस्थायी गतियोंसे संबंध रखता है। यह छोटी-छोटी बातोंपर क्षुब्ध हो जाता है, आसानीसे परेशान हो जाता है। वह बड़ी जल्दी आनंद-विभोर हो उठता है, उसी तरह बड़ी जल्दी कुंठित भी हो जाता है। यह वह बेचैन हिस्सा है जो गुजरती हुई चीजोंसे संबंध रखता है तथा औरोंको भी बेचैन करता है। प्राणमें आवश्यक प्रेरणा हो सकती है पर यदि यह भौतिक भाग तैयार न हो तो उसे इस भूमिपर उतारा नहीं जा सकता।

इन सबसे मिलकर प्राण बनता है। सत्ताके पूर्ण विकासके लिये यह बहुत जरूरी है। वस्तुतः प्राण ही मनको उसकी उर्ध्वमुखी गतिमें सहारा देता है—कम-से-कम उसे देना तो चाहिये क्योंकि उसके बिना मन अपने-आपको जीवनमें कार्यान्वित न कर सकेगा। वह केवल आदर्श, भाव और सिद्धांत रह जायगा।

शिष्य—इसका मतलब यह हुआ कि प्राणको मानसिक भावोंके साथ सहमत होना चाहिये।

श्रीअरविंद—हां, अन्यथा कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता।

शिष्य—लेकिन तब क्या मन प्राण-शक्तिको खींचता है या प्राण मानसिक ऊर्जाका आह्वान करता है ?

श्रीअरविंद—यह इसपर निर्भर है कि कौन क्षेत्रमें पहले आता है। अलग-अलग व्यक्तियोंमें अलग-अलग होगा, किसीमें मन पहले किसीमें प्राण पहले।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

नवजातजीके जन्म दिनके उपलक्ष्यमें डा. के. आर. श्रीनिवास अयंगारके, पांडिचेरी विश्व-विद्यालयमें, श्री नवजात स्मारक अभिभाषण योजनाके तत्वावधानमें श्रीअरविंद और माताजीके बारेमें दो भाषण हुए। एक दिन डा. सुब्रह्मण्यमने और दूसरे दिन श्री माधव पंडितने सभापतिका आसन ग्रहण किया।

१३ **जनवरी** श्री नलिनी कांत गुप्तका शताब्दी वर्ष आरंभ हुआ जिसके उपलक्ष्यमें विशेष ध्यान हुआ, साथ ही उनके लेखांशों और चित्रोंकी प्रदर्शनी भी की गयी।

२१ **फरवरी**को माताजीका ११० वां जन्मदिन मनाया गया, उनके तथा श्रीअरविंदके कमरोंके दर्शन, समाधिके चारों ओर ध्यान, क्रीड़ांगणमें ध्यान आदि विशेष कार्यक्रम थे। श्रीअरविंदके आशीर्वादके साथ एक कार्ड भी बांटा गया।

२९ **फरवरी**—धरतीपर अतिमानसके अवतरणका आठवां स्मरणोत्सव था। माताजीने इस दिनको "प्रभु दिवस"का नाम दिया था। उन्होंने कहा है, "क्षण भंगुर शरीरका जन्मदिन मनानेसे निष्ठापूर्ण भावनाओंको संतोष मिल सकता है, शाश्वत चेतनाकी अभिव्यक्ति वैश्व इतिहासके हर क्षण मनायी जा सकती है लेकिन नये जगत् अतिमानसिक जगत्का आगमन मनाना अद्भुत और अपवादिक सौभाग्यकी बात है।"

इस दिन भी माताजी और श्रीअरविंदके कमरोंके दर्शन, समाधिके चारों ओर ध्यान तथा क्रीड़ांगणमें ध्यान कार्यक्रम आदि हुए। दो कार्ड बांटे गये।

२८ **फरवरी**—ओरोवील-स्थापना दिवसपर सोसायटीके बीच आफिसमें ध्यान हुआ।

निकट भविष्यमें आश्रममें निम्नलिखित उत्सव मनाये जायेंगे :

२९ **मार्च**—माताजीके पहली बार पांडिचेरी आनेकी वर्षगांठ। (१९१४)

(शेष आ० ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O Lord, awaken in me an ardent desire to know Thee. I aspire that my life may be consecrated to Thy service.

The Mother

Space donated by

Kooverji Devshi & Co., Pvt. Ltd.

FIREX LEADS TO SAFETY

SAFETY LEADS TO PROSPERITY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

मई १९८८

वर्ष १८, अंक १०, पूर्णांक २१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश		१
'संपादकीय' : कस्तूरी कुंडल बसै . . .		२
दैनन्दिनी		३
मनुष्यका मन		७
'ऋषिवर बोले' : योगके लिये पात्र		२१
श्रीअरविंदके साथ बातचीत		२५
देश और कालके कई प्रकार—		
प्राणिक जगतपर निर्भयता	श्रीमातृवाणीसे	२९
युद्ध	अनुबेन	३२
किससे क्या सीखें		३६
सोसायटी समाचार		आ० ३

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१५१४१
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

संदेश

हम कह सकते हैं कि यौवनकी परिभाषा है : सतत विकास और अविच्छिन्न प्रगति; क्षमताओंका, संभावनाओंका विकास, कर्मक्षेत्रका विकास और चेतनाका प्रसार और समस्त व्यौरोंकी उपलब्धिकी ओर प्रगति।

—श्रीमां

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

कस्तूरी कुंडल बसै...

संसारमें प्रायः सभी यह मानते हैं कि अगर समाजमें प्रगति लानी है तो वह एक अकेले मनुष्यका काम नहीं है; किंतु इतिहास हमें बार-बार यही बतलाता है कि प्रकृति एक साहसी मानवको आगे लाकर समूहकी आंखें खोलती है। यह किसी भी क्षेत्रमें देखा जा सकता है। विज्ञानके युगमें तो मानवके साहस, उत्साह, लगन और परिश्रमका सुयश गाया जाता है। अब ऐसी प्रतीति हो रही है कि यही विज्ञान जिससे मंत्रमुग्ध हो, मनुष्य उसके गुण गाता रहता है, भस्मासुरकी तरह अपने इर्द-गिर्द सब चीजोंको भस्ममें बदलनेपर तुला हुआ है। यह अद्‌भुत खिलौना जिसको लेकर मनुष्य मानता था कि वह मनमाने ढंगसे खेलेगा, विकराल रूप धारण कर न केवल मानवको बल्कि समस्त पृथ्वीको थर्रा रहा है। मनुष्य अपनी कृतिके इस रूपसे किंकर्तव्यविमूढ़ होकर प्राणके लिये इधर-उधर भाग रहा है। यह भाग-दौड़ कस्तूरी मृगकी खोज-सी अनावश्यक है। 'कस्तूरी कुंडल बसै, मृग ढूंढ़े बन मोहि'। अगर मानव बाहर झांकनेकी जगह अंदर झांके तो उसे इस विभीषिकासे सहज ही मुक्ति पानेका उपाय मिल जायेगा। मानवके हितैषीने कहा है, "सबके ऊपर है मानव" वह मानव आजका दिग्भ्रांत मनुष्य नहीं है, वह उच्चासीन मानव वह है जिसमें सबसे कठिन आंतरिक साहस भरे अभियानपर चल पड़नेकी हिम्मत है और वह मनुष्य सचमुच "सबसे ऊपर" होगा, उसीके इंगितपर न केवल हमें बल्कि प्रकृति और पृथ्वीको भी चलना होगा।

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

मई

१. शांत मनका अर्थ यह नहीं है कि किसी तरहकी मानसिक गति-विधि न होगी, कोई विचार न रहेगा बल्कि यह कि सब सतह-पर रहेगा, तुम अपनी सच्ची सत्ताको उन सबसे अलग अनुभव करोगे जो निरीक्षण करेगी किंतु उन सबमें बह न जाएगी। उनको देख सकेगी, उन्हें परखेगी और उन सबको अस्वीकार करेगी, जो स्वीकारने योग्य न हो, और उन सबको स्वीकार करेगी जो सच्ची चेतना और सच्ची अनुभूति हो।

२. मनकी इस स्थिर शांति और अचंचलताके लिये, बाह्य प्रकृति-से अलग खड़ी अपनी उस आंतरिक सत्ताके अनुभवके लिये श्रीमांसे अभीप्सा करो जो प्रकाश और सत्यकी ओर अभिमुख है।

३. जब तुम किसीके लिये कष्ट उठाओ तो वह कभी व्यर्थ नहीं हो सकता है कि परिणाम तुरंत न दिखलायी दे लेकिन निष्काम कर्म एक-न-एक दिन अपना फल लाती ही है।

४. अपना अवलोकन करना अच्छा है ताकि तुम अपनी कम-जोरियां देख सको और उन्हें सुधारने लायक बन सको।

५. तुम्हें अपने अंदर "उस अधिक सच्ची वस्तु" और पीछे स्थित शांतिमें रहना सीखना चाहिये और अनुभव करना चाहिये कि वही तुम्हारा असली रूप है; बाकी चीजोंको अपना सच्चा स्वरूप न मानना चाहिये।

६. समताका अर्थ है शांत, अचंचल मन और प्राण। इसका मतलब है कि जो घटनाएं घटती हैं, तुमसे जो कहा जाता है या तुम्हारे साथ जो किया जाता है उस सबसे अछूता रहना, परेशान न होना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. इस समताको पूर्ण रूपसे पाना आसान नहीं है, किंतु मनुष्यको उसे अपनी आंतरिक स्थिति और बाह्य क्रियाका आधार बनाने-का हमेशा प्रयत्न करते रहना चाहिये।

८. देवी काली कभी-कदास ही मनमें कार्य करती हैं। उच्चतर स्तरोंपर वह प्रेमकी शक्ति हैं जो प्रगति और रूपांतरकी ओर मानवको धकेलती हैं।

९. देवी काली प्राणमें मिथ्यात्व, ढोंग और दुर्भावनाके विनाशकी शक्ति होती हैं।

जो कुछ शुभ, सच्चा और प्रगतिशील है उसका वे कभी नाश नहीं करतीं। उसके विपरीत वे उनकी रक्षा करती और उन्हें सहारा देती हैं।

१०. साधनामें प्रगति अपनी आंतरिक और बाह्य मनोवृत्तिको सुधारनेसे होती है, तुम जो करते हो उसी तरह नहीं करते जाते—कोई भी कार्य, यहांतक कि सबसे छोटा कहानेवाला कार्य भी तुम्हें भगवान्‌की ओर ले जा सकता है, अगर तुम उसे सच्ची मनोवृत्तिसे करो।

११. ध्यान करके तुम प्रगति कर सकते हो, लेकिन कार्यके द्वारा, अगर उसे सच्चे भावसे किया जाय, तुम दस गुनी प्रगति करोगे।

१२. अपने सबसे सुन्दर सपनोंको सिद्ध करनेसे अच्छा और कुछ नहीं है और, कोई और चीज हमें इससे ज्यादा मजबूत और सुखी नहीं बना सकती!

१३. आलस्य और अकर्मण्यताका अंत तमसमें होता है: और फिर अचेतनामें पतन; यह सारी प्रगति और ज्योतिके विपरीत है।

१४. चूंकि दूसरे लोग कमीने हैं इसलिये यह कोई कारण नहीं है कि तुम भी कमीने बनो।

१५. वस्तुतः प्रगति करना, कठिनाईपर विजय पाना, कुछ सीखना, अचेतनाके किसी तत्त्वके अंदर स्पष्ट रूपसे देखना—ये हैं वे चीजें जो तुम्हें सचमुच सुखी बनाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. हर एकके चारों ओर एक वातावरण होता है जो उन स्पन्दनों-से बना होता है जो उसके चरित्र, मनोदशा, सोचने, अनुभव करने, कार्य करनेके तरीकेसे आते हैं। ये वातावरण छूतके द्वारा एक-दूसरेपर क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं। ये स्पन्दन संक्रामक होते हैं यानी हम जिस किसीसे मिलते हैं उसके स्पन्दनोंको आसानीसे ले लेते हैं, विशेष रूपसे अगर वह स्पन्दन मजबूत हो।

१७. यह समझना आसान है कि जो अपने अंदर या अपने चारों ओर शांति और सद्भावना लिये रहता है वह एक तरीकेसे दूसरोंपर अपनी शांति और सद्भावनाका कुछ भाव तो आरोपित कर ही देगा जब कि घृणा, चिड़चिड़ाहट और क्रोध औरोंमें इसी तरहकी गतिविधियां जगायेंगे।

१८. तुम्हें शांत और एकाग्र रहना चाहिये। बिना जरूरतके एक वाक्य भी न बोलो और भगवान्‌की सहायतापर श्रद्धा रखो।

१९. अच्छी तरह सोओ और मेरे आशीर्वादकी संरक्षक छायामें विश्राम करो।

२०. पश्चात्ताप बेकार है। तुम्हें और प्रगति करनेकी संभावनाके आनंदका अनुभव करना चाहिये।

२१. तुम्हें अपनी अभीप्साको और सभी बाधाओंको जीतनेकी इच्छा-को अक्षुण्ण बनाये रखना चाहिये। तुम्हें भागवत कृपा और निश्चित विजयपर अटल श्रद्धा रखनी चाहिये।

२२. जीवन ऐसा नहीं है जैसा उपन्यासोंमें चित्रित किया जाता है। दैनन्दिन जीवन छोटे-बड़े कष्टोंसे भरा है और केवल भागवत चेतनाके साथ तादात्म्य साधकर ही सच्चे, परिवर्तनशील आनंदको पाया और रखा जा सकता है।

अपना विश्वास और अपनी श्रद्धा बनाये रखो और सब कुछ ठीक हो जायगा।

२३. मन हमेशा पागलकी तरह दौड़ा करता है। पहला कदम है कि अपनी चेतनाको उससे अलग कर लो और उसे अपने-आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दौड़ने दो, तुम उसके साथ न दौड़ो। इसमें उसे कम मजा आता है और कुछ समय बाद वह ज्यादा स्थिर हो जाता है।

२४. अपना अवलोकन करना अच्छा है ताकि तुम अपनी कमजोरियां देख सको और उन्हें सुधारने लायक बन सको।

२५. प्रकृति जटिल है और सदा सत्य और मिथ्या, शुभ और अशुभ आपसमें मिले रहते हैं। अपने दोषों और दुर्बलताओंको स्पष्ट रूपसे देखना बहुत उपयोगी है लेकिन केवल उन्हींको न देखना चाहिये क्योंकि यह बहुत ज्यादा एकांगी होगा। तुम्हें उसके बारेमें भी अभिज्ञ होना चाहिये जो प्रकृतिमें शुभ और सत्य है और उसकी ओर पूरा ध्यान देना चाहिये ताकि शुभ और सत्य पक्ष बढ़ता रहे और अंततः बाकी सबको आत्मसात् कर ले और प्रकृतिको रूपांतरित कर दे।

२६. अवसाद, अनुत्साह और विद्रोहके लिये दरवाजा न खोलो, यह तुम्हें चेतनासे दूर, बहुत दूर ले जाकर अंधकारकी गहराइयोंमें डुबा देता है जहां सुख कभी घुस भी नहीं सकता। मुस्कान ही तुम्हारी सबसे बड़ी शक्ति थी।

२७. मेरी सहायता हमेशा तुम्हारे साथ रहती है, इतनी पूर्ण जितनी कि हो सकती है। अब यह तुमपर निर्भर है कि तुम अपने-आपको खोलो और उसे ग्रहण करो। और निश्चय ही तुम विद्रोही बनकर या असंतुष्ट होकर यह न कर पाओगी।

२८. अपनी मुस्कानको वापिस ले आओ, अपनी श्रद्धाको वापिस ले आओ, फिरसे वही विश्वस्त बालक बन जाओ जो तुम थी, अपने दोषों और कठिनाइयोंपर एकाग्र न होओ—तुम्हारी मुस्कान उन सबको भगा देगी।

२९. जो हो चुका उसपर कुछ समयके बाद नजर डालनेसे एक लाभ होता है। दूरसे, क्रियासे अलग होकर तुम ज्यादा स्पष्ट देख सकते और ज्यादा अच्छी तरह समझ सकते हो कि क्या करना और क्या न करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३०. कहा जाता है कि घृणा प्रेमका उल्टा रूप है। बहरहाल यह एक खतरनाक भाव है जो तुम्हें हमेशा उस व्यक्तिके अधीन रखता है जिससे तुम घृणा करती हो।

३१. सत्ताका संतुलन नियमित कार्यपर आधारित होता है।

मनुष्यका मन

(गतांकसे आगे)

शिष्य—अगर प्राण मनको सहारा दे तो मनकी विजयकी पूरी संभावना रहेगी ?

श्रीअरविंद—जरूरी नहीं है। हो सकता है कि प्राण राजी हो जाय और मानसिक सत्ताकी सहायता करनेको तैयार हो परंतु उसमें इतनी काफी शक्ति न हो कि विचारोंको जीवनमें क्रियान्वित कर सके।

शिष्य—प्राणमय सत्तामें अतिमानसिक तत्त्व कौन-सा है ?

श्रीअरविंद—तुम कह सकते हो कि प्राणमें अतिमानसिक तत्त्व है, प्राणिक अंतर्भास, प्रेरित आवेग और अंतःप्रेरणाएं। यह एक ऐसी चीज है जो ऊपरसे सीधी प्राणिक सत्तामें आती है, यह जरूरी नहीं है कि वह मनको छूती हुई आये। वही इस बारेमें सच्चे अंतर्भास देती है कि क्या करना है। ऐसे लोग हैं, और यह जरूरी नहीं कि वे योगी हों, जो चिंतन, मननके बिना ही एकदम जान लेते हैं कि कौन-सी चीज उचित है जिसे करना चाहिये।

सभी प्रतिभाशाली व्यक्तियोंमें यह क्षमता होती है—एक प्रकारका अर्द्ध अतिमानस भावापन्न प्राण-पुरुष, जो हमेशा उनसे ठीक काम करवाता है, ऐसा काम जिसे करना चाहिये। वे अपने कामोंमें भूल नहीं करते। साधारणतः वे तर्क नहीं करते। वास्तवमें वे तर्क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं कर सकते, कारण नहीं बता सकते फिर भी हमेशा ठीक चीज करते हैं और सफल होते हैं।

जैसा कि मैंने कहा, प्राण हमारी सत्ताका बहुत जरूरी अंग है। जब वह बदल जाता है तो उच्चतर शक्तिके हाथमें यंत्र बन जाता है। तब कामना नहीं, उच्चतर शक्ति उसके द्वारा काम करती है।

ऐसा कर सकनेके लिये उसे अपने-आपको मनसे ऊपरके सत्यकी ओर खोलना चाहिये।

शिष्य—प्राण क्या है?

श्रीअरविंद—प्राचीन परिभाषाके अनुसार प्राण चेतनाका आधारभूत पदार्थ है। यहां सत्ताकी सभी गतिविधियोंके पीछे वही होता है। वह चित्तसे भिन्न होता है जो उच्चतर चेतना है, उदाहरणके लिये प्राण आकाश और चित्त आकाश है।

और फिर भौतिक सत्ता है, उसमें भौतिक मन होता है जो अधिकतर मनुष्योंमें होता है। वह अपने इर्द-गिर्दकी भौतिक चीजोंको देखता और स्वीकार करता है लेकिन उनके परे नहीं जाता। वह उन्हें उसी तरह स्वीकार करता है जैसी वे हैं। हम यह तो नहीं कह सकते कि वह उनके बारेमें सोचता है पर वही इन चीजोंको किसी तरहसे व्यवस्थित करता है। जब उच्चतर क्षमताओंके साथ न हो तो वह तर्क नहीं करता। तुम कह सकते हो कि वह मानसिक सत्ताका दूरतम बिंदु है—जैसे कलमकी नोक होती है—जो मानसिक सत्ताके कामके लिये जरूरी है। जब मैं कलम उठा कर बिना कुछ सोचे समझे कोई शब्द या नाम कागजपर लिखना शुरू करता हूं तो भौतिक मन ही यह करवा रहा होता है।

फिर है प्राणिक भौतिक या भौतिक प्राण। यह भौतिक सत्तामें विचरण करता हुआ प्राण होता है। हमारे लिये यह बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यही विभिन्न अंगोंसे काम करवाता है और भौतिक सत्ताकी क्रियाओंको नियंत्रित करता है। यही शरीरको स्वास्थ्य और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल देता है। इसी कारण उपनिषद् शरीरमें विचरण करते हुए प्राणकी बात करते हैं।

ये सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि वे मानों उच्चतर क्षमताओंकी स्नायुओंके छोर हैं। अगर वे उच्चतर क्षमताओं और आंतरिक सत्ताको ठीक तरह प्रत्युत्तर न दें तो तुम कुछ भी भली-भांति नहीं कर सकते।

उदाहरणके लिये अगर तुम संगीतज्ञ हो तो चाहे तुम्हारे अंदर अच्छे-से-अच्छा संगीत क्यों न भरा हो फिर भी तुम कुछ नहीं कर सकते अगर तुम्हारी उंगलियां ठीक तरह काम न करें। वे मानों आंतरिक सत्ताके दूरके छोर हैं जिनके द्वारा आंतरिक सत्ता अपने-आपको भौतिक स्तरपर प्रकट करती है। यह ठीक एक कलमकी तरह है जिसके द्वारा विचार अभिव्यक्ति पाता है।

यही कारण है कि मस्तिष्क शरीरका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता है। इसलिये नहीं कि वह विचारकी रचना करता है बल्कि केवल इसलिये कि वह ऐसी संयोजक कड़ियां बनाता है जिनके द्वारा विचार यहांपर अभिव्यक्ति पाता है। यह वह उपकरण है जो उच्चतर क्रियाको ग्रहण करता है।

शिष्य—चित्रकलामें भी वही कठिनाई है जो संगीतमें है।

श्रीअरविंद—हां, कविता भी। ऐसे लोग भी हैं जो अपने मनमें तो अच्छी कविता पाते हैं पर जिस क्षण वे कलम उठाते हैं, सब कुछ गायब हो जाता है।

शिष्य—जी हां, 'क'के साथ यही मुश्किल है। उसे बहुत कुछ लिखना है पर जैसे ही वह कलम उठाता है तो बस कलम और स्याही बच रहते हैं। (हंसी)

श्रीअरविंद—और फिर आता है मुख्य भौतिक, जड़ भाग। यह है शरीर चेतना, तुम चाहो तो 'मांस चेतना' कह सकते हो। यह चेतना शरीरके कोषाणुओंतकमें होती है।

भौतिकमें काम करते हुए अतिमानसके बारेमें कुछ कहना कठिन है। तुम कह सकते हो कि यह भौतिक कोषाणुओंमें एक ऐसी चीज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जो उनसे ठीक-ठीक वही चीज करवाती है जो शरीरके लिये आवश्यक है। उदाहरणके लिये, चूंकि वह है इसलिये शरीर जानता है कि उसे क्या खाना चाहिये। अगर उसे स्वतंत्र छोड़ दिया जाय तो वह तुम्हें बतला सकता है कि उसे क्या चाहिये और क्या नहीं। मान लो कि तुम इस चीजको लो और बिना किसी मानसिक क्रियाके जान लो कि उसका भार कितना है, यह सीधी भौतिक चीज है।

लेकिन अधिकतर सभ्य लोग इस क्षमताको खो चुके हैं। लोगोंने अपने अंदर उठती हुई प्राणिक और मानसिक क्षमताओंकी ओर बहुत ज्यादा ध्यान दिया। सामान्यतः खानेके, मामलेमें प्राण अपनी कामनाओंको लेकर बहुत ज्यादा बाधा डालता है। वह कहता है, 'मुझे यह चाहिये,' 'मैं वह पसंद करता हूं', 'मैं यह पसंद करता हूं', और मन भी अपने विचार लेकर आ जाता है, 'मेरे लिये यह ज्यादा अच्छा है,' 'इसके अंदर यह चीज है इसलिये यह खाना ज्यादा अच्छा है।'

लेकिन अगर भौतिक चेतनाको स्वतंत्र छोड़ दिया जाय तो वह जानती है कि उसे क्या चाहिये। शरीरमें कोई कामनाएं नहीं होतीं, उसमें आवश्यकताएं होती हैं और वह जानता है कि उसके लिये क्या आवश्यक हैं।

शिष्य—क्या मनुष्य इस खोई हुई क्षमताको वापिस पा सकते हैं?

श्रीअरविंद—इसे पूरी तरह वापिस पा सकना कठिन है लेकिन हम उसे बड़ी हदतक पा सकते हैं। इस तरह हम आदिम मानवकी बहुत-सी क्षमताएं खो चुके हैं।

शिष्य—चिकित्सा विज्ञानमें ऐसी चीजें हैं जो इस दृष्टिका समर्थन करती हैं। अभी आपने बतलाया कि कोषाणुओंमें चेतना है। यह देखा गया है कि जब आमाशयमें पदार्थ अमुक स्थितिमें हो, कोषाणु खाये हुए भोजनको आत्मसात् करते हैं। तब पोषक तत्त्वोंको शरीर बड़ी हदतक अपना सकता है। जब विष लिया जाय तो चाहे उसे आत्मसात् करनेकी अवस्थाएं मौजूद हों तो भी शरीरके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोषाणु उसे अस्वीकार कर देते हैं, वे विषको नहीं अपनाते, इसे चयनात्मक आत्मसात्करण कहते हैं। मानों शरीर जानता है कि यह विष है और उसे अस्वीकार करता है।

श्रीअरविंद—हां।

शिष्य—जैसे जानवर जानते हैं कि उन्हें क्या नहीं लेना चाहिये।

श्रीअरविंद—हां, यही भौतिक चेतना है। कभी-कभी वे गंधसे जान लेते हैं। हम देखते हैं कि मनुष्यके अंदर मन प्राणकी कीमत चुका कर आगे बढ़ा है उसी प्रकार उसे शरीरकी कई क्षमताओंको भी छोड़ना पड़ा है।

हां, यह तर्क किया जा सकता है कि अगर मनुष्य अपनी मानसिक सत्तापर इतना जोर न डालता तो वह इन चीजोंके बारेमें सत्य जाननेकी कोशिश न करता। तब मन आलसी बना रहता। लेकिन जरूरी नहीं है कि मन आलसी रहता। मन वह चेतना है जो अपने ही ऊपर उलटती है और ऊपरसे प्राण और भौतिकपर नीचे नजर डालती है। इन क्षमताओंको खोनेकी जगह मन, प्राण और भौतिकके जुटाये हुए साक्ष्यको लेकर आगे जा सकता था, उन्हें समझनेकी कोशिश कर सकता था।

शिष्य—सौंदर्य बोधात्मक रचनाएं किस स्तरकी होती हैं?

श्रीअरविंद—यह अलग-अलग लोगोंपर निर्भर है। सामान्यतः यह प्राणमय लोककी चीज है। लेकिन इसमें भेद भी होते हैं, उदाहरणके लिये, शैलीका सौंदर्य, भाषाका सौंदर्य, लय छन्द आदिका सौंदर्य। ये सब प्राणिक स्तरकी चीजें हैं।

परंतु सौंदर्यात्मक रचनाएं हर स्तरपर हो सकती हैं। मूल रूपसे ये सब आनंदमय लोकसे आती हैं।

शिष्य—आज 'क'का जो पत्र आया था वह किस स्तरका है? प्राणिक सौंदर्यका?

श्रीअरविंद—यह प्राणिक कल्पना है। यह कोई ऐसी चीज है जो तथ्योंकी परवाह किये बिना अपनी ही राह लेती है। अगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी शक्तिशाली है तो वह अपनी कल्पनाको चरितार्थ कर सकता है।

शिष्य—क्या ऐसे आदमीको ही हम स्वप्न-द्रष्टा कहते हैं?

श्रीअरविंद—स्वप्न, स्वप्न सभी लोकोंके हो सकते हैं, किसी लोक विशेषके नहीं।

शिष्य—मेरा मतलब ऐसे लोगोंसे है जो अपने स्वप्नोंको चरितार्थ नहीं कर सकते और चीजोंकी कल्पना करते रहते हैं।

श्रीअरविंद—हां, ऐसे आदर्शवादी जिनमें ऐसी प्राणमय शक्ति नहीं होती जो उनके आदर्शोंको जीवनमें उतार कर उन्हें प्रभावशाली बना सके।

शिष्य—स्मृति क्या है? क्या यह कोई मानसिक क्षमता है?

श्रीअरविंद—स्मृति सब जगह होती है। वह सब जिसके बारेमें हम सचेतन हैं या नहीं हैं, प्राणके अंदर अभिलिखित होता है, यही चेतनाका मौलिक पदार्थ है। लेकिन तुम्हें याद वही रहता है जो तुमने ध्यानसे सुना और मनमें बैठा लिया है। परंतु साधारणतः ये संस्कार प्राणमें आते और साथ-ही-साथ अवचेतनामें या अंतर्लीन चेतनामें डूब जाते हैं। तुम उसे जो चाहो कह लो।

एक प्रामाणिक घटना है हिब्रू भाषाके एक प्रसिद्ध फ्रेंच विद्वान्‌की नौकरानीकी। वह काम करते-करते अपने मालिकको हिब्रूमें बाइबल-का पाठ करते हुए सुनती थी, उसके लिये वह निरर्थक बकवास थी। जब वह असामान्य स्थितिमें थी तो मालिकके किये गये पाठको उसी स्वर और लहजेमें, बिना एक भी भूल किये दोहरा गयी। उसे यह भाषा बिल्कुल न आती थी, उसका मन इसमेंसे कुछ भी न समझ पाता था लेकिन वह अवचेतन सत्तामें अभिलिखित होता गया। हमारे पैरोंके तलवोंकी भी अपनी अलग स्मृति होती है।

हमने इन क्षमताओंका विभाजन और विश्लेषण किया है परंतु सभी विश्लेषणोंकी तरह यह समझनेकी सुविधाके लिये है। वस्तुतः ये इतने कटे-छंटे नहीं होते। वे अलग-अलग काम नहीं करते। उनमें आपसमें बहुत क्रिया-प्रतिक्रिया होती है। सत्ता अपनी क्रियामें, जैसा हम समझते हैं उससे कहीं अधिक जटिल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदाहरणके लिये हमने सत्ताको मन, प्राण और शरीर तीन भागों-में बांटा है लेकिन जब हम मनकी बात करते हैं तो मानों अपने ही लोकमें कार्य करते हुए मनको समझते हैं। लेकिन सभी भाग एक दूसरेसे जुड़े हैं और मन ऊपरसे लेकर एकदम नीचेतक चेतनाके सभी स्तरोंपर काम करता है। सभीके बारेमें यही बात है। केवल समझनेंकी सुविधाके लिये यह वर्गीकरण है।

शिष्य—क्या प्रकृतिकी ये गतियां वैश्व गतिविधियोंके साथ मेल नहीं रखतीं ?

श्रीअरविंद—हां, अन्यथा वे मनुष्यमें न पायी जातीं।

शिष्य—दर्द क्या है ?

श्रीअरविंद—तुम्हारा मतलब दुःखसे है, यह स्वभावतः प्राणिक होता है।

१४-८-१९२६

शिष्य—क्या सौंदर्यबोधात्मक सत्ता और चैत्यमें कोई संबंध है ?

श्रीअरविंद—सौंदर्यात्मक सत्तामें सौंदर्य बोध होता है और चैत्य सत्तामें भी सौंदर्य-बोध होता है। इसके सिवा इन दोनोंमें कोई खास संबंध जरूरी नहीं है।

सौंदर्यात्मक सत्ता प्राणमय लोककी चीज है। अगर मनुष्य केवल रूप और रेखाका स्वामी नहीं है तो सौंदर्यात्मक सत्ता रूपके सौंदर्यसे कुछ और चीज अभिव्यक्त कर सकती है। सौंदर्यात्मक सत्ता रूप और रेखाके सौंदर्यको देखती है और साथ ही किसी ऐसी चीजके सौंदर्यको देखती है जो अभिव्यक्त की गयी है जब कि चैत्य सत्ता अंतरात्माकी मनोहरताको देखती है।

चैत्य सत्तामें उस तरहकी सुन्दरता नहीं होती जैसी कि सामान्यतः समझी जाती है। वह एक 'मोहकता' है—एक आंतरिक सुन्दरता, अंतरात्माकी सुन्दरता। लेकिन यह जरूरी नहीं है कि उसमें रूपकी सुन्दरता भी हो—यद्यपि यह भी हो सकती है। हो सकता है कि जिस व्यक्तिमें सुन्दर अंतरात्मा है वह सुन्दर न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य—क्या अंतरात्माकी उदात्तताको भौतिक सुन्दरतामें प्रकट न होना चाहिये ?

श्रीअरविंद—होना तो यही चाहिये लेकिन जीवनमें हमेशा ऐसा नहीं होता। हो सकता है कि किसीकी अंतरात्मा सुकरातके जैसे उदात्त हो और देखनेमें वह उसीके जैसा कुरूप हो !

शिष्य—सभी बच्चे हमेशा सुन्दर होते हैं।

श्रीअरविंद—उनमें प्राणिक चमक होती है।

शिष्य—क्या चैत्य सुन्दरतामें रंग, रेखा या ऐसी कोई विशेषता होती है ?

श्रीअरविंद—चैत्य सुन्दरता अपने-आपको, सौंदर्यात्मक बोधकी सुन्दरताकी तरह रंग और रेखामें प्रकट करे यह जरूरी नहीं है। यह उन सबसे एकदम भिन्न है यद्यपि यह अपने-आपको उनके द्वारा भी प्रकट कर सकती है। यह एक तरहकी अनिर्वचनीय मोहकता और सुकुमारता है।

शिष्य—इसका मतलब यह हुआ कि चैत्य सौंदर्यमें कोमलता और सुकुमारता होती है।

श्रीअरविंद—अगर तुम शब्दोंको इस तरह पकड़ो तो तुम मेरे अर्थका अनर्थ करते हो। प्राणिक सुन्दरतामें भी कोमलता होती है लेकिन यह वही नहीं है। कभी-कभी एक दृष्टि या मुस्कान प्राणिक नहीं चैत्य सुन्दरता व्यक्त करती है।

कुछ फूलोंमें चैत्य सुन्दरता होती है। उदाहरणके लिये चमेली बहुत चैत्य फूल है।

शिष्य—फूलोंमें सुन्दरता तो होती है पर मेरे लिये यह नयी बात है कि फूलोंमें चैत्य सुन्दरता होती है।

श्रीअरविंद—हां, यह फूलकी अंतरात्माकी सुन्दरता है।

शिष्य—फूलकी अंतरात्मा !

श्रीअरविंद—मैं जानता था कि इससे तुम चौंक पड़ोगे। तुम्हारा ख्याल है कि फूलोंमें आत्मा नहीं होती ? मनुष्यका अज्ञान ही उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह विचार देता है कि वह सृष्टिमें सबसे ऊंचा है। बहुत-से कुत्तोंमें बहुत-से मनुष्योंकी अपेक्षा अधिक सुन्दर चैत्य होता है!

शिष्य—तब फिर मनुष्यको सृष्टिमें सबसे ऊंचा क्यों माना जाता है?

श्रीअरविंद—मनुष्यका अहंकारात्मक अज्ञान ही उसे यह सोचनेकी प्रेरणा देता है। वह ऊंचा है क्योंकि उसमें दिव्य जीवन विकसित करनेकी संभावना है। तुम यह भी कह सकते हो कि वह ऊंचा है क्योंकि उसमें मन विकसित हुआ है और मन उसे सचेतन विकासका अवसर देता है। लेकिन इसका यह जरूरी निष्कर्ष नहीं है कि चूंकि मनुष्य मानसिक प्राणी है अतः उसने अपने मनका उपयोग विकासके लिये किया है। चूंकि मनुष्यमें मन है ठीक इसीलिये उसके अंदर दानवी होनेकी भी अनंत क्षमता है। वह अपने दानवकी सहायताके लिये मनको प्रस्तुत कर देता है। स्वयं दानव इतना बुरा नहीं हो सकता जितना वह मनुष्य जो अपने मनको इस प्राणिक सत्ताकी सेवामें लगा देता है।

शिष्य—अनंत संभावनाएं! दैवी और दानवी दोनों!!

श्रीअरविंद—मनुष्यके अंदर अहंकारमय अज्ञान उसे यह भाव देता है कि वह सृष्टिमें सबसे ऊंचा है।

शिष्य—लेकिन मनुष्यके शरीर और पशुके शरीरमें कितना अधिक फर्क है।

श्रीअरविंद—बस इतना ही। और वह भी इतना अधिक नहीं है जितना तुम मान लेते हो।

आखिर पशुके शरीर और मनुष्यके शरीरमें क्या फर्क है। अगर सावधानीसे देखो तो तुमने पूंछको छोड़ दिया है और चार पैरपर चलनेकी जगह दो पर चलते हो और दो को हाथ बना दिया है। मस्तिष्कमें कुछ थोड़ेसे परंतु बहुत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं और इधर-उधर व्यौरोंमें कुछ हेर-फेर। तुमने अपने लोम और सींगको उतार फेंका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य— सभी मनुष्योंने नहीं। 'क'में प्रचुर लोम हैं। (हंसी)

श्रीअरविंद—हां, देखो ये भौतिकमें इतने बड़े परिवर्तन नहीं हैं जो मनुष्य और पशुके बीच खाई खड़ी कर दें।

बेवकूफी, यह सारी आदमीकी बेवकूफी है! मनुष्य इसलिये बड़ा है क्योंकि वह किसी उच्चतरकी ओर खुल सकता है और सचेतन रूपसे मनके परे जा सकता है और पृथ्वीपर दिव्य जीवन जी सकता है।

शिष्य—अभी आपने कहा कि चमेली चैत्य फूल है—यह आकार-प्रकारमें, रंगमें या सुगंधमें चैत्य है?

श्रीअरविंद—नहीं, मेरा यह मतलब बिल्कुल नहीं था कि फूलोंकी चैत्य सुन्दरता इन बाहरी चीजोंमें है, उनकी इस सुन्दरताके विचारको मनको समझाना बहुत कठिन है।

शिष्य—और गुलाब कैसा है।

श्रीअरविंद—गुलाब प्रबल रूपसे प्राणिक है। वहां उसके रूपमें आंतरिक आत्मा खो गयी है।

शिष्य—और कमल?

श्रीअरविंद—कमल निश्चय ही प्रतीकात्मक फूल है। वह आंतरिक सत्ताके उच्चतर सत्यकी ओर खुलनेका प्रतीक है। तुम देख सकते हो कि कमल एक गुह्य फूल है।

शिष्य—क्या आप भारतीय चित्र कलामें कुछ ऐसे चित्रोंको याद कर सकते हैं जिनमें चैत्य सुन्दरता हो?

श्रीअरविंद—अभी तो मुझे याद नहीं है पर मैंने ऐसे कुछ चित्र देखें जरूर हैं, बहुत नहीं।

तुमने नन्दलाल बसुका चित्र 'पथहारा' (गायका) देखा है?

शिष्य—जी हां।

श्रीअरविंद—उसमें कुछ चैत्य स्पर्श है, एक और चित्र अवनीन्द्रनाथ-का था। लेकिन साधारणतः अवनीन्द्रनाथकी प्रेरणा प्राणसे आती है।

शिष्य—क्या उसका मानसिक सुन्दरतासे संबंध नहीं होता?

श्रीअरविंद—नहीं। इसीलिये जबतक तुम अपनी अंतरात्मासे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभव न कर लो यह कहना मुश्किल है कि यह चैत्य सौंदर्य है। उदाहरणके लिये तुम किसी पुस्तकमें एक प्रसंग पढ़ते हो और कह उठते हो, "आह, क्या सुन्दर है!" यह मानसिक सुन्दरता होगी चैत्य नहीं। किसी मनुष्यके चेहरेपर बुद्धिमत्ताकी चमक दीख सकती है लेकिन वह बुद्धिमत्ताके कारण होगी, चैत्यके कारण नहीं।

शिष्य—क्या जिस व्यक्तिमें चैत्य सत्ता विकसित न हुई हो वह चैत्य सुन्दरताको सराह सकता है?

श्रीअरविंद—तुम्हारा मतलब क्या है? हर एकमें चैत्य सत्ता होती है।

शिष्य—लेकिन अगर चैत्य सत्ता मजबूत न हो?

श्रीअरविंद—हो सकता है कि चैत्य इतना मजबूत न हो कि वह मानसिक और प्राणिक सत्तापर अपनी छाप डाल सके फिर भी उसमें चैत्य भाव हो। ऐसे लोग हैं जिनमें ये चैत्य भाव उनके जीवनपर प्रभाव डालते हैं।

शिष्य—सौंदर्यकी चीजें मनुष्यके आध्यात्मिक विकासको कैसे प्रभावित करती हैं?

श्रीअरविंद—यह इसपर निर्भर है कि आध्यात्मिक विकाससे तुम्हारा क्या मतलब है, वह मनुष्यके विकासमें उसी तरह सहायक है जैसे हर चीज सहायक होती है। सौंदर्य बोधको बढ़ानेसे स्वभाव परिष्कृत होता है। परिष्कृत स्वभावकी शुद्धि अपरिष्कृतकी शुद्धिसे बहुत ज्यादा आसान होती है। महात्मा गांधी इस चीजको नहीं समझ पाये कि सौंदर्य-बोधका विकास पूर्णताका उतना ही अंग है जितना कोई और। केवल इतना ही नहीं, अगर आदमीमें सौंदर्य-बोध विकसित नहीं हुआ है तो वह परम पुरुषकी ओर जानेका वह मार्ग न पा सकेगा जो सौंदर्यसे होकर जाता है।

शिष्य—आपने कुछ समय पहले कहा था कि अतिमानव हमेशा अठारह वर्षका युवक लगेगा।

श्रीअरविंद—क्या मैंने ऐसा कहा था? मैं तो यह कहना चाहूंगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि उसकी कोई उम्र न मालूम होगी—यानी उसके शरीरपर उम्रकी कोई छाप न होगी।

२८-९-१९२६

शिष्य—सत्ताके प्रत्येक स्तर, भौतिक, प्राणिक और मानसिकपरसे जगत्‌को देखते हुए पुरुषके विशेष लक्षण क्या होते हैं?

श्रीअरविंद—पुरुष जगत्‌को उसी तरहसे देखता है जैसे प्रकृति उसे उपस्थित करती है। मानसिक स्तरपर प्रकृति विचारों, भावों, संक्षेपमें कहें तो सभी मानसिक गतिविधियोंके रूपमें प्रस्तुत करती है। प्राणिक स्तरपर प्रकृति स्वयंको कामनाओंके द्वारा, संक्षेपमें कहें तो प्राण शक्तिकी क्रियाके रूपमें प्रस्तुत करती है। भौतिक स्तरपर वह अपने-आपको भौतिक जीवनके अपरिवर्तनशील विधानके रूपमें प्रस्तुत करती है।

शिष्य—जब पुरुष अपने-आपको प्रकृतिसे अलग करता है तो उसके लिये किसी उच्चतर चीजके लिये अभीप्सा करना कैसे संभव होता है?

श्रीअरविंद—पुरुष नहीं प्रकृतिद्वारा अभीप्सा करवानी चाहिये और उसे उपयुक्त बनाना चाहिये। पुरुष तो नीरव, निष्क्रिय होता है और प्रकृतिको देखता रहता है।

शिष्य—अतिमानससे पृथ्वीको देखनेका पुरुषका विशिष्ट तरीका क्या है?

श्रीअरविंद—अतिमानस पुरुष उसी तरह देखता है जैसे सत्य देखता है।

शिष्य—और सत्य कैसे देखता है इस जगत्‌को?

श्रीअरविंद—(हाथ ऊपर उठाकर) तुम वहांतक उठ जाओ तो देख लोगे।

शिष्य—तैत्तिरीय उपनिषद्‌में कहा है—विज्ञान यज्ञको प्रसारित करता है। जो वस्तु प्रिय है वह उसका शिर है, आनंद उसका दाहिना पार्श्व है और अति आनंद बांया पार्श्व। आनंद शरीर है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और ब्रह्म निचला भाग, आधार। (तस्य प्रियमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पक्षः। प्रमोदः उत्तरः पक्षः। आनन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा)।

श्रीअरविंद—यहां पुच्छम् या पूंछका अर्थ है छोर या आधार। उसका अर्थ है कि आनंदका आधार अनन्त है, ब्रह्म है।

शिष्य—और आगे कहा है "उससे भरा हुआ है, श्रद्धा उसका सिर है, गतिका सत्य दांया पार्श्व, सत्ताका सत्य बांया पार्श्व। ऐक्य, शरीर, महर्लोक, निचला भाग है—आधार।"

(तैनेव पूर्णः . . . तस्य श्रद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तरः पक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा।)

श्रीअरविंद—इसका मतलब यह हुआ कि अगर तुम अतिमानस-तक उठना चाहो तो तुम्हें महसको प्राप्त करना होगा—वृहत्, अनंत और वैश्व चेतना जो उसका आधार है। ऋतम्का अर्थ है गतिका सत्य, सत्यम् है सत्ताका सत्य, श्रद्धा है, जब सत्य उपस्थित हो तो उसकी स्वीकृति।

शिष्य—जब सत्य अतिमानस स्तरपर मौजूद है तो श्रद्धाकी क्या जरूरत?

श्रीअरविंद—श्रद्धाका यहां मतलब यह है कि जब तुम सत्यको देखो तो उसे स्वीकार करनेके लिये तैयार रहो। योगात्माका मतलब है कि निम्नतर सत्ताको उच्चतर सत्ताके साथ ऐक्य पानेकी जरूरत है ताकि मनसे उच्चतर स्तरतक पहुंच सके।

शिष्य—उसमें प्राणायामके बारेमें भी कहा गया है और यह भी कि इसीके द्वारा वह संपन्न होता है।

श्रीअरविंद—इसमें कहा गया है कि मनोमय प्राणसे अधिक ऊंचा है और इसके द्वारा संपन्न होता है।

शिष्य—उसमें यह भी कहा गया है कि यज्ञ शिर है, ऋक् दक्षिण पार्श्व है, साम वाम पार्श्व है, आज्ञा अंतरात्मा है और अथर्वांगिरस पुच्छ या आधार है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद—ऋक्का मतलब है; मनमें अंतर्भासात्मक गति, साम है, 'गति और सामंजस्यकी लय', अथर्वका अर्थ है, 'भौतिक स्तरका प्रभावोत्पादक कर्म' कम-से-कम वेदमें अंगिरसका अर्थ अग्निकी शक्ति जो गौओंको मुक्त करती है पणियोंकी गुफासे यानी प्रकाशको अंधकार-से और यह शब्द तथा इंद्र और अन्य देवोंकी सहायतासे होता है।

शिष्य—क्या ईसाइयोंकी त्रयी ब्रह्मा, विष्णु, महेशसे मेल खाती है?

श्रीअरविंद—नहीं, भारतीय त्रयी वे वैश्व शक्तियां हैं जो विश्व-की अमुक गतिविधियोंका नियंत्रण करती हैं जैसे ब्रह्मा सृजनका, जब कि ईसाई 'पुत्र' शायद 'मनुष्यके अंदर भगवान्' है, 'पवित्रात्मा' शायद 'दिव्य चेतना' है।

३-१०-१९२६

श्रीअरविंद—सच्ची (ह्यूमिलिटी) दीनता या विनय वह है जब तुम अपने दोषोंको स्वीकारनेके लिये तैयार हो लेकिन इसके लिये अपने-आपको अधम माननेकी जरूरत नहीं। तुम अनुभव करते हो कि तुम्हारे अंदर वे सब दोष हैं जो वैश्व प्रकृतिमें हैं और व्यक्तिगत रूपसे तुम किसीसे भी श्रेष्ठतर नहीं हो। तुम्हें यह भावतक नहीं बनाये रखना चाहिये कि ये दोष चलें जायें और यह न रटते रहना चाहिये, "मैं कुछ नहीं हूं। मैं पापोंसे भरा हूं"—साथ ही उसके बारेमें तुम्हारा सिर फूला न होना चाहिये, सचमुच यह घमंडका अभाव है। ह्यूमिलिटी अच्छा शब्द नहीं है।

शिष्य—क्या आध्यात्मिक पूर्णतामें विनोद भावका कोई स्थान है?

श्रीअरविंद—अगर सिद्ध कभी नहीं हंसता तो यह एक अपूर्णता है।

(अपूर्ण)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषिवर बोले :

योगके लिये पात्र

पिछली बैठकमें किसी ईरानी विद्यार्थीने ऋषिवरसे खेल-कूदके बारेमें प्रश्न किया था, आज एक अरबकी बारी थी। उसने जरा सकुचाते हुए, अपनी भाषामें घणी खमा कहते हुए कहा, अच्छा ऋषिवर यह बतलाइये कि आप लोग योगकी दीक्षा हर एकको क्यों नहीं देते? कितने लोग योग करनेके लिए लालायित रहते हैं परंतु उनसे यही कह दिया जाता है कि योग हर एकके लिए नहीं है। देखिये पश्चिमने अपने विज्ञानके द्वार सबके लिए खोल रखे हैं, जो सीखना चाहे सीख सकता है। फिर आपके यहां, क्षमा कीजिये, यह संकुचित वृत्ति क्यों है?

बीचमें ही एक और अपरिचित विद्यार्थी बोल पड़ा, पश्चिम इस मामलेमें बहुत उदार है अब उसने योगको हाथमें लिया है और जगह-जगह योगकी कक्षाएं लग रही हैं, बस निश्चित शुल्क दो और योग सीख लो। कोई झंझट ही नहीं।

ऋषिवर मुस्कराये बोले, भई तुम्हारी बात है तो मजेदार लेकिन मुश्किल यह है कि तुम भी राजनीतिक लोगोंकी तरह बातें कर रहे हो।

यह बात किसीकी समझमें नहीं आयी। स्पष्टीकरण मांगनेके लिए हिम्मत की वन्दनाने। उसने पूछ ही तो लिया, ऋषिवर इससे आपका क्या मतलब है?

ऋषिवर बोले, नहीं, समझे तुम लोग? हमारे यहां लोग सबसे ज्यादा बक-बक किस विषयमें करते हैं? राजनीतिमें। क्योंकि यह एक ऐसा विषय है कि तुम बिना जाने घंटों गरदनकी रगें फुला-फुला कर बोल सकते हो।

देखो, साधारणतः योग होता है आत्मा और परमात्माका मिलन,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके लिए अनेकानेक पंथ हैं। आसन शरीरको योगके लायक बनानेवाली एक प्रकारकी कसरतें हैं। आधुनिक पश्चिमी लोगोंको योगासनोंने सम्मोहित कर लिया है और उनके यहां बस योगका मतलब ही हो गया है आसन। यह ऐसे ही है जैसे कोई कहे हाथीका मतलब सूंड। दुःखकी बात तो यह है कि दास मनोवृत्तिवाले भारतीय भी सूंडको ही हाथी कहने और मानने लगे हैं।

सचमुच योग हमारी सत्ताके विकासकी क्रिया है। जैसे पशु विकसित होकर मनुष्य बना उसी तरह अब मनुष्यके विकसित होकर देव बननेकी बारी है। पशुके विकासमें उसका अपना हाथ न था। मनुष्यको यह विशेषाधिकार दिया गया है कि वह इस दिशामें प्रयास करे—यह प्रयास ही योग है।

इससे तुम्हें अन्दाज लगेगा कि योग कितनी महत्त्वपूर्ण चीज है। अब अपनी बातपर आओ। तुम्हारा कहना है कि विज्ञानके दरवाजे सबके लिए खुले हैं। सिद्धांत रूपमें यह बात ठीक है पर व्यावहारिक रूपमें? क्या कल्लू-मल्लू जाकर बिना किसी तैयारीके सायंस कालेज या आई. टी. आई. में भरती हो सकते हैं? वहां प्रवेश पानेसे पहले काफी कड़ी परीक्षा पास करनी पड़ती है। उच्चतर शिक्षाके हर विद्यालयका द्वार खटखटानेके लिए भी बहुत-सी तैयारी करनी पड़ती है। योगके लिए भी यही बात है। योगके दरवाजे हर एकके लिए खुले हैं परंतु पहले उसे प्रारंभिक परीक्षाएं देनी होगी।

भगवान्‌की दृष्टिमें कोई भी योग्य या अयोग्य नहीं है, सभी उनके अपने बालक हैं। वे हर एकको उसकी क्षमताके अनुसार, उसकी ग्रहणशीलताके अनुसार या अगर योगकी भाषामें कहें तो उसकी पात्रताके अनुसार देते हैं।

तुम विज्ञान पढ़ना चाहो तो पहले तुम्हें क ख ग और १, २, ३ से ही शुरू करना पड़ता है। तुम्हारे अध्यापक तुम्हारी योग्यताके अनुसार आगे चलाते हैं। तुम शुरूमें ही उच्चतर कक्षामें नहीं बैठ सकते। योगमें पहली जरूरत है सचाईकी, तुम सच्चे दिलसे योग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना चाहो, उसके लिए भगवान्‌को पुकारो, उनके प्रति सच्चे बनो, अपने जीवनको उनके सांचेमें ढालना चाहो तो योग तुम्हारा स्वागत करेगा। अगर तुम वैज्ञानिक तो नहीं बनना चाहते, यूं ही कुतूहल-वश विज्ञान सीखना चाहो तो भी तुम्हें उसकी शर्तें तो पूरी करनी ही होंगी। उसी तरह अगर एक धूरी संज्ञा तुम प्रारंभिक तैयारीके बिना यूं ही मंडराते हुए योगका परिचय पानेके लिए पहुंच जाओ तो तुम्हें निराश होकर लौटना पड़ेगा।

नासिरने अगला प्रश्न किया, हमने सुना है कि योग करनेसे हमें शक्ति प्राप्त हो सकती है, हम पानीपर चल सकते हैं, हवामें उड़ सकते हैं, दूसरोंके मनकी बात जान सकते हैं, अपने और दूसरोंके रोग दूर कर सकते हैं।

ऋषिवर: हां तुम्हारी यह सूची तो बहुत लंबी हो सकती है लेकिन हम इन्हें योगका प्रयोजन माननेके लिए तैयार नहीं हैं। यूं कहनेको तुम जिसे चाहो योग कह लो पर सच्चा योग तो वही है जो तुम्हें भगवान्‌की ओर ले जाय, उनके साथ एक कर सके। योग-का एकमात्र ध्येय यही हो सकता है, बाकी सब तो इधर-उधरकी चीजें हैं।

कहते हैं एक आदमी किसी गुरुके पास गया और उनसे योगकी दीक्षा मांगी। उन्होंने कहा, पहले तुम यहां रहो, मैं तुम्हारी योग्यता देखूंगा और उसके अनुसार कुछ करूंगा।

नये आये हुए आदमीको अच्छे-से-अच्छा खाना मिलता था, रहनेके लिए अच्छी जगह थी। सब तरहका आराम था। अगर अभाव था तो बस दीक्षाका। उसके बाद कुछ लोग आये और दीक्षा लेकर चले गये। यह मन ही मन कुढ़ता था कि यह क्या मेरे बाद आनेवाले योग्य हैं और मैं अयोग्य, ऐसी भी क्या कमी है मेरे अंदर?

आखिर एक दिन उसने पूछ ही तो लिया। गुरुने कहा पहली बात तो यह कि तुम्हें मेरे ऊपर विश्वास नहीं है। मैंने कहा है कि जब तुम योग्य हो जाओगे तो तुम्हें दीक्षा दे दूंगा लेकिन तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिलमिला रहे हो, दूसरे तुम्हारे अंदर धीरज नहीं है और तीसरे तुम्हारा मन बहुत चंचल है और तुम उसके दास हो।' ये सब बातें योग-विरोधी हैं।

उस आदमीने कहा पहली दो बातें मान भी लूं आपकी खातिर लेकिन तीसरी माननेके लिए मैं किसी हालतमें तैयार नहीं हूं। मुझे अपने ऊपर काफी अधिकार है।

गुरुने मनमें सोचा हाथ कंगनको आरसी क्या? उससे बोले अगर ऐसी बात है तो मैं तुम्हें शीघ्र ही दीक्षा दे दूंगा। मेरे पास एक छोटी-सी डबिया है उसे मेरे एक मित्रके पास पहुंचा आओ और उनसे रसीद लेते आना। इसमें कुछ गोपनीय वस्तु रखी है। इसे तुम न अपने-आप खोलना न किसी औरको खोलने देना नहीं तो उसका असर चला जायगा।

आदमी डबिया लेकर चला। पैदल रास्ता था। मनमें उत्साह था अब मुझे दीक्षा मिल जायगी, मैं योगी बन जाऊंगा तब यह करूंगा और वह करूंगा। दूसरी ओर खुदुर-बुदुर हो रही थी कि इस डबियामें ऐसी क्या चीज होगी जिसे देखना मना है। चलते-चलते सूरज ढलने आया उधर मनकी उत्सुकता भी छलांगे मारने लगी, जरा-सा खोलकर देख लूं तो क्या हर्ज है गुरुको या उनके मित्रको पता भी न लगेगा। अन्तःकरण कहता, ऐसा मत कर कहीं आया हुआ दीक्षाका अवसर हाथसे निकल न जाय।

खाना-वाना खाकर एक पेड़के नीचे बैठा सुस्ता रहा था। अब थोड़ी ही दूर जाना था। कल शायद दीक्षाकी शर्त पूरी हो जाय। अचानक उत्सुकताने छलांग मारी। न चाहते हुए, अपने-आपको मना करते हुए भी आदमी अपने हाथको रोक न सका। डबिया-का ढक्कन जरा-सा खुला और उसके अंदरसे एक छोटी-सी चुहिया निकल कर बाहर भागी और पासके झुरमुटमें जा घुसी। दीक्षाकी चाहवालेकी आशाओंपर बेवक्त पाला पड़ गया, वह क्या मुंह लेकर गरुके पास जाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो कामनाओं, महत्त्वाकांक्षाओं, उत्सुकताओंसे भरे मनको पहले शांत और अचंचल बनाना जरूरी है। उसके बाद ही योगकी पात्रता आती है और ये परिणाम एक दिनमें नहीं आते। सच्चे दिलसे, धीरजके साथ भगवान्‌को पुकारो तभी योग मार्गपर आने लायक बन सकोगे।

अच्छा तो आजके लिए काफी है न?

श्रीअरविंदके साथ बातचीत

(चेतना, देवता इत्यादिके बारेमें)

३०-८-१९२८

शिष्य—आज रात श्रीकृष्णका जन्म होगा।

श्रीअरविंद—उनका जन्म तो कबका हो चुका।

शिष्य—एक बार जन्माष्टमी १५ अगस्तको हुई थी।

श्रीअरविंद—१५ अगस्त विशेष रूपसे महत्त्वपूर्ण है। यह कुमारी मिरियमके आरोहणका दिन है—इसका अर्थ है कि भौतिक प्रकृति दिव्य प्रकृतितक उठायी गयी।

कुमारी मिरियम प्रकृतिकी सूचक हैं, ईसा दिव्य आत्मा हैं जिसने मानव शरीरमें जन्म लिया है इस भांति वे भागवत पुत्री भी हैं और मानव पुत्री भी। केथोलिक पादरी यह आंतरिक अर्थ जानते हैं पर उसे प्रकट नहीं करते।

शिष्य—क्या वे बाह्य रूपसे ईसा और उनके जीवनपर विश्वास नहीं करते?

श्रीअरविंद—कुछ करते हैं और कुछ नहीं, वेदमें भी इस प्रकारका वर्णन है।

(श्रीअरविंद वैदिक मंत्रों और होमरकी पंक्तियोंकी तुलना करते हुए बताते हैं कि कैसे विरोधी शक्तियोंने गौओंको चुराकर एक पर्वत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुफामें बंद कर दिया था और इंद्रने अन्य देवोंकी सहायतासे उन्हें छुड़ाया। गौएं ऊपर चली गयीं। गौ प्रकाशका सूचक है—अतिमानससे आनेवाली किरणोंका। सरमा अंतर्भास है। यह प्रकाशको लेकर उसके खंड-खंड कर देता है आदि।)

३१-८-१९२८

श्रीअरविंद—चेतना क्या है?

शिष्य—मैं सोचता हूं, अनुभव करता हूं, इच्छा करता हूं, इसीको मैं चेतना मानता हूं।

श्रीअरविंद—ये तो चेतनाके परिणाम हैं, हम कहते हैं चेतनाकी शक्ति, चेतनाकी गति। गति कहीं तो होती होगी, तो चेतना देशमें है, जब तुम चेतनाको केवल मानसिक अमूर्त वस्तुके रूपमें मानते हो तो उसमें विस्तार नहीं हो सकता।

शिष्य—तो देशका मतलब हुआ एक ऐसा क्षेत्र जहां शक्तियोंकी गति होती हो।

श्रीअरविंद—हां, और इसके भिन्न-भिन्न प्रकार हैं, मानसिक, प्राणिक, भौतिक, अलग-अलग तरहकी शक्तियां और अलग-अलग तरहकी गतियां इसलिये अलग-अलग स्तर।

शिष्य—क्या ये एक दूसरेके ऊपर संजोये गये हैं?

श्रीअरविंद—निश्चय ही भौतिक तरीकेसे नहीं। अलग-अलग तरहकी शक्तियां और गतियां हैं। मानव चेतनामें वे इस क्रममें हैं: भौतिकके ऊपर प्राणिक और प्राणिकके ऊपर मानसिक।

शिष्य—प्राण जगत्में अशुभ शक्तियोंको क्यों देवता मान लिया जाता है?

श्रीअरविंद—क्योंकि मनुष्य उनके पास प्राणिक और मानसिक कामनाओं, दर्प, महत्त्वाकांक्षाके साथ जाते हैं तो ये शक्तियां देवोंके छद्मवेशमें आकर उन्हें संतुष्ट करनेका वचन देती हैं। तुम बहुत बार सुनते हो इसपर या उसपर काली आयी है—इनमें अधिकतर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अशुभ शक्तियां होती हैं। बहुत-से मंदिरोंमें अशुभ शक्तियोंकी पूजा होती है।

शिष्य—क्या देवता मनुष्यको चोट पहुंचाते हैं?

श्रीअरविंद—इच्छा करके नहीं लेकिन जब मनुष्य उनके रास्तेमें आ जाते हैं तो चोट खा जाते हैं, यह उनका अपना दोष होता है। मनुष्य देवोंके बारेमें भी उसी तरह शिकायत करते हैं जैसे दूसरे मनुष्योंके बारेमें, लेकिन देवोंका मनुष्योंके साथ कोई भावुकता-पूर्ण संबंध नहीं होता और वे मनुष्योंको संतुष्ट करनेके लिए अपने मार्गसे नहीं हटते। वे मनुष्योंके हितमें नहीं, शाश्वत सत्यके लिये कार्य करते हैं। वे शाश्वत विधानका अनुसरण करते हैं।

शिष्य—क्या देवता बहुत कार्य-व्यस्त होते हैं?

श्रीअरविंद—उस अर्थमें नहीं जिसमें हम समझते हैं। उनका अपना काम होता है।

शिष्य—क्या देवता तब भी हमारी सहायता करते हैं जब हम उनकी सहायता न मांगे और उनका आह्वान न करें।

श्रीअरविंद—देवोंका अपना काम होता है आध्यात्मिक विकासमें सहायता करना। मनुष्य उसके एक अंशके रूपमें सहायता पा लेते हैं।

शिष्य—जब हम साधना करते हैं तो हमारी सहायता करना उनका काम नहीं है क्या?

श्रीअरविंद—हां, विकासमें सहायक होकर तुम देवोंके साथ एक संबंध स्थापित कर लेते हो इसमें मनुष्यकी सहायताकी जरूरत होती है क्योंकि धरतीपर मनुष्यकी सहायतासे ही विकास साधित किया जा सकता है।

मनुष्यों और देवोंके संबंधके पीछे एक सत्य है लेकिन सामान्यतः मनुष्य अपने विचारोंके द्वारा उसमें घपला कर बैठते हैं। मनुष्य समझता है कि वही विश्वका केंद्र है और सभी चीजें उसीके लिये हैं। यह एक बड़ी भूल है। विकास केवल मनुष्यके लिये नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवता मनुष्योंकी जरूरतें और कामनाएं पूरी करनेके लिये काम नहीं करते इसलिये मैंने उनके कार्यको शाश्वत विधानकी बात कही है।

शिष्य—क्या भौतिक देवता भी होते हैं?

श्रीअरविंद—तुम्हारा मतलब है भौतिक स्तरपर देवता? हां, वैश्व शक्तियां होती हैं, आगके पीछे एक दिव्य सत्ता है जो अग्निदेव नहीं है।

शिष्य—आगकी दिव्य सत्ता और आगके देवता (आत्मा) में क्या फर्क है?

श्रीअरविंद—देवताओंके अपने गुण होते हैं—उनके प्रतिनिधि, जिनके द्वारा वे काम करते हैं। आगकी आत्मा आगके रूपमें अंतर्लीन होती है—यह निम्नतर चेतना है। अग्नि-तत्त्वके पीछे जो दिव्य सत्ता है, उसका प्रतिनिधि या सहायक कह लो।

शिष्य—विश्वकी जड़ कल्पना कितनी संकीर्ण और सीमित है!

श्रीअरविंद—हां, आधुनिक वैज्ञानिक अब किसी अति सूक्ष्म और गुह्य तत्त्वको मानने लगे हैं लेकिन वे बहुत दूरतक नहीं जा सकते।

*

मनुष्य देवोंके कार्यको अपने ही मानकके अनुसार समझते हैं। अतिमानसिक दृष्टिकोणसे मानव मानसिकता, मनुष्योंकी आवश्यकताएं और कामनाएं—बहुत छोटी और नगण्य प्रतीत होती हैं। मानव दृष्टिकी यह नगण्यता ही संन्यास मार्गका आधार है। संन्यासियोंने दिव्य चेतनाकी प्रकृतिकी कुछ झलकें तो पा लीं लेकिन यह नहीं जाना कि उसे नीचे कैसे उतारा जाय इसलिये उन्होंने सांसारिक जीवनकी अवहेलना की।

संन्यासी बनना बहुत सरल है।

मैंने तीन दिनमें ब्रह्म-चेतनामें प्रवेश किया था लेकिन अतिमानसिक चेतनाके लिये दस वर्ष लगे। ब्रह्म चेतनाके बहुत-से रूप हैं जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शांति, आनंदके रूप, सारे जगत्की सभी गतिविधियां केवल नाम-रूप मालूम होती हैं, प्राणमें कोई गति नहीं होती, मन गायब हो जाता है। बस पूर्ण शांति होती है, आनंद होता है। तुम बिना किसी चीजकी परवाह किये सदा वहीं बने रह सकते हो।

मैं ऊपरसे आदेश पाकर उसमेंसे बाहर निकल आया।

देश और कालके कई प्रकार—
प्राणिक जगत्पर निर्भयता

देश और काल केवल मानसिक चेतनामें ही पहले-पहल नहीं दिखायी देते और न उनका अंत ही वहां होता है: ये अधिमानसमें भी होते हैं। सारे विश्वकी विभिन्न सत्ताओंके बाहरी रूपोंके साथ ये लगे हुए हैं, बल्कि यूं कहें कि ये वास्तवमें सभी आकारोंके सांचे हैं। पर प्रत्येक स्तर या केंद्रमें इनका स्वरूप बदल जाता है, प्रत्येक जगत्का अपना निजी देश और अपना निजी काल होता है।

इस तरह मानस-लोकमें जो देश और काल होता है वह हमारे इस भौतिक जगत्—पृथ्वीके देश और कालके जैसा नहीं होता। मानस लोकमें हम अपनी इच्छाके अनुसार, एकदम अपनी मौजके अनुसार आगे या पीछे चल-फिर सकते हैं। वहां जैसे ही तुम किसी व्यक्तिकी बात सोचते हो वैसे ही वह तुम्हारे पास उपस्थित दीखता है। और जब कोई व्यक्ति तुम्हारे एकदम निकट होता है, पर तुम किसी दूसरेकी बात सोचनेमें डूबे होते हो तो वह पहला तुमसे अत्यंत दूर होता है। वहां यह सब, सारी क्रियाएं तुरत-फुरत होती हैं, क्योंकि वहांके देश-कालकी अवस्थाओंमें कोई बाधा-विघ्न नहीं होता, वहां सर्वत्र पूर्ण स्वाधीनता ओत-प्रोत रहती है। परंतु, इसके विपरीत, प्राण-लोकमें ऐसी बात नहीं होती। वहां किसी भी क्रियाके लिये तुम्हें अपनी इच्छा-शक्तिका प्रयोग करना पड़ता है:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैसे वहां भी दो वस्तुओंके बीचकी दूरी प्रायः मनोमय जगत्‌की दूरीकी तरह ही कम कठोर होती है, लेकिन वहांकी क्रिया उतनी बाधा-हीन और तुरत-फुरत होनेवाली नहीं होती : वहां कोई क्रिया संपन्न होनेके लिये अपनी इच्छा-शक्तिका प्रयोग करना आवश्यक होता है।

जब मनुष्य योग करना आरंभ करता है तब देश और कालके इन विभिन्न रूपोंका ज्ञान प्राप्त करना, व्यावहारिक दृष्टिसे, बड़ा उपयोगी होता है। जब मनुष्य अपने प्राणमय या मनोमय शरीरमें जाता है, तब वहां ठीक-ठीक कार्य करनेमें असमर्थ होता है और कई तरहकी भूलें कर बैठता है। जैसे, जब तुम अपने स्वप्न-लोकोंमें विचरण करते हो तब तुम्हें यह याद ही नहीं रहता है कि तुम प्राण-जगत्‌के देश और कालमें हो और तुम ठीक उसी तरह कार्य करते हो जैसे तुम स्थूल शरीरमें रहते हुए करते हो। यदि तुम्हें उन स्तरोंकी चीजोंकी अवस्थाओंका आवश्यक ज्ञान हो तो तुम बड़ी आसानीसे उन प्राणमय सत्ताओंसे दूर, स्वतंत्र रह सकते हो जो तुम्हें संत्रस्त कर डालती और भयावह दुःस्वप्न दिखाती हैं। प्राणमय जगत्‌के देश और कालमें होनेवाली क्रियाओंकी एक विशेषता यह है कि उस लोककी सत्ताएं अपनी इच्छानुसार भयंकर रूप ले सकती और तुम्हारे अंदर भीषण भयका संचार कर सकती हैं। यह तुम्हारे ऊपर आक्रमण करने और अधिकार जमानेका उनका अत्यंत शक्तिशाली उपाय होता है। उनके इस कौशलसे छुटकारा पानेके लिये यह आवश्यक है कि हम उस समय यह याद रखें कि उनकी भय दिखानेकी यह शक्ति झूठी है और हम उस समय भयको अपने पास न फटकने दें। जब तुम साहसके साथ उनका सामना करते हो, जरा भी इतस्ततः नहीं करते और सीधे उनकी आंखोंमें ताकते हो तो उसी क्षण मानों उनकी तीन-चौथाई शक्ति काफूर हो जाती है। और तुम यदि सहायताके लिये मुझे पुकारो तब तो उनकी रही-सही बाकी शक्ति भी स्वयं विलीन हो जाती है और वे भाग खड़ी होती हैं अथवा विलुप्त हो जाती हैं। मेरे एक परिचित व्यक्ति थे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें अपने प्राणमय शरीरमें निकल जानेकी आदत थी। उन्होंने एक दिन आकर कहा कि रोज ही स्वप्नमें उनके सामने एक बहुत बड़ा बाघ आ खड़ा होता है और वह उनकी रातोंको बड़ा भयानक बना देता है। मैंने उनको सलाह दी कि आप अपना सारा भय झाड़ फेंकिये, सीधे उस पशुकी ओर चले जाइये और अपनी नजर उसके चेहरेपर अच्छी तरह गड़ा दीजिये। अगर आवश्यक प्रतीत हो तो पूर्ण विश्वासके साथ सहायताके लिये पुकारिये। उन्होंने ऐसा ही किया और आश्चर्यकी बात है कि एकाएक बाघ छोटा होने लगा और अंतमें एक छोटी-सी नगण्य बिल्ली बन गया!

तुम्हें शायद इस बातका कोई अंदाज नहीं होगा कि प्राणमय सत्ताओंकी आंखोंमें निर्भयतापूर्वक ताकने-भरसे कितना बड़ा, प्रायः जादूका-सा परिणाम निकलता है। इस पृथ्वीपर भी, तुम यदि प्राणमय शक्तियोंके इन सब अवतारोंके साथ, जिन्हें कि हम साधारण तौरपर जीव-जंतु कहते हैं, इसी तरह व्यवहार करो तो तुम उन्हें आसानीसे वशमें कर सकते हो, इसमें कोई संदेह नहीं। अगर तुम्हारे सामने एक बाघ आ जाय और तुम बिना कांपे उसकी आंखों-में सीधे ताको तो वह तुरत तुम्हारे सामनेसे भाग खड़ा होगा। यदि तुम जरा भी भयभीत हुए बिना एक सांपकी नजरोंमें अपनी नजर गड़ा दो तो वह तुम्हें डस नहीं सकेगा। परंतु तुम यदि सांपकी ओर आंख गड़ाकर देखो और साथ-ही-साथ तुम्हारे पांव भी थर-थराते हों तो उससे कोई लाभ न होगा। यह अत्यंत आवश्यक है कि तुम्हारे शरीरमें कहीं तनिक भी कंपन न हो और तुम बिल्कुल निर्भय बने रहो। जब सांप तुम्हारे सामने आ जाय, तुम उसकी नजरोंको अपनी नजरोंसे कैद कर लो, पर यदि वह तुम्हें प्रभावित करनेके लिये अपना सिर हिलाते हुए बैठ जाय और तुम्हें भीषण भयसे भर देनेकी चेष्टा करे तो तुम्हें शांत-स्थिर, बने रहना चाहिये। पशुओंको मनुष्योंकी आंखोंमें एक ज्योति दिखायी देती है और यदि कोई उस ज्योतिको ठीक ढंगसे उनके ऊपर प्रयुक्त करे तो वे उसे सह नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते, मनुष्यकी दृष्टिमें एक ऐसी शक्ति होती है जो उन्हें निःशक्त बना देती है बशर्ते, कि वह दृष्टि खूब स्थिर और भयसे एकदम खाली हो।

अतएव, संक्षेपमें, दो बातें बराबर याद रखो : कभी, किसी अवस्थामें भी भयभीत मत होओ और सभी परिस्थितियोंमें सच्ची सहायताको पुकारो और वह तुम्हारी शक्तिको सौगुना अधिक प्रबल बना देगी।

(श्रीमातृवाणी, खंड ३से)

युद्ध ?

ओड़िसाके राजा श्री दिव्य सिंह देव प्रभु जगन्नाथके मंदिरमें संध्याकी आरतीके समय उपस्थित हुए। मंदिरके आंगनमें संगीत और नृत्यका समा बंधा था। खम्भोंपर लटकती सुगंधित पुष्पोंकी मालाएं सजाने और सुगंध बिखेरनेका दोहरा काम कर रही थीं। असंख्य दीये अपनी टिमटिमाती रोशनीसे संध्याके धुंधलकेको उजालेमें बदल रहे थे। इस स्वप्निल वातावरणको बंशीका स्वर, वीणाकी झंकार, मृदंगकी मृदु थाप और पायलकी छुम-छुम जादुई बना रही थी। इस अलौकिक वातावरणमें एक कनकलता-सी छरहरी तन्वांगी नृत्यकी भंगिमाओंसे प्रभु नीलमणिको रिझा रही थी। अभिनय-प्रवण नर्तकी कितनी बार रूठी, कितनी बार भगवान्‌को देख-देख कर प्रेममें नहा उठी। साक्षात् कवि जयदेवकी राधा धरतीपर उतर आयी थी। महाराज दिव्य सिंह मंत्र-मुग्ध होकर नर्तकीको देखते रहे। नृत्य समाप्त हो गया और मानों महाराज जादूके सम्मोहनसे मुक्त हो गये। चारों ओर देखा तो नर्तकी जा चुकी थी। धीरेसे अपने मंत्रीके कानमें फुसफुसाये "कौन थी वह अपूर्व नर्तकी ?"

महाराज महलमें लौट आये किंतु उन्हें लगा जैसे उनका हृदय जगन्नाथके जगमोहन (नृत्यांगन) में ही छूट गया था। पलक मूंदते ही उस कनक वल्लरीका प्रवेश हो जाता उनके अंतरजगत्‌में ! उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुर मुस्कान, अलस दृष्टि, हृदय थामे प्रतीक्षारत राधाकी मुद्रा उनके हृदय पटलपर उभर जाती। उनकी तंद्राको तोड़ा उनके विश्वस्त चर नंदने "घणी खमा अन्नदाता, कल शामको जिस नर्तकीने पहली बार नृत्य किया था उसका नाम है केतकी।"

बहुत दिनोंके प्रयासके बाद महाराज केतकीसे मिल पाये। बहुत अनुनय-विनयके बाद उसने उनके प्रणयको स्वीकार किया। फिर क्या था, दिव्य सिंह देव सुध-बुध खोकर केतकीमय हो गये। मंत्री महाराजसे परामर्श करने आते तो महाराज केतकीके अंतःपुरसे संदेश भेज देते कि कल मिलूंगा और वह कल कभी न आता। महाराजकी अवज्ञाके कारण दरबारमें गड़बड़ होने लगी।

एक दिन सीमाका प्रहरी घोड़ा दौड़ाता आया। जासूसोंसे उसे पता चला था कि हिंदुओंका शत्रु शुजा खान भारी सेना लेकर ओड़िसा-पर चढ़ाई करनेके लिये तेजीसे आ रहा है। बुद्धिमान् मंत्री महाराजकी मनःस्थिति देखकर उनके पास न जाकर सीधे केतकीके पास गये। नर्तकीके सामने अंगोछा पसार कर दिव्य सिंह देवको दानमें मांग लिया। उससे राष्ट्रकी गंभीर स्थितिकी बात की। शुजा खानके आक्रमण और जगन्नाथके मंदिरपर आनेवाले संकटका चित्र खींचा। केतकी विचारोंमें डूब गयी। शामको जब वह महाराजके साथ अकेली थी तब मधुर स्वरमें बोली, "देव, मेरी एक विनती मानोगे? आजतक आपसे कुछ नहीं मांगा। यह मेरी पहली अभ्यर्थना है, कहीं ठुकरा न देना।" केतकीका कातर स्वर सुनकर महाराज चौंके फिर मुस्कुरा कर बोले, "आज केतकीका नया रूप देख रहा हूं। तुम कितनी मोहक लग रही हो! भला इस स्वरकी अवज्ञा मैं कैसे कर सकता हूं। बोलो, तुम्हें अभ्यर्थना नहीं, आज्ञा देनी चाहिये। मैंने कहा है न, केतकी कि तुम्हारी हर बात मान कर मुझे खुशी होती है।" केतकीके नयन मानों भूमिकी शरण ढूंढ़ रहे थे। सिर झुकाए वह स्थिर बैठी रही फिर बोली "महाराज, मुझे वचन दीजिए कि मेरी प्रार्थना मानेंगे।" दिव्य सिंह गंभीर हो गये,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्या बात है? लो, तुम्हें वचन देता हूं, तुम्हारी आज्ञा सिर आंखों-पर।" केतकीने गद्‌गद् हो कर कहा, "महाराज, कृतज्ञ हूं! मैं... मैं भगवान् जगन्नाथकी सेवा करने मंदिरमें लौट जाना चाहती हूं।" महाराजका हृदय कांप उठा। यह क्या? केतकीका प्रेम क्या अभिनय मात्र था? केतकीका मंद स्वर बीचमें सुनाई दिया, "महाराज! इस समय प्रजाको आपकी सख्त जरूरत है। शुजा खान ओड़िसाकी ओर बढ़ रहा है। उसे रोकनेके लिये सैन्यमें उत्साह बढ़ानेके लिये आपको आगे रहना चाहिये। मेरी एक शर्त भी है। "जबतक शत्रु पराजित न हो आप मुझसे मिलनेका प्रयास न करें। मैं आपके समक्ष न आ पाऊंगी।" दिव्य सिंहका मुख क्षण-क्षण रंग बदलने लगा। केतकीके झुके मुखको निहारते हुए उनका मुख-मंडल दीप्त हो उठा, "केतकी, मुझे तुमपर गर्व है। तुम्हारी वाणीने मुझे कर्तव्य-पथपर ला खड़ा किया। मैं तुम्हारी शर्त मानता हूं। आज ही तुम्हें पुरी भेजनेकी व्यवस्था करता हूं।" झटकेके साथ महाराज बाहर निकल गये।

शुजा खानके साथ महाराजका धमासान युद्ध हुआ किंतु विलासमें डूबे शरीरने उचित सामर्थ्य न पाया और ओड़िसाकी सेनाके पांव उखड़ने लगे। सेनापतियोंके साथ परामर्श करके महाराजने यही उचित समझा कि इस समय युद्ध क्षेत्रको छोड़ा जाय वरना पराजय निश्चित होगी।

तंबूमें बैठे महाराज बहुत देरतक विचार मंथनमें लगे रहे। अंतमें उन्होंने नंदको बुलाया और आदेश दिया कि अभी पुरी जाकर केतकीको यहां ले आए। नंदको केतकीने यह कह कर लौटा दिया कि अपनी शर्तके अनुसार मैं महाराजके समक्ष नहीं आ सकती। महाराज सुनकर किंकर्तव्य विमूढ़ बैठे रहे फिर कलम उठाकर केतकीको पत्र लिखा, "मैं महाराज दिव्य सिंह, तुम्हें युद्ध-क्षेत्रमें युद्धके कार्यमें सहभागीके तौरपर बुला रहा हूं।" जगन्नाथके सामने हाथ जोड़े केतकी उनसे एक ही प्रार्थना किये जा रही थी; "प्रभु,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराजको विजय प्राप्त हो।" नंदका लाया पत्र पढ़ कर केतकी क्षण भरमें समझ गयी और तुरंत उसके साथ चल पड़ी। महाराजने अपनी रणनीति केतकीको समझाई और सेनाके साथ युद्ध-क्षेत्र छोड़-कर जंगलोंमें जा छिपे। दूसरे दिन शुजा खानने देखा, वीरान युद्ध क्षेत्रमें रेशमी झालरवाला तंबू तना है। पायलकी झंकार और गीतके साथ तबलेकी थाप सुनाई दे रही है। शुजा खान यह दृश्य देख कर हंसा।" हां, सुना था दिव्य सिंह किसी नर्तकीके प्रेमपाशमें ऐसा फंसा है कि दुनिया जहानका ख्याल ही न रहा।" सिपाहियों-के साथ तंबूमें प्रवेश करते ही ठगा-सा खड़ा रहा, "वाह, क्या हुस्न है, अनार कली-सी नाजुक नाजनीन शोख अदाओंमें थिरक रही है।" केतकीने खानको देखा तो द्रुत लयमें थिरकना शुरू किया। नृत्य रुका और 'खूब, खूब,' कहता हुआ खान उसके करीब आया। "जन्नत-की हूर तू इस वीरानेमें क्या कर रही है किसे रिझाती है... तेरा बादशाह कहां गया...।" इत्यादि पूछता रहा पर केतकी उत्तर टालती गयी। जब शुजा खानपर अपने रंगको पूरी तरह चढ़ते देखा तो केतकीने हंसकर कहा "खां साहब, क्यों बेकार इतना खून खराब करते हो। चलिये मैं और आप, हम दोनों अनोखा मुकाबला करें, वह होगा कामकेलिका मुकाबला। अगर उसमें हार गयी तो मान लूंगी महाराज दिव्यसिंह पराजित हो गये और ओड़िसापर आपका राज्य होगा, आप हार जायं तो आपको उसी समय ओड़िसा छोड़कर जाना पड़ेगा।" केतकीकी यह चुनौती सुनकर शुजा खान खूब हंसा। उसने मनमें सोचा "अपनी तो बन आयी, हसीना खुद चुनौती दे रही है। उसे क्या पता शुजा खान कितना ताकतवर है!"

शामको तंबू जगमगा उठा। केतकीने लंबे केशपाशको नये ढंगसे सजाया। उसके जूड़ेमें अनेक बहुमूल्य रत्न चमक रहे थे। कर्ण-फूल कपोलोंसे गुपचुप बतिया रहे थे। ग्रीवामें हीरे और मोतीकी माला झूम रही थी। शुजा खान जन्नतकी इस हूरका हुस्न देख कर मदहोश हो गया। वह आगे बढ़ कर उसका हाथ पकड़ने जा ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा था कि केतकी पीछे हटकर बोली, "खां साहब, ऐसे नहीं, पहले महफिल जमेगी, मैं नाचूंगी फिर आप आगे बढ़ियेगा।" उसने नृत्य शुरू किया। शुजा खान दाद देता और केतकी आगे बढ़कर उसके जामको उमदा शराबसे भर देती। शुजा खां नाजनीनके हाथोंसे जामपर जाम पीता गया और अंतमें वहीं मसनदपर लुढ़क गया।

केतकी हंसी। जलके छींटे देकर शुजा खानको होशमें लायी और मधु घोलकर बोली, "आइये खां साहब, मैं तैयार हूं।" शुजा खान मानों गहरी नींदसे चौंक उठा। उसे केतकीका प्रस्ताव याद हो आया। लड़खड़ाती जबानसे बोला, "नाजनीन, माना तुम अक्लमंद हो, मैंने हार मान ली।" केतकी बोली, "फिर खां साहब आप मेरे देशको छोड़कर चले जाइये।"

दूसरे दिन सुबह सिर झुकाए शुजा खां ओड़िसाकी सीमा पार कर रहा था और तंबूमें हाथ जोड़े केतकी भगवान् जगन्नाथकी गद्‌गद् स्वरमें प्रार्थना कर रही थी, उन्हें कृतज्ञता भरा अर्घ्य दे रही थी।

—अनुबेन

किससे क्या सीखें

सिंहादेकं बकादेकं शिक्षेचत्वारि कुक्कटात्,
वायसात्पंच शिक्षेच्च षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात्।

—सिंह और बगुलेसे एक-एक गुण सीखे, मुर्गीसे चार, कौएसे पांच, कुत्तेसे छः और गदहेसे तीन गुण सीखना उचित है।

प्रभूत् कार्यमल्पं वा यन्नरः कर्तुमिच्छति,
सर्वारम्भेण तत्कार्यं सिंहादेकं प्रचक्षते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—कार्य छोटा हो या बड़ा जो करणीय हो, उसको सब प्रकारके प्रयत्नसे करना उचित है। इस एक गुणको सिंहसे सीखना चाहिये।

इंद्रियाणि च संयम्य बकवत्पंडिता नरः
देशं कालं बल ज्ञात्वा सर्वकार्याणि साधयेत्।

—विद्वान पुरुषको चाहिये कि इंद्रियोंका संयम करके देश काल बलको समझकर बगुलेके समान सब कार्यको साधे।

प्रत्युत्थानं च युद्धं च संविभागं च बन्धुषु,
स्वयमाक्रम्य भोगं च शिक्षेच्चत्वारि कुक्कटात्।

—उचित समयमें जागना, रणमें उद्यत रहना, बंधुओंको उनका भाग देना, और आप आक्रमण करके संभोग करना, ये चार गुण कुक्कट (मुर्गे) से सीखना चाहिए।

गूढं च मैथुनं धाष्टर्यं काले चालयसंग्रहम्,
अग्रमादमवि श्वासं पंच शिक्षेच्च वायसात्।

—छिपकर संभोग करना, धैर्यको धारण करना, समयपर घर संग्रह करना, सावधान रहना और किसीपर विश्वास न करना, इन पांच गुणोंको कौवेसे सीखना चाहिए।

बह्वाशी स्वल्प-संतुष्टः सुनिद्रो लघु चेतनः,
स्वामिभक्तश्च शूरश्च षडेते श्वानतो गुणाः।

—बहुत खानेकी शक्ति होनेपर भी थोड़े-से ही संतुष्ट हो जाना,

(शेष आवरण ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो जीवन लक्ष्यहीन होता है वह सुखहीन भी होता है।

तुम्हारा लक्ष्य होना चाहिये उच्च और विशाल, उदार और उन्मुक्त और फिर तुम्हारा जीवन तुम्हारे लिये और दूसरोंके लिये भी बहुमूल्य हो जायगा।

— श्रीमां

सहारनपुर सर्विस स्टेशन
पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड
सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

236
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

जून १९८८

वर्ष १८, अंक ११, पूर्णांक २१५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

भय—उसका कारण और उपचार		१
'संपादकीय' : आजकी आवश्यकता	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
सच्चा उपहार		६
योगके तत्त्व : पुकार और योग्यता		९
आधार		१२
अभीप्सा		१५
सचाई		२२
श्रद्धा		२५
समर्पण		२७
प्रेम		३२

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय—उसका कारण और उपचार

भय और चिंता संकल्प शक्तिके विकृत रूप हैं। जिस बातका तुझे डर रहता है, जिसपर तू मनन करता है, जिसे तू अपने मनमें दोहराता रहता है, उसी घटनाके आनेमें तू मदद करता है क्योंकि अगर जाग्रत् अवस्थाकी सतहपर तेरी इच्छा उसे धकेल भी देती है फिर भी निचले स्तरपर तेरा मन हमेशा उसके लिये तैयार रहता है और उसे चरितार्थ करनेमें अवचेतन मन तेरी जाग्रत् शक्ति और बुद्धिसे अधिक शक्तिशाली, विशाल, अधिक सुसज्जित होता है। किंतु अध्यात्म पुरुष इन दोनोंसे अधिक मजबूत है। भय और आशासे अध्यात्म पुरुषकी भव्य अचंचल शांति और उसके चिंतामुक्त प्रभुत्व-में शरण ले ले।

—श्रीअरविंद

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

आजकी आवश्यकता

हमारा सामूहिक मानस अन्य राष्ट्रोंकी भीड़की तरह अबतक बहुत निचले स्तरका है। जो कार्य व्यक्ति अकेला करनेकी सोच भी नहीं सकता वही घिनौना कार्य वह भीड़में बिना सोचे-समझे कर लेता है। यह तो समूहका बदतर रूप है किंतु इसी भीड़का एक अन्य रूप है जिसमें कायर भी वीर बन जाता है और बादमें अपने ऊपर, उस वीरतापर आश्चर्य करता है। इस भिन्नताके कारण होते हैं लोगोंके इकट्ठे होनेका कारण और बादमें उसमेंसे उभरता हुआ नेता क्योंकि भीड़ छोटी हो या बड़ी उसका नेता अवश्य आगे आता है।

हम सचेतन नागरिकके रूपमें इस भीड़से बच नहीं सकते, न हमें बचना चाहिये क्योंकि तब उसमें असामाजिक तत्त्व घुसकर जनता द्वारा हानिकर कार्य करवा लेंगे। फिर समूहमें प्रचंड शक्ति है, हमें उसका जन-कल्याणके लिये उपयोग करना चाहिये। जहां जान-मालका खतरा हो, वहां हमें सारे समय सरकार, पुलिसकी ओर ताकनेकी जगह जन-शक्तिको जगाकर अपनी रक्षा अपने-आप करने-का उपाय खोजना चाहिये।

कुछ वर्ष पहलेकी घटना याद आ रही है। किसी नगरके कई मोहल्लों-में किसी कारण शत्रुता हो गयी और वह ऐसी बढ़ी कि पुलिसतक परेशान! एक मोहल्लेके लोगोंने अपने स्वयं-सेवकोंका दल बनाया जो बारी-बारीसे निगरानी करता और दूरसे खतरेको भांप कर या घटनाके घटनेसे पहले ही सीटी बजा कर सबको सावधान कर देता था। फिर भीड़ इतनी बड़ी होती थी कि आक्रमणकारियोंको लेनेके देने पड़ जाते थे। साहस, बुद्धि और अनुशासित जन-समूह आजकी आवश्यकता है।

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

जून

१. हम धरतीपर सत्य और प्रेमकी विजय लानेके लिये आये हैं —और वह होकर रहेगी।

२. पूरी सचाईके साथ अच्छे-से-अच्छा करना अपने अच्छे-से-अच्छे रूपमें पूरी सचाईके साथ रहना।

३. शराबके नशेकी अपेक्षा भगवान्‌के साथ ऐक्यका नशा अद्‌भुत होता है।

४. जब तुम्हें गुस्सा आये तो एक शब्द भी मत बोलो।

५. हम ऐसे ज्ञानके लिये अभीप्सा करते हैं जो सचमुच जानता है, ऐसी शक्तिके लिये अभीप्सा करते हैं जो सचमुच शक्तिमान् है, ऐसे प्रेमके लिये अभीप्सा करते हैं जो सच्चा प्रेम है।

६. परिस्थिति कैसी भी हो, अगर तुम्हारे मनको उसे अनुकूल माननेकी आदत पड़ी हो, तो वह अप्रिय न रहेगी।

७. जब तुम्हारी मनोवृत्ति सच्ची होती है, तो हर चीज, सीखनेका एक अवसर बन जाती है।

८. जन्म दिवस: जब तुम्हारे लिये नव वर्षका आरंभ होता है तो तुम्हें अपनी चेतनासे जो कुछ उसे विकृत करता, घटाता, धुंधला बना देता और तुम्हारी प्रगतिको रोकता और तुम्हारे स्वास्थ्यको गिराता है, उस सबको भगा देनेका पुनः निश्चय करके नये जीवनका आरंभ करना चाहिये।

९. प्रभु हमारे जीवनकी व्यवस्था हमारी आत्माके श्रेयसके लिये करते हैं और उनकी प्रज्ञा असीम और पूर्ण है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. आंतरिक स्वच्छता कम-से-कम उतनी आवश्यक तो है ही जितनी बाहरी स्वच्छता।

११. मिथ्यात्वसे ऊपर उठकर अपनी आत्माके शुद्ध प्रकाशमें जियो और तुम निकट, प्रभुके बहुत निकट रहोगे।

१२. सामंजस्यपूर्ण सहयोगके द्वारा ही प्रभावशाली कार्य हो सकता है।

१३. महत्त्वपूर्ण बात यह है कि एक ऐसा बिंदु ढूंढ़ा जाय जिसपर तुम सब एकमत हो सको और इसे अच्छी तरह स्थापित करनेके बाद प्रत्येकको सामंजस्यके इस बिंदुको बनाये रखनेके लिये अपनी व्यक्तिगत इच्छाको छोड़नेके लिये तैयार रहना चाहिये।

१४. केवल निर्बल व्यक्ति शिकायत करते हैं।

१५. बोलो कम, सच्चे बने रहो, निष्कपट होकर कार्य करो।

१६. अगर हम चाहते हैं कि भगवान्‌के प्रति हमारा समर्पण और निवेदन पूर्ण और सर्वांगीण हो, तो वह बिना शर्तके और परिस्थितियोंसे स्वतंत्र होना चाहिये।

१७. प्रभु, हमें वह अदम्य साहस दो, जो तुम्हारे ऊपर पूर्ण विश्वाससे आता है।

१८. आलोचना कभी-कदास ही उपयोगी होती है, सहायता देनेकी अपेक्षा वह निराश करती है।

१९. मृत्युके लिये कामना मत करो, कभी मृत्युका संकल्प न करो। मृत्युसे कभी न डरो।

२०. जब हम दूसरोंको धोखा देनेका प्रयत्न करते हैं तो हम अपनेआपको ज्यादा धोखा देते हैं।

२१. अपने हृदयकी गहरी, गहन नीरवतामें जाओ तो तुम वहां उज्ज्वल और करुणामय प्रभुको पाओगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२. तुम्हें जितनी अधिक कठिनाइयोंका सामना करना पड़े, उतना ही विश्वास रखो कि प्रभु तुम्हें अपनी ओर उतनी तेजीसे खींच रहे हैं, जितनी तेजीसे तुम जा सको।

२३. जब तुम अनुशासनके अधीन रहनेमें असमर्थ हो, तो तुम जीवनमें कुछ भी वांछनीय और सार्थक करनेमें भी असमर्थ रहते हो।

२४. पृथ्वी-पुत्रके लिये पृथ्वीका स्पर्श हमेशा प्राणदायी रहा है तब भी जब वह परा भौतिक ज्ञानको ढूंढ़ता है।

२५. भय गुलामी है, कार्य स्वतंत्रता है, साहस विजय है।

२६. जब डर आये तो अगर तुम उसपर चेतना, ज्ञान, शक्ति, प्रकाश डालनेमें सफल हो जाओ तो तुम उसका पूरा उपचार कर सकोगे।

२७. अगर हिंसक प्राणी भी तुम्हारे सामने आये तो तुम पूर्ण अचंचलता और शांतिसे उसे हानि-रहित कर सकते हो।

२८. तूफानमें शांति रखो, प्रयासमें अचंचल रहो, समर्पणमें हर्ष पाओ, ज्योतिर्मय श्रद्धा रखो और तुम भगवान्‌की सतत उपस्थितिसे अभिज्ञ रहोगे।

२९. तुम्हारी इच्छा हो, "मुझे कोई चीज भयभीत न कर पाये क्योंकि तुम ही मेरे जीवनका निर्देशन कर रहे हो, मैं तुम्हारा हूं और तुम मेरे जीवनको पथ-प्रदर्शन दे रहे हो।"

३०. तुम्हें भय और साथ ही क्रोधको दूर फेंक देना चाहिये और माताजीके ऊपर विश्वास रखकर अपना कार्य शांतिसे करते रहना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सच्चा उपहार

साधारण आदमी मुश्किलोंमें पड़ता है तो रोता है, भगवान्‌को या भाग्यको कोसता है, इधर-उधर हाथ-पांव मारता है और जब मुश्किल दूर हो जाती है और फिर जबतक कोई नयी मुसीबत नहीं आती तबतक अपनेमें मस्त रहता है और नयी मुसीबतके आते ही फिरसे वही चक्र चलने लग पड़ता है।

इसके लिये सबसे पहले हमें यह जानना होगा कि रोग, शोक, दुःख जीवनमें क्यों आते हैं और कहांसे आते हैं। इसे जाननेके लिये हमें सृष्टिके आरंभकी ओर नजर डालनी होगी। यहां हमें भाषाकी कमजोरी खलती है। भाषाके द्वारा ऐसी बात कहनी है जो भाषासे परेकी है।

इस सृष्टिके पैदा होनेसे पहलेकी बात है। भगवान् अकेले थे। उनके अंदर सब तरहकी शक्तियां थीं, सब तरहकी चीजें थीं परंतु सब सोयी पड़ी थीं। भगवान्‌की इच्छा हुई अपने-आपको आईनेमें देखें। आईने बहुत प्रकारके होते हैं किसीमें चेहरा ठीक-ठीक दिखायी देता है, किसीमें लंबा, किसीमें चौड़ा और किसीमें षट्कोण। इसी तरह भगवान् अपनेको सभी संभव रूपोंमें देखना चाहते थे।

भगवान्‌की इच्छा पूरी होते कितनी देर लगती है! उन्होंने अपनी चेतनासे ही सृष्टिको बनानेवाली आद्या शक्तिको जन्म दिया और उससे कहा सृष्टिका निर्माण करो। उसने झट चार सत्ताओंको जन्म दिया जिनको हम चेतना, प्रेम या आनंद, जीवन और प्रकाश या ज्ञानकी सत्ताएं कह सकते हैं।

हम कह सकते हैं कि यही सबसे पहली सृष्टि थी। इन चारमें बहुत अधिक शक्ति थी। इन्होंने समझ लिया कि हम ही सब कुछ हैं इसलिये रचना करनेवाली मांसे और भगवान्‌से अपना संबंध तोड़ लिया और स्वतंत्र हो गयीं। इनके स्वतंत्र होते ही दुनियाकी सबसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी दुर्घटना हुई। चेतना भगवान्‌से बिछुड़कर अचेतना बन गयी, प्रकाश या जीवनने सोचा मैं ही तो सब कुछ हूं—वह सत्ता अंधकार और मृत्युमें बदल गयी। सत्यने सोचा सारा सत्य मेरे अंदर ही समाया हुआ है, मेरे अतिरिक्त और कोई सत्य नहीं—वह असत्यमें बदल गया। प्रेम या आनंदने भी इसी तरह अपने-आपको सब कुछ मान लिया और वह दुःखमें बदल गया।

भगवती मां जिस संसारको सुन्दर और प्रेममय बनाना चाहती थीं उसकी यह दशा हो गयी। उन्हें यह देखकर कष्ट हुआ। उन्होंने भगवान्‌को सहायताके लिये पुकारा। भगवान्‌ने कहा, कोई हर्ज नहीं फिरसे शुरू करो, लेकिन इस बार इन सत्ताओंको इतनी अधिक शक्ति न देना कि वे तुमसे अलग हो जाएं। तुम जो नयी सृष्टि करो वह तुम्हारे और तुम्हारे द्वारा मेरे साथ जुड़ी रहे तभी ठीक काम हो सकता है।

इस बार भगवतीने ऐसा ही किया। उन्होंने बहुत-सी नयी शक्तियां बनायीं। नयी शक्तियां इतनी घमंडी नहीं थीं। वे भगवान्‌की ओर मुड़ी हुई थीं। भगवती माताने इन्हें सृष्टि बनानेका हुकुम दिया। इन शक्तियोंको हम देवता कहते हैं और पहली सत्ताओं-को असुर।

बस यहींसे लड़ाई शुरू हो गयी। असुरोंमें शक्तिकी कमी न थी। उन्होंने भी अपनी सृष्टि बनानी शुरू की और पग-पगपर दोनोंमें लड़ाई होना शुरू हुई। इस लड़ाईमें सृष्टि आगे बढ़ती जाती है, हर एकको हर क्षण चुनाव करनेका पूरा अधिकार रहता है, वह चाहे तो भगवान्‌की ओर चले और चाहे तो असुरोंके पक्षमें हो जाय। यह एक प्रकारका नाटक है, क्योंकि यह निश्चित ही है कि अंतमें भगवान्‌की ही विजय होगी। असुरोंको या तो बदलना होगा या मंचसे हट जाना होगा।

सुख दुःख अपने-आपमें सापेक्ष शब्द हैं। इनके बारेमें बातें करने लगें तो घंटों बीत जाएंगे। एक जरा-सा उदाहरण देख लें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'क'के हाथमें चोट लगी। हम सबने इसे दुःखकी बात माना। लेकिन उस दिन 'क' को रेलसे कहीं जाना था लेकिन हाथमें चोट लग गयी और वह न जा सका। बादमें पता लगा कि वह रेल रास्तेमें ही उलट गयी थी। चोट लगनेके कारण 'क' के प्राण बच गये। यह चोट सुखदायक थी या दुःखदायक?

कहा जा सकता है कि ऐसी बातें अपवादस्वरूप होती हैं। सुख-दुःखमें फर्क करना इतना मुश्किल नहीं। चलो यही सही। एक आदमीको बहुत मिर्च खानेकी आदत है और दूसरेको मिर्च खानेकी आदत नहीं, जरा-सी मिर्चें भी उसे रुला देती हैं, तो यहां सुख मिर्च खानेमें हुआ या न खानेमें?

जैसा कि मैंने शुरूमें कहा था, दैवी शक्तियां हमें ठीक रास्तेपर चलाना चाहती हैं और आसुरी शक्तियां हमें रास्तेसे भटकाती हैं। आलस्य, प्रमाद, लापरवाही, सौंदर्यकी उपेक्षा आदि आसुरी सेनाके सिपाही हैं और हमें गिरानेके लिये हमेशा तत्पर रहते हैं।

इनसे बचना और भगवान्‌पर विश्वास रखना, अपने-आपको उनके हाथोंमें सौंप देना—यही मुसीबतोंसे बचनेका सबसे अच्छा उपाय है। यूं भगवान्‌की रक्षा तो हमेशा हमारे साथ रहती है पर हम ही उस रेखासे बाहर निकल जाते हैं और परिणामस्वरूप गलेमें मुसीबतकी माला डाल लेते हैं। जब मुसीबत आ ही जाय तो रोने-धोनेकी जगह उन्हीं भगवान्‌की शरणमें जानेसे सच्चा उपचार हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगके तत्त्व

(१)

पुकार और योग्यता

योग शुरू करनेसे पहले व्यक्ति यह कैसे जान सकता है कि वह आध्यात्मिक जीवनके योग्य है या नहीं?

रास्तेपर कदम रखनेसे पहले भला कोई कैसे जान सकता है? वह केवल इतना ही जान सकता है कि उसमें अभीप्सा है या नहीं, वह पुकारका अनुभव करता है या नहीं।

आपने कहा था कि योग-मार्गमें प्रवेश करनेके समय व्यक्तिको इतना ही जाननेकी जरूरत है कि उसकी आत्मा योगकी तरफ बढ़ रही है या नहीं। लेकिन योग शुरू किये बिना कोई इसे भली भांति कैसे जान सकता है?

यह प्रश्न अनुभव करने या न करनेका है। यहां 'कैसे जानें'की बात ही नहीं उठती। व्यक्ति जानता है या नहीं जानता, अनुभव करता है या नहीं करता। तुम यह नहीं पूछते कि यह कैसे जानें कि हम खुश हैं, गुस्सेमें हैं या दुःखी हैं। आदमी तुरंत जान लेता है।

लोग कैसे जान सकते हैं कि उनमें आध्यात्मिक संभावना है?

कोई भी नहीं जानता। जब आत्मा उन्हें धक्का देती है तो वे ईश्वरकी ओर मुड़ते हैं, बस इतना ही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृपया मुझे यह बताइये कि क्या मेरे अंदर आध्यात्मिक उपलब्धि-की संभावना है ?

ऐसा प्रश्न पूछना समय नष्ट करना है। जब तुमने आध्यात्मिक पथमें प्रवेश किया है तो तुम्हें अपनी संभावनाओंपर नहीं, मांकी शक्तिपर विश्वास करते रहना चाहिये।

क्या यह सच नहीं है कि जो अपने स्वभाव और उसकी संभावनाओं-के पूरे ज्ञानके बिना योग-मार्गमें प्रवेश करते हैं, वे मुश्किलमें फंस जाते हैं ?

भला कौन है जो योग-पथपर पूर्ण ज्ञान या किसी भी ज्ञानके साथ आता है ? सब अज्ञानी हैं। केवल योगके ही द्वारा उन्हें ज्ञान प्राप्त होता है।

कभी-कभी व्यक्ति पथमें इसलिये प्रवेश करता है कि वह अभीप्सा और पुकारका अनुभव करता है लेकिन बादमें उस पथको छोड़ देता है। इसका क्या कारण है ? क्या यह नहीं है कि इस मार्गपर आनेके पहले वह अपने स्वभावकी संभावनाको भली-भांति परख न पाया था ?

क्योंकि उसकी अभीप्सा मंद पड़ जाती है या वह पुकारके प्रति वफादार नहीं रहता। यह जांच करनेका प्रश्न नहीं है। मैंने तुम्हें बताया है कि कोई भी जान या जांच नहीं सकता।

कुछ लोग कहते हैं कि जबतक व्यक्तिकी पूरी प्रकृति पवित्र नहीं हो जाती तबतक योगका सच्चा आरंभ नहीं हो सकता। क्या यह सच है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह बकवास है।

क्या यह सच है श्रीमां उसे ही स्वीकार करती हैं जिसे साधनामें कुछ अनुभूतियां एवं सिद्धियां प्राप्त हुई हैं और जिसे ऐसे अनुभव प्राप्त नहीं हैं और जो साधारण चेतनामें रहता है वह उनके द्वारा स्वीकृत नहीं होता।

उसे श्रीमांके द्वारा क्यों स्वीकृत न किया जाय? 'स्वीकृति'से तुम्हारा मतलब क्या है?

यदि कोई साधक अपनी प्रकृतिकी कठिनाइयोंके कारण श्रीमांके प्रति पूरी तरहसे न खुल सके तो क्या श्रीमां उसे स्वीकार नहीं करेंगी?

ऐसे प्रश्नका कुछ अर्थ नहीं है। जो इस योग-पथका अनुसरण करते हैं उन्हें मांने स्वीकार लिया है। यहां स्वीकार करनेका अर्थ है 'योगमें दाखिल करना या शिष्यकी भांति स्वीकार करना'। किंतु योगमें प्रगति और सिद्धि उद्‌घाटनकी अवस्थापर निर्भर हैं।

जब साधकको योगमें गंभीर कठिनाइयोंका बार-बार सामना करना पड़े और वह अपनी निम्न प्रकृतिको छोड़नेमें सफल न हो सके तो उसकी श्रद्धाको बनाये रखनेके लिये और पथपर डटे रहनेके लिये किस चीजसे सहायता मिलेगी?

अपनी निम्न प्रकृतिको भला कौन पूरी तरह छोड़ पाता है? व्यक्ति बस अभीप्सा कर सकता है और निचले आवेगोंको त्याग सकता है और बाकी सब करनेके लिये ईश्वरको पुकार सकता है।

गीतामें कहा गया है कि हजारोंमें कुछ ही लोग भगवान्‌को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोजते हैं और उन कुछमेंसे दो-एक ही उनतक पहुंच पाते हैं। क्या यह सच है ?

यदि व्यक्ति अपने ही बलपर चले तो बहुत ही कम यह कर सकते हैं। लेकिन ईश्वरमें श्रद्धा और ईश्वरकी कृपासे यह संभव हो जाता है।

साधकका अंतिम लक्ष्य क्या होना चाहिये ? क्या योगी बनना हमारा लक्ष्य नहीं होना चाहिये ?

ईश्वरके साथ पूरी तरह एक हो जाना ही अंतिम लक्ष्य है। यदि व्यक्तिके अंदर किसी तरहका निरंतर ऐक्य रहता है तब उसे योगी कहा जा सकता है, लेकिन उस ऐक्यको पूर्ण करना चाहिये। ऐसे योगी हैं जिन्हें केवल आध्यात्मिक स्तरपर ऐक्य प्राप्त है। दूसरे हैं जो मन और हृदयके साथ युक्त हैं। कुछ प्राणसे भी भगवान्‌के साथ मिले रहते हैं। हमारे योगका लक्ष्य शारीरिक चेतनाके साथ-साथ अतिमानसिक स्तरपर भी ऐक्य प्राप्त करना है।

(२)

आधार

यह कब कहा जा सकता है कि साधकने अपनी साधनाकी नींव डाल ली है ?

जब उसमें शांत-स्थिरता और समता तथा भक्ति और आध्यात्मिक अनुभूतिकी निरंतरता आ जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी प्रकृतिमें शांति और समता स्थापित करनेकी ठीक विधि क्या है ?

शांति और समता तुम्हारे ऊपर हैं। तुम्हें उनको नीचे अपने मन, प्राण और शरीरमें बुलाना चाहिये। जब कभी कोई चीज विघ्न डाले तो तुम्हें विघ्न डालनेवाली चीजको और विक्षोभको अस्वीकार कर देना चाहिये।

क्या शांति और समता माताजीकी कृपासे नीचे आती हैं ?

जब वे उतरती हैं तो अंतरात्माकी अभीप्सा और माताजीकी कृपासे ही उतरती हैं।

प्रकृतिमें समता स्थापित हो जानेका सच्चा लक्षण क्या है ? क्या अंदर और बाहरसे आनेवाली विघ्न-बाधाओंको, उनका कोई उपचार किये बिना पूर्ण शांतिके साथ स्वीकार कर लेना इसका लक्षण है ?

विक्षुब्ध हुए बिना उसका सामना करना और शांतिके साथ उसे अस्वीकार करना। तुम उसका कोई उपचार करते हो या नहीं, इससे कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिये। हां, जब उसके विरुद्ध क्रिया करो तो क्रोध, उत्तेजना, दुःख या किसी विघ्नकारी प्रवृत्तिके बिना शांतिके साथ करो।

जब आदमी समता प्राप्त कर ले तो क्या यह कहा जा सकता है कि वह अहंकारसे मुक्त है ?

समताका अर्थ अहंका अभाव नहीं है। समता इच्छा और आसक्तिका अभाव है। अहंभाव गायब हो सकता है या वह सूक्ष्म या स्थूल रूपमें रह सकता है—यह व्यक्तिपर निर्भर है।

ॐ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या भागवत अवतरणका अर्थ है शांति, पवित्रता और निश्चल-नीरवताका अवतरण ?

यह भागवत अवतरणका एक भाग है, उसका पूर्ण रूप नहीं।

मैं देखता हूं कि जब मेरे अंदर शांति उतर आती है तो उसमें उच्चतर शक्तिकी क्रीड़ा होती है। क्या यह शक्ति शांतिकी शक्ति-से भिन्न है ?

शक्तिकी उचित क्रीड़ाके लिये शांति आवश्यक स्थिति है। शक्ति और शांति भगवान्‌की दो अलग शक्तियां हैं।

भागवत शक्तिको प्राप्त करनेकी क्षमता कैसे बढ़ायी जाय ?

मनकी शांति पहली चीज है, बाकीके लिये अभीप्सा और अभ्यास।

शांत मनका ठीक अर्थ क्या है ? क्या इसका मतलब यह है कि मनमें कोई विचार ही न हो ?

नहीं, यह जरूरी नहीं है कि कोई विचार न हो। जब कोई विचार न हो तो वह नीरवता होती है, लेकिन मनको शांत तब कहा जाता है जब उसमें विचार, भावनाएं वगैरह गुजरते रहें, पर वह विक्षुब्ध न हो। वह अनुभव करता है कि विचार उसके अपने नहीं हैं। वह शायद उन्हें देखता तो है, पर किसी चीजसे व्याकुल नहीं होता।

साधनामें क्रियाशीलता और निष्क्रियता या वश्यताका मतलब क्या है ?

अभीप्सा, तपस्या और गलत शक्तियोंके त्यागमें क्रियाशीलता और सत्य-क्रिया, माताजीकी शक्तिकी क्रियाके आगे निष्क्रियता या वश्यता साधनाके लिये उचित चीजें हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३)

अभीप्सा

आध्यात्मिक अभीप्साका अर्थ क्या है?

उसका अर्थ है आध्यात्मिक वस्तुओंके लिये, आध्यात्मिक अनुभूतिके लिये, आध्यात्मिक उपलब्धिके लिये, भगवान्‌के लिये अभीप्सा।

क्या संकल्प और अभीप्सा एक ही हैं?

नहीं, हर्गिज नहीं। अभीप्सा भगवान्‌को पुकारना है और संकल्प प्रकृतिपर सचेतन शक्तिका दबाव है।

क्या प्रार्थना और अभीप्सा एक ही हैं?

प्रार्थना अभीप्साकी अभिव्यक्ति है या हो सकती है। क्योंकि ऐसी प्रार्थनाएं भी होती हैं जो केवल इच्छा प्रकट करती हैं, जैसे धनके लिये, सांसारिक सफलताके लिये...।

अभीप्सा और उद्‌घाटनमें क्या फर्क है?

उनका एक-दूसरेसे इसके सिवाय कोई संबंध नहीं है कि अभीप्सासे उद्‌घाटन होता है। उद्‌घाटनका मतलब यह है कि चेतना सत्य या भगवान्‌के प्रति खुल जाती है, अभी तो वह उस तरफ बंद है। वह ग्रहणशीलताकी एक स्थितिका चिह्न है। अभीप्सा सत्ताके अंदरकी पुकार है, वह उद्‌घाटन नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या प्राणमेंसे उठनेवाली अभीप्सा हृदयसे उठनेवाली अभीप्सा जैसी ही होती है ?

नहीं, प्राणकी अभीप्सा क्रियाशील होती है, जीवन-शक्तिकी पुकार होती है जब कि हृदयकी अभीप्सा या तो भावनामय होती है या चैत्य।

क्या अलग-अलग साधकोंमें उनकी प्रकृतिके अनुसार अभीप्साकी शक्ति भी अलग-अलग होती है ?

नहीं, अभीप्सा सभीके अंदर वही शक्ति होती है, उसमें केवल शुद्धता, घनता और लक्ष्यका फर्क होता है।

क्या कमजोर इच्छा-शक्तिवाला मनुष्य केवल अभीप्साके आधारपर साधनामें प्रगति कर सकता है ?

नहीं, उसे या तो अपनी इच्छा-शक्ति बढ़ानी चाहिये या इसके लिये उच्चतर शक्तिको बुलाना चाहिये।

क्या कमजोर इच्छा-शक्तिवालेकी इच्छा-शक्ति अभीप्साके द्वारा बढ़ सकती है ?

हां, यह हो सकता है—भगवान्‌की इच्छाका आवाहन करनेसे।

अभीप्सा कभी तेज और कभी सुस्त क्यों हो जाती है ?

यह सबके साथ होता है—प्रकृति हमेशा तेज गतिसे नहीं चल सकती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर प्रकृति हमेशा तेजीसे नहीं चल सकती तो फिर हमसे यह क्यों कहा जाता है कि अभीप्सामें स्थिर रहो ?

अगर तुम अभीप्सामें स्थिर न रहो तो प्रकृति फिरसे अपने पुराने तौर-तरीकोंमें धंस जायगी।

जो साधक न तो तीव्र अभीप्साका अनुभव करता है और न अपनी प्रकृतिकी घोर बाधाओंका--वह अपनी साधनामें आगे बढ़ सकेगा या नहीं ?

मेरा ख्याल है कि वह धीरे-धीरे ही बढ़ सकता है।

जब साधकमें न तो अभीप्सा ही उठती है न कोई अनुभूति ही होती है, तब उसे साधना जारी रखनेके लिये क्या करना चाहिये ?

माताजीका स्मरण करे, शांत रहे और पुकारे।

क्या साधकके लिये यह संभव है कि शुरूसे ही अपनी अभीप्साके बलपर भगवान्‌का पूरा साक्षात्कार कर सके ?

अगर पूरी-पूरी चैत्य शुद्धि हो और शुद्ध आध्यात्मिक अभीप्सा हो तो यह संभव है—पर है बहुत ही विरल।

मुझे लगता है कि माताजीकी इच्छा और कृपासे अभीप्सा भी बढ़ती है। क्या यह ठीक है ?

हां, परंतु तुम अभीप्सा न करो तब नहीं।

आपने मुझसे निरंतर अभीप्सा रखनेके लिये कहा है, लेकिन मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता है कि माताजीकी शक्ति ही मेरे अंदर अभीप्सा जगाती है और उसे मजबूत बनाती है। तब फिर मेरे व्यक्तिगत प्रयासकी क्या जरूरत है?

यह सत्य है कि तुम्हारे अंदर माताजीकी कृपा ही अभीप्सा करती है, लेकिन अगर वैयक्तिक चेतना स्वीकृति न दे तो वह शक्ति काम नहीं करती। अगर व्यक्तिगत चेतना निरंतर भगवान्‌को खोजती रहे और उसकी क्रियाको स्वीकृति देती रहे तो अभीप्सा और उनकी शक्तिकी क्रिया भी निरंतर चलती रहेगी।

लेकिन क्या यह ठीक नहीं है कि साधककी व्यक्तिगत चेतना भी माताजीके द्वारा परिचालित होती है और उसकी सभी क्रियाएं माताजीके अनुशासनमें होती हैं?

लेकिन अगर तुम्हारी व्यक्तिगत चेतना गलत चीजें करे तो क्या वे गलत चीजें भी माताजी ही करती हैं?

लेकिन क्या यह तथ्य नहीं है कि अगर साधक अपने उच्चतर भागोंमें माताजीकी क्रियाकी ओर खुला न हो तो माताजी उसके निम्न स्तरोंमें क्रिया करके उससे गलतियां करवाती हैं ताकि वह उनके परिणामस्वरूप आनेवाले कष्टोंसे पाठ सीखे और अपने उच्चतर भागोंको माताजीकी ओर खोले?

माताजी लोगोंसे गलतियां नहीं करवातीं। अगर मनुष्य स्वीकृति देनेसे इंकार न करे तो इस तरहकी चीजें प्रकृति करवाती है। माताजी यह निम्न प्रकृति नहीं हैं, वे दिव्य शक्ति हैं और निम्न प्रकृतिपर दबाव डालकर उसे बदलना उनका काम है। तुम कह सकते हो कि दबावके कारण प्रकृति ठोकरें खाती है, पूरी तरह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्युत्तर नहीं दे पाती और गलतियां करती है। माताजी तुमसे गलत क्रियाएं नहीं करवातीं और न ही वे तुम्हारे अंदर गलत गति-विधि करती हैं। अगर तुम ऐसा सोचते हो तो यह खतरा है कि तुम इस प्रकारकी गतियों तथा उनके बने रहनेको न्यायसंगत ठहराओगे।

लेकिन क्या यह तथ्य नहीं है कि स्वयं प्रकृति भगवान्‌से आयी है? तो क्या वह भगवती माताकी ही एक शक्ति तथा उनका एक अंग नहीं है?

सब कुछ भगवान्‌से ही आता है, लेकिन निम्न प्रकृति अविद्या, अज्ञानकी शक्ति है...। इसलिये वह सत्यकी शक्ति नहीं है, सत्य और मिथ्याकी मिली-जुली चीज है। माताजी यहां अविद्याकी शक्ति नहीं हैं, बल्कि वह शक्ति हैं जो ऊपरसे सत्यका अवतरण करानेके लिये और अविद्यामेंसे सत्यको ऊपर उठानेके लिये उतरी हैं।

मेरे अंदर माताजीकी क्रियाको स्वीकृति देनेके लिये मेरे व्यक्तिगत प्रयासकी किस तरह जरूरत है?

अपने-आपको सत्य वस्तुओं—शांति, ज्योति, सत्य, आनंद आदिकी ओर स्वीकृतिके साथ ज्यादा-से-ज्यादा खोलने और क्रोध, मिथ्यात्व, कामुकता आदि गलत चीजोंको अस्वीकार करनेकी जरूरत है।

साधककी प्रकृतिमें माताजीकी क्रियाको स्वीकारनेमें कौन-सी बाधाएं आती हैं?

अनुचित गतियां—हठ, अहंकार, प्राणिक आवेग, मिथ्याभिमान, व्यक्तिगत इच्छाएं आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या यह ठीक है कि अगर आदमीके अंदर सच्ची अभीप्सा हो तो अज्ञानी और सीमित मनके होते हुए भी भगवान् उसे अपने अवतरणका पात्र बनाते हैं?

हां, बस, मन छोटा और संकीर्ण तथा अपनी संकीर्णताका प्रेमी न हो।

'मनका संकीर्णताका प्रेमी'का मतलब क्या है?

लोग संकीर्ण होना पसंद करते हैं। वे अपने सीमित विचारों, भावों, मतों, पसंदोंपर आसक्त होते हैं और अगर कोई उन्हें जरा विस्तारमें सोचनेके लिये प्रेरित करनेकी कोशिश करे तो वे उत्तेजित हो जाते हैं, गरम हो उठते हैं या संदेहोंसे भर जाते हैं—यह है मनका अपनी संकीर्णतापर आसक्त होना।

कुछ लोग कहते हैं कि अगर एक विकसित बुद्धिवाला विद्वान् हो और दूसरा अशिक्षित अविकसित बुद्धिवाला, तो दोनोंमें समान रूपसे तीव्र अभीप्सा होते हुए भी शिक्षित व्यक्ति ज्यादा तेज प्रगति करेगा। यह क्या सच है?

ऐसा कोई नियम नहीं है। अगर मन मजबूत और विकसित हो तो अच्छा रहता है, लेकिन यह जरूरी नहीं है कि विद्वत्तासे मजबूत और विकसित मन पैदा हो।

आप कहते हैं कि विद्वत्तासे मजबूत और विकसित मन पैदा नहीं होता, तब फिर होता किससे है?

वह अपने-आपको सत्य और विस्तारसे जाननेकी इच्छाके द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सत्यके लिये नमनीय ग्रहणशीलताके द्वारा मजबूत बना लेता है।

क्या यह जरूरी है कि जिसका मन कमजोर और संकीर्ण हो वह भागवत कृपा पानेसे पहले अपने मनको मजबूत और विकसित बनाये या वह यह काम स्वयं कृपाके अवतरणके लिये छोड़ सकता है?

यह व्यक्तिपर निर्भर है। अगर उसका दुर्बल या संकीर्ण मन साधनाके मार्गमें बाधा देता है तो वह मनको विस्तृत करनेका प्रयास कर सकता है—अगर हृदय मजबूत और सच्चा है या चैत्य पुरुष सक्रिय है तो वह यह काम भागवत शक्तिपर छोड़ सकता है ताकि वह योगकी प्रक्रियामें इसे भी कर ले।

क्या साधकके लिये उचित शिक्षक और सांस्कृतिक विकासकी दृष्टिसे पुस्तकोंका पढ़ना जरूरी नहीं है?

यह पुस्तकें पढ़नेसे नहीं किया जा सकता। यह सोचनेका और वस्तुओंको स्पष्ट रूपमें देखनेका प्रयास करनेसे हो सकता है। पढ़ना बिल्कुल गौण चीज है। आदमी हजारों पुस्तकें पढ़कर भी संकीर्ण और मूर्ख रह सकता है।

क्या यह सच है कि सत्संग भगवान्‌के लिये अभीप्सा पैदा करता और बढ़ाता है?

हां।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४)

सचाई

क्या यह सच है कि पूरी-पूरी सचाईके बलपर ही आदमी पूर्ण रूपांतर पा सकता है और अतिमानसिक सत्यतक पहुंच सकता है?

हां।

माताजीने कहा है अगर तुम सच्चे नहीं हो तो योग शुरू ही मत करो। क्या इसका यह मतलब है कि अगर योग शुरू करनेपर आदमीको पता लगे कि उसकी सचाई पूर्ण नहीं है तो उसे यह मार्ग छोड़ देना चाहिये?

नहीं, अगर उसके आधारमें ही सचाई न हो तब उसे छोड़ देना चाहिये।

साधकको यह कैसे पता लगे कि वह मौलिक रूपसे कपटी है?

अगर वह देखे कि वह अहंकारसे भरा है और वह सचमुच भगवान्‌की ओर मुड़ा हुआ नहीं है, बल्कि अपने अहंके लिये साधना कर रहा है।

क्या आधारभूत कपटसे पीछा छुड़ानेकी कोई संभावना नहीं रहती?

अगर साधक अपने कपटके बारेमें सचेतन हो और सचाईके साथ उसे दूर करना चाहता हो तो यह संभव है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधकको यह कैसे पता लगे कि वह सचाईमें आगे बढ़ रहा है या नहीं ?

यह देखकर कि क्या वह केवल भागवत शक्तियोंको ही उत्तर देता है या अब भी अहंकी, इच्छाओंकी शक्तियोंको अपनाता या स्वीकारता है।

क्या यह सच है कि यदि साधकमें पूर्ण सचाई है तो वह भक्ति-की कमी होते हुए भी तेजीसे प्रगति कर सकता है ?

अगर उसमें सचाई है तो भक्ति भी जरूर होगी। योगमें सचाईका मतलब है केवल भगवान्‌को ही उत्तर देना और अगर उसमें भक्ति न हो तो यह संभव नहीं है।

अतिमानसिक सत्यकी प्राप्तितक इस मार्गपर डटे रहनेके लिये ठीक वृत्ति क्या है ?

चैत्य स्थिति, सचाई और निष्कपटता तथा माताजीके प्रति भक्ति।

क्या अपने दोषोंको भगवान्‌के आगे तथा दूसरोंके सामने स्वीकार करना सचाईका लक्षण है ?

औरोंके आगे क्यों ? भगवान्‌के आगे स्वीकार करना चाहिये।

लेकिन अगर आदमी किसी व्यक्तिको नुकसान पहुंचाये तो क्या उसके आगे स्वीकार करना जरूरी नहीं है ? क्या सिर्फ भगवान्‌के आगे स्वीकार कर लेना काफी है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर उसका अन्य लोगोंके साथ संबंध हो तो यह किया जा सकता है।

साधक मिथ्यात्वकी शक्तियोंके द्वारा साधन-मार्गसे भटकाए जानेसे कैसे बच सकते हैं?

उन्हें हमेशा सच्चा होना चाहिये––यह इसीपर निर्भर है।

साधकोंको कबतक अनुशासन या संयममें रहना चाहिये?

कम-से-कम तबतक जबतक सिद्धि न मिल जाय।

क्या इसका यह अर्थ है कि उन्हें तबतक अनुशासन या संयममें रहना चाहिये जबतक कि पूर्ण सिद्धि न प्राप्त हो जाय?

कम-से-कम तबतक जबतक आधारभूत सिद्धि न मिल जाय ताकि वे मनकी मौज या प्राणिक अहंके अनुसार चलनेकी कोशिश न करें।

'आधारभूत सिद्धि' क्या है? क्या यह उन साधकोंकी ओर संकेत है जो भगवान्‌को पूरी तरह समर्पण कर चुके हैं और रूपांतरित हो चुके हैं?

यह तो पूर्ण सिद्धि हुई। अगर वे पूरी तरह रूपांतरित हो चुके हैं तो फिर आगे साधना ही नहीं रहती।

'मनकी मौज'से क्या मतलब है?

जब मन अपने ही विचारोंके अनुसार मौजके लिये या उनके साथ आसक्त होनेके कारण सत्यकी परवाह किये बिना चलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या यह संभव है कि जिन साधकोंका मनकी तरंगों और प्राणिक अहंसे पिंड नहीं छूटा है वे थोड़ी-बहुत सिद्धि प्राप्त कर लें?

नहीं, पूरी तरहसे भगवान्‌के प्रति समर्पण जरूरी है।

क्या आधारभूत सिद्धितक पहुंचनेके लिये मनकी तरंगों और प्राणिक अहंसे छूट जाना ही काफी है?

नहीं, साधकको समर्पण करना चाहिये और उसके चैत्य पुरुषको आगे आकर मन और प्राणपर प्रभुत्व करना चाहिये।

(५)

श्रद्धा

श्रद्धा (फेथ), प्रतीति (बिलीफ) और विश्वास (कॉनफिडेंस) में क्या फर्क है?

श्रद्धा पूरी सत्ताकी अनुभूति होती है, प्रतीति मानसिक होती है और विश्वासका मतलब है भगवान्‌पर या किसी व्यक्तिपर भरोसा या अपनी खोज अथवा प्रयासके परिणामके बारेमें निश्चिति।

लोगोंका 'अंध श्रद्धा'से क्या मतलब होता है?

इस वाक्यांशका सचमुच कोई अर्थ नहीं है। मेरा ख्याल है कि उनका मतलब यह होता है कि वे प्रमाणके बिना नहीं मानेंगे, लेकिन प्रमाणके बाद जो निष्कर्ष निकलता है वह श्रद्धा नहीं होता। वह या तो ज्ञान होता है या मानसिक मत। श्रद्धा प्रमाण या ज्ञानसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले आती है, तुम्हें ज्ञान या अनुभूति प्राप्त करनेमें सहायता देती है। इस बातका कोई प्रमाण नहीं कि भगवान् हैं, परंतु यदि मेरे अंदर भगवान्पर श्रद्धा है तो मैं भगवान्की अनुभूतितक पहुंच सकता हूं।

चैत्य श्रद्धा, मानसिक श्रद्धा, प्राणिक श्रद्धा और शारीरिक श्रद्धामें क्या फर्क होता है?

मानसिक श्रद्धा संदेहसे युद्ध करती है और सच्चे ज्ञानकी ओर खुलनेमें मदद देती है, प्राणिक श्रद्धा विरोधी शक्तियोंके आक्रमणोंको रोकती है या उन्हें पराजित करती है और सच्चे आध्यात्मिक संकल्प और क्रियाकी ओर खुलनेमें मदद देती है, भौतिक श्रद्धा व्यक्तिको सब प्रकारके भौतिक अंधकार, तमस् और कष्टमें दृढ़ रखती है और सत्य चेतनाके आधारकी ओर खुलनेमें सहायता देती है। चैत्य श्रद्धा भगवान्के सीधे स्पर्शकी ओर खुलती है और ऐक्य तथा समर्पण लाती है।

क्रियाशील या गत्यात्मक श्रद्धाका क्या अर्थ है? क्या सभी प्रकारकी श्रद्धा क्रियाशील नहीं होती?

श्रद्धा तामसिक और प्रभावहीन हो सकती है जैसे, 'मुझे विश्वास है कि माताजी सब कर देंगी, इसलिये मैं कुछ न करूंगा, वे जब चाहेंगी मेरा रूपांतर कर देंगी', यह सक्रिय नहीं, निष्क्रिय और जड़ श्रद्धा है।

क्या पूर्ण श्रद्धा और समर्पणके बाद भी भागवत कृपासे उच्चतर अनुभूतियां प्राप्त करनेके लिये बहुत प्रतीक्षा करनी पड़ती है?

अगर श्रद्धा और समर्पण हर भागमें पूरे हैं तो यह संभव ही नहीं कि अनुभूतियां न हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६)

समर्पण

क्या समर्पणके बिना सत्ताका रूपांतर संभव नहीं है ?

यदि समर्पण न हो तो पूरी सत्ताका रूपांतर नहीं हो सकता।

साधकमें सच्चा समर्पण कब शुरू होता है ?

वह तब शुरू होता है जब सच्चा आत्म-निवेदन हो।

सच्चा आत्म-निवेदन किस तरह किया जाय ?

अहंकार और इच्छाका अनुकरण न करके। अहंकार और इच्छा समर्पणको रोकते हैं।

यह जाननेकी क्या निशानी है कि साधकका ईश्वरके प्रति समर्पण उसके जीवनपर निश्चित रूपसे क्रियात्मक प्रभाव डाल रहा है ?

चिह्न यह है कि साधकमें प्रश्न, विद्रोह, मांग या शर्तके बिना पूरी आज्ञाकारिता हो और वह सभी भागवत प्रभावोंका प्रत्युत्तर दे और जो कुछ भगवान्‌की ओरसे न हो उसका त्याग करे।

क्या यह तथ्य नहीं है कि बार-बार समर्पणका निश्चय करनेके बाद भी पुरानी आदतें प्रभावशाली सिद्धिके रास्तेमें आती हैं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हां, निश्चय ही—जबतक सचाई, पवित्रता और समर्पण पूर्ण न हों तबतक वे ऐसा करती रहती हैं।

स्वयं भगवान् कब साधकोंकी साधनाको अपने हाथमें लेकर उसे आगे बढ़ाते हैं?

जब वे अहंका त्याग कर दें।

'ईश्वर साधनाको अपने हाथमें ले लेते हैं' का क्या अर्थ है?

जब स्वयं भागवत शक्ति सीधी क्रियाद्वारा—जिसके प्रति साधक सचेतन हो—पूरे योग और सभी कर्मोंको कार्यन्वित करे।

व्यक्ति यह कैसे जान सकता है कि भगवान्ने उसकी साधनाको अपने हाथमें ले लिया है?

तुम उसे अनुभव कर सकते हो।

गीताका केंद्रीय रहस्य है सब धर्मोंका त्याग करके भगवान्के प्रति समर्पण—'सर्वधर्मान् परित्यज्य'। 'सर्वधर्मान्' का अर्थ क्या है?

ऐसी सब रचनाएं जो मनकी पसंदों, प्राणकी इच्छाओं, भौतिककी अपनी आदतोंके प्रति आसक्तिपर आधारित हों।

क्या साधकके लिये साधनाके आरंभमें ही सब धर्मोंको त्यागना संभव है?

नहीं, इसमें समय लगता है, लेकिन समर्पणका संकल्प होना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृतिकी सभी क्रियाओंको भगवान्‌के अर्पण करनेके लिये पहले यह जरूरी है कि उनका निरीक्षण किया जाय। उस निरीक्षण-शक्तिको किस तरह सच्चा और पूर्ण बनाया जाय?

सावधानीसे देखनेपर और निरीक्षण करनेसे, अपने निरीक्षणसे किसी चीजको बचने न देकर, और पूर्णता प्राप्त होनेतक दृष्टि-शक्ति-के अधिक होनेकी अभीप्सा करके।

सक्रिय और निष्क्रिय समर्पणमें क्या अंतर है?

सक्रिय समर्पण तब होता है जब तुम अपनी इच्छाको भगवान्‌की इच्छाके साथ एक कर सको और जो भागवत नहीं है उसे त्याग दो, और जो भागवत है उसे स्वीकार कर लो। निष्क्रिय समर्पण तब होता है जब सब कुछ पूरी तरहसे भगवान्‌पर छोड़ दिया जाय—और यह सचमुच बहुत ही कम लोग कर पाते हैं। क्रियात्मक रूपमें होता यह है कि भगवान्‌को समर्पण करनेके बहाने तुम निम्न प्रकृतिको समर्पण कर बैठते हो।

माताजी 'विस्तृत समर्पण' नामका जो फूल दिया करती हैं उसका अर्थ क्या है?

अपनी प्रकृतिकी हर एक क्रिया और हर एक व्यौरेमें समर्पण।

क्या यह सच है कि जबतक साधककी सचाई और समर्पण पूर्ण न हो जायं तबतक उसे बहुत कष्ट सहने पड़ते हैं?

यदि वह सच्चा रास्ता ले तो कष्ट सहनेकी जरूरत नहीं है, लेकिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मातृवाणी'[1] में माताजीने कहा है कि अगर केंद्रीय सत्ताका पूर्ण समर्पण हो जाय तो मुख्य कठिनाई चली जाती है। यह केंद्रीय सत्ता क्या है? क्या यह चैत्य पुरुष है?

केंद्रीय सत्ता 'पुरुष' है। यदि इसका समर्पण हो जाय तो दूसरी सभी सत्ताएं भगवान्‌को अर्पित की जा सकती हैं और चैत्य पुरुषको सामने लाया जा सकता है।

इस पुरुषका, जिसे आप केंद्रीय सत्ता कहते हैं, इसका क्या कार्य है और इसका निवास कहां है?

पुरुष वह सचेतन सत्ता है जो प्रकृतिके सभी कार्योंको सहारा देती है। इसका कोई निश्चित स्थान नहीं है। लेकिन केंद्रीय सत्ता होनेके नाते वह सामान्यतः आधारके ऊपर रहता है--वही मानसिक, प्राणिक, भौतिक और चैत्य सत्ता हो जाता है।

क्या पुरुष ही मनुष्यमें अंतरात्मा है?

नहीं, चैत्य सत्ता ही मनुष्यमें अंतरात्मा है।

पुरुषको भगवान्‌के प्रति समर्पणमें कितना समय लगता है?

कोई निश्चित समय नहीं है।

पुरुषको तेजीसे किस तरह भगवान्‌के समर्पित किया जा सकता है?

---

[1] माताजीकी 'द कानवरसेशन विद द मदर' नामक पुस्तक जो बादमें श्रीमातृवाणीके तीसरे खंडमें प्रकाशित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभीप्सा और भागवत कृपासे।

सत्तामें क्या पुरुष ही माताजीकी शक्ति और कार्यमें सहमति देता है?

हां।

क्या सभी सत्ताएं (मानसिक, प्राणिक, भौतिक और चैत्य) पुरुषके प्रभावमें रहती हैं?

वह एक प्रकारसे सबकी अध्यक्षता करता है।

यदि पुरुष माताजीकी कृपाके कार्यसे सहमत न हो तो क्या वह रूपांतरके लिये अन्य सत्ताओंको माताजीकी कृपा प्राप्त करने और उसका अनुभव करनेसे रोकता है?

नहीं, साधारणतः पुरुष पीछे रहता है और अपने स्थानपर और सत्ताओंको सहमति और अनुभव करने देता है।

जब साधक माताजीकी कृपाको अपने अंदर उतरते अनुभव करता है, तो क्या यह माताजीकी सहमतिके कारण होता है?

सहमतिसे तुम्हारा मतलब क्या है? माताजीकी कृपा माताजीकी इच्छासे उतरती है, पुरुष कृपाको स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७)

प्रेम

क्या चैत्य प्रेम अपने ही बलपर ऊंचे-से-ऊंचे सत्यतक पहुंच सकता है ?

हां, अवश्य।

व्यक्ति यह कैसे जान सकता है कि उसमें भगवान्‌के लिये पूर्ण चैत्य प्रेम है ?

अहंकी अनुपस्थितिसे, शुद्ध भक्तिसे, भगवान्‌के प्रति अधीनतासे और समर्पणसे।

क्या चैत्य प्रेम हमेशा भगवान्‌की तरफ मुड़ा रहता है ?

कभी-कभी यह मानवकी तरफ मुड़ा रहता है, लेकिन जबतक वह भगवान्‌की तरफ नहीं मुड़ता तबतक उसे सच्चा संतोष कभी नहीं मिलता।

क्या चैत्य प्रेम और भागवत प्रेम एक ही नहीं हैं ?

नहीं, मानव चैत्य प्रेम भी होता है जिसका लक्षण है मानवकी निःस्वार्थता, वफादारी और आत्मदान।

क्या मानव प्रेम चैत्यकी ओर मुड़कर भागवत प्रेमकी ओर नहीं ले जाता ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति एकसे दूसरे प्रेममें जा सकता है।

क्या भागवत प्रेम मानव भावनाओंके द्वारा प्रकट नहीं किया जा सकता?

भागवत प्रेम मानव भावनाओंके द्वारा कैसे प्रकट किया जा सकता है? तब वह भागवत न रहकर मानव बन जाता है। अगर तुम्हारा यह मतलब है कि भागवत प्रेममें उससे मिलती-जुलती लेकिन उससे कहीं बड़ी कोई चीज है तो शायद यह संभव हो।

क्या मानव प्रेमको चैत्य रूप देनेसे आध्यात्मिक सत्यकी प्राप्ति नहीं हो सकती?

नहीं, व्यक्तिको किसी चीजकी हल्की-सी झलकें मिलती हैं, सत्यकी प्राप्ति नहीं होती।

क्या भागवत प्रेम वह प्रेरणा नहीं है जो लोगोंको योग आरंभ करनेके पथपर ले जाती है?

नहीं। हो सकता है कि कोई मानव प्रेम भगवान्‌की ओर मुड़ रहा हो, लेकिन योग केवल प्रेमसे नहीं, बहुत-सी प्रेरणाओंसे शुरू होता है।

क्या भागवत प्रेममें भावावेश नहीं होते?

एक तीव्र अनुभूति तो होती है—पर मनुष्य जिसे भावावेश कहते हैं, वह नहीं—क्योंकि वह केवल ऊपरी तलकी और क्षणभंगुर वस्तु है। भागवत प्रेमकी तीव्रता सत्ताके किसी भी भागमें अशांति पैदा नहीं करती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भागवत प्रेमको अभिव्यक्त करनेका सच्चा मार्ग क्या है ?

भगवान्‌की तरफ अधिक-से-अधिक निःस्वार्थ भावसे मुड़ना।

क्या पूर्ण रूपांतरके पहले भागवत प्रेमको पाना संभव है ?

एक अंशमें।

क्या प्रेम ही चैत्यकी एकमात्र शक्ति है या उसमें और शक्तियां भी हैं ?

चैत्यमें बहुत-सी शक्तियां हैं—श्रद्धा, चैत्य दृष्टि, भगवान्‌के प्रति कृतज्ञता, अभीप्साकी अग्नि और बहुत-सी शक्तियां।

क्या चैत्य प्रेममें अभिमान होता है ?

बिल्कुल नहीं। अभिमान पूरी तरहसे अहंभाव है।

क्या साधारण मानव प्रेम चैत्य प्रेमकी छाया नहीं है ?

नहीं, हर्गिज नहीं। साधारण मानव प्रेम प्राणिक, आवेगात्मक, भौतिक और हमेशा अहंकारमय होता है—आत्म-प्रेमका ही एक रूप। कुछ अपवादोंको छोड़कर उसमें चैत्य तत्त्व बहुत ही कम होता है।

क्या चैत्य प्रेमकी भौतिकमें अभिव्यक्ति हो सकती है ?

हो सकती है—लेकिन उसमें सेक्सकी कोई विकृति नहीं होनी चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या जानवरोंमें चैत्य प्रेम होता है?

उनका लैंगिक प्रेम प्राणिक-भौतिक होता है—बाकी भी अधिकतर ऐसा ही होता है। उच्चतर जातियोंमें कुछ चैत्य तत्त्व आ जाता है। कुछ जानवरोंमें मनुष्यके प्रति चैत्य प्रेम होता है।

माताजीके प्रति चैत्य भक्ति, मानसिक भक्ति और प्राणिक भक्ति-में कैसे भेद किया जाय?

चैत्य-भक्ति प्रेम और बिना किसी मांगके आत्म-समर्पणसे बनती है; प्राणिक भक्तिमें माताजीके द्वारा अधिकृत होने और उनकी सेवा करनेका संकल्प होता है; मानसिक भक्तिमें आती है श्रद्धा, और माताजी जो हैं, जो कहती हैं और करती हैं उसे बिना प्रश्न किये मानना। फिर भी ये बाहरी चिह्न हैं—इन्हें आंतरिक लक्षणसे पहचाना जा सकता है, लेकिन इन भेदोंको शब्दोंमें व्यक्त नहीं किया जा सकता।

क्या हमारे योगमें मानसिक और प्राणिक भक्तिका कुछ उपयोग नहीं है?

कौन कहता है कि नहीं है? जहांतक भक्ति वास्तविक हो सभी प्रकारकी भक्तिके लिये स्थान है।

क्या चैत्य भक्ति और पूर्ण भक्ति एक ही है?

यह पूर्ण भक्तिका आधार है।

चैत्य भाव और चैत्य भक्तिमें क्या फर्क है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्ति चैत्य भाव है, चैत्य अनुभूति है जो भगवान्‌की ओर या गुरुकी ओर मुड़ी है।

'प्रेम-भक्ति'का क्या अर्थ है? वह साधारण भक्तिसे किस प्रकार भिन्न है?

मेरा ख्याल है कि यह प्रेमपर आधारित भक्ति है, प्रेम बिना भी पूजा, समर्पण, आदर, आज्ञाकारिता आदिकी भक्ति हो सकती है।

मैं बहुत बार ऐसी अभीप्साका अनुभव करता हूं कि सबमें माताजीको देखूं और माताजीमें सब। क्या यह पूरी होगी?

सबमें माताजीको देखना और माताजीमें सबको, यह इस योगका एक आवश्यक अनुभव है। इसका कोई कारण नहीं है कि ऐसा क्यों न हो।

बहुत बार मुझे ऐसा लगता है कि मैं माताजीसे बहुत दूर हूं। मुझे ऐसा क्यों लगता है?

यह भौतिक या बाहरी सत्ताकी अनुभूति है जो अपने अज्ञानके कारण माताजीकी निकटताका अनुभव नहीं करती।

माताजीसे दूर होनेकी इस अनुभूतिको कैसे दूर किया जाय?

माताजी हमेशा हमारे अंदर और पास हैं, केवल मन और प्राणका धुंधलापन उन्हें देखने और अनुभव करने नहीं देता। यह एक ऐसा ज्ञान है जिसे मनको दृढ़तासे पकड़ना होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरोंके साथ सामंजस्य और सद्भावनाका संबंध बनाये रखनेका सही तरीका क्या है ?

योगके जीवनमें यह काम केवल चैत्य ही कर सकता है। मन और प्राण केवल इस या उस व्यक्तिके साथ संबंध जोड़ सकते हैं जिनके साथ मानसिक या प्राणिक घनिष्ठता हो, लेकिन यह सच्ची चीज नहीं है।

यदि मेरा प्रेम मांगके साथ जुड़ा है तो क्या यह प्राणिक प्रेम है ?

हां, यह प्राणमय प्रेमका स्वभाव है। यह लालसा, अधिकार या प्रभुत्व-भावनापर आधारित होता है।

'अगर तुम मुझसे प्यार करो, तो मैं भी तुमसे प्यार करूंगा।' क्या यह प्राणिक प्रेमकी अभिव्यक्ति नहीं है ?

हां—सौदा करनेवाले प्राणिक प्रेमकी।

'अगर तुम मुझसे घृणा करते हो और मेरी परवाह नहीं करते तो भी मैं तुमसे प्रेम करूंगा।' क्या यह भी प्राणिक प्रेमकी अभिव्यक्ति है ?

यह एक प्रकारके आवेगपूर्ण प्राणिक प्रेमकी अभिव्यक्ति हो सकती है—लेकिन यह एक प्रकारके चैत्य प्रेमकी अभिव्यक्ति भी हो सकती है।

'मैं तुमसे उतना ही प्रेम करूंगा जितना तुम मुझसे करते हो।' यह किस प्रकारके प्रेमकी अभिव्यक्ति है ?

यह प्रेम बिल्कुल नहीं है—यह व्यापारिक अदला-बदली है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

SRI AUROBINDO

*
**

Assam Tea Warehousing Corporation

Registered and approved Ware House

at Gauhati (Assam)

H. O. 8, Camac Street, Room No. 7,

Shantiniketan Building,

CALCUTTA - 700 017

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57.

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

236
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6/7/88

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

जुलाई १९८८ वर्ष १८, अंक १२, पूर्णांक २१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

माताजीका संदेश		१
'संपादकीय' : ऐसा भी होता है	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
योगके तत्त्व : चैत्य उद्घाटन		८
अनुभूतियां और अंतर्दृष्टियां		११
काम		१६
रूपांतर		२१
कठिनाइयां और प्रगति		२७
काम-वासना, भोजन, नींद		३५
सोसायटी समाचार		आ० ३

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6/7/88

माताजीका संदेश

...तुम अपने भयसे तभी पिंड छुड़ा सकोगे जब तुम अपनी आत्माके, यानी अपनी सत्ताके सत्यके साथ संबंधको बढ़ने दोगे— और जब तुम हमेशा इस प्रयासमें लगे रहोगे कि तुम जो भी सोचो, जो कुछ भी बोलो, जो कुछ करो वह सब इस सत्यकी अधिकाधिक अभिव्यक्ति हो।

जब तुम सचेतन होकर उसमें जिओगे, तब तुम्हें अपनी सत्ताके किसी भी क्षेत्रमें, किसी चीजका डर न रहेगा, क्योंकि तुम उस वैश्व सत्यके साथ एक होगे जो संसारपर शासन करता है।

—श्रीमां

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

ऐसा भी होता है

हमारी सामाजिक चेतना इतनी गिर गई है कि जो बातें समाजको अपनी सहज, सुरुचिपूर्ण बुद्धिसे तय करनी चाहियें उनके लिये भी सरकार माई-बापकी शरण ली जाती है और उसके द्वारा कानून बनाये जाते हैं जिनका पालन करनेमें समाज असमर्थ होता है क्योंकि कई सामाजिक परिपाटियोंको केवल समाजके नेता उसमें जागृति लाकर ही बदल सकते हैं, सरकार या कानून वहां बेबस है।

ऐसा ही कानून है दहेजके विरोधमें। हम सब जानते हैं कि अब दहेज किसी और नामसे, किसी और ढंगसे दिया जाता है किंतु दिया अवश्य जाता है।

फिर भी इस सामाजिक तमसमें कभी-कभी छोटी-छोटी चिंगारियां छिटकती हैं जिनसे आशा बंधती है कि किसी दिन समाज जाग उठेगा और इस तरहकी करुण घटनाओंका अंत आयेगा।

ऐसी ही एक सुखद घटनाका आनंद लेने और लुटानेके लोभका संवरण न कर सकनेके कारण हम उसे अपने पाठकोंके सामने प्रस्तुत कर रहे हैं।

एक सज्जन जिन्हें फोटो खींचनेका शौक था अपने मित्रकी शादीमें कैमरा लेकर गये। दुल्हनकी सखियोंने मिन्नतें कर उन्हें अंदर बुलाया ताकि वे अपनी सखीके साथ फोटो खिंचवा लें। फोटोग्राफरके साथ दूल्हेका छोटा भाई भी चला आया। दुल्हनकी छोटी बहन बोल उठी, "आप किसलिये आ गये? आपको तो नहीं बुलाया।" वह पीछे हटनेवाला न था, बोला "हम आपको देखने आये हैं।" लड़की बेझिझक बोल पड़ी, "तब तो आपको दस साल प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। अभी दीदीकी शादीमें इतना खर्च होगा कि . . ."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़का बाहरकी ओर लपका क्योंकि बाहर उस समय दूल्हेको ससुरसे जो चाहिये वह मांगनेकी रस्म अदा हो रही थी। वह जब पहुंचा तब दूल्हा ससुरसे स्कूटर मांग रहा था। छोटे भाईने बड़े भाईको ललाड़ा, "क्यों भइया, आप नहीं खरीद सकते स्कूटर?" फिर दूर ले जाकर समझाया कि दहेज देनेके बाद उस परिवारको कई वर्षतक रोटी नमकपर गुजारा करना पड़ेगा। उसने यह भी कहा कि वह बिना दहेज भाभीकी छोटी बहनसे शादी करना चाहता है। यह सुनकर बड़े भाईने भी कोई मांग न की। इतना ही नहीं, उसी समय फूलोंकी मालाके आदान-प्रदानसे छोटे भाईकी शादी हो गयी।

किस्सा कहानी या सिनेमाका दृश्य लगता है न, अविश्वसनीय भले लगता हो किंतु है सत्य!

ऐसे युवक ही हमारे समाजको अधिक मानवीय बनाएंगे।

—अनुबेन

दैनन्दिनी

जुलाई

१. तुम भयसे तभी मुक्त हो सकते हो जब तुमने अपने अंदरसे सारी उग्रताको भगा दिया हो।

२. अगर तुम जागरूक रहो तो तुम्हारी रक्षा करनेवाली शक्तिके बढ़नेके साथ-साथ तुम्हारे अंदर आत्म-नियंत्रणकी शक्ति भी होगी और जब गलत मोड़ आये या गलत प्रतिक्रिया हो तो उसे देखकर अस्वीकार करनेकी शक्ति भी तुम्हारे अंदर आएगी।

३. अदम्य साहस, पूर्ण निष्कपट सचाई, और ऐसा पूर्ण सच्चा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्म-दान जो न गिनता है, न सौदा करता है, जो पानेके विचारसे नहीं देता, विश्वास इसलिये नहीं करता कि उसकी रक्षा की जाएगी, ऐसी श्रद्धा नहीं रखता जो प्रमाणकी मांग करे—यह योग पथपर चलनेके लिये अनिवार्य है, केवल यही तुम्हें सब खतरोंसे बचा सकता है।

४. कोई भी क्षेत्र हो, कैसा भी खतरा हो, मनोवृत्ति एक समान रहनी चाहिये—निश्चल, शांत।

५. सच्ची बीमारी भय है। भयको दूर फेंक दो और तुम्हारी बीमारी भाग जाएगी।

६. अपने बच्चे और अपने बीच भयको मत आने दो; भय शिक्षाका हानिकर माध्यम है; उससे अनिवार्य रूपसे धोखे और झूठका जन्म होता है।

७. केवल विवेकशील स्नेह जो दृढ़ होते हुए कोमल हो और पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान उस विश्वासका सेतु तुम्हारे बीच बन सकते हैं जिसके द्वारा तुम अपने बालकको सफलतासे शिक्षित कर पाओगे।

८. भयका कोई कारण नहीं—सब कुछ प्रभु है—प्रभुके सिवा कुछ भी नहीं है; केवल प्रभुका ही अस्तित्व है और वह सब जो हमें डरानेका प्रयास करता है प्रभुका हास्यास्पद और अर्थहीन छद्मवेश है।

९. अपने-आपको बिना डरे मेरी बांहोंमें सौंप दो और विश्वास करो कि तुम्हें कोई हानि न पहुंचा सकेगा।

१०. श्रीअरविंदकी कृपा उन सबपर हमेशा रहती है जो प्रगति करना चाहते हैं और आगामी कलके सत्यको चरितार्थ करना चाहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. मेरा सत्य वह है जो अज्ञान और मिथ्यात्वका बहिष्कार करता है और सत्यकी ओर बढ़ता है, अंधकारको अस्वीकार करता है और प्रकाशकी ओर बढ़ता है, अहंको अस्वीकार करता है और दिव्य सत्ताकी ओर बढ़ता है, अपूर्णताओंका बहिष्कार करता है और पूर्णताकी ओर बढ़ता है।

१२. मेरा सत्य केवल भक्तिका सत्य या चैत्यके विकासका सत्य नहीं है बल्कि ज्ञानका, शुद्धिका, दिव्य सामर्थ्यका और शांत अचंचलताका भी सत्य है, और इन सबको अपने मानसिक, भावनात्मक और प्राणिक रूपोंसे उठाकर अतिमानसिक सद्वस्तुमें उठानेका सत्य भी है।

१३. अगर तुम इस दिव्य करुणाके साथ ऐक्यमें रहो, अगर तुम उसे सर्वत्र कार्य करते हुए देखो तो तुम उल्लाससे, सर्व-शक्तिसे, अनंत सुखसे जीना आरंभ करोगे।

१४. आभासोंके पीछे तुम इस दिव्य करुणाको देखोगे—असीम, अद्भुत, सर्वशक्तिमान्—जो सब देखती है, सबकी व्यवस्था करती है, सबको संगठित करती है, और हम चाहें या न चाहें, जाने या न जानें हमें उस परम लक्ष्यकी ओर ले जाती है यानी भगवान्के साथ ऐक्यकी ओर, देवत्वकी अनुभूति और उसके साथ ऐक्यकी ओर ले जाती है।

१५. दिव्य करुणाकी उपस्थिति और क्रियामें तुम हर्षसे भरपूर जीवन जियोगे, आश्चर्यसे भरपूर चमत्कारिक अनुभूतिके साथ जियोगे, और साथ ही इतना शांत विश्वास होगा जो कभी न डिगेगा।

१६. भगवान्की सहायतासे कुछ भी असंभव नहीं है।

१७. श्रद्धा हम मनुष्योंको दी हुई भागवत करुणाकी देन है। वह एक ऐसे द्वारकी तरह है जो हठात् शाश्वत सत्यकी ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुलता है जिससे हम उसे देख सकते हैं, प्रायः छू पाते हैं...

१८. प्रारंभिक अज्ञान और अंधकारके बीच श्रद्धा दिव्य शक्तिकी सीधी अभिव्यक्तिके रूपमें होती है जो युद्ध करने और विजयी होनेके लिये आती है।

१९. परम प्रभुकी शक्ति असीम है--हमारी श्रद्धा ही तुच्छ है।

२०. अगर तुम्हें भागवत करुणामें विश्वास हो, यह श्रद्धा हो कि भागवत करुणा जैसा कुछ है, और कि वह प्रार्थनाको, अभीप्साको, आह्वानको प्रत्युत्तर दे सकती है तो अपना मानसिक रूप बनानेके बाद, अगर तुम उसे भागवत करुणाके अर्पित कर दो और उसपर विश्वास करके उससे मांग करो कि वह हस्तक्षेप करे और यह विश्वास करो कि वह हस्तक्षेप करेगी तब तुम्हें सफलताका अवसर मिल सकता है।

२१. अगर तुम पूर्ण समर्पणकी अवस्थामें हो और अपने-आपको पूरी तरह दे देते हो, भागवत करुणाको अर्पित हो जाते हो और उसे वह जो चाहे करने देते हो, तो वह बहुत अच्छा है। लेकिन बादमें वह जो कुछ करे उसपर प्रश्न नहीं करना चाहिये।

२२. गहराईमें यह जाननेके लिये कि मनुष्य कुछ भी नहीं है, कुछ कर नहीं सकता, अस्तित्वहीन है, कि दिव्य चेतना और भागवत करुणाके बिना कोई सत्ता नहीं हो सकती, मनुष्यको जीवनमें कितने आघात झेलने पड़ते हैं!

२३. जब कठिनाइयां तुम्हें घेर लें तो समझ लो कि भागवत करुणा तुम्हारे साथ है।

२४. जिन्होंने अपने-आपको भगवान्‌के समर्पित कर दिया है उनके लिये सामने आती हुई प्रत्येक कठिनाई नयी प्रगतिका आश्वासन है; इसलिये उसे भागवत करुणाकी ओरसे आते हुए उपहारके रूपमें लेना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५. जीवनकी सब परिस्थितियोंकी व्यवस्था हमें यह सिखानेके लिये की गयी है कि मनसे परे भागवत करुणामें श्रद्धा ही हमें सब अग्नि-परीक्षाओंसे गुजरनेकी, सब कमजोरियोंको जीतनेकी शक्ति देती है और दिव्य चेतनाके साथ संपर्क जोड़नेकी शक्ति देती है जो हमें न केवल शांति और हर्ष देती है बल्कि शारीरिक संतुलन और अच्छा स्वास्थ्य देती है।

२६. भागवत करुणामें पूर्ण विश्वास रखो, अपने क्षुद्र व्यक्तित्वको एक ओर रख दो और भागवत करुणाको कार्य करने दो। जो आवश्यक होगा वह तुमसे करवा लेगी और सब कुछ अच्छा होगा।

२७. भागवत करुणामें अविचलित विश्वास और श्रद्धाके साथ पूरी तरह शांत और निश्चल रहकर ही तुम परिस्थितियोंको यथा-संभव अच्छा बनने दोगे।

२८. जब हम अपनी चेतनासे समस्त पराजयवादको भगा देंगे तब हमने उपलब्धिकी ओर एक बड़ी छलांग लगाई होगी।

२९. यह एक तथ्य है कि अगर किसीको हजारों कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है तो उसका अर्थ यह है कि उसे आश्चर्यजनक उपलब्धि होगी—बशर्ते कि उसमें धैर्य और सहनशीलता हो और वह दोषोंके विरोधमें अभीप्साकी अग्नि-को बनाये रखे।

३०. भागवत करुणा कार्य करनेके लिये तत्पर रहती है लेकिन तुम्हें उसे कार्य करने देना चाहिये, उसका विरोध नहीं करना चाहिये।

३१. केवल भागवत करुणाके अंदर हस्तक्षेप करनेकी, और वैश्व न्यायके मार्गको बदलनेकी शक्ति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(८)

चैत्य उद्घाटन

'मातृवाणी'में माताजी हृदयकी गहरी निश्चलतामें जलती हुई आगके बारेमें कहती हैं। क्या यह आग चैत्य सत्ता है?

आग एक सत्ता नहीं है--यह चैत्य-अग्नि है, अभीप्साकी तीव्र अवस्था।

चैत्य सत्ता कहां रहती है?

वह हृदय-केंद्रके पीछे बहुत गहराईमें रहती है।

बहुत बार माताजी कहती हैं कि अमुक व्यक्तिकी चैत्य सत्ता अच्छी है। लेकिन क्या यह सच नहीं है कि सबकी चैत्य सत्ता भगवान्‌का अंश होती है और इसलिये हमेशा अच्छी होती है? तब माताजी विशेष व्यक्तियोंके बारेमें फर्क क्यों करती हैं?

चैत्य सत्ता विकसित होती रहती है--कुछमें इतनी शक्तिशाली होती है कि मानसिक और प्राणिक अवरोधको आसानीसे जीत सकती है--कुछमें कम विकसित होती है और उसे अधिक कठिनाई होती है।

क्या योग-शक्ति पहले चैत्यद्वारा नहीं आती और आकर मनमें तेजीसे परिवर्तन लाती है?

यह जरूरी नहीं है। अधिकतर लोगोंमें शक्ति पहले मनमें काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करती है—जब मन और प्राण एक हदतक परिवर्तित हो जायं तभी चैत्य सामने आ सकता है।

क्या चैत्य सत्ता मानसिक, प्राणिक, भौतिक सत्ताओंकी सहायताके बिना सीधी अपने-आपको अभिव्यक्त कर सकती है?

मन, प्राण और शरीर अभिव्यक्तिके यंत्र हैं। अवश्य ही, चैत्य आंतरिक रूपमें या अपने स्तरपर चीजें अभिव्यक्त कर सकता है, लेकिन शारीरिक स्तरपर अभिव्यक्त करनेके लिये दूसरे भागोंकी यंत्रके रूपमें सहायता जरूरी होती है।

क्या मन और प्राणको बदले बिना चैत्य-सत्ताको सामने लाना संभव नहीं है?

नहीं। अगर वे नहीं बदले हैं तो चैत्यको सामने आनेसे रोकते हैं।

आध्यात्मिक और चैत्य चेतनामें क्या अंतर है?

आत्माके ऊपर मनकी चेतना है जो भगवान्‌के साथ हमेशा एक रहती है—आध्यात्मिक चेतना वह है जो भगवान्‌के साथ जुड़ी रहती है या कम-से-कम उनसे संबंध रखती है।

चैत्य भगवान्‌से आयी हुई एक चिनगारी है जो सब चीजोंमें है और जैसे-जैसे व्यक्ति विकसित होता है वह उसके अंदर बढ़ती है और चैत्य-सत्ता या अंतरात्माके रूपमें प्रकट होती है। वह हमेशा भगवान् और सत्यको खोजती है, जहां और जब कभी भगवान् और सत्यसे मिलती है तो उनका उत्तर देती है।

भगवान् और आत्मामें क्या अंतर है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् सब जगह हैं, यहांतक कि अज्ञानमें भी। केवल आत्मा-में ही नहीं, बल्कि मन, प्राण और शरीरमें भी व्याप्त हैं। मन, प्राण और शरीरके पीछे जो स्थित है वह आत्मा है।

क्या बहुत सारे चैत्य-लोक हैं?

नहीं, केवल एक है।

क्या ऐसा व्यक्ति जिसकी चैत्य-सत्ता पूरी तरह विकसित न हो, अपनी प्रकृतिकी मौलिक कठिनाइयोंको पार कर सकता है?

नहीं, अपने बलपर नहीं, लेकिन भागवत कृपाका सहारा हो तो कर सकता है।

क्या यह सच है कि अगर चैत्य सत्ता सामने आ जाय तो सब संदेहों और कठिनाइयोंको तेजीसे दूर किया जा सकता है?

हां।

चैत्य सत्ताको सामने कैसे लाया जाय? क्या यह गलत क्रियाओंसे बचकर किया जा सकता है?

यह नकारात्मक रास्ता है, सकारात्मक रास्ता है—भागवत आज्ञाका पालन, भक्ति, समर्पण।

क्या शारीरिक चेतनाको सुनम्य बनाकर चैत्य सत्ताको हमेशा सामने रखा जा सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, बल्कि यह शारीरिक चेतनापर आध्यात्मिक और चैत्य विकासका परिणाम होता है।

आजकल मैं बहुत तीव्र पीड़ाका अनुभव करता हूं जिससे मेरी आंखोंमें आंसू आ जाते हैं, उसमें कोई बेचैनी या बाधा नहीं होती, बल्कि उसमें शांति, पवित्रता और गंभीरताका अनुभव जुड़ा होता है। क्या यही वह चीज है जिसे चैत्य-दुःख कहते हैं?

हां, इस तरहका चैत्य दुःख होता है—लेकिन यह जरूरी नहीं है कि चैत्य-आंसू दुःखके हों। भावावेग और आनंदके भी आंसू होते हैं।

(९)

अनुभूतियां और अंतर्दृष्टियां

हमारे योगमें एकाग्रता और ध्यानमें क्या अंतर है?

हमारे योगमें एकाग्रताका अर्थ है चेतनाका किसी विशेष स्थिति (उदाहरणके लिये शांति) या गति (उदाहरणके लिये अभीप्सा, संकल्प, माताजीके संपर्कमें आना, माताजीका नाम लेना) में स्थित होना; ध्यान तब होता है जब आंतरिक मन सच्चा ज्ञान प्राप्त करनेके लिये चीजोंको देखता है।

आपने लिखा था, 'माताजी हमेशा अपनी आंतरिक सत्तामें एकाग्र चेतनामें रहती हैं।' 'एकाग्र चेतना'से क्या मतलब है?

उच्चतर चेतना एकाग्र चेतना है जो भागवत ऐक्यमें और भागवत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छाको कार्यान्वित करनेमें एकाग्र होती है। सामान्य मनुष्यकी चेतनाकी तरह बिखरी हुई किसी-न-किसी मानसिक विचार, प्राणिक इच्छा या भौतिक आवश्यकताके पीछे इधर-उधर भागती नहीं, न ही भावों, आवेगों या सैकड़ों अस्त-व्यस्त विचारोंसे आक्रांत होती है, बल्कि अपने-आप मालिक, केंद्रित और सामंजस्यपूर्ण होती है।

सफल ध्यानकी क्या निशानी है?

ध्यानकी सच्ची सफलता यह है कि तुम गहरी या उच्चतर चेतनामें प्रवेश करो या वह चेतना तुम्हारे अंदर उतरे।

क्या यह सच है कि ध्यानके बिना उच्चतर अनुभूतियां पाना असंभव है?

ध्यानके साथ ज्यादा आसानी होती है। ऐसे लोगोंको भी वे अनुभूतियां प्राप्त होती हैं जो कभी ध्यानके लिये नहीं बैठते। तो 'असंभव' कहनेका क्या फायदा।

क्या आसन जमाकर बैठनेका ध्यानपर कोई असर होता है?

शरीरमें प्राणिक शक्तियोंको सबल बनानेके लिये, विशेष रूपसे, उन्हें शरीरमें दृढ़ करनेके लिये उसका असर होता है।

क्या सभी साधकोंको अपनी साधनाके विकासमें एक-सी अनुभूतियां और सिद्धियां मिलती हैं या हर एककी प्रकृतिके अनुसार ये चीजें भिन्न होती हैं?

कुछ चीजें सबमें समान होती हैं। सभी आवश्यक या तात्त्विक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुएं संभावनाके रूपमें सबके लिये समान होती हैं, लेकिन हर एक अपनी प्रकृतिके अनुसार जिस चीजको विकसित कर सकता है, जिस तरीकेसे विकसित कर सकता है, करता है।

अनुभूति, उपलब्धि और सिद्धिमें क्या फर्क है?

योगमें प्रायः सभी घटनाएं अनुभूति शब्दमें आ जाती हैं, लेकिन जब कोई चीज स्थायी हो जाती है तो वह अनुभूति न रहकर सिद्धिका भाग बन जाती है। उदाहरणके लिये, जब शांति आती है, जाती है, रहती है तो वह अनुभूति है, लेकिन जब वह स्थिर हो जाती है, यानी, जाती नहीं तो वह सिद्धि कहलाती है। उपलब्धि इससे भिन्न है। तुम किसी चीजके लिये अभीप्सा कर रहे हो, जब वह तुम्हारे लिये वास्तविक हो जाय, जैसे तुम्हें मालूम है कि भगवान् सबमें हैं, लेकिन वह केवल एक विचार या धारणा है। जब तुम सबमें भगवान्को देख या अनुभव कर सको तो वह उपलब्धि है।

अंतर्दृष्टि, अनुभूति और सिद्धिमें क्या फर्क है?

जब तुम ज्योति देखते हो तो वह अंतर्दृष्टि है। जब तुम्हें लगता है कि वह ज्योति तुम्हारे अंदर प्रवेश कर रही है तो यह अनुभूति है और जब ज्योति तुम्हारे अंदर बस जाय और अपने साथ प्रकाश और ज्ञान लाये तो यह उपलब्धि हुई। लेकिन साधारणतः अंतर्दृष्टिको भी अनुभूति कहते हैं।

अनुभव करने और उपलब्ध करनेमें क्या फर्क है?

व्यक्ति भगवान्को अनुभवसे या देखकर या दोनोंसे प्राप्त कर सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणमय लोक और अध्यात्म लोकके अंतर्दर्शनोंमें क्या फर्क होता है ?

अंतर्दर्शन अध्यात्म लोकसे नहीं आते। वे सूक्ष्म भौतिक, प्राणमय, मनोमय, या चैत्य लोकसे या मनसे ऊपरके लोकोंसे आते हैं। अध्यात्म लोकसे भगवान्‌की अनुभूतियां आती हैं, उदाहरणके लिये आत्माकी सब जगह उपस्थिति, भगवान्‌की सबमें उपस्थिति, आदि।

क्या प्रकृतिके रूपांतरित होनेसे पहले उच्चतर अनुभूतियां हो सकती हैं ?

हां, लेकिन उससे प्रकृतिका रूपांतर नहीं होता। वह आंतरिक चेतनाकी उसके अपने क्षेत्रमें अनुभूति होती है और उसमें भी कोई सच्ची पूर्णता संभव नहीं है।

ऐसे लोग हैं जो प्रायः ही प्राणमय जगत्‌के अंतर्दर्शन पाते रहते हैं। क्या यह उनके उच्चतर आध्यात्मिक विकासके सूचक हैं ?

नहीं, ये दर्शन ऐसे भी बहुत-से लोगोंको प्राप्त होते हैं जो बिल्कुल आध्यात्मिक नहीं होते।

क्या प्राणमय जगत्‌के स्वप्न और अंतर्दर्शन चैत्य और आध्यात्मिक विकासके लिये सहायक नहीं होते ?

नहीं, वे सामान्य सीमित भौतिक चेतनाके परे विकसित होने और सत्ताके पीछेकी और उसकी प्रेरक शक्तियोंका परिचय देनेमें सहायक होते हैं। मानसिक और प्राणिक लोकोंकी चीजोंको जाने बिना पूर्ण आत्म-ज्ञान नहीं हो सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या चैत्य दृष्टिसे कुछ भी देखे बिना आध्यात्मिक विकास संभव है?

'चैत्य दृष्टिसे देखने'से तुम्हारा क्या मतलब है? तुम्हारा मतलब अंतर्दर्शनसे है या सत्यके चैत्य दर्शनसे या चैत्य बोधसे? व्यक्तिका विकास मनके ऊपरसे आनेवाले आध्यात्मिक ज्ञान या अनुभूतिसे होता है या अंदरसे आनेवाले चैत्य बोध और अनुभूतिसे—ये दो मुख्य चीजें हैं। लेकिन आंतरिक, मानसिक और प्राणिक अनुभूतियोंके द्वारा विकास पाना भी जरूरी है और यहां अंतर्दर्शन और स्वप्न-अनुभूतियां बहुत काम करती हैं। एक साधकमें एक चीज प्रधान हो सकती है, दूसरोंमें दूसरी, हर एक अपनी प्रकृतिके अनुसार विकसित होता है।

अनुभूति और ज्ञानमें कोई फर्क है क्या?

जब तुम कोई प्रतीकात्मक स्वप्न देखो तो यह अनुभूति है, जब तुम्हें यह मालूम हो कि उसका क्या अर्थ है तो यह ज्ञान है।

मुझे वह ज्ञान कब मिलेगा जिससे मैं अपने अंतर्दर्शनों और अनुभूतियोंका अर्थ समझ सकूं?

जब अभ्यास और अंतर्मासे तुम यह समझने लगोगे कि विभिन्न स्तरोंपर वस्तुओंका क्या अर्थ होता है। तुम्हें अधिक सचेतन और सतर्क होना चाहिये। बस, इतना ही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१०)

काम

जब लोग माताजीके संरक्षणमें साधना करनेके लिये आश्रममें आते हैं तो क्या यह जरूरी नहीं है कि वे अपनी साधनाकी प्रगतिके लिये आश्रमका कुछ काम करें ?

उन्हें करना चाहिये।

उन्हें अपने-आप माताजीसे काम मांगना चाहिये या इसकी प्रतीक्षा करनी चाहिये कि स्वयं माताजी काम दें ?

अगर उनमें सच्ची भावना है तो वे काम मागेंगे।

कभी-कभी जब साधक माताजीसे अपनी पसंदका काम मांगता है और माताजी दे देती हैं तो क्या यह कहा जा सकता है कि यह माताजीका काम है ?

साधकको सिर्फ अपनी पसंदका ही नहीं, हर काम करनेके लिये तैयार रहना चाहिये, जिसकी जरूरत हो।

कुछ लोग कहते हैं कि अगर साधक माताजीसे कोई काम मांगे और माताजी दे दें तो वह सीधा माताजीका काम नहीं माना जा सकता। माताजी अपने-आप जो काम दें वही उनका काम है। क्या यह सच है ?

यह परिस्थितियोंपर निर्भर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं देखता हूं कि आश्रममें जब कुछ करनेकी जरूरत होती है तो साधक प्रायः कह देते हैं, 'माताजी कहें तो मैं करूंगा'। बहुत बार माताजीके नामकी ओटमें जरूरी कामकी अवहेलना होती है। क्या माताजीका नाम लेकर कामसे इंकार करना उनकी सच्चाईका चिह्न है?

अगर वे सच्चाईसे माताजीके आदेशपर निर्भर हों तो ठीक है और अगर जो काम करना चाहिये उसे न करनेका यह एक बहाना-मात्र है तो और बात है। लेकिन यह व्यक्तिपर निर्भर है। एक आदमीका विवेक दूसरेके जैसा नहीं होता, न उनकी सामान्य बुद्धि ही एक-सी होती है। एक आदमी एक चीज करना ठीक समझ सकता है, लेकिन दूसरा उसे उसी तरह नहीं देखता।

कभी-कभी जब किसी काममें मददकी सख्त जरूरत होती है और किसी साधकको बुलाया जाता है तो वह कह देता है, "मैं माताजी-की आज्ञाके बिना एक मिनटकी सहायता भी नहीं दे सकता।" क्या वह ऐसी बात सच्ची समझदारीके साथ कहता है?

प्रायः वह सच्चा नहीं होता—उसका मतलब यह होता है कि वह करना नहीं चाहता।

आश्रममें कुछ लोग कहते हैं, "यदि माताजी अपने-आप हमें कोई काम नहीं देतीं तो हम ही क्यों मांगें? अगर उनकी इच्छा होगी तो वे स्वयं हमें काम देंगी। हमारे मांगनेकी कोई जरूरत नहीं है।" ऐसे लोग अपनी समझमें कहांतक सच्चे हैं?

अगर काम है तो कोई कारण नहीं कि आदमी उसके लिये आगे न आये। बहुत बार काम होता है और कोई आगे नहीं आता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिये वह नहीं किया जाता। कुछ लोग ही आश्रमका अधिकतर काम करते हैं, अन्य लोग थोड़ा-बहुत करते हैं या फिर वही करते हैं जो उन्हें पसंद हो।

यह कहनेसे आपका क्या मतलब है कि "कुछ लोग ही आश्रमका अधिकतर काम करते हैं, अन्य लोग थोड़ा-बहुत करते हैं या फिर वही करते हैं जो उन्हें पसंद हो"? क्या इसका यह मतलब है कि अन्य अपनी ही तुष्टि और सुविधाके लिये काम करते हैं, माताजीके लिये नहीं?

मैंने केवल एक तथ्य बताया था कि उत्साही कार्यकर्ता बहुत कम हैं और जब कभी कोई काम होता है तो वे ही आगे आते हैं। बाकी लोग बिना उत्साहके, अपने-आप चुना हुआ बंधा काम करते हैं या कुछ नहीं करते या लगभग कुछ नहीं करते।

अगर कोई साधक अपने-आपको ध्यानके लिये असमर्थ पाये तो क्या वह माताजीके लिये काम करके ही साधनामें प्रगति कर सकता है?

अगर वह माताजी और उनकी चेतना और शक्तिकी ओर अपने-आपको खोलकर समर्पण भावसे काम करे तो।

अगर कोई आदमी आश्रममें प्रवेश करे और माताजीके दिये हुए कार्यको सचाईके साथ करता रहे, परंतु प्रायः अपने-आपको बुरी हालतमें पाये तो क्या वह वास्तवमें साधक नहीं है? क्या इसका यह अर्थ है कि वह सच्चे समर्पण भावसे काम नहीं कर रहा?

यह बात साधकपर निर्भर है। कोई भी ऐसा नहीं है जो सारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय अच्छी हालतमें रहता हो। यह कोई बात नहीं है। अगर वह मौलिक रूपमें अपने काममें और साधनामें सच्चा है तो वह साधक है। लेकिन अगर वह बस इसीलिये काम करता है कि काम करना पड़ रहा है, अगर वह स्वार्थ-भावसे काम करता है तो यह समर्पण-भाव नहीं कहा जा सकता।

कुछ लोग कहते हैं, "बहुत-से लोग ऐसे हैं जो योगके बारेमें कुछ भी नहीं समझते, फिर भी माताजी उन्हें स्थायी साधकके रूपमें स्वीकार कर लेती हैं और काम देती हैं ताकि उन्हें योगका एक अवसर दे सकें।" इसमें कितना सत्य है?

तुम जो कह रहे हो उसका कोई अर्थ नहीं मालूम होता।

मुझे यह श्रद्धा है कि श्रीअरविंदाश्रम एक भागवत स्थान है और अगर कोई यहां आकर कुछ काम लेता है तो कोई भागवत शक्ति ही उसे उस कामकी ओर प्रेरित करती है और अगर वह माताजीके प्रति समर्पण-भावसे काम करे तो वह माताजीका यंत्र बन जायगा। आश्रमका वातावरण ही उसे इस वृत्तिके लिये प्रेरित करेगा। क्या मेरा यह विश्वास ठीक है?

आश्रमके वातावरणमें एक शक्ति हो सकती है और है भी, परंतु व्यक्तिकी आंतरिक स्वीकृति भी जरूरी है।

आज जब 'क' हमारे साथ काम करने आया तो 'ख'ने उससे मजाकमें कहा, "तुम यहां क्यों आये? यह काम बड़ा कठिन है, अच्छा यही है कि इसे छोड़ दो।" यद्यपि यह बात मजाकमें कही गयी थी, पर क्या यह संभव नहीं है कि ऐसी बातचीत दूसरों-को नुकसान पहुंचाये?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हां, इसका कोई उपयोग नहीं है और इससे नुकसान हो सकता है।

क्या आध्यात्मिक चेतनामें विकसित होनेके लिये और अतिमानस सत्यको पानेके लिये काम अनिवार्य है?

साधारण मनसे आध्यात्मिक चेतनामें विकास ध्यान, समर्पित कार्य या भगवान्‌के प्रति भक्तिके द्वारा हो सकता है। हमारे योगमें केवल निश्चल शांति या तन्मयता ही उद्देश्य नहीं है, वह गतिशील आध्यात्मिक कार्य चाहता है। इसमें काम अनिवार्य है। रही बात अतिमानसिक सत्यकी, तो वह भगवान्‌के अवतरण और परम शक्तिके कार्यपर निर्भर है। वह किसी पद्धति या नियमसे बंधा नहीं है।

क्या साधकोंके लिये यह संभव है कि कामके द्वारा अतिमानसको प्राप्त कर सकें?

अगर उनमें सत्य चेतना हो।

माताजीने लिखा है, "कामका भ्रम मानव जातिके सबसे बड़े भ्रमोंमेंसे है।" यहां भ्रमका मतलब क्या है?

भ्रमका मतलब यह है कि वे सोचते हैं कि उनका काम ही सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है और उसके अहंकारपूर्ण उद्देश्य ही सत्य हैं जिनका अनुसरण करना चाहिये।

मैंने देखा है कि जब मैं अकेला रहता हूं और कोई काम नहीं करता तो मैं शांति और अभीप्सासे भरा रहता हूं। लेकिन जब मैं कार्यक्षेत्रमें आता हूं और दूसरोंसे संपर्क होता है तो कठिनाइयां पैदा होती हैं और मैं शांति और अभीप्सा खो बैठता हूं। इसका क्या कारण है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह क्रिया और गतिके बीच शांत और समर्पित रहनेकी कठिनाई है। जब कोई क्रिया नहीं होती और आदमी चुपचाप बैठा रहता है तो शांत रहना आसान है।

कुछ लोग कहते हैं कि जिस व्यक्तिमें साहित्य या कलाकी क्षमता न हो वह साधनामें प्रगति नहीं कर सकता और भागवत कर्मका यंत्र नहीं बन सकता। क्या यह सच है?

ये सब बेकारकी बातें हैं। जो सबसे अधिक प्रगति कर रहे हैं उनमेंसे कुछ लोग ठीक तरह लिख नहीं सकते और न कोई कला जानते हैं।

(११)

रूपांतर

रूपांतरके मार्गमें सबसे बड़ी बाधाएं कौन-सी हैं?

केवल तीन मौलिक बाधाएं हैं जो मार्गमें आ सकती हैं:

१—श्रद्धाका अभाव या अपर्याप्त श्रद्धा।

२—अहंकार—मन अपने ही आदर्शोंसे चिपटा रहे, प्राण सच्चे समर्पणकी जगह अपनी ही इच्छाओंको पसंद करे और भौतिक शरीर अपनी आदतोंसे बंधा रहे।

३—चेतनामें कोई तामसिक या भौतिक प्रतिरोध जो बदलना नहीं चाहता, क्योंकि उसमें बहुत मेहनत पड़ती है या वह अपनी क्षमता या भागवत शक्तिमें विश्वास नहीं रखता या फिर किसी अधिक अवचेतन कारणसे। तुम्हें अपने-आप देखना होगा कि वह इनमेंसे कौन-सा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपरके उत्तरमें "भौतिक शरीर अपनी आदतोंसे बंधा रहे"का मतलब क्या है ?

उदाहरणके लिये शरीर अपनी भोजनकी पसंदसे चिपका रहे या भली-भांति काम करनेकी जगह अपनी ही आदत और सुविधाओंसे चिपका रहे। ये भौतिक आदतोंके उदाहरण हैं।

दूसरा मानस करण कौन-सा है जो रूपांतरके काममें मुख्य बाधक बन सकता है ?

मैं यहां वह नहीं कह सकता। वह हजारों अलग-अलग रूप ले सकता है।

रूपांतरके काममें बाधक बननेवाले 'तमस्' और 'चेतना'के भौतिक प्रतिरोधोंको कैसे हटाया जाय ?

इन सब चीजोंके लिये बस एक ही नियम है—अपनी ओर बहुत बारीकीसे देखो। और जब ये चीजें सिर उठाएं तो इन्हें पकड़कर हमेशाके लिये, आग्रहके साथ अस्वीकार करो, इन्हें हटानेके लिये अभीप्सा करो, और इन्हें हटानेके लिये माताजीकी शक्तिको बुलाओ। सबसे बढ़कर पूर्ण प्रभावशाली बात तो यह है कि तुम अपने अंदर हमेशा माताजीकी शक्तिको काम करते हुए अनुभव करो और हमेशा उसकी सहायता करो।

आप कहते हैं कि माताजीकी शक्तिके कार्यकी सहायता करना सबसे अधिक प्रभावशाली उपाय है जिससे तमस् और चेतनाके प्रतिरोधको हटाया जा सकता है। इसका क्या अर्थ है ?

उसकी क्रियाको सहायता देनेका मतलब है कि व्यक्तिको माताजीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिया करती हुई शक्तिको पहचानना चाहिये और उसे दूसरी अहंकार-भरी या अज्ञानकी शक्तियोंसे अलग कर सकना चाहिये और एकको स्वीकार और दूसरेको अस्वीकार करना चाहिये। यह भी एक सामान्य नियम है। इसके उपयोगके लिये हर साधकको अपना तरीका देखना होगा।

माताजीकी शक्ति और दूसरी अहंकारभरी या अज्ञानकी शक्तियोंको अलग कैसे किया जाय?

आदमीको केवल पूरी तरह सच्चा होना चाहिये, अपनी इच्छाओं और अपने दोषोंको मनके तर्कसे न्यायसंगत ठहरानेकी कोशिश न करनी चाहिये। निष्पक्ष होकर शांतिसे अपने ऊपर और अपनी गतिविधियोंपर नजर डालनी चाहिये और माताजीकी ज्योतिको बुलाना चाहिये। तब धीरे-धीरे उस प्रकाशमें सब कुछ पहचानना आ जायगा। अगर यह एक साथ पूरी तरह न भी किया जा सके तो भी विवेक और संवेदन ज्यादा स्पष्ट और निश्चित होते जायंगे और इन चीजोंकी सत्य चेतना स्थापित हो जायगी।

अगर कोई साधक माताजीकी शक्ति और अहंकारभरी अज्ञानकी शक्तियोंमें भेद न कर सके और उन्हें अस्वीकार न कर सके तो उसकी क्या गति होगी?

मेरे उत्तरमें इन सब प्रश्नोंका समाधान आ गया है। कोई विवेक या त्यागमें सहसा पूर्ण नहीं बन सकता। एकमात्र अनिवार्य चीज यह है कि जबतक पूर्ण सफलता न मिले, सचाईके साथ कोशिश करते जाओ। जहां पूरी सचाई है वहां भागवत कृपा रहेगी और मार्गपर हर क्षण सहायता करती रहेगी।

आपने लिखा था कि साधनामें अहंकार एक मुख्य बाधा है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका लक्षण बताते हुए आपने कहा था, "मन अपने विचारोंसे चिपटा रहे, प्राण सच्चे समर्पणकी अपेक्षा अपनी इच्छाओंको पसंद करे, और शरीर अपनी ही आदतोंसे लगा रहे।" सच्चे समर्पणसे आपका क्या मतलब है? साधक उसे पूरी तरह कब पा सकता है?

जब वह इन चीजोंसे छुटकारा पा सके--अपने विचारोंकी जगह ऊपरसे आनेवाले ज्ञानको स्वीकार करे, अपनी इच्छाओंकी जगह भगवान्‌की इच्छाको माने, और अपनी भौतिक आदतोंकी जगह सत्यकी गतिविधियोंको अपनाये--और परिणामस्वरूप पूरी तरह भगवान्‌के लिये जी सके।

मैं यह कैसे जान सकता हूं कि माताजीकी क्या इच्छा है। अगर कुछ करते हुए मुझे असुविधा-सी होती है तो क्या इसका यह मतलब है कि वह चीज माताजीकी इच्छाके विरुद्ध है?

तुम्हारी सुविधा और असुविधा माताजीकी इच्छाकी सूचक कैसे हो सकती है? तुम्हें चैत्य संवेदन विकसित करना चाहिये जो सत्यको मिथ्यासे, भागवतको अभागवतसे अलग कर सके।

साधकमें रूपांतर कब शुरू होता है?

इसमें कोई निश्चित 'जब' नहीं है?

साधक यह कैसे जान सकता है कि उसमें रूपांतर हो रहा है?

अगर हो रहा है तो उसे अनुभव होगा। कैसेका प्रश्न ही नहीं उठता।

यदि स्वभाव पवित्र हो जाय तो क्या वह रूपांतरका सूचक है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पवित्रीकरणके द्वारा ही रूपांतर संभव हो सकता है।

पवित्रीकरणका ठीक अर्थ क्या है?

इच्छा, अहंकार, मिथ्यात्व और अज्ञानसे पवित्र होना।

क्या पूर्ण पवित्रता प्राप्त किये बिना भी उच्चतम सत्यकी आंशिक सिद्धि हो सकती है?

हां।

यह किस तरह संभव है?

भगवान्‌की ओर खुलनेसे।

क्या यह सच है कि साधक भगवान्‌की ओर खुलनेमें प्रगति करने और अपने-आपको बदलनेके अनुपातमें भागवत कृपा और सत्य पानेके योग्य बनता है?

वह जितनी अधिक प्रगति करेगा उतनी ही अधिक सत्यकी शक्ति उसपर आयेगी, वह जितना अधिक बदलेगा उतना ही अधिक भागवत प्रभावको अनुभव करनेके योग्य बनेगा।

अगर साधक अपनी निचली प्रकृतिसे छुटकारा पा ले तो क्या वह पूर्ण रूपांतर सिद्ध कर लेगा?

अगर वह अपनी निचली प्रकृतिसे छुटकारा पा ले तो उसका अर्थ होगा अविद्यासे छुटकारा पाना (अहंकार, इच्छा आदि)। यह निश्चय ही पूरा रूपांतर होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी प्रकृतिके उन दोषोंसे कैसे सचेतन हुआ जाय जो छिपे रहते हैं और रूपांतरमें बाधा देते हैं? इन दोषोंको रूपांतरके लिये भगवान्‌को कैसे अर्पित किया जाय?

इसके लिये जागरूक होकर देखना चाहिये और माताजीकी शक्तिका नीचे आवाहन करना चाहिये ताकि वह मनसे छिपी हुई चीजोंको प्रकट कर दे।

तुम्हें पूरी तरह सच्चा होना चाहिये और पवित्र होनेकी अभीप्सा करनी चाहिये और तुम्हारे अंदर जो कुछ गलत है उसको त्याग देना चाहिये। तब भगवान्‌की शक्ति क्रिया करेगी और सब कुछ कर देगी। यह सरल और सच्चा मार्ग है।

क्या जब साधक अपनी निम्न प्रकृतिको विवेकके द्वारा माताजीकी ओर मोड़ता है तो उसे रूपांतर कह सकते हैं?

नहीं, हर्गिज नहीं। यह तो रूपांतरके लिये एक शर्त है।

अगर साधक काफी विवेकके अभावमें अपनी प्रकृतिको माताजीकी ओर सही तरहसे नहीं मोड़ सकता तो क्या माताजीकी शक्तिके लिये उसका रूपांतर करना बहुत कठिन हो जाता है?

अगर उसका विवेक निरंतर हो और सच्चा हो और वह पूरी तरह मुड़ा हुआ हो तो रूपांतर बहुत तेजीसे हो सकता है।

क्या यह संभव नहीं है कि साधकके व्यक्तिगत प्रयासके बिना ही माताजीकी कृपा उसे उनकी ओर मोड़कर रूपांतरित कर दे?

अगर कोई व्यक्तिगत प्रयास नहीं है, अगर साधक बहुत ज्यादा अकर्मण्य और तामसिक है तो भागवत कृपा क्रिया करे ही क्यों?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या जो साधक आंशिक रूपसे ही रूपांतरित हुआ है, उच्चतम सत्यतक नहीं पहुंच सकेगा ?

यह संभव है।

क्या यह सच है कि आध्यात्मिक अनुभूतियां पाये विना रूपांतर असंभव है ?

सारी सत्ताका रूपांतर नहीं, कुछ परिवर्तन आ सकता है। विना आध्यात्मिक अनुभूतियोंके वह कैसे हो सकता है ?

जब किसी साधकको आध्यात्मिक सत्यके स्वप्न आते हैं तो क्या इसका यह अर्थ नहीं होता कि उसकी प्रकृतिका रूपांतर हो रहा है ?

जरूरी नहीं है। इससे यह मालूम होता है कि वह साधारण लोगोंसे ज्यादा सचेतन है, परंतु स्वप्न प्रकृतिको नहीं बदल सकते।

(१२)

कठिनाइयां और प्रगति

साधनामें कठिनाइयां और बाधाएं कबतक रहती हैं ?

यह साधकोंपर निर्भर है।

किस अर्थमें उनपर निर्भर है ? क्या इसका यह मतलब है, कठिनाई तबतक रहती है जबतक वे रखना चाहते हैं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हां, या जबतक उनके अंदर कोई चीज कठिनाइयोंके लिये कारण देती है।

यह कैसे होता है कि हम जितनी सचाईके साथ कठिनाइयोंका सामना करना और उनपर विजय पाना चाहें उतनी ही वे बढ़ती हैं?

उल्टी या विरोधी शक्तियां आक्रमण करती हैं, उन्हें डर होता है कि साधनाकी सफलतासे मनुष्योंपर उनका अधिकार छिन न जाय।

जब कभी मैं अपने-आपको अंदरसे अच्छी अवस्थामें पाता हूं और प्रगतिके लिये सच्ची कोशिश करता हूं तो मैं देखता हूं कि कठिनाइयां बढ़ने लगती हैं। ऐसा क्यों होता है?

अकेले तुम ही ऐसा अनुभव नहीं करते। सभीको यह अनुभव होता है।

क्या इससे यह सिद्ध होता है कि मैं योग-साधनाके लिये अयोग्य हूं?

उस हालतमें तो यह सिद्ध होगा कि हर एक आदमी अयोग्य है —क्योंकि हर एकका यही अनुभव है।

अगर साधकको अपनी साधनामें बहुत कठिनाइयोंका सामना करना पड़े तो वह आश्रममें कैसे रह सकेगा?

मैं यह प्रश्न नहीं समझ पाता। जो रहना चाहते हैं और अपनी साधनामें सच्चे हैं, वे हमेशा रह सकते हैं—चाहे कैसी भी कठिनाई क्यों न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या यह सच है कि जबतक साधक प्रकृतिके दोषोंपर विजय नहीं पा लेते तबतक उन्हें भगवान्‌की तरह-तरहकी परीक्षाओंमेंसे गुजरना पड़ता है?

यह परीक्षा नहीं, प्रकृतिका विधान है कि योग-सिद्धिसे पहले उन्हें इन चीजोंपर विजय प्राप्त करनी पड़ती है।

क्या यह सच है कि साधकोंकी शक्तिकी परीक्षा लेनेके लिये उनपर विरोधी शक्तियोंके आक्रमण होते हैं, जो उनकी साधनामें विघ्न डालती हैं?

विरोधी शक्तियां साधकोंपर आक्रमण करने और उन्हें परेशान करनेको अपना काम मान लेती हैं, परंतु उनमें गलत क्रियाएं, अपूर्णताएं और दुर्बलताएं न हों तो वे परेशान नहीं हो सकते।

मैं यह कैसे जान सकता हूं कि मैं अपनी साधनामें और माताजीकी कृपा और शक्तिके द्वारा किये गये अपनी सत्ताके रूपांतरमें प्रगति कर रहा हूं?

अगर यह हो रहा है तो तुम उसके बारेमें सचेतन होओगे।

आश्रमके कुछ साधक कहते हैं कि वे नहीं जानते कि वे कोई प्रगति कर रहे हैं या नहीं, क्योंकि उन्हें प्रगतिकी सूचक कोई अनुभूति नहीं होती। इसका क्या कारण है?

इससे बस यही पता चलता है कि वे अचेतन हैं।

लेकिन क्या यह कहा जा सकता है कि यद्यपि उन्हें इसकी सूचना नहीं मिल रही, फिर भी वे सचमुच प्रगति कर रहे हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भली-भांति समझे बिना भी अनुभूतियां हो सकती हैं, परंतु यदि वे कुछ भी अनुभव नहीं करते तो यह नहीं कहा जा सकता कि वे प्रगति कर रहे हैं।

जब साधकको अनुभूतियां होने लगें तो क्या इसका यह अर्थ होता है कि वह प्रगति कर रहा है?

इससे मालूम होता है कि वह प्रगति कर रहा है।

अगर साधक हमेशा अपनी कमजोरियोंके बारेमें सोचता रहे और दुःखी रहे तो क्या प्रगतिमें बाधा पड़ती है?

हां, उसे भगवान्‌के बारेमें ज्यादा और अपने बारेमें कम सोचना चाहिये।

आजकल पिछले जीवनकी सब तरहकी यादें मेरे मनपर दबाव डाल रही हैं, इसका क्या कारण है?

वे दूर किये जानेके लिये अवचेतनामेंसे ऊपर उठ रही होंगी।

इन यादोंके दबावसे पिंड छुड़ानेकी क्या तरकीब है?

जब वे उठें तो उन्हें साफ करते जाओ, तुम्हारे अंदर कोई चीज उन्हें न तो स्वीकार करे और न उनमें रस ले।

साधनामें मेरी अधिकतर कठिनाइयों और अवसादका कारण यह है कि मेरा मन संकीर्ण और अविकसित है। इस त्रुटिको हटानेके लिये सबसे अच्छी चीज क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगका विकास चैत्य पुरुषके द्वारा होता है, मनके द्वारा नहीं, मन मुख्य वस्तु नहीं है।

क्या यह तथ्य नहीं है कि संकीर्ण और अविकसित मनके कारण कठिनाइयां और अवसाद आते हैं?

ज्यादातर प्राणके असंतोष या शरीर-चेतनाके अज्ञान और तमस्से।

अपनी सारी सत्तासे जड़ता और तमस् निकाल फेंकनेका सबसे तेज और प्रभावशाली तरीका क्या है?

वहां कार्य करनेके लिये भागवत शक्तिको बुलाना।

मैं यह क्यों अनुभव करता हूं कि मेरा शरीर इतना जड़ और मन्द है?

यह इसपर निर्भर है कि उसका प्राणके साथ ताल-मेल है या नहीं। शरीरका स्वभाव ही तामसिक होता है। प्राण उसमें गति लाता और यंत्रकी तरह इस्तेमाल करता है। अगर प्राण प्रबुद्ध या प्रकाशित हो तो भागवत शक्ति उसके द्वारा सारे शरीरमें काम कर सकती है।

यह कब कहा जा सकता है कि प्राण प्रबुद्ध या प्रकाशित है?

प्राणको न केवल सब प्रकारकी निम्न गतिविधियोंको अस्वीकार करना चाहिये, बल्कि ऊपरकी ओर खुलकर वहांसे प्रकाश पाना चाहिये ताकि वह भगवान्की इच्छा और उसकी प्रेरणाको जान सके और ग्रहण कर सके––तब उसे प्रकाशित कहा जा सकता है।

'मातृवाणी'में माताजी कहती हैं, "सच्ची प्राणिक गतिविधि सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतियोंमें सबसे सुन्दर और भव्य होती है।" यह सच्ची प्राणिक गति क्या है ?

प्राणकी अपनी मौलिक भागवत प्रकृतिमें गति, वैसी नहीं जैसी साधारण मनुष्योंमें होती है—अहंकार, स्वार्थपूर्ण आवेग और इच्छाओं-से भरी नहीं।

दूसरोंके साथ संपर्क और काममें उठनेवाली कठिनाइयोंसे मैं कैसे पिंड छुड़ा सकता हूं ?

अहंकार और इच्छाको त्याग कर और केवल भगवान्‌के लिये काम करके।

जब साधक ऊंचा उठनेकी कोशिश कर रहा है तो वह अपने चारों ओरके नीचे गिरानेवाले प्रभावोंसे कैसे बच सकता है ?

चारों ओरकी उपेक्षा और ऊपर एकाग्रता करके।

क्या हमारे विचारोंका (अच्छे या बुरे) दूसरोंपर कोई असर होता है ?

हां, उनका प्रभाव होता है।

क्या यह संभव है कि एक आदमीकी इच्छाएं, संदेह आदि एकसे दूसरेमें जायं ?

कोई भी चीज एकसे दूसरेमें जा सकती है। सारे संसारमें सारे समय यही होता रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कैसे जाना जा सकता है कि हमारे अंदर उठनेवाली इच्छाएं और संदेह किसी औरसे आये हैं?

तुम्हें सचेतन होना चाहिये।

क्या दूसरोंके दोष देखना और उनकी आलोचना करना हानिकारक नहीं है? क्या यह आदत साधनामें प्रगतिकी राहमें बहुत बड़ी बाधा नहीं बन जाती?

हां, यह सब सच है। निम्न प्राण दूसरोंकी त्रुटियां चुननेमें बड़ी तुच्छ और ओछी खुशी महसूस करता है और इस तरहसे अपनी और आलोचनाके विषय—दोनोंकी प्रगतिमें बाधा डालता है।

क्या गप्प लगाना साधनामें बाधक है?

हो सकता है और बहुत बार होता है। गप्पी प्रवृत्ति हमेशा बाधक होती है।

क्या यह सच है कि अगर कोई साधक अंदरसे या बाहरसे कोई गलत चीज करता है तो उसके कारण आश्रमके और लोगोंको भी सहन करना पड़ता है?

यह आश्रमके वातावरणमें एक गलत असर पैदा करता है और विरोधी शक्तियोंके लिये द्वार खोल देता है।

क्या यह सच है कि जब साधक बेचैनी या अस्तव्यस्तता अनुभव करते हैं तो इसका कारण यह होता है कि उन्होंने भागवत इच्छाके विरुद्ध कुछ किया है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह उससे या फिर अपनी प्रकृतिकी त्रुटियोंसे आती है।

जब साधक सब प्रकारकी कठिनाइयों और बाधाओंको पार कर लेते हैं तो वे दुनियाको छोड़कर हमेशाके लिये चले क्यों नहीं जाते?

क्यों चले जायें? अगर साधक सचमुच सब कठिनाइयोंको पार कर लें तो उच्चतर चेतना आंशिक रूपमें धरतीपर स्थापित हो जायगी—लेकिन फिर बाकी दुनिया और उसके अपूर्ण विकासके बारेमें क्या होगा?

साधक रोग-मुक्त कैसे रह सकता है?

भौतिक प्रकृतिपर विजय पानेके बाद ही बीमारीका आना पूरी तरहसे बंद हो सकता है।

अगर साधक किसी-न-किसी कारणसे बीमार होता है तो वह उसे तेजीसे कैसे निकाल फेंक सकता है?

उनमेंसे अधिकतरको तो श्रद्धासे और भागवत शक्तिको बुलाकर दूर किया जा सकता है। पुरानी बीमारियां ज्यादा कठिन होती हैं, लेकिन उन्हें भी लगातार यही उपाय काममें लाकर दूर किया जा सकता है।

अगर कोई साधक बीमार हो तो वह दवाई आदिके भौतिक उपायोंका उपयोग कर सकता है?

जहां कहीं जरूरत हो भौतिक उपाय भी किये जा सकते हैं, लेकिन भौतिक उपायके पीछे भी भागवत शक्ति होनी चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भौतिक उपायोंका प्रयोग विवेकके साथ और जब जरूरत हो तभी करना चाहिये।

क्या यह सच है कि साधक भगवान्‌पर श्रद्धा न होनेके कारण बीमार हो सकते हैं?

बीमारियां कई कारणोंसे आ सकती हैं—तुम जिसकी बात कर रहे हो वह एक ऐसी अवस्था है जो बीमारीके आनेमें सहायक होती है और रोग-मुक्तिके मार्गमें बाधा खड़ी करती है।

(१३)

काम-वासना, भोजन, नींद

क्या यह सच है कि काम-वासना योगमें सबसे बड़ी बाधा है?

कम-से-कम सबसे बड़ी बाधाओंमेंसे एक तो है ही।

क्या ज्यादा खानेसे काम-वासना बढ़ती और कम खानेसे घटती है?

माना तो यह जाता है कि अमुक प्रकारके भोजन—मांस, प्याज, मिर्च आदि—काम-वासनाको बढ़ाते हैं।

क्या लोभ, क्रोध, ईर्ष्या आदि काम-वासनाके साथी हैं?

वे हमेशा तो नहीं, प्रायः काम-वासनाके साथ रहते हैं।

माताजीने कहा है, "काम-वासना आदि आवेगोंको बल इस बात-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से मिलता है कि लोग उनकी ओर बहुत ज्यादा ध्यान देते हैं।" "लोग आवेगोंकी ओर बहुत ज्यादा ध्यान देते हैं" का क्या मतलब है ?

अगर हमेशा उन्हींके बारेमें सोचा जाय और उनसे युद्ध किया जाय तो यह उनपर बहुत ज्यादा ध्यान देना होगा।

इस प्रकार ध्यान देनेसे बचनेका क्या उपाय है ?

उनसे अपने-आपको दूर रखकर, काम-वासनाके बारेमें कम और भगवान्‌के बारेमें अधिक सोचो।

माताजीने कामुकता-भरे विचारोंके बारेमें यह भी कहा है कि उनको जबरदस्ती दबाने, उनको अंदर दबाकर उनपर बैठ जानेका तरीका गलत है। आदमी इन विचारोंको अंदर दबाकर उनपर कैसे बैठता है ?

शब्द अपनी व्याख्या अपने-आप करते हैं। अगर तुम काम-वासना-के विचारोंसे भरे रहो और उन्हें किसी प्रकारकी क्रियामें प्रकट होनेसे रोकते रहो तो यह उन्हें अंदर रोककर उनपर बैठना होगा। क्रोध आदि अन्य आवेगोंके बारेमें भी यही बात है। उन्हें अपने अंदर रखना नहीं, बाहर निकाल फेंकना चाहिये।

आपने कहा है कि गलत गतिका दमन करनेसे वह बस दब जाती है, यदि उसे पूरी तरह निकालना हो तो उसे एकदम त्यागना चाहिये। तब फिर क्रोध, काम, भय आदिका दमन करनेसे क्या लाभ ?

अगर तुम्हारा त्याग सफल न हो तो दमन करना चाहिये। दमन कम-से-कम प्राणिक आवेगोंका दास बननेसे बचाता है। एक-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार नियंत्रण हो जाय तो सफलतासे अस्वीकार करना आसान होता है। नियंत्रणके अभावसे सफल त्याग नहीं आता।

काम-शक्तिको ओजमें बदलनेकी क्या प्रक्रिया है?

इसके लिये एक पद्धति होती है। उसे मन, कर्म, वचनकी तपस्या-के द्वारा और संकल्पबलसे वीर्यको ऊपर खींचकर किया जाता है। लेकिन इस योगकी और बातोंकी तरह यह भी भागवत शक्तिके अवतरण और काम-वासनाके केंद्रपर क्रिया करके उसके रूपांतर करने-पर ज्यादा अच्छी तरह हो सकता है।

079506

क्या उपवास हमारी साधनामें सहायक होता है?

इस साधनामें उपवाससे सहायता नहीं मिलती।

क्या बहुत कम खाना इंद्रियोंको काबूमें करनेमें सहायक होता है?

नहीं, वह उन्हें उत्तेजित करता है। संयत भोजन सबसे अच्छा है। जो लोग उपवास करते हैं वे आसानीसे उत्तेजित हो जाते हैं और संतुलन खो बैठते हैं।

क्या केवल निरामिष भोजन इंद्रियोंको वशमें रखनेमें सहायक है?

वह मांसाहारी लोगोंको होनेवाली कुछ कठिनाइयोंसे बचाता है, पर वह अपने-आपमें काफी नहीं है।

क्या उच्चतर चेतनामें पहुंचे हुए साधकके लिये नींद जरूरी है?

जबतक तुम्हारा शरीर अपनी सभी क्रियाओंमें रूपांतरित नहीं हो जाता तबतक नींद जरूरी है।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो जीवन लक्ष्यहीन होता है वह सुखहीन भी होता है।

तुम्हारा लक्ष्य होना चाहिये उच्च और विशाल, उदार और उन्मुक्त और फिर तुम्हारा जीवन तुम्हारे लिये और दूसरोंके लिये भी बहुमूल्य हो जायगा।

— श्रीमां

सहारनपुर सर्विस स्टेशन
पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड
सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

079506

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

२४ अप्रैलका दर्शन माताजीके दूसरी बार (१९२० में) पांडिचेरी आनेके उपलक्ष्यमें होता है। माताजीने कहा था कि यह दिन विरोधी शक्तियोंपर निश्चित विजयका स्पष्ट चिह्न है। हमारे पास बहुत-सी शाखाओं और केंद्रोंसे २९ मार्च, ४ अप्रैल और २४ अप्रैलके उत्सवोंके बारेमें समाचार आये हैं।

भक्तिनगर (सिलीगुड़ी) में प्रो. विश्वनाथ रायने वहांके विश्व-विद्यालयमें तथा केंद्रमें भाषण दिये।

१३ मार्चको पश्चिम बंग युवा परिषद्ने विष्णुपुर ग्राम और २१ तथा २२ मार्चको कलकत्तेके लक्ष्मी भवनमें कालू सरकारके प्राणायाम, व्यायाम, तथा एक्यूपंक्चरके प्रदर्शनोंकी व्यवस्था की।

सोसायटीकी **कलकत्ता क्षेत्रीय समितिने** २० मार्चको एक सेमिनार किया जिसमें कलकत्ताके न्यायमूर्ति मुखर्जी, आचार्य गौरीनाथ शास्त्री आदिने श्रीअरविंद और माताजीकी शिक्षाके विभिन्न रूपोंके बारेमें भाषण दिये।

पांडिचेरीके देवव्रतने मार्च और अप्रैलमें बंगाल और ओड़िसाके बहुत-से केंद्रोंका चक्कर लगाया, वहांके कार्यक्रमोंमें भाग लिया।

गुलबर्गा (कर्णाटक) में श्रीअरविंद चक्रने २४ अप्रैलको अपना ३२ वां वार्षिक दिन मनाया। प्रो. वसन्त कुश्तगी इस अवसरपर बोले।

देहरादूनमें श्रीमती देवी वाहीने लेडीज क्लबमें श्रीअरविंदके कार्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Registered with the Registrar of Newspapers for Indi
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 873

के बारेमें बतलाया और श्री ओ. पी. वाहीने २७ अप्रैलको दून स्कूलमें भाषण दिया।

हर वर्ष ४ अप्रैलको हैदराबादके नजदीक गड्डेपल्ली नामक ग्राममें बड़े उत्साहके साथ उत्सव मनाया जाता है। यहां १९७१ में श्रीअरविंदके पवित्र अवशेष स्थापित किये गये थे। यहां एक आदर्श ग्राम बनानेकी कोशिश की जा रही है और सारा काम सहकारी वृत्तिसे करनेकी कोशिश हो रही है।

पांडिचेरीमें १२, १३ १४ अगस्तको सोसायटीका वार्षिक अधिवेशन होगा। अधिकतर लोग तो इससे परिचित ही होंगे, जिन्हें कुछ जानकारी चाहिये वे सोसायटीके मुख्यालय या शाखाओंसे पा सकते हैं।

पुस्तक परिचय—श्रीअरविंदाश्रम संस्कृत कार्यालय समय-समयपर संस्कृतकी छोटी-छोटी पुस्तकें प्रकाशित करता रहता है। इस बार १२८ पृष्ठकी "रङ्गमञ्चे संस्कृतम्" नामक पुस्तक प्रकाशित हुई है जिसमें मञ्चित किये जा सकनेवाले ६ छोटे-छोटे सरल मनोरंजक नाटक हैं: ऋणमुक्तिः, ब्राह्मणे भोजनप्रियः, सार्धैकमित्रम्, भक्त्या लभ्यः, अंगुलिमालः, भाग्यनिर्णयः।

पुस्तकका मूल्य १० रु. है (डाक व्यय अतिरिक्त) यह संस्कृत कार्यालय, श्रीअरविंदाश्रम पांडिचेरी–६०५००२ से प्राप्त हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri